प्रस्तावना

राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी अपनी स्थापना के 15 वर्ष पूरे करके 15 जुलाई, 1984 को 16 वें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। इस अवधि में विश्व-साहित्य के विभिन्न विषयों के उत्कृष्ट ग्रंथों के हिन्दी अनुवाद तथा विश्वविद्यालय के शैक्षणिक स्तर के मौलिक ग्रंथों को हिन्दी में प्रकाशित कर अकादमी ने हिन्दी जगत् के शिक्षकों, छात्रों एवं अन्य पाठकों की सेवा करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है और इस प्रकार विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी में शिक्षण के मार्ग को सुगम बनाया है।

अकादमी की नीति हिन्दी में ऐसे ग्रंथों का प्रकाशन करने की रही है, जो विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के अनुकूल हो। विश्वविद्यालय स्तर के ऐसे उत्कृष्ट मानक ग्रंथ, जो उपयोगी होते हुए भी पुस्तक-प्रकाशन की व्यावसायिकता की दौड़ में अपना समुचित स्थान नहीं पा सकते हों और ऐसे ग्रंथ भी जो अंग्रेजी की प्रतियोगिता के सामने टिक नहीं पाते हों, अकादमी प्रकाशित करती है। इस प्रकार अकादमी ज्ञान-विज्ञान के हर विषय में उन दुर्लभ मानक ग्रंथों को प्रकाशित करती रही है और करेगी, जिनको पाकर हिन्दी के पाठक लाभान्वित ही नहीं गौरवान्वित भी हो सकें। हमें यह कहते हुए हर्ष होता है कि अकादमी ने 300 से भी अधिक ऐसे दुर्लभ और महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन किया है, जिनमें से एकाधिक केन्द्र, राज्यों के बोर्डों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत किये गये हैं तथा अनेक विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित।

राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी को अपने स्थापना-काल से ही भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से प्रेरणा और सहयोग प्राप्त होता रहा है तथा राजस्थान सरकार ने इसके पल्लवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अतः अकादमी अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में उक्त सरकारों की भूमिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है।

'नागरिक-शास्त्र-शिक्षण' पुस्तक बी. एड. के पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई है। पुस्तक में नवीन दृष्टि से सामग्री को प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी-भाषी प्रदेशों के शिक्षा महाविद्यालयों के छात्र व अध्यापक इससे लाभान्वित होंगे, ऐसी हमारी अपेक्षा है। हम इसके लेखकों श्री हेतसिंह बघेला व श्री हरिश्चन्द्र व्यास तथा भाषा-सम्पादक श्री श्यामराय भटनागर के प्रति प्रदत्त सहयोग हेतु आभार प्रकट करते हैं।

रामपाल उपाध्याय	**जे. एम. श्रीवास्तव**
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी	निदेशक
एवं शिक्षा मंत्री, राजस्थान सरकार, जयपुर	राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी
	जयपुर

दो शब्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, के तत्वावधान में परंपरागत शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम में परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन करने हेतु "शिक्षक-शिक्षा पाठ्यचर्या की रूपरेखा" प्रकाशित कर एक नई दिशा प्रदान की गई थी। अनेक विश्वविद्यालयों ने इस पाठ्यचर्या के अनुकूल अपने बी. एड. के पाठ्यक्रम का पुनर्निर्माण किया है। राजस्थान-विश्वविद्यालय ने भी गत सत्र से बी. एड. के अनिवार्य प्रश्न-पत्रों के नवीन पाठ्यक्रम को प्रभावी कर दिया है तथा आगामी सत्र (जुलाई, 1985) से विषय-शिक्षण के नवीन पाठ्यक्रम लागू किये जा रहे हैं। नागरिक-शास्त्र-शिक्षण की उपलब्ध पुस्तकों में परंपरागत दृष्टिकोण से विषय का प्रतिपादन होने के कारण वे नागरिकशास्त्र के भावी शिक्षकों में अपेक्षित शिक्षण-कौशल, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों का विकास नहीं कर पायेंगी। इसी अभाव की पूर्ति हेतु प्रस्तुत पुस्तक की संरचना की गई है।

इस पुस्तक में उन सभी विश्वविद्यालयों के बी. एड. पाठ्यक्रमों को दृष्टिगत रखा गया है, जिन्हें उपर्युक्त दिशा-निर्देश के अनुरूप परिवर्तित कर लिया गया है। आशा है शिक्षक-प्रशिक्षणार्थी, शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रवक्ता एवं नागरिक-शास्त्र-शिक्षण में रुचि रखने वाले पाठकों को यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। उनके सुझावों का सदैव स्वागत किया जायेगा।

हम उन सभी पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षाविदों के प्रति आभारी हैं, जिनके विचारों को इस पुस्तक में उद्धृत किया गया है। राजस्थान शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर के प्राचार्य श्री जगदीश नारायण पुरोहित तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के क्षेत्राधिकारी श्री प्रभाकरसिंह के प्रति हम हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं, जिन्होंने समीक्षात्मक दृष्टि से पुस्तक की पाण्डुलिपि का अवलोकन कर, बहुमूल्य परामर्श एवं प्रेरणा दी है।

हेतसिंह बघेला
हरिश्चन्द्र व्यास

विषय–सूची

□□

नागरिक-शास्त्र की संकल्पना का विकास, अर्थ तथा परिभाषा

यूनानी दार्शनिक अरस्तू के अनुसार, 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज के बिना रह नहीं सकता। वह व्यक्ति जो समाज मे नहीं रहता या तो देवता है या पशु।' लीकाक ने इसी तथ्य को परिवर्धित किया है कि "शरीर के साथ हाथ का अथवा वृक्ष के साथ पत्ते का जिस प्रकार सम्बन्ध होता है, वैसा ही समाज के साथ मनुष्य का होता है। यह (समाज) उसमें विद्यमान होता है तथा वह (मनुष्य) इसमे।" ये कथन मनुष्य तथा समाज की परस्पर अन्योन्याश्रितता एवं अनिवार्यता प्रकट करते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि वस्तुतः मनुष्य अपनी मूल प्रवृत्तियों एवं सामान्य स्वाभाविक प्रवृत्तियों के आधार पर समाज का एक अभिन्न सदस्य है।

मानव की सामाजिकता का मनोवैज्ञानिक आधार

मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य में जन्मजात होती है। मैकडुगल ने मूल प्रवृत्ति की परिभाषा इस प्रकार की है—"मूल प्रवृत्तियाँ वह जन्मजात शक्ति है जो प्राणी को किसी वस्तु को देखने या उसकी ओर ध्यान देने तथा उसकी उपस्थिति मे एक विशेष प्रकार की संवेगात्मक उत्तेजना अनुभव करने एव उस वस्तु के सम्बन्ध में विशेष व्यवहार की प्रेरणा प्रदान करती है। अतः मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य मे व्यवहार करने की जन्मजात आदतें होती हैं जो सभी मनुष्यो मे समान होती है, किन्तु मानव पशुओं के समान इन मूल प्रवृत्तियो का दास नहीं है अपितु वह इनसे प्रेरणा लेकर जीवन के विकास के प्रति अपने व्यवहार को स्वयं नियन्त्रित करता है। जैसे-जैसे मानव का विकास होता गया, वैसे ही उसके पशुवत व्यवहार का मानवीकरण और समाजीकरण होता गया और उसका प्रवृत्तिजन्य व्यवहार सभाजोपयोगी कार्यों मे प्रकट होने लगा तथा वह समाज का एक सदस्य बनकर सभ्य नागरिक हो गया। वैसे तो मानव की सभी मूल प्रवृत्तियाँ अवदमन, निरोध, मार्गान्तरीकरण तथा शोधन द्वारा समाजोपयोगी व्यवहार मे परिवर्तित होकर उसे एक सभ्य नागरिक बनाने में सहायक होती हैं, किन्तु कुछ मूल प्रवृत्तियाँ ऐसी हैं जो इस प्रक्रिया मे विशेष सहायक होती हैं। ये मूल प्रवृत्तियाँ हैं—सामूहिकता या सामाजिकता आत्म-प्रदर्शन, पैतृक, संचय वृत्ति तथा सर्जनात्मकता, सामूहिकता या सामाजिकता।

मूल प्रवृत्ति का संवेग एकाकीपन है। मनुष्य स्वभावतः समूह बद्ध रहना चाहता है क्योंकि एकाकीपन का भार उसे असह्य होता है। सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति से प्रेरित होकर ही मानव सामाजिक जीवन की आकांक्षा करता है जिसके माध्यम से वह अपनी प्रजातीय संस्कृति को ग्रहण कर सके तथा अपनी जन्मजात प्रवृत्तियों का सामाजीकरण कर सके। आत्म-प्रदर्शन की मूल प्रवृत्ति की प्रेरणा से वह अपनी क्षमता, योग्यता व कौशल का प्रदर्शन कर दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। पैतृक अथवा पुत्र-कामना या वंश-वृद्धि की मूल प्रवृत्ति मानव-समाज में प्रेम, दया, सहानुभूति, आदर, स्नेह आदि गुणों का विकास करती है जो पारिवारिक जीवन का आधार है। संचय या संग्रह मूल प्रवृत्ति की संवेग-अधिकार भावना है, इसके द्वारा मानव को धन-सम्पत्ति के अर्जन, संग्रह तथा सुरक्षा की प्रेरणा मिलती है जो समाज में रह कर ही सम्भव है। सृजनात्मक या विधायकता प्रवृत्ति का संवेग कृतिभाव है। यह मानव को अपनी जिज्ञासा एवं कल्पना के आधार पर आवश्यकताओं की पूर्ति एवं जीवन-रक्षा के लिए साधनों के निर्माण के लिये प्रेरित करती है। सर्जनात्मक समाज एवं संस्कृति की आवश्यकता है।

इन मूल प्रवृत्तियों के अतिरिक्त मनुष्य में कुछ जन्मजात प्रेरणा भी होती है जिन्हें सामान्य प्रवृत्तियाँ कहा जाता है। समाजोपयोगी सामान्य प्रवृत्तियों में सहानुभूति तथा अनुकरण प्रमुख हैं। सहानुभूति अर्थात् सह्अनुभूति का अर्थ है दूसरों जैसी ही अनुभूति करना। मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों का आधार सहानुभूति है। दूसरों की अनुभूति में सहभागी बनने से सामाजिक सम्बन्ध दृढ़ होते हैं। रॉस के अनुसार सहानुभूति को सामूहिकता या सामाजिकता की मूल प्रवृत्ति का भावात्मक पक्ष माना है। सहानुभूति से समूह या दूसरों की अनुभूति का सहभागी बनने में इतनी शक्ति है जो अनेक व्यक्तियों को एक समूह में मिला देती है। अनुकरण की सामान्य प्रवृत्ति मानव को अन्य व्यक्तियों के व्यवहार जैसा ही आचरण करने को प्रेरित करती है। अनुकरण सामूहिकता या सामाजिकता की मूल प्रवृत्ति का क्रियात्मक अंग है। टी. पी. नन. वैयक्तिकता के विकास में अनुकरण के महत्त्व पर कहते हैं कि अनुकरण पहले शारीरिक तथा बाद में वैचारिक स्तर पर होता है जो वस्तुतः वैयक्तिकता के निर्माण का प्रथम सोपान है अनुकरण का क्षेत्र जितना व्यापक तथा सम्पन्न होगा उतना ही अधिक व्यक्तित्व का विकास होगा।

समाज से नागरिक भावना का उदय

मनुष्यों से समाज का निर्माण होता है। समाज ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो समान उद्देश्य एवं कार्यों की पूर्ति के लिए संगठित होकर रहते हों। समाज एक ऐसी ऐच्छिक संस्था है जो व्यक्ति को नैतिक धरातल देती है। समाज से ही राज्य की उत्पत्ति होती है जो व्यक्ति को नैतिक आचरण के लिए बाध्य कर समाज का अस्तित्व बनाये रखता है। प्लेटो तथा अरस्तु समाज तथा राज्य को एक ही मानकर उन्हें नैतिक संस्था का दर्जा देते हैं, जिनका उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करना है। समाज तथा

राज्य का सदस्य अर्थात् नागरिक होने के कारण जो अधिकार व्यक्ति को मिलते हैं उनका उपभोग वह अपनी स्वेच्छा से नियमित समाज या राज्य के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन करने अर्थात् नैतिक आचरण से ही कर सकता है जहां एक ओर मानव की प्रवृत्तिजन्य सहयोग एव सदभाव ही सामाजिक जीवन का आधार है, वहां दूसरी ओर मानव अपनी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक उन्नति मे स्वार्थ, द्वेष घृणा आदि दुर्गुणो के विरुद्ध संघर्षों को भी जन्म देता है।

भारतीय धर्म शास्त्रों मे आचरण को ही धर्म माना गया है। कौटिल्य ने कहा है—"आचारः परमो धर्मः" तथा "सुखस्य मूल धर्मः" अर्थात् आचरण व्यवहार ही परम धर्म है एव धर्म ही सुख का आधार है। (गीता मे भी कर्त्तव्य पालन पर बल देते हुए कहा गया है—"कर्मण्याधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" अर्थात अच्छे कर्म करना हमारा कार्य है और फल देना भगवान पर निर्भर है)। सदाचरण से युक्त नागरिक ही एक ऐसे समाज तथा राज्य के आधार-स्तम्भ होते हैं जो व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करने तथा लोक-कल्याणकारी व्यवस्था बनाये रखने मे सहायक होते है।

पाश्चात्य विचारधारा

नागरिक शास्त्र तथा राजनीति-विज्ञान प्रारम्भ में दोनों एक ही सामाजिक विज्ञान के रूप मे माने जाते थे क्योकि दोनो की उत्पत्ति पश्चिम में यूनान के नगर-राज्यो से हुई। नागरिक शास्त्र अथवा सिविक्स की उत्पत्ति लेटिन भाषा के दो शब्दों सिविस (नागरिक) तथा (सिविताज) (नगर-राज्य) से हुई। इसी प्रकार राज-नीति ((पोलिटिक्स) शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के शब्द 'पोलिस' से हुई जिसका अर्थ 'नगर' है। अतः नागरिक शास्त्र तथा राजनीति-विज्ञान दोनों शास्त्रो ने अपनी विषय-वस्तु यूनान तथा इटली में प्राचीन काल में स्थित नगर-राज्यो मे ली थी। प्राचीन यूनान राज्य में छोटे-छोटे नगर-राज्य थे जिनके निवासी तीन वर्गों मे विभक्त थे—नागरिक, विदेशी तथा दास। नगर-राज्यो के प्रशासन मे भाग लेने का अधिकार केवल प्रथम वर्ग के निवासियों अर्थात् नागरिकों को ही था। अतः नागरिक भावना अथवा नागरिक शास्त्र का क्षेत्र नगर-राज्य की सीमा एवं उसके प्रथम वर्ग के निवासियों (नाग-रिको) तक ही सीमित था, जो अत्यन्त सकुचित था। धीरे-धीरे नगर राज्य विशाल राज्यों अथवा राष्ट्रों मे परिणत होने लगे तथा विदेशियों को राष्ट्रीयता एवं दासों को स्वतंत्रता प्रदान कर उन्हे नागरिक अधिकार दिये जाने लगे। इसके फलस्वरूप नागरिकता एवं नागरिक शास्त्र का क्षेत्र भी व्यापक होता गया।

पश्चिम मे राज्य की उत्पत्ति एवं विकास के साथ नागरिकता एवं नागरिक शास्त्र अथवा राजनीतिक-विज्ञान की संकल्पना मे भी परिवर्तन होने लगा। राज्य की उत्पत्ति के विषय में विद्वानो ने जिन मतों का प्रतिपादन किया है, उनमें 1. दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त, 2. शक्ति का सिद्धान्त, 3. पैतृक अथवा मातृ सिद्धान्त, 4. सामाजिक समझौता सिद्धान्त तथा 5. ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त प्रमुख हैं।

दैवी उत्पत्ति सिद्धान्त के अनुसार राज्य की उत्पत्ति ईश्वरीय इच्छा से हुई है और उसी की इच्छा से वह चलित है। राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है तथा राजा की आज्ञा का पालन करना प्रजा या नागरिकों का धार्मिक कर्त्तव्य है और विरोध करना पाप है। गेटिल के अनुसार—मानव इतिहास में दीर्घकाल तक राज्य ईश्वरकृत या दैवीकृत समझा जाता था और सरकार का स्वरूप धार्मिक था। इस सिद्धान्त के आधार पर नागरिकों के अधिकारों के स्थान पर उनके कर्त्तव्यों पर अधिक बल दिया गया तथा राजाज्ञा का पालन करना उसका नैतिक कर्त्तव्य एवं धर्म माना गया। नागरिक-शास्त्र मात्र धर्म अथवा नीति-शास्त्र का पर्याय बन कर रह गया। दैवी सिद्धान्त का लोगों ने स्वागत किया जब तक कि राजा एवं सम्राट का प्रशासन लोक-कल्याणकारी बना रहा तथा प्रजा एवं नागरिकों के प्रतिनिधियों से मंत्रि-परिषद के रूप में परामर्श लेते रहे, किन्तु उनके स्वेच्छाचारी एवं निरंकुश शासक बनते ही उन्हें प्रजा के विरोध का सामना करना पड़ा तथा उनके राज्य का पतन हुआ। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन प्राचीन भारत तथा इस्लामी विचारधारा में किया गया है।

पश्चिम में पुनर्जागरण एवं धर्म-सुधार आन्दोलन तथा फ्रांसिसी एवं अमरीकी क्रान्तियों के फलस्वरूप दैवी सिद्धान्त को त्याग कर जनतंत्रीय राष्ट्रों का उदय हुआ तथा नागरिकों को समुचित अधिकार प्रदान किये गये। नागरिक-शास्त्र का क्षेत्र भी विकसित हुआ तथा उसमें नागरिक के अपने प्रदेश, राज्य, राष्ट्र तथा विश्व के साथ सम्बन्धों का भी विवेचन किया जाने लगा।

राज्य की उत्पत्ति के शक्ति सिद्धान्त के अनुसार राज्य मात्र भौतिक बल का परिणाम है। राज्य शक्तिशाली लोगों द्वारा दुर्बलों पर अपना प्रभुत्व जमाने की प्रवृत्ति से उत्पन्न हुआ। ब्लुंशली का कथन है कि 'राज्य हिंसात्मक अधिपत्य की रचना है, यह शक्तिशाली के अधिकार पर आधारित है।' फ्रांसिसी विचारक वाल्टेयर ने भी इस सिद्धान्त का समर्थन करते हुए कहा है कि—'प्रथम शासक (राजा) एक भाग्यशाली योद्धा था।' प्राचीन काल में यह सिद्धान्त मान्य रहा है, किन्तु समाजवादी विचारधारा ने इस सिद्धान्त की निन्दा की है। लेनिन ने शक्ति पर आधारित शासन को एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण बतलाया है। राज्य उन पूँजीपतियों के हाथ में शोषण का साधन है जो अधिकांश जनसंख्या पर शासन करते हैं।

यह सिद्धान्त आधुनिक विचारधारा के प्रतिकूल है क्योंकि यह लोकतंत्रीय, समाजवादी एवं धर्मनिरपेक्ष शासन-व्यवस्था में नागरिकों के शोषण तथा उग्र राष्ट्रीयता एवं संघर्ष के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति एवं द्वेष का पोषक है। यद्यपि राज्य की सार्वभौमिक सत्ता के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है, किन्तु मात्र शक्ति को राज्य का आधार मानना अनुचित है। शक्ति के बल पर स्थापित राज्य के नागरिकों को कोई भी मानवोचित अधिकार प्राप्त नहीं होते क्योंकि स्वेच्छाचारी शासक निरंकुश तानाशाही बनकर उनका शोषण एवं उत्पीड़न करते हैं। इतिहास साक्षी है कि ऐसे राज्यों का शीघ्र-

पतन हो जाता है। हिटलर व मुसोलिनी जैसे तानाशाहों का पतन हुआ तथा एशिया एवं अफ्रीका में विदेशियों द्वारा स्थापित राज्यों ने भी अपनी स्वाधीनता प्राप्त की। अतः नैतिक बल की अपेक्षा केवल शारीरिक बल पर आधारित राज्य का यह शक्ति सिद्धान्त आधुनिक युग में नागरिक शास्त्र की संकल्पना के विकास में सहायक नहीं होता।

राज्य की उत्पत्ति का पैतृक सिद्धान्त समाज की आधारभूत इकाई परिवार को प्रमुखता देता है जिसमें परिवार ही कुल (कबीला) तथा राज्य में क्रमशः परिवर्तित हो जाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह सत्य होते हुए भी समाज या राज्य की उत्पत्ति एवं विकास में परिवार के अतिरिक्त अनेक तत्त्व सामाहित है। सामजिक समझौता सिद्धान्त के प्रतिपादक यह मानते हैं कि राज्य की उत्पत्ति के पूर्व मानव प्राकृतिक अवस्था में रहते थे, किन्तु अपनी कठिनाइयों से मुक्त होने के लिए उन्होंने स्वेच्छा से नागरिक समाज अथवा राज्य की स्थापना के लिए समझौता कर लिया।

रूसो इस मत का प्रबल समर्थक था जिसने समझौते का आधार सामान्य इच्छा को स्पष्ट करते हुए कहा है—'प्रत्येक व्यक्ति ने अपने समस्त जीवन और शक्ति को सामूहिक इच्छा को सौंप दिया और बदले में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन तथा शक्ति प्राप्त हो गई।[1] रूसो ने राज्य की प्रभुसत्ता को सामान्य इच्छा अथवा सामान्य जनता के कल्याण के समकक्ष माना है। यद्यपि यूरोप में 17 वी तथा 19 वीं शताब्दी में यह सिद्धान्त काफी लोकप्रिय हुआ किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से समझौता सिद्धान्त कोरी कल्पना है क्योंकि इतिहास में ऐसा कोई युग नहीं था जबकि अराजकता के मध्य समझौते द्वारा राज्य की स्थापना की गई हो। वस्तुतः मानव स्वाभावत. सामाजिक प्राणी रहा है, अत 'राज्य की उत्पत्ति भी समझौते द्वारा कृत्रिम रूप से नहीं हुई, बल्कि स्वाभाविक रूप से संस्था का जन्म हुआ। राज्य की उत्पत्ति के इन दोनों सिद्धान्तों के आधार पर नागरिक शास्त्र की संकल्पना का विकास-क्रम खोजना मानव की मूल प्रवृत्तियों के प्रतिकूल होगा। राज्य की उत्पत्ति का अन्तिम सिद्धान्त ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त ही उपयुक्त लगता है। अन्य सामाजिक संस्थाओं की भाँति राज्य का जन्म भी विकास के द्वारा हुआ किन्तु राज्य का विकास-क्रम सर्वत्र एक सा नहीं रहा है। देश-काल के अनुसार ही इसके विकास में भिन्नता रही है। वह विकास शनैः-शनैः हुआ है। इस विकास के प्रमुख तत्त्व हैं—

1. रक्त सम्बन्ध, 2. धर्म, 3. शक्ति अथवा युद्ध तथा 4. राजनैतिक चेतना

सर हेनरी मैन ने रक्त सम्बन्ध के बारे में कहा है कि समाज के इतिहास के अधुनातन अनुसंधान इस निष्कर्ष की ओर संकेत करते है कि समूहों को एकता के सूत्र में बाँधने वाला प्रारम्भिक बन्धन रक्त सम्बन्ध था।' रक्त सम्बन्ध अर्थात परिवार. बल

---

1. रूसो, जे. जे. : द् सोशियल कान्ट्रैक्ट

या कबीला समाज तथा राज्य का आधार है। मेकाइवर का कथन है—'रक्त-सम्बन्ध समाज को जन्म देता है और अन्त मे समाज राज्य को। समाज की प्रारम्भिक अवस्था में परिवार, कुल या कबीले के सदस्य को प्रचलित रीति-रिवाजों के अनुसार ही आचरण करना पड़ता था, किन्तु धर्म के समावेश द्वारा नैतिक नियमो का प्रचलन हुआ। धर्म पितृपूजा के रूप मे कुटुम्ब का अभिन्न अंग बन गया। धीरे-धीरे पितृ-पूजा का स्थान प्रकृति-पूजा ने ले लिया तथा धर्म सदाचार का आधार बन गया। राज्य की उत्पत्ति एव विकास मे शक्ति तथा युद्ध का भी बड़ा योगदान रहा है। युद्धो मे विजय के फलस्वरूप कुटुम्ब कबीलो मे, कबीले और बड़े सगठनों में विस्तृत होते गये और राज्य मे परिणत हो गये। विजेता शासक तथा विजित दास बन गये और धर्म के प्रभाव स्वरूप राजा को ईश्वर का अवतार मान लिया गया, जिसकी आज्ञा का पालन करना धार्मिक कर्त्तव्य हो गया। विस्तारवादी नीति के कारण राज्य विशाल साम्राज्यों मे परिणत हो गये।

राज्य की उत्पत्ति का चौथा सहायक तत्त्व राजनैतिक चेतना है। गिलक्राइस्ट के अनुसार 'राज्य के निर्माण के सभी तत्वों के मूल, जिनमे रक्त सम्बन्ध तथा धर्म भी सम्मिलित हैं, राजनैतिक चेतना सबसे प्रमुख तत्त्व है। राजनैतिक चेतना मनुष्य को राज्य के अन्तर्गत सगठित करती है। यह चेतना मनुष्य में जन्मजात है। अरस्तु ने जब यह कहा था कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तो उसका अभिप्राय था कि वह एक राजनैतिक प्राणी है क्योंकि उसकी दृष्टि मे राज्य तथा समाज मे कोई अन्तर नही था।

पश्चिम मे राज्य का विकास यूनान के नगर-राज्यो से क्रमश. रोम साम्राज्य, सामन्ती राज्य तथा आधुनिक राष्ट्रीय राज्यो के विभिन्न सोपानो मे हुआ। फ्रास, इटली जर्मनी तथा इंगलैण्ड के राष्ट्रीय राज्यों में स्वेच्छाचारी एवं निरकुश राज्यों को जनता की जनतांत्रिक राजनैतिक चेतना के समक्ष झुक कर प्रतिनिधि शासन की स्थापना करनी पड़ी। प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्धो की विभीषिका मे त्रस्त होकर विश्व शांति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सदभाव स्थापित करने के लिए प्रयत्न किये गये, जिनके फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्र सघ की स्थापना भी गई। अब सकीर्ण राष्ट्रीय एकता से ऊपर उठकर अन्तर्राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र की नागरिकता से विश्व की नागरिकता की ओर मानव उन्मुख है।

भारतीय विचारधारा

राज्य की उत्पत्ति के पूर्व उल्लिखित सर्वमान्य ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धान्त के अनुसार ही सर्वत्र राज्य के साथ नागरिकता एवं नागरिक-शास्त्र की संकल्पना का विकास हुआ, किन्तु इस विकास की गति देश-काल की प्रकृति के अनुरूप भिन्न रही। पश्चिम की अपेक्षा भारत मे राज्य की उत्पत्ति एवं विकास अधिक प्राचीन एवं समृद्ध है। विश्व के प्राचीनतम 'वेदों' की रचना भारत मे हुई थी जिनसे तत्कालीन राज्यों का परिचय मिलता है। वैसे तो वैदिक काल से पूर्व भारत मे विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं के समकालीन सिन्धु घाटी सभ्यता का पता हड़प्पा मोहन जोदड़ो, कालीबंगा,

लोथल आदि स्थानों के उत्खनन से लगता है। उत्खनन से प्राप्त मुद्राओं, नगर-निर्माण कला, स्नानागारों व जल-निकास व्यवस्था से जन-स्वेच्छा एवं स्वास्थ्य, अन्न-भण्डारों से धन-धान्य की सम्पन्नता एवं मृदु भाण्ड, मूर्तियों एवं मुहरों से कला-कौशल, धार्मिक विश्वास एवं भाषा की समृद्धि प्रकट होती है तथा तत्कालीन नागरिक भावना एवं नागरिक नियमों के आधार पर नागरिक शास्त्र के उन्नत स्वरूप का परिचय मिलता है। सिन्धु-घाटी सभ्यता की लिपि के पठन के अभाव में कुछ निश्चित रूप से तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु उपलब्ध अवशेषों के आधार पर यह सुनिश्चित है कि पश्चिम के यूनानी नगर-राज्यों से पूर्व तथा वैदिक काल से भी पहले लगभग 3500 ई. पू. में भारत में नगर-राज्य विद्यमान थे जिनका सम्पर्क तत्कालीन अन्य नदी घाटी सभ्यताओं—मिश्र, मैसोपोटामिया तथा चीन की प्राचीन सभ्यताओं से था।

वैदिक युग के प्रारम्भ में आर्य 'जनों' अथवा कबीलों में संगठित थे जो एक स्थान पर बसे हुए नहीं थे। जब वे कृषि एवं पशुपालन के लिए किसी प्रदेश में बसने लगे तो ग्राम या 'जनपदों' का निर्माण हुआ जो यूनान के नगर-राज्यों के समान थे। कुछ जनपदों में गणतंत्रीय तथा कुछ में राजतंत्रीय शासन-व्यवस्था थी।

गणतंत्रों में शासक प्रजा द्वारा निर्वाचित होता था किन्तु राज तंत्रों में राजा का पद वंशानुगत था। जीवन के सभी क्षेत्रों में धर्म का प्रभाव होने के कारण राज्य की उत्पत्ति के पूर्व उल्लिखित दैवी सिद्धान्त में विश्वास किया जाता था। राजा देवता स्वरूप माना जाता था जिसकी आज्ञा का पालन करना प्रजा के लिए अनिवार्य था, किन्तु राजा स्वेच्छाचारी व निरंकुश शासक नहीं होते थे। ऋग्वेद में उल्लेख है कि राजसत्ता को प्रभावपूर्ण और स्थिर रखने के लिये राजा को प्रजा की स्वीकृति प्राप्त करना अनिवार्य है। अथर्ववेद के मंत्र के अनुसार राजा अपने राज्यारोहण के समय प्रार्थना करता था कि सभा व समितियाँ, जो जनतन्त्र की दुहिताएं हैं, मेरी रक्षा करें। इस प्रकार वैदिककालीन शासक जनता के प्रतिनिधियों से निर्मित सभा व समिति नामक राजनैतिक संस्थाओं के परामर्श से राजा कार्य करता था। मन्त्रि-परिषद् से सलाह लेकर शासन करने की परम्परा प्राचीन भारत में पहले भी प्रचलित रही। वैदिक धर्म के अनुसार वर्णाश्रम व्यवस्था के नियमों का पालन करना तथा धर्मानुकूल आचरण करना प्रजा का कर्त्तव्य था तथा प्रजाहित, रक्षा एवं कल्याण का ध्यान रखना शासक के लिए अनिवार्य था। अतः वैदिक कालीन राज्य लोक-कल्याणकारी थे। ऋग्वेद में उल्लिखित रावीन्तर पर हुए दस राजाओं का युद्ध इस बात का प्रमाण है कि वैदिक काल में राज्य परस्पर संघर्षरत रहते थे तथा प्रभुसत्ता सम्पन्न होने का प्रयास कर रहे थे। सैनिक बल एवं युद्ध कला द्वारा शक्ति से राज्य सत्ता स्थापित करना तत्कालीन युग की विशेषता थी। राज्य के विकास के पूर्व उल्लिखित तत्वों का रक्त सम्बन्ध (कबीला), धर्म, शक्ति व युद्ध, राजनैतिक चेतना का समावेश विश्व के प्राचीनतम वैदिककालीन राज्यों में हो गया था। समाज एवं राज्य की लोक-कल्याणकारी व्यवस्था, धर्म एवं

नैतिक नियमों से सचालित आदर्श नागरिकता की भावना तथा धर्म एवं नीति शास्त्रों के अंग के रूप में नागरिक शास्त्र की सकल्पना वैदिक काल की अभूतपूर्व देन रही है। इस स्थिति तक पहुँचने में पश्चिमी देशों को अधिक समय लगा।

वैदिक काल के पश्चात् प्राचीन भारत में रामायण एवं महाभारत, बौद्ध एवं जैन तथा मौर्य एवं गुप्त कालों में राज्य एवं नागरिक भावना का विकास परम्परागत मर्यादा के अनुसार होता रहा, यह तत्कालीन धर्मशास्त्रों से यह प्रकट होता है।

स्मृति ग्रंथों में नैतिक नियमों एवं राजनैतिक मर्यादाओं का प्रचुर उल्लेख मिलता है जो नागरिक शास्त्र की ही विषय-वस्तु है। स्मृतिकारों ने मनुष्यों को कर्म-अकर्म, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य आदि का ज्ञान कराने के लिए धर्म की व्यवस्था की।

स्मृतियों में मनुस्मृति प्रमुख है, जिसे मानव-धर्म शास्त्र भी कहते हैं। इसमें तत्कालीन राज्य, समाज, राजा व प्रजा के सामूहिक व नागरिक का व्यक्तिगत अधिकार व कर्त्तव्य का निर्धारण व अवज्ञा की स्थिति में दण्ड का निर्धारण किया गया है। इसके अतिरिक्त शास्त्रकारों ने कुछ विशेष धर्मों की व्यवस्था भी की जो देश-काल के अनुसार परिवर्तित हो सकते हैं जैसे आत्मधर्म, कुलधर्म, जातिधर्म, ग्रामधर्म, देशधर्म, युगधर्म, राजधर्म तथा आपद धर्म।

पाणिनी ने सर्वप्रथम नागरिक के लिए 'नागरिक' शब्द का प्रयोग किया तथा उसे कलाओं एवं नगरीय चातुर्य से युक्त बतलाया। वात्स्यायन ने भी 'कामसूत्र' में नागरिक को अनुकरणीय आदर्श माना है।

स्मृति ग्रंथों की इस धर्म-व्यवस्था से प्राचीन भारत में जहाँ एक ओर आदर्श नागरिक के आचरण व्यवहार सम्बन्धी सकल्पना परिपुष्ट हुई वहीं दूसरी ओर राज्य, शासन-प्रबन्ध एवं राजनीति की सम्बन्धी सकल्पना भी साकार हुई। इसके लिये मौर्यवंशी शासक चन्द्र गुप्त के महामात्य चाणक्य अथवा कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' नामक ग्रंथ का योगदान विशेष उल्लेखनीय है। इसमें राजा तथा प्रजा (नागरिकों) के कर्त्तव्य एवं अधिकारों, परस्पर सम्बन्धों, प्रशासन के विभिन्न अंगों तथा कूटनीति के सिद्धान्तों की विशद विवेचना की गई है।

गुप्तकाल में कामन्दक ने अपने ग्रंथ 'नीतिशास्त्र' में कौटिल्य की भाँति शत्रु से सावधान रहकर कूटनीति अपनाने पर बल दिया। डा. यू. एन. घोषाल ने राजनीति को नैतिकता से पृथक करने के इस प्रयास का उल्लेख किया है। अतः राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नैतिकता को त्यागकर कूटनीति से काम लेने की प्रक्रिया द्वारा राजनीति-विज्ञान की सकल्पना में व्यावहारिकता का समावेश हुआ। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान के आधार पर नागरिक शास्त्र की सकल्पना में प्रभुतासम्पन्नता, लोकतन्त्र, समाजवाद तथा धर्मनिरपेक्षता के नये आयाम जुड़ने तथा देश की विदेश नीति अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना तथा सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों की विभिन्न समस्याओं के समाधान के प्रयास से नागरिक शास्त्र का क्षेत्र व्यापक बना।

इस्लामी विचारधारा

इस्लाम का उदय आज से लगभग 1350 वर्ष पूर्व अरब देश में ऐसे समय हुआ जब अरब अनेक कबीलों में विभक्त थे तथा रुढ़ियों एवं कुप्रथाओं से ग्रस्त हो खानाबदोश जीवन व्यतीत कर रहे थे। पैगम्बर मोहम्मद साहब ने अरब-वासियों को सत्य तथा धर्म का मार्ग बतलाया तथा अल्लाह की इच्छाओं तथा निर्देशों को भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रकट किया जिन्हें 'कुरान' में सग्रहीत किया गया।

इस्लामी विचारधारा के अनुसार नागरिकों के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों तथा राज्य एवं समाज से उसके सम्बन्धों का सचालन 'शरिअत' (मुस्लिम धार्मिक विधि या कानून) द्वारा होता है। शरिअत के अन्तर्गत कुरान, सुन्नाः तथा हदीस (पैगम्बर का चरित्र और उक्तियाँ) मानी जाती हैं। शरिअत के अन्तर्गत पाँच तरह के मजहबी अहकाम हैं—(1) फर्ज अर्थात् जो सख्ती से मुसलमानों पर लागू है, (2) हराम अर्थात् जो मुसलमानों के लिये वर्जित है, (3) मन्दूब अर्थात जिनके पालन की मुसलमानों को सलाह दी गई है, (4) मकरूह अर्थात् जिन्हें न करने की सलाह दी गई है, (5) जायज अर्थात् वे बातें जिनके प्रति इस्लाम उदासीन है। ये मजहबी अहकाम 'फिकाः' कहे जाते है जिसका अर्थ है 'मनुष्य के अधिकारों और जिम्मेदारियों की वह जानकारी जो उसने कुरान या सुन्नाः से हासिल की हो या जिसके बारे में आलिम एक राय हो। अतः आदर्श नागरिक का आचार-व्यवहार विवेक द्वारा शरिअत अर्थात् धार्मिक विधि पर आधारित है।

इस्लामी विचारधारा के अनुसार समाज व राज्य ईश्वर की पूर्वनिर्धारित परियोजना के अनुसार निर्मित है तथा मनुष्य को अपने शुभ कर्म द्वारा ईश्वर के इस प्रयोजन की पूर्ति करना चाहिए। डा. गिरजाशंकर प्रसाद मिश्र ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है—"यह (समाज) पहले से ही अस्तित्व मे है और इस कारण मुस्लिम का अर्थ है, इस समाज का सदस्य होना तथा पृथ्वी पर ईश्वर के प्रयोजन की पूर्ति का प्रयास करना। शुभ कर्म कुरान मे बताई गई जीवन-यापन की विधा है और जिसकी अभिव्यक्ति मुस्लिम समाज है। पृथ्वी पर मुस्लिम समुदाय द्वारा ईश्वरीय साम्राज्य की स्थापना के ऐतिहासिक प्रयास मे सहभागिता द्वारा मनुष्य ईश्वर के निकट पहुँचता है। इस्लाम मे समाज की सर्वोपरिता मानी गई है। मुस्लिम समुदाय केवल एक सामाजिक वर्ग नहीं है, यह एक धार्मिक संस्था है। धार्मिक संघ तथा राज्य अभिन्न है। इस्लाम में राज्य को नैतिक संस्था के रूप में उपकल्पित किया गया है। शरिअत के आधार पर जीवन-विधा कुरान में दी गई है और राज्य इसमे लेशमात्र भी परिवर्तन अथवा परिवर्धन नहीं कर सकता। ईश्वर के संरक्षत्व मे एक सगठित समाज के रूप मे इस्लाम का अस्तित्व एक धर्मनिष्ठ एवं विद्वान उलमा-वर्ग (धर्म शास्त्रियों)पर निर्भर है।

भारतीय संविधान लागू होने पर भारतीय एवं इस्लामी विचारधारा के अनुसार नागरिकता एवं नागरिक-शास्त्र की संकल्पना, लोकतन्त्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के आधुनिक तत्त्वों से समन्वित हो अपने तथा परम्परागत नैतिक मूल्य को सुरक्षित रखे हुए विकसित हो रही है।

नागरिक शास्त्र का अर्थ

नागरिक शास्त्र की सकल्पना नागरिकता के स्वरूप के साथ परिवर्तित, संशोधित एव परिवर्धित होती रही। पाश्चात्य, भारतीय तथा इस्लामी विचारधाराओं के अनुसार हम देख चुके है कि देशकाल के अनुसार नागरिकता की सकल्पना विभिन्न स्वरूप धारण करती हुई शनै शनै विकसित होती गई तथा आधुनिक काल मे उसमे लोकतत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीयता एव अन्तर्राष्ट्रीयता के नये आयाम जुड़ने से वह परिपुष्ट हुई। परिवार, कुल, कबीला, प्रदेश तथा राष्ट्र की परिधियो में नागरिकों के अधिकार एव कर्त्तव्य विस्तृत होते हुए आज 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना के अनुकूल समस्त विश्व की नागरिकता की ओर उन्मुख हो रहे है।

नागरिकता का अर्थ प्रायः विभिन्न प्रकार से दिया जाता है। कुछ लोग नागरिकता को प्रत्येक क्षेत्र मे व्याप्त देखते हैं तथा कुछ लोग इसे राजनीतिक क्षेत्र तक ही सीमित रखते हैं। इससे अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न हुई हैं। अतः इसकी उपयुक्त सकल्पना एवं अर्थ के विषय मे स्पष्ट होना अत्यन्त आवश्यक है ताकि नागरिक-शास्त्र विषय का अध्ययन-अध्यापन वस्तुनिष्ठ बन सके। नागरिकता के दो अर्थ ग्रहण किये जा सकते हैं। अपने सीमित अर्थ मे नागरिकता का अर्थ उस कानूनी प्रतिष्ठा से है, जो किसी नागरिक को उसके देश व सरकार से प्राप्त होती है तथा जिसका स्वरूप राजनैतिक होता है। नागरिकता का दूसरा अर्थ व्यापक है जिसके अनुसार इसमें नागरिकता द्वारा उसमे सम्बद्ध सभी समुदायो के प्रति अभिव्यक्त गुण समाविष्ट होते हैं। लोकतन्त्रीय समाज मे नागरिक का सम्बन्ध अनेक समुदायो से होता है जो उसके जीवन का अभिन्न अंग बन जाते हैं। एस. ई. डिमण्ड का कथन है कि जनतांत्रिक समाज में नागरिक के सभी सम्बन्धों, राजनैतिक तथा अन्य, पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि ये सम्बन्ध और सगठन ही नागरिकता के आवश्यक तत्त्व है जो समुदाय मे उसके लोकतान्त्रिक जीवन मे ताने-बाने के रूप मे गुथित हो जाते हैं। आज के जनतांत्रिक समाज मे नागरिकता को एक जीवन-पद्धति माना जाने लगा है तथा नागरिक शास्त्र के सैद्धान्तिक शिक्षण की अपेक्षा उसके क्रियात्मक पक्ष पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है।

नागरिकता का उद्देश्य वैयक्तिक तथा समाजिक विकास करना है। यद्यपि मानव की मूल प्रवृत्तियों के कारण उसमे अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना होती है, किन्तु साथ ही स्वभावतः सामाजिक प्राणी होने के कारण उसमें समाज या समुदाय के प्रति सहयोग एव त्याग की अभिवृत्तियों में सामंजस्य करना कठिन कार्य है। इसीलिये रूसो ने कहा है कि—मनुष्य अथवा नागरिक इन दो विकल्पों में से किसी एक का चुनाव करना है, हम दोनों का निर्माण एक साथ नहीं कर सकते किन्तु इस कथन का तात्पर्य यह है कि यद्यपि वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास का सामंजस्य करना कठिन है किन्तु फिर भी हमें दोनों का विकास

करना है क्योंकि दोनों में कोई विरोधाभास नहीं है तथा नागरिक के सर्वांगीण विकास के लिए दोनों की आवश्यकता है।

प्रत्येक व्यक्ति की विभिन्न निष्ठाएँ होती हैं। प्रायः निकटतम समुदाय से अधिक लगाव होता है। ये निष्ठाएं परस्पर विरोधी होकर आपस में संघर्षरत भी रहती हैं। इसी प्रकार जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति आदि के प्रति भी व्यक्ति की निष्ठाएं प्रबल होती हैं जो धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, लोकतन्त्र तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव के विकास में बाधक होती है। अतः स्वस्थ एवं समाजोपयोगी नागरिकता के लिए यह आवश्यक है कि इन विभिन्न निष्ठाओं में संतुलन एवं सामंजस्य स्थापित किया जाय। मुनेश्वर प्रसाद का कथन है कि–ये भक्तियाँ (निष्ठाएं) बहुधा आपस में टकराया करती है और इनमें पारस्परिक वैमनस्य उत्पन्न होता रहता है। नागरिक को इन भक्तियों में संतुलन स्थापित करना पड़ता है, किन्तु वस्तुतः भक्तियों का संतुलन नागरिक के विभिन्न दायित्वों की एक बहुत बड़ी मांग है। नागरिक को छोटे समुदाय के प्रति संकीर्ण निष्ठाओं से ऊपर उठ कर यद्यपि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की ओर उन्मुख होना है तथापि इसका यह अर्थ नहीं कि छोटे समुदायों के प्रति उसकी निष्ठा का नितान्त अभाव हो। वस्तुतः छोटे लोकतान्त्रिक जीवन-पद्धति की निष्ठाएं ही राष्ट्र एवं विश्व के बड़े समुदायों के प्रति निष्ठा में विकसित होती हैं। मैकाइवर तथा पेज ने इस तथ्य को इस प्रकार प्रकट किया है कि बड़ा समुदाय हमें अधिक समृद्ध एवं विविधतायुक्त संस्कृति के लिए अवसर, स्थिरता, अर्थव्यवस्था तथा सतत प्रेरणा प्रदान करता है, किन्तु अपेक्षाकृत छोटे समुदाय में रहने से हमें अधिकाधिक घनिष्ठ संतुष्टियाँ प्राप्त होती हैं। सम्पूर्ण जीवन-प्रक्रिया के लिए ये दोनों अपरिहार्य हैं। नागरिक शास्त्र नागरिकता की इसी व्यापक संकल्पना एवं अर्थ के आधार पर नागरिक के इन्हीं समस्त समुदायों से उसके संबन्धों की व्याख्या करता है ताकि कि एक आदर्श सभ्य समाज राष्ट्र एवं विश्व का निर्माण हो सके।

नागरिक शास्त्र की परिभाषा

कुछ प्रमुख पाश्चात्य विद्वानों ने नागरिक-शास्त्र की परिभाषा इस प्रकार की है :—

एफ. जे. गूल्ड—'नागरिक शास्त्र उन सभी मानवीय संस्थाओं, आदतों तथा क्रियाओं का अध्ययन करता है जिनके प्रति नर-नारी अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हैं तथा राजनैतिक समाज में सदस्यता के लाभों की प्राप्ति करते हैं।'

ई. एम. ह्वाइट—'नागरिक-शास्त्र मानव-विज्ञान की वह शाखा है जो नागरिक से सम्बन्धित समस्त विषयों (सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक) का विचार करती है। इसके साथ ही यह नागरिक के अतीत, वर्तमान, भविष्य, स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पहलुओं का विवेचन करती है।'

पैट्रिक गेड्स मावेल हिल—'नागरिक-शास्त्र वह विज्ञान है जिसमें नगर के केन्द्र एवं प्रान्त के साथ सम्बन्ध भी सम्मिलित हैं।'

गेड्स—'नागरिक शास्त्र वह विज्ञान है जिसका उद्देश्य सामाजिक संस्थाओं तथा उनके विकास का अध्ययन करना ही नहीं है वरन् यह समाज के प्रति सक्रिय भक्ति उत्पन्न करने की प्रेरणा देता है।—सामाजिक निरीक्षण को समाज-सेवा में लगाना ही नागरिक शास्त्र है।'

अरस्तू—'नागरिक-शास्त्र वह विज्ञान है जो अच्छी सामाजिक दशाओं का अध्ययन करता है।'

आर्थर एम. वाइनिंग व डेविड एच. वाइनिंग—'नवीन नागरिक-शास्त्र को प्रायः सामुदायिक नागरिक-शास्त्र के नाम से पुकारा जाता है जिसमें सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत स्थानीय समुदाय, नगरीय समुदाय, राज्यीय समुदाय, राष्ट्रीय समुदाय तथा विश्व समुदाय आते हैं।'

भारतीय विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं में से कुछ प्रमुख निम्नांकित है—

पुताम्बेकर—'नागरिक शास्त्र नागरिकता का विज्ञान एवं दर्शन है।'

राजनारायण गुप्त—'नागरिक शास्त्र वह विज्ञान है जो सबसे अच्छे सामाजिक जीवन का अध्ययन करता है।'

डा. बेनी प्रसाद—'नागरिक शास्त्र के मुख्य विषय समाज में मनुष्य के अधिकार तथा कर्तव्य हैं जिनको वह समाज में रहकर पूर्ण करता है।'

उपर्युक्त परिभाषाएं नागरिक शास्त्र की पूर्व उल्लिखित संकल्पना एवं अर्थ पर आधारित उसके विधायक तत्वों को न्यूनाधिक रूप से रेखांकित करती है।

इनमें ह्वाइट तथा वाइनिंग की परिभाषाएं नागरिक-शास्त्र को एक विज्ञान मानती हैं तथा कुछ की दृष्टि में यह एक कला है।

नागरिक शास्त्र के स्वरूप

1. विज्ञान के रूप में—नागरिक-शास्त्र को परिभाषित करने वाले अधिकांश विद्वानों ने इसे विज्ञान माना है, किन्तु यह अभी विवादास्पद बना हुआ है। अरस्तू ने इसे सर्वोच्च विज्ञान की संज्ञा दी है। प्रारम्भ में नागरिक-शास्त्र तथा राजनीतिक विज्ञान को समानार्थक माना जाता था। बकल, कामे, मेटलैंड, आदि विद्वानों ने इसके विज्ञान होने से असहमति प्रकट की है। बकल ने तो यहां तक कहा है कि—राजनीति विज्ञान होने से तो दूर रहा, यह तो कलाओं में भी सबसे निकृष्ट कला है। मेटलैंड ने लिखा है कि— जब मैं राजनीति विज्ञान के शीर्षक के अधीन प्रश्न-पत्रों के समूह को देखता हूँ तो मुझे प्रश्नों पर नहीं, बल्कि उनके शीर्षक पर खेद होता है।

नागरिक-शास्त्र विज्ञान न मानने तथा मानने के विपक्ष तथा पक्ष के तर्कों पर विचार करने से पूर्व यह देखना होगा कि विज्ञान का क्या अर्थ है तथा इस कसौटी पर नागरिक-शास्त्र किस सीमा तक खरा उतरता है।

गार्नर के शब्दों में—'विज्ञान का असली अर्थ तो यह विद्या है जिसका अध्ययन

एक क्रमबद्ध नियम के अनुसार किया जा सके और जो कारण और कार्य का सम्बन्ध स्थापित कर सके। विज्ञान किसी विषय से सम्बन्धित उस ज्ञान-राशि को कह सकते हैं जो विधिवत् पर्यवेक्षण, अनुभव एवं अध्ययन के द्वारा निर्मित हुई हो और जिसके तथ्य परस्पर सम्बद्ध, क्रमबद्ध और वर्गीकृत किये हुए हों।'

(क) विज्ञान मानने के तर्क—

नागरिक-शास्त्र को विज्ञान मानने के लिए निम्नलिखित तर्क दिये जाते हैं—

1 नागरिक-शास्त्र के तथ्यों पर मतैक्य का अभाव—नागरिक-शास्त्र का यह तथ्य कि प्रजातंत्र शासन-प्रणाली सर्वश्रेष्ठ है अनेक लोग इसे खराब समझकर राजतंत्र या कुलीनतंत्र को श्रेष्ठ समझते हैं। इसी प्रकार संसदात्मक शासन प्रणाली की अपेक्षा कुछ लोग अध्यक्षीय प्रणाली को पसन्द करते है तथा कुछ लोग नागरिकों पर राज्य के पूर्ण नियंत्रण पर बल देते हैं, जबकि अन्य अधिकाधिक स्वतन्त्रता के पक्ष-पाती है। नागरिक शास्त्र के नियम, सिद्धान्त या निष्कर्ष भौतिक विज्ञानों के अनुसार निश्चयात्मक तथा अटल नहीं हैं। अतः नागरिक-शास्त्र विज्ञान नहीं है।

2. कार्यकारण सम्बन्ध का अभाव—भौतिक विज्ञानों की भांति नागरिक-शास्त्र में नागरिकों के सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के सम्बन्ध में कार्य-कारण शृंखला स्थापित नहीं की जा सकती। जिस प्रकार भौतिकशास्त्र में गुरुत्वाकर्षण शक्ति तथा रसायनशास्त्र में पानी को एक निश्चित तापक्रम तक गर्म करने पर वाष्प में तथा ठंडा करने पर हिम में परिणत करने की प्रक्रिया में कार्य-कारण सम्बन्ध निश्चयात्मक रूप से स्थापित किया जा सकता है, उसी प्रकार नागरिक-शास्त्र के क्षेत्र में निश्चित कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं खोजे जा सकते। उदाहरणार्थ फ्रांस या चीन की क्रान्ति का कोई एक स्पष्ट कारण खोज पाना नितान्त असम्भव है क्योंकि राजनैतिक क्षेत्र में अनेक जटिल तत्व अथवा कारण रहते है तथा यह भी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि इन क्रान्तियों के जैसे ही कारण एवं परिस्थितियाँ अन्यत्र उत्पन्न होने से वैसे ही परिवर्तन होंगे।

3. *वैज्ञानिक पद्धतियों के प्रयोग का अभाव—नागरिक-शास्त्र को विज्ञान न मानने* का एक कारण यह बतलाया जाता है कि विज्ञान के अनुसार इसमें प्रयोगशाला की भांति कोई परीक्षण व निरीक्षण कर निष्कर्ष नहीं निकाले जाते। जिस प्रकार रसायनशास्त्र की प्रयोगशाला में हाइड्रोजन व ऑक्सीजन को एक निश्चित मात्रा में संयोग करने पर पानी बन जाता है, उस प्रकार नागरिक-शास्त्र की कोई प्रयोगशाला नहीं है जिसमें प्रयोग कर निष्कर्ष द्वारा नियम बनाये जा सकें। आर. एच. सॉल्टमैन ने इसीलिए कहा है कि हम जीवन के उस भाग को, जिसे राजनीति कहा जाता है, अथवा संगठन के उस अंग को, जिसे राज्य कहा जाता है, मानव-समाज के जटिल ढाँचे से अलग कर करके समझने की आशा नहीं कर सकते। व्यवहार में भी देखा जाता है कि एक राज्य में एक प्रकार की शासन-प्रणाली सफल होती है तो दूसरे राज्य में वह असफल होती है।

उपर्युक्त तर्कों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि नागरिक शास्त्र विज्ञान नहीं है। कॉम्टे ने कहा है कि—विज्ञान में निश्चितता व स्पष्टता होती है। विज्ञान के निष्कर्ष सदा के लिए सही होते हैं, राजनीति विज्ञान तथा नागरिक-शास्त्र में ऐसी कोई विशेषता नहीं है। अत वह विज्ञान होने का दावा नहीं कर सकता।

(ख) विज्ञान के पक्ष में तर्क—

नागरिक शास्त्र को विज्ञान मानने वाले विद्वानो ने उपरोक्त तर्कों का खण्डन कर उसे विज्ञान की कोटि में माना है।

इनका कथन है कि मतैक्य के अभाव में इसे विज्ञान न मानना उचित नहीं है क्योंकि मतैक्य के अभाव के लिये वैज्ञानिकता उत्तरदायी नहीं बल्कि किसी एक शासन-प्रणाली का भिन्न स्थानो पर सफल अथवा असफल होना देश-काल के अनुसार मनुष्यों की परिवर्तनशील प्रकृति है। इसके अतिरिक्त विचारकों की मान्यताएँ भी मतैक्य के अभाव के लिये उत्तरदायी हैं। लेसली स्टेफन का कथन है कि —'अन्य मनुष्यों की भाँति दार्शनिक की भी अपनी मान्यताएँ होती हैं।'

नागरिक-शास्त्र में भौतिक विज्ञान की भाँति कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करने की संभावना न होना भी पूर्णत सत्य नहीं है। भौतिक विज्ञान में प्रयोगशाला में वस्तुओं पर प्रयोग का कार्य-कारण सम्बन्ध निश्चित रूप में स्थापित किये जा सकते है क्योंकि प्रयोग की वस्तुएँ जड तथा निष्प्राण होती हैं किन्तु नागरिक-शास्त्र के विषय का मनुष्य से सम्बन्ध है जिसमें मानव-प्रकृति की परिवर्तनशीलता तथा समाज, राष्ट्र एव विश्व जैसी वृहद् प्रयोगशाला के कारण भौतिक विज्ञान की भाँति निश्चयात्मक कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं खोजे जा सकते। तथापि नागरिक शास्त्र एक विज्ञान है क्योंकि मानव-प्रकृति की परिवर्तनशीलता के होते हुए भी इसके सामान्य नियम तथा सिद्धान्त खोजे जा सकते हैं। ब्राइस ने कहा है कि मानव-प्रकृति की प्रवृत्तियों में एकरूपता तथा समानता पाई जाती है, जिसकी सहायता से हम यह पता लगा सकते हैं कि एक ही प्रकार के कारणों से प्रभावित होकर मनुष्य बहुधा एक ही प्रकार के आचरण करता है। इससे कार्यों का वर्गीकरण किया जा सकता है, उनका पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है और क्रमबद्ध करके सामान्य तथा प्रचलित प्रवृत्तियों के आधार पर अध्ययन किया जा सकता है।

नागरिक-शास्त्र समाज विज्ञान की एक शाखा है और समाज विज्ञान (राजनीति विज्ञान, इतिहास, समाज शास्त्र, अर्थ शास्त्र आदि) की भाँति नागरिक-शास्त्र में भी वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। गार्नर की पूर्व उल्लिखित विज्ञान की परिभाषा के अनुसार नागरिक-शास्त्र की विषय-वस्तु भी विधिवत् पर्यवेक्षण, अनुभव एवं अध्ययन द्वारा कार्य-कारण सम्बन्ध के आधार पर परस्पर सम्बद्ध, क्रमबद्ध तथा वर्गीकृत है।

नागरिक-शास्त्र एक विज्ञान है, किन्तु भौतिक विज्ञान की भाँति वह एक पूर्ण विज्ञान नहीं, अपितु एक अपूर्ण विज्ञान है जिसके नियम सनातन तथा सभी स्थितियों में सत्य नहीं होते क्योंकि मानव स्वभाव की परिवर्तनशीलता उसका एक आवश्यक तत्व है।

इसीलिए ब्राइस ने नागरिक-शास्त्र की तुलना अन्तरिक्ष या मौसम विज्ञान से की है तथा डा. एलफ्रेड मार्शल ने इसकी तुलना ज्वार-भाटा विज्ञान से की है। मौसम विज्ञान या ज्वार-भाटा विज्ञान की ही भाँति नागरिक-शास्त्र भी विज्ञान है जिसमें व्यक्ति एवं आदर्श समाज की संम्भावनाएँ या भविष्यवाणी तो की जाती है किन्तु यह प्रायः अनुमान से की जाती है। इसीलिये *गिलक्राइस्ट का मत है कि सामाजिक विज्ञानों में प्राकृतिक विज्ञानों की* भाँति शुद्धता प्राप्त करना असम्भव है, परन्तु सामाजिक समस्याएँ उन्ही वैज्ञानिक विधियों से प्रतिपादित की जा सकती है, जिनसे भौतिक-शास्त्र एव रसायन-शास्त्र की समस्याएँ हल की जाती हैं।

कला पक्ष

कई विद्वान नागरिक-शास्त्र को 'कला' की श्रेणी मे मानते हैं। कला का अर्थ व्हाइट ई. एम. वाइट के अनुसार वास्तविक जीवन में ज्ञान का प्रयोग ही करना है। गेटेल ने भी नागरिक-शास्त्र को कला मानते हुए कहा है कि राजनीति कला का उद्देश्य उन सिद्धान्तों अथवा आचार-विचार के नियमो को निश्चित करना है जिनका पालन करना राजनीतिक संस्थाओं के सफल संचालन के लिये आवश्यक होता है।

विज्ञान तथा कला दोनों रूपों में

नागरिक-शास्त्र कला एवं विज्ञान दोनो है। यह एक विज्ञान है, चूँकि इसका ज्ञान क्रमबद्ध एव कार्य व कारण से सबन्धित है। इसे हम कला भी मानते हैं क्योकि इसका लक्ष्य व्यावहारिक जीवन मे नागरिक-अधिकारों का उपभोग कर आदर्श समाज व अच्छे नागरिक का निर्माण करना है। नागरिक शास्त्र के सिद्धान्तो का ज्ञान व व्यावहारिक जीवन में प्रयोग आवश्यक है। नागरिक-शास्त्र नागरिकता के जीवन के साथ अच्छे जीवन की कला भी है।

नागरिक शास्त्र का क्षेत्र

नागरिक-शास्त्र के क्षेत्र से तात्पर्य उसकी विषय-वस्तु से है जिसके अन्तर्गत नागरिक से सम्बन्धित समस्त सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक तथ्यों एव कार्य-कलापो का समावेश हो। आज के युग मे नागरिक-शास्त्र की संकल्पना क्रमशः विकसित होती हुई अत्यन्त व्यापक हो गई है।

नागरिक-जीवन विभिन्न मानव-समुदायो से संचालित होता है जिन्हें सात वृत्तों—परिवार, पड़ोस, स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं विश्व समुदायो द्वारा प्रदर्शित किया गया है जिनके प्रति नागरिक की निष्ठाएँ क्रमशः होती हुई व्यापक होती जाती है। इसीलिए प्रायः कहा जाता है कि 'नागरिक-शास्त्र का क्षेत्र ऐसे वृत्त के समान है जिसका अर्धव्यास बढ़ता चला गया है।'

ए. जे. शॉ के अनुसार, नागरिक-शास्त्र का क्षेत्र बहुत व्यापक है। यह समस्त सामाजिक विज्ञानों की मुख्य विशेषताओं मे सामंजस्य स्थापित करता है तथा उन्हें व्यावहारिक आधार प्रदान करता है। नागरिक-शास्त्र सामाजिक विज्ञान की एक शाखा है। जिस प्रकार

अन्य शाखाएँ— समाज शास्त्र, अर्थ शास्त्र, इतिहास, भूगोल आदि मानव-जीवन के विभिन्न पक्षों का अध्ययन है, उसी प्रकार नागरिक-शास्त्र मानव-जीवन के एक विशेष पक्ष नागरिक-जीवन का अध्ययन है। यद्यपि अपने व्यापक रूप में नागरिक-शास्त्र का सह-सम्बन्ध अन्य सभी सामाजिक विज्ञानों से है नागरिक-शास्त्र के क्षेत्र के अन्तर्गत समाज, राज्य एवं सरकार, अधिकार एवं कर्तव्य, नागरिक-जीवन को प्रभावित करने वाली विचारधाराएँ एवं संस्थाएँ तथा वर्तमान के साथ अतीत एवं भावी समाज का अध्ययन किया जाता है।

नागरिक-शास्त्र के क्षेत्र का निर्धारण उसके अध्ययन के उद्देश्यों पर निर्भर होता है। नागरिक-शास्त्र का प्रमुख उद्देश्य नागरिक-जीवन का प्रशिक्षण देना है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान व प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रस्तावित दस वर्षीय विद्यालयीय शिक्षा-क्रम में नागरिक-शास्त्र के उद्देश्य एवं क्षेत्र के उल्लेख में यह दर्शाया गया है कि मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान की अपेक्षा नागरिक-जीवन का प्रशिक्षण देना नागरिक-शास्त्र का उद्देश्य होना चाहिए। नागरिक-शास्त्र के शिक्षाक्रम में ऐसे समाजपयोगी अपरिहार्य ज्ञान का समावेश होना चाहिए जो न केवल नागरिक-प्रक्रियाओं का अवबोध ही कराये अपितु वह नागरिक क्षमताओं एवं योग्यताओं के विकास का प्रशिक्षण भी दे। इस दृष्टि से नागरिक-शास्त्र के क्षेत्र के अन्तर्गत सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक उन सभी तथ्यों एवं कार्य-कलापों का समावेश किया जाना चाहिए जो एक क्रियाशील एवं कुशाग्र बुद्धि सम्पन्न नागरिकता का विकास करे, सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं की संरचना एवं कार्यविधि का अवबोध कराये तथा विश्व-शान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय-सद्भाव की स्थापना में संयुक्त राष्ट्रसंघ के महत्वपूर्ण योगदान को समझने में सहायक हो सके।

जिस प्रकार अन्य सामाजिक विज्ञानों के अपने क्षेत्र के अनुसार विशेष महत्व होता है उसी प्रकार नागरिक-शास्त्र का भी अपना क्षेत्र है तथा उसके अध्ययन अध्यापन का अपना महत्व है।

नागरिक शास्त्र का महत्व

मुदालियर माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने आज के लोकतान्त्रिक युग में नागरिक-शास्त्र का महत्व प्रकट करते हुए कहा है कि 'लोकतन्त्र में नागरिकता एक अत्यन्त दुष्कर एवं चुनौतीपूर्ण उत्तरदायित्व है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को सावधानीपूर्वक प्रशिक्षित किया जाना है'[1] नागरिक शास्त्र इस प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त विषय है। राजनीति नागरिक-शास्त्र का ही एक विशिष्ट अंग है, अतः प्रो. गोल्ड का कथन है कि—'राजनीति का सम्बन्ध उस प्रत्येक व्यक्ति से है जिसमें उत्तरदायित्व की पुष्ट भावना है क्योंकि हर एक व्यक्ति इनसे प्रभावित होता है।'[2]

---

1. मुदालियर माध्यमिक शिक्षा आयोग रिपोर्ट पृ. 23
2. (1935) उद्धृत पृष्ठ 19

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् के दस वर्षीय विद्यालयीय शिक्षा-क्रम में सामाजिक विज्ञानों (नागरिक-शास्त्र, इतिहास, भूगोल तथा अर्थशास्त्र) के शिक्षण का महत्व प्रकट करते हुए कहा गया है कि—'सामाजिक विज्ञान के विद्यालयों में शिक्षण का प्रभावी कार्यक्रम विद्यार्थियों को विभिन्न सामाजिक आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाओं के अन्तर्गत लोगों के रहने तथा कार्य करने की शैली में तीव्र अभिरुचि लेने के लिए सहायक होना चाहिए। इसे विद्यार्थियों में मानव-सम्बन्धों, सामाजिक मूल्यों तथा अभिवृत्तियों की अन्तर्दृष्टि भी विकसित करना चाहिए। ये भावी विकासमान नागरिकों को समुदाय, राज्य, देश तथा विश्व-समस्याओं मेंप्रभावी रूप से भाग लेने के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं।'

सामाजिक विज्ञानों में नागरिक-शास्त्र ही एक ऐसा विषय है। जिसके व्यापक क्षेत्र में उन समस्त मानव-सम्बन्धों का समावेश है जो आदर्श नागरिक एवं समाज की स्थापना में सहायक होते है। आवश्यकता इस बात की है कि नागरिक-शास्त्र की विषय-वस्तु का विभिन्न शिक्षा-स्तरों के अनुकूल चयन एवं उसका प्रभावी सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक शिक्षण दिया जाय ताकि यह अधिकाधिक उपयोगी बन सके। कोठारी शिक्षा आयोग (1966) के प्रतिवेदन का प्रारम्भिक वाक्य यह है कि भारत के भविष्य का निर्माण उसके कक्षा-कक्ष में हो रहा है। यद्यपि सम्पूर्ण शिक्षण-व्यवस्था को दृष्टिगत रखते हुए लिखा गया है किन्तु इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया में नागरिक-शास्त्र विषय के अध्ययन-अध्यापन का विशेष योगदान होना चाहिए ताकि कि इस विषय का महत्त्व सार्थक हो सके।

2 | नागरिक-शास्त्र : विद्यालय पाठ्यक्रम में स्थान

नागरिकशास्त्र की सकल्पना के विकास का विवेचन करते समय यह स्पष्ट हो चुका है कि मानव के स्वभावतः सामाजिक प्राणी होने के कारण नागरिकशास्त्र की मूल भावना नागरिकता एव नागरिक-भावना मानव के उत्पत्ति क्रम के समय ही अस्तित्व में आ गई थी किन्तु समाज एव राज्य के विकास के साथ-साथ इसका शनैः शनैः परिवर्तन, सशोधन एव परिवर्धन होता रहा। इसके ऐतिहासिक कारण रहे हैं जिन पर विचार करना वाछनीय है। प्रारम्भ में परिवार, कबीला तथा कुल की सकुचित सीमा में परम्परागत रीति-रिवाजो से संचालित इन सामाजिक सस्थाओ के सदस्य के रूप मे मनुष्यों के आचरण एव उनकी नागरिक-भावना धार्मिक तथा नैतिक मर्यादा एवं नियमो के नियन्त्रण में आ गई। राज्यादर्शों के अनुकूल राजा तथा नागरिक (प्रजा) के सम्बन्ध 'राज्य की दैवी उत्पत्ति' के सिद्धान्त से परिचालित होने लगे। नागरिक द्वारा राज्याज्ञा का पालन करना धार्मिक कर्तव्य माना जाने लगा। यह व्यवस्था राजा द्वारा राज्य के लोक कल्याणकारी शासन के समय सुचारु रूप से चलती रही किन्तु राजा के स्वेच्छाचारी एव निरकुश शासक होते ही प्रजा (नागरिकों) में विद्रोह एव राजनैतिक चेतना की जागृति हुई।

राष्ट्रीय राज्यो की उत्पत्ति, प्रजातन्त्र, समाजवाद एव धर्मनिरपेक्षता की विचारधारा के प्रभाव स्वरूप नागरिकता एव नागरिक भावना मे क्रांतिकारी परिवर्तन हुए और उसका आधुनिकीकरण हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव की आवश्यकता एव अपरिहार्यता ने इसका क्षेत्र व्यापक बना कर इसे 'विश्व नागरिकता' की ओर उन्मुख कर दिया है।

नागरिकता एवं नागरिक भावना के इस विकासक्रम के अनुरूप नागरिकशास्त्र प्रारम्भ मे धर्म एवं नीति शास्त्रों का अंग बना रहा तथा आधुनिक काल में ही यह एक स्वतन्त्र विषय के रूप में अस्तित्व मे आया। विद्यार्थी ही देश के भावी नागरिक होते हैं, अतः उनकी शिक्षा मे नागरिकशास्त्र का महत्व स्वीकार किया गया। कोठारी शिक्षा आयोग के शब्दो में–'भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उनके विद्यालयों में हो रहा है।'[1] विद्यालय-पाठ्यक्रम में देश के भावी नाग-

---

1. कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66)—पृ. 1

रिकों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण के लिए नागरिकशास्त्र के महत्त्व का आकलन यहाँ किया जा रहा है।

शिक्षा में नागरिकशास्त्र का स्थान : ऐतिहासिक प्रतिप्रेक्ष्य

गत अध्याय में नागरिकशास्त्र की संकल्पना के विकास का विस्तार से विवेचन किया जा चुका है। यहाँ हम ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इसके अध्ययन का प्रयास करेंगे। इस दृष्टि से इतिहास को तीन काल–प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक मे विभक्त कर सकते हैं।

प्राचीन काल—प्राचीन काल मे पाश्चात्य विद्वानों ने नागरिक शास्त्र की उत्पत्ति यूनान के नगर-राज्यों तथा लेटिन भाषा के दो शब्दो 'सीवाम' अर्थात् 'नागरिक' एव 'सीवीटाज' 'नगर' से मानी है। इसी प्रकार 'पॉलीटिक्स' जो नागरिकशास्त्र का ही एक विशिष्ट अंग है, का उद्‌भव भी ग्रीक शब्द 'पोलिस' अर्थात् नगर से बतलाया जाता है।

इसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है किन्तु यह स्पष्ट हो चुका है कि यूरोप की अपेक्षा भारत में 'नागरिक-शास्त्र की संकल्पना अधिक प्राचीन है। वस्तुत: नागरिक शास्त्र की मूल भावना नागरिकता तथा (नागरिक-भावना) नगर बनने के बाद उत्पन्न नही हुई बल्कि मानव की उत्पत्ति के साथ ही, जब मानव परिवार, कबीला या कुल जैसी सामाजिक संस्थाओं का सदस्य था, विकसित हो गई थी क्योंकि मानव स्वभावत: एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक संस्था के संरक्षण के लिए नागरिक-भावना अत्यावश्यक है। प्रारम्भिक अवस्था मे परम्परागत रीति-रिवाजों के आधार पर परिवार, कबीला या कुल के मुखिया द्वारा बालकों को नागरिकता अर्थात् समाजोपयोगी गुणों क प्रशिक्षण दिया जाता था। यही प्रशिक्षण नागरिक-शास्त्र की आधारशिला बनी।

धीरे-धीरे मानव जब ग्राम तथा नगर बना कर रहने लगा, तब नागरिक-भावना का विकास हुआ तथा धर्म के नियमण मे समाजोपयोगी नैतिक आचरण तथा शासक एवं प्रजा (नागरिक) के सम्बन्धो की धर्म एवं नीति शास्त्रों मे व्यवस्था की गई। इस प्रकार नागरिकशास्त्र धर्म एव नीति-शास्त्र का अभिन्न अंग बन कर शिक्षा का आधार बना। वैदिक काल मे बालकों की शिक्षा, घर से दूर गुरुकुल तपोवन या आश्रमों में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए, होती थी। आर्यों की वर्णाश्रम मे व्यवस्था के अन्तर्गत उपनयन संस्कार के बाद शिक्षा अनिवार्य थी। गुरुकुलों मे बालकों मे समता, सहयोग, परिश्रम, त्याग, कर्त्तव्यपरायणता आदि समाजोपयोगी गुणों का विकास किया जाता था। प्राचीन काल मे मे शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य–'विद्यार्थियो मे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य की भावना जागृत कराकर सामाजिक और नागरिक अधिकारो व कर्त्तव्यों का समुचित ज्ञान कराना था।'[2]

---

2. लूनिया बी. एन. : भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का विकास पृ. 387

प्राचीन काल की शिक्षा मे नागरिकता की शिक्षा एवं प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान अवश्य दिया जाता था, किन्तु नागरिक-शास्त्र का शिक्षा-पाठ्यक्रम में एक स्वतंत्र विषय के रूप मे महत्त्व एव स्थान को कालान्तर मे समाज एव राज्य की संस्थाओं के जटिल एव विस्तृत होने के साथ-साथ स्वीकार किया जाने लगा।

वैदिककालीन शिक्षा के समान ही बौद्ध, मौर्य, गुप्त एवं हर्षकालीन शिक्षा में भी नागरिकता शिक्षा एवं प्रशिक्षण को सर्वोपरि महत्ता प्रदान की गई तथा साथ ही यह धर्म एव नीति-शास्त्र से पृथक हो अपना स्वतन्त्र विषय के रूप मे स्थान बनाने लगी। प्राचीन काल के गुरुकुल, बौद्धविहार एवं तक्षशिला, नालन्दा, वल्लभी एव विक्रमशिला जैसे प्रख्यात शिक्षा-केन्द्रों मे नागरिक-शास्त्र एव राजनीति को पाठ्यक्रम मे सम्मिलित किये जाने का उल्लेख तत्कालीन साहित्य मे मिलता है।

पुराण एवं स्मृति ग्रन्थो मे प्राचीन काल के शिक्षाक्रम मे वेद, इतिहास, एवं 18 विद्याओं के पठन-पाठन का उल्लेख किया गया है। इन 18 विद्याओं मे धर्म-शास्त्र, अर्थ-शास्त्र एव राजनीति के अन्तर्गत नागरिकशास्त्र की विषय-वस्तु समाविष्ट थी, जो पाठ्यक्रम का ही अंग थी।[3] कौटिल्य के अर्थ-शास्त्र मे राजनैतिक एवं नागरिक सिद्धान्तों का विशद वर्णन किया गया है। प्राचीन शिक्षा-प्रणाली मे विभिन्न वर्णों के अनुकूल पाठ्यक्रम के विषयों का पठन-पाठन का विधान था। अर्थशास्त्र अथवा राजनीति की शिक्षा राजकुमारो के लिये अनिवार्य थी। अर्थशास्त्र एवं स्मृति ग्रन्थो में राजा के विविध कर्त्तव्य के अनुरूप उनके लिए शिक्षा मे बौद्धिक एव नैतिक प्रशिक्षण के एक व्यापक पाठ्यक्रम का प्रावधान था।[4] इस प्रकार नीति एवं अर्थशास्त्र के रूप मे नागरिकशास्त्र एवं राजनीति प्राचीन शिक्षा पाठ्यक्रम मे स्वीकार किये गये यद्यपि तत्कालीन सामाजिक एव राजनैतिक व्यवस्था के कारण इसविषय का पठन-पाठन जनसाधारण की अपेक्षा राजाओं के लिये अनिवार्य माना गया था।

मध्यकाल—जब राज्यों का विस्तार विशाल साम्राज्यो मे होने लगा तथा शासकों के निरंकुश एव उच्छृंखल होने के कारण मध्यकाल मे नागरिको (प्रजा) का शोषण एवं उत्पीड़न किया जाने लगा तो तत्कालीन शिक्षा मे पाठ्यक्रम मे नागरिक-शास्त्र एव राजनीति विषय की उपेक्षा की गई क्योंकि नागरिक (प्रजा) अधिकारो से वंचित हो राजा की आज्ञा का पालन करने में ही अपने को सुरक्षित समझते थे। साम्राज्यों के पतन तथा सामन्तशाही के युग मे भी यही दशा बनी रही। मध्यकाल के अन्तिम चरण में धर्म सुधार व पुनर्जागरण आन्दोलनो, फ्रांसीसी एव अमरीकी राज्यक्रांतियों तथा प्रजातन्त्र, समता, स्वतन्त्रता एवं भ्रातृत्व की विचारधाराओं से प्रभावित हो जनसाधारण मे नवीन जागृति आई तथा वे अपने राजनैतिक अधिकारों के लिए जागरूक होने लगे, जिसके फलस्वरूप शिक्षा-पाठ्यक्रम में नागरिक-शास्त्र की पुनः प्रतिष्ठा हुई।

3. भारतीय विद्याभवन : हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ इंडियन पिपल वाल्यूम तृतीय, पृ. 587
4. उपर्युक्त पृष्ठ 588

भारत में मध्यकाल में मुस्लिम शासन के समय प्राचीन शिक्षा-केन्द्रों एवं शिक्षा-क्रम की उपेक्षा की गई। भारतीय शिक्षा मुस्लिमानों के मकतब एव मदरसो तथा हिन्दुओं की पाठशालाओं के संकुचित दायरे मे आबद्ध हो गई। विजेता शासकों के राज्य में भारतीय नागरिक अधिकारों से वंचित हो गये। फलतः नागरिक-शास्त्र की शिक्षा का पाठ्यक्रम में कोई स्थान न रहा।

आधुनिक काल—मध्यकाल के अन्तिम चरण मे उत्पन्न जनजागृति एवं प्रजातंत्र के उदय ने लोगों को अपने नागरिक अधिकारों के प्रति उन्मुख किया। युगधर्म के अनुसार शिक्षा-पाठ्यक्रम मे नागरिक-शास्त्र का महत्त्व एव स्थान उन्मुक्त रूप से स्वीकार किया गया तथा उसे धर्म, नीति, इतिहास आदि विषयों से पृथक कर एक स्वतन्त्र विषय का अस्तित्व प्रदान किया गया। यह परिवर्तन 19 वीं शताब्दी में हुआ।

भारत मे ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत मध्यकाल की भांति नागरिकों के अधिकारों की उपेक्षा की गई। यह मनोवृत्ति मैकोले के इस कथन से प्रकट होती है[5] 'हम भारतवासियों की एक ऐसी श्रेणी बनाना चाहते हैं।' जो जाति और रंग में तो भारतीय हों किन्तु विचार, आचरण एवं बुद्धि से अंग्रेज हो, शोषण की इस मनोवृत्ति के कारण अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा पर कम ध्यान दिया तथा नागरिक-शास्त्र की शिक्षा को अपने हितों के प्रतिकूल समझा। बाद में जब भारत मे राष्ट्रीय विचारधारा का उदय हुआ तो शिक्षा-पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र के महत्त्व एव स्थान की पुनः प्रतिष्ठा पर बल दिया गया। महात्मा गांधी द्वारा प्रवर्तित बुनियादी शिक्षा के पाठ्यक्रम मे नागरिक शास्त्र की महत्ता को स्वीकार किया गया। 'सामाजिक-अध्ययन' के अन्तर्गत नागरिक-शास्त्र के शिक्षण को पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग मानते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट (1952-53)[5] में कहा है 'विद्यार्थियों को सामुदायिक जीवन, सम्पन्न एव नागरिक निपुणता के लिए न केवल इसका आवश्यक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए बल्कि तदनुकूल अभिवृत्तियों एव मूल्यों का विकास भी करना चाहिए। इनके द्वारा विद्यार्थियों में न केवल देश-प्रेम की भावना एव राष्ट्रीय श्लाघा का भाव ही जागृत किया जाय वल्कि उनमें विश्व एकता एवं विश्व नागरिकता की उत्कृष्ट एव हार्दिक भावना भी विकसित की जानी चाहिए।

इस प्रकार नागरिकशास्त्र की व्यापक सकल्पना को स्वीकार करते हुए उसे पाठ्यक्रम मे एक अनिवार्य विषय बना कर उचित स्थान दिया गया है। कोठारी शिक्षा आयोग ने नागरिक-शास्त्र को 'सामाजिक अध्ययन' के अन्तर्गत इतिहास, भूगोल व अर्थशास्त्र के साथ समेकित कर उसका पाठ्यक्रम मे गौण स्थान बनाने का विरोध किया है। आयोग का मत है कि अवर प्राथमिक स्तर पर, समेकित दृष्टिकोण वांछनीय है। प्राथमिक शाला की बड़ी कक्षाओं मे धीरे-धीरे यह भावना पैदा करनी चाहिए कि इतिहास, भूगोल, नागरिक-शास्त्र अलग-अलग विषय हैं। माध्यमिक शालाओं

5. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1952-53), अंग्रेजी संस्करण पृष्ठ 93

में ये विषय अलग-अलग विधाओं के रूप में पढ़े जायेंगे और उच्चतर माध्यमिक अवस्था पर विशेषीकृत अध्ययन के आधार बनेंगे।[6]

नवीन दस वर्षीय सामान्य विद्यालय शिक्षा में, जो 10+2+3 शिक्षा योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित की गई है, जिसे केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा अनेक राज्यों ने अपना लिया है नागरिक-शास्त्र का पाठ्यक्रम में स्थान कोठारी शिक्षा आयोग के अनुसार ही निर्धारित किया गया है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रस्तावित उक्त दस वर्षीय विद्यालय पाठ्यक्रम में नागरिक-शास्त्र का शिक्षण दस वर्षों तक अनिवार्य किया गया है, तथा उसे प्राथमिक कक्षाओं में सामाजिक अध्ययन एवं सामान्य विज्ञान विषयों के साथ 'पर्यावरण-अध्ययन' शीर्षक के अन्तर्गत पढ़ाये जाने का सुझाव दिया है।[7]

माध्यमिक कक्षाओं में उसे 'सामाजिक-विज्ञान' के अन्तर्गत इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र एवं मनोविज्ञान विषयों के साथ पढ़ाया जाना तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर इसे विशेष विषय के अन्तर्गत एक वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जाना प्रस्तावित किया है।

उपर्युक्त तथ्य यह स्पष्ट करते हैं कि विद्यालय पाठ्यक्रम में नागरिक शास्त्र का प्राचीन काल में प्रमुख स्थान था तथा धर्म या नीति शास्त्र के अंग के रूप में इसका पठन-पाठन होता था किन्तु मध्यकाल में सामन्तवादी, साम्राज्यवादी, निरंकुश शासकों की स्वेच्छाचारिता तथा राजनीति पर धर्म के नियंत्रण के कारण इसकी उपेक्षा की गई। आधुनिक काल में प्रजातन्त्र के उदय के साथ नागरिक शास्त्र की महत्ता स्वीकार की गई तथा इसे पाठ्यक्रम में समाविष्ट किया गया।

नागरिक शास्त्र का शिक्षा में महत्त्व

वर्तमान परिवर्तित सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति में नागरिक शास्त्र के महत्त्व से सम्बन्धित निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय है—

(1) सक्रिय एवं विचारशील नागरिकता—विद्यार्थियों की शिक्षा में वैसे तो अन्य सभी विषयों का अपना महत्व है किन्तु लोकतान्त्रिक शासन-प्रणाली एवं जीवन-शैली के विकास के लिए भावी नागरिकों की शिक्षा में नागरिक शास्त्र का विशिष्ट महत्व है। किन्तु नागरिक शास्त्र द्वारा नागरिकता का पुस्तकीय ज्ञान ही अभीष्ट नहीं है बल्कि विद्यार्थियों को आज की जटिल सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति में नागरिक जीवन का प्रशिक्षण भी देना है। पूर्वोक्त दस वर्षीय विद्यालय पाठ्यक्रम में इसी तथ्य पर बल दिया गया है, "नागरिक शास्त्र के शिक्षा कार्यक्रम में ऐसे समाजोपयोगी अपरिहार्य ज्ञान का समावेश किया जाना चाहिए जो न केवल नागरिक प्रक्रियाओं का अवबोध कराये बल्कि वह नागरिक समस्याओं एवं नागरिक योजनाओं के विकास का प्रशिक्षण भी दे। नागरिक शास्त्र शिक्षण के दो मुख्य उद्देश्य होने चाहिए—(1) सक्रिय एवं विचारशील नागरिकता का विकास

6. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 223
7. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम : एन. सी. ई. आर. टी. अंग्रेजी संस्करण (पृ. 28)

तथा (2) सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं की संरचना एवं कार्यशील के विवेकशील अवबोध का विकास।[8]

(2) धर्मनिरपेक्षता का विकास—हमारा देश धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है तथा धर्मनिरपेक्षता हमारे संविधान का आधार है। नागरिकों मे धर्मनिरपेक्षता की भावना का विकास अत्यन्त आवश्यक है। संविधान निर्माण समिति के अध्यक्ष डा. अम्बेडकर का यह कथन सत्य है कि धर्मनिरपेक्षता राष्ट्र की संकल्पना नवीन है जो पश्चिम से भारत में आई। भारतवासियों मे राष्ट्रीय एकता की भावना की अपेक्षा अपने परिवार, जाति, समुदाय तथा धर्म के प्रति अधिक निष्ठा है। अत. धर्मनिरपेक्षता की भावना का विकास जितना आवश्यक है उतना ही कठिन है।[9] नागरिक शास्त्र संविधान के धर्मनिरपेक्ष तत्व का अवबोध कराने एवं सम्बन्धित क्रिया-कलापों द्वारा विद्यार्थियों को अपने धर्म के प्रति संकीर्ण निष्ठा से उपर उठ कर अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति आदर एवं धर्म सम भाव की भावना विकसित करने मे सहायक होता है।

(3) राष्ट्रीय एकता की भावना का विकास—नागरिकशास्त्र स्थानीय एवं प्रादेशिक निष्ठाओं का राष्ट्र के प्रति निष्ठा एवं कर्त्तव्य भावना मे विकसित होने मे सहायक है। विद्यार्थियों मे संविधान के स्वरूप को समझकर देश की प्रमुख समस्याओं के निराकरण मे सहयोग देने की अभिवृत्ति जागृत होती है। संघ एवं राज्यों की व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एव न्याय पालिका, स्थानीय स्वायत्त-शासन संस्थाओं, राजनैतिक दलों, निर्वाचन प्रणाली आदि के ज्ञान एव नागरिकों की इनमे सक्रिय सभागिता के कौशल तथा राष्ट्रीय समस्याओं के निराकरण मे सहयोग की प्रवृत्ति के विकास द्वारा राष्ट्रीय एकता की भावना जागृत करने मे नागरिकशास्त्र का प्रमुख योगदान रहता है। देश के प्रशासन तथा सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के लोकतान्त्रिक आधार को समझकर विद्यार्थियों को इनमे अपनी सक्रिय भूमिका निभाने की उत्प्रेरणा मिलती है।

(4) अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास—मानव की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति रही है कि वह परिवार, कबीला, कुल, प्रदेश तथा राष्ट्र के प्रति निष्ठाओं को परिधियों का विस्तार करते हुए समस्त मानव समाज के प्रति अपनी निष्ठा विकसित करनेमें सहायक होती है। वह इतना उदार एवं मानवतावादी दृष्टिकोण अपना लेता है कि स्वयं को स्थानीय, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय समाज का सदस्य एवं नागरिक होते हुए भी विश्व का नागरिक समझने लगता है। उसकी राष्ट्रीयता एव देश-प्रेम की भावना का वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना मे विस्तार हो जाता है। यही भावना, जो अन्य देशों के प्रति सद्भावना एव सहयोग के लिए उसे प्रेरित करती है, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव कहलाता है। आज के वैज्ञानिक युग में द्रुतगामी यातायात एवं संचार साधनों के विकास के कारण

8. उपर्युक्त पृ. 22-23

9. संविधान सभा मे डा. अम्बेडकर को भाषण संविधान [illegible] नवे 25 सन् 1949 अंग्रेजी संस्करण

विश्व के सभी राष्ट्र एक परिवार के समान हो गये हैं। व्यापार, व्यवसाय, राजनीति, शिक्षा सामाजिक परिवर्तन आदि सभी क्षेत्रों में अंतर्निर्भर हो गये है। किसी देश की घटना तत्काल विश्व के सभी देशों में प्रतिक्रिया एवं प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ है। कोई भी देश विश्व से अलग-थलग रह कर अपनी एकान्तिक स्थिति में विकास नहीं कर सकता और न वह विश्व शांति एवं सुरक्षा में अपना योगदान कर सकता है। इसलिये अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव आज विश्व की अनिवार्य आवश्यकता है। नागरिकशास्त्र संयुक्त राष्ट्र संघ के विभिन्न अंगों का समुचित ज्ञान कराने, विश्व शान्ति सुरक्षा के लिये अनुकरणीय प्रयासों का बोध कराने, पंचशील एवं गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्त पर आधारित देश की विदेश नीति का महत्व समझाने तथा सद्भाव एवं सहयोग का अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रयोग करने में सहायक होता है। कोठारी शिक्षा आयोग[10] ने नागरिकशास्त्र के इस महत्व को स्वीकार करते हुए कहा है—"उच्च कक्षाओं के नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में संयुक्त राष्ट्र एवं अन्य राष्ट्रीय एजेन्सियों का चित्रण और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा शान्ति की रक्षा में उनके महान् प्रयत्नों का निष्पक्ष वर्णन होना चाहिए।"

(5) समाजोपयोगी अभिवृत्तियों का विकास—सामाजिक प्राणी होने के कारण मानव समाज में रहकर ही वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास कर सकता है किन्तु स्वार्थ ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा, छल-कपट आदि दुर्गुण एक अच्छे समाज एवं राज्य के निर्माण में बाधक होते हैं। विद्यार्थियों में इनके प्रति अरुचि एवं घृणा जागृत कर समाजोपयोगी अभिवृत्तियों-सहयोग, सद्भावना, उदार-निष्ठाएं देश-प्रेम, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव, सेवा, त्याग, लोकतान्त्रिक जीवन शैली, उदारता, स्नेह, समता, निष्पक्षता आदि एवं मानवतावाद, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद एवं लोकतन्त्र तथा लोकतान्त्रिक जीवन में सक्रिय एवं प्रभावी भूमिका निभाने हेतु कुशलताएं—विचार-विमर्श के समय दूसरों के विचार धैर्य से सुनने, अपने विचार निर्भीकता एवं शिष्टता से प्रकट करने, विवेकपूर्ण निर्णय लेने तथा पक्षपातपूर्ण प्रचार से अप्रभावित हो खुले मस्तिष्क से कार्य करने का विकास अच्छे समाज, राज्य एवं विश्व के निर्माण हेतु आवश्यक है। अन्य सामाजिक विज्ञान की अपेक्षा नागरिक शास्त्र का दायित्व एवं भूमिका इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इन अभिवृत्तियों, मूल्यों एवं कुशलताओं का नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु से विद्यार्थियों को न केवल ज्ञान ही होता है बल्कि वास्तविक जीवन-स्थितियों के सुनियोजित क्रियाकलापों एवं प्रायोजनाओं में सक्रिय भाग लेकर तदनुकूल कौशल का विकास भी होता है।

भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में नागरिकशास्त्र का महत्व—आधुनिक काल में प्रजातन्त्र के उदय के साथ नागरिकों के अधिकारों को मान्यता मिली तथा उन्हें प्रशासन में भाग लेने की स्वतन्त्रता मिली। लोकतान्त्रिक राज्य की व्याख्या करते हुए के. एस. मार्टिन ने उचित ही कहा है कि निर्मम बलप्रयोग एवं शक्ति के स्थान पर तर्कबुद्धि तथा शान्त विधियों के निर्बाध उपयोग एवं सत्यं-शिवं-सुन्दरम् के आध्यात्मिक मूल्यों की खोज केवल स्वाधीन पुरुष एवं महिलाओं के सहकारी प्रयास द्वारा शासित राज्य में ही

10 कोठारी शिक्षा आयोग की रिपोर्ट पृ. 224

में ही सम्भव है। ऐसा राज्य ही लोकतांत्रिक राज्य होता है।[12] लोकतान्त्रिक शासन प्रणाली ही सर्वोत्तम है। किन्तु व्यक्तियों के स्वार्थपरक होने तथा शिक्षा एवं प्रशिक्षण के अभाव मे इस व्यवस्था में नागरिकता का अवबोध कराना एक कठिन कार्य है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इसी तथ्य को प्रकट करते हुए कहा है कि लोकतन्त्र मे नागरिकता एक अत्यन्त दुष्कर एवं चुनौतीपूर्ण दायित्व है। जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को सावधानी से प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।

हमारे देश ने स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात इसी लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अपनाकर भारत को एक प्रभुतासम्पन्न लोकतान्त्रिक धर्मनिरपेक्ष समाजवादी गणतन्त्र बनाने का निश्चय किया है जो विश्व का सबसे बड़ा लोकतान्त्रिक राष्ट्र है।

इसके नागरिको को प्रशिक्षित करना एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। कोठारी शिक्षा आयोग के अनुसार देश मे जाति, धर्म भाषा, प्रदेश आदि के प्रति लोगो की संकुचित निष्ठाओं के प्राचीन मूल्यों के विलुप्त होने तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना जाग्रत करने के किसी प्रभावी कार्यक्रम के अभाव से सामाजिक विघटन हो रहा है जिससे एकीकृत और समतापूर्ण समाज के निर्माण का कार्य कठिन और चुनौतीपूर्ण बन गया है।[13] लोकतांत्रिक व्यवस्था की रक्षा एवं विकास की दृष्टि से नागरिकशास्त्र के महत्व से सम्बन्धित निम्नांकित बिन्दु विचारणीय है :—

1. लोकतांत्रिक मूल्यों की शिक्षा—देश की वर्तमान स्थिति के अनुकूल नागरिकों द्वारा लोकतान्त्रिक मूल्यों—व्यक्तित्व का सम्मान, समानता, विचार अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, नागरिक के अधिकार एव कर्त्तव्यों का विवेकपूर्ण उपयोग, सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं की कार्य-प्रणाली मे लोककल्याणकारी भावना से सक्रिय सहयोग एवं संभागिता, उदार निष्ठाएं आदि मूल्य जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था की रक्षा एवं विकास मे सहायक हैं, पूरे मन से स्वीकार करना होगा। यह स्वीकृति सामाजिक एव राजनैतिक क्षेत्र में ही नहीं अपितु जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होना आवश्यक है ताकि लोकतन्त्र जीवन शैली का अभिन्न अंग बन जाए।

2. मताधिकार का विवेकपूर्ण प्रयोग—लोकतन्त्र में वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित जन-प्रतिनिध ही प्रशासन सभालते हैं। प्रत्येक वयस्क नागरिक को मताधिकार प्राप्त है जिसका प्रयोग उसे विवेक द्वारा प्रत्याशी को चुनने में करना चाहिए। चुनाव के समय जब विभिन्न प्रत्याशियो एवं उनके राजनैतिक दलों द्वारा राष्ट्रीय महत्व की समस्याओ को हल करने की घोषणाएं की जाती हैं तो प्रायः देखा जाता है कि अधिकांश मतदाता उदासीन रह-कर अपने मताधिकार का प्रयोग नही करते। यह भी देखा गया है कि कुछ स्वार्थी एवं भ्रष्टप्रत्याशी मतदाताओ के मत प्राप्त करने हेतु अनुचित साधनो का प्रयोग करते हैं या मतदाताओ को प्रलोभन देकर अपने पक्ष मे कर लेते हैं। ये दोनों ही स्थितियां एक प्रबुद्ध नागरिक के लिए लोकतन्त्रीय व्यवस्था मे अवाछनीय हैं। प्रत्येक

---

12. याजनिक के. एम. : भारत में सामाजिक अध्ययन का शिक्षण पृ. 9. (अंग्रेजी संस्करण)
13. कोठारी शिक्षा आयोग-पृ. 23

नागरिक का यह नैतिक कर्त्तव्य है और उसका यह पवित्र अधिकार भी है कि वह मतदान मे अवश्य भाग ले तथा अपने विवेक से लोकहित मे उपयुक्त प्रत्याशी को अपना मत दे।

(3) स्वस्थ जनमत के निर्माण में सहयोग—लोकतन्त्रीय निर्वाचन प्रणाली में मत देने के साथ ही नागरिक अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं तथा अगले निर्वाचन तक की अवधि म राष्ट्रीय समस्याओं से प्राय: उदासीन हो जाते है। यह स्थिति भी प्रबुद्ध नागरिक के लिए वाछनीय नही है। जब निर्वाचित प्रत्याशी सत्ता प्राप्त कर भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाते हैं तथा राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान एव लोकहित के कार्यों से विमुख हो जाते है तो उस स्थिति मे नागरिक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह राष्ट्रहित मे स्वस्थ जनमत के निर्माण मे सहयोग दे। इसके लिए आवश्यक है कि नागरिकों मे खुले तौर पर विचार करने, पूर्वाग्रह रहित मस्तिष्क से नवीन अथवा विरोधी विचारो को समझने, विचार-विमर्श द्वारा दुराग्रह रहित अपने विचार व्यक्त करने तथा मिथ्या प्रचार में सत्यान्वेषण कर सही निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना चाहिए।

(4) सकुचित निष्ठाओं का विस्तार—अपने क्षेत्र, प्रदेश, जाति, धर्म, दल व भाषा के प्रति संकुचित निष्ठाएं रखना लोकतन्त्र एवं राष्ट्रीय एकता के हित में बाधक हैं। प्राय नागरिक अपनी संकुचित निष्ठाओं एवं स्वार्थों के प्रभाव के कारण ऊपर उठ कर देश-हित की बातों पर ध्यान नही देते जिससे लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था का आधार सुदृढ नहीं हो पाता। नागरिक-शास्त्र की पाठ्य-वस्तु एव क्रियाकलाप विद्यार्थियो मे केवल धर्म-निरपेक्षता, राष्ट्रीय भावात्मक एकता, अंतर्जातीय, अन्तर्प्रांतीय एवं अंतर्भाषायी सद्भाव का ही विकास करने मे सहायक नही होते बल्कि उनमे सच्ची राष्ट्रीय भावना जागृत कर अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव की अभिवृत्ति के विकास द्वारा संकुचित निष्ठाओं से ऊपर उठने की क्षमता प्रदान करते हैं।

वैसे तो विद्यालय-पाठ्यक्रम में अन्य विषय ऐसे भी हैं जिनमे अच्छे नागरिक के सामान्य गुणों के विकास की क्षमता होती है, किन्तु नागरिक-शास्त्र अपनी विशिष्ट विषय-वस्तु एव पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों द्वारा लोकतंत्र के लिये उपयोगी एव आवश्यक जिन विशेषताओं की नागरिको से अपेक्षा करता है, उनका उपर्युक्त बिन्दुओं में उल्लेख किया गया है। लोकतन्त्री व्यवस्था के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव के विकास में भी नागरिक-शास्त्र की अपनी विशिष्ट भूमिका रहती है।

अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के विकास में नागरिकशास्त्र का महत्त्व—अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव प्राचीन भारतीय आदर्श 'वसुधैव कुटुम्बकम' का आधुनिक रूपान्तर है जिसका आधार मानवता के नाते विश्व-शान्ति की स्थापना के लिए विश्व को एक कुटुम्ब या परिवार के रूप मे मानना है। भट्टाचार्य व दरजी का यह कथन अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का अर्थ स्पष्ट करता है, 'इसका अर्थ विश्व-सद्भाव है जिसमें विश्व-शान्ति एवं 'एक विश्व कुटुम्ब' का विचार निहित है। यह अन्तर्राष्ट्रीय अनुत्तरदायित्व, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा एकाकीपन का विपरीतार्थ है। प्रत्येक व्यक्ति अपने देश का नागरिक होने के अतिरिक्त विश्व नागरिक भी है। वह मानव परिवार का सदस्य है।

वर्तमान युग में वैज्ञानिक प्रगति का प्रभाव समाज के सभी अंगों पर तीव्रगति से हुआ है। एक ओर जहां विज्ञान ने यातायात व संचार के साधनों के आविष्कारों से दूरी एव समय की सीमाओं को तोड़ कर विश्व के सभी राष्ट्रों को इतना निकट सा दिया है

कि वे अन्तर्निभर बन गये है किन्तु दूसरी ओर विज्ञान ने ही मानव-संहार के घातक अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण कर दो विश्व-युद्धों में धन-जन की अपार क्षति पहुंचाई. उससे मानव ने त्रस्त एवं स्तब्ध होकर विश्व-शान्ति के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का निर्माण किया।

वर्तमान शताब्दी में समाजवाद, सर्वोदय तथा पंचशील जैसी विचार धाराओं का जन्म एवं राष्ट्रों द्वारा उनको मान्यता देने का उद्देश्य भी अन्तर्राष्ट्रीय *सद्भाव की महत्ता को स्वीकार करना है। शिक्षा मे अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का प्रावधान* किया जाना विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा की दृष्टि से आज की अनिवार्य आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की विशिष्ट संस्था संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन 'यूनेस्को' ने विश्व शांति के लिए शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा है, कि 'युद्ध का जन्म मानव मस्तिष्क में होता है। शांति का उदय भी मानव-मस्तिष्क में होना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के विकास में नागरिकशास्त्र की भूमिका—नागरिक-शास्त्र की पाठ्यवस्तु में संयुक्त राष्ट्र संघ की संरचना, कार्यप्रणाली एवं उसकी उपलब्धियों व व दुर्बलताओं का अवबोध कराना एक अनिवार्य आवश्यकता है क्योंकि प्रबुद्ध नागरिक अपनी संकुचित निष्ठाओं से ऊपर उठ कर विश्वबन्धुत्व की भावना मे अपनी सभी निष्ठाओं का समाहार करता है ताकि वह भावी विश्व में शांति एवं सुरक्षा स्थापित करने में अपना योगदान कर सके। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने दस वर्षीय विद्यालय शिक्षा-क्रम में बालकों के मानसिक क्षतिज का विस्तार घर, स्कूल तथा स्थानीय समुदाय से विश्व तक कर देने का प्रस्ताव किया है।[16] इस शिक्षा-क्रम में इस बात पर बल दिया गया है कि विद्यार्थियों मे संयुक्त राष्ट्र संघ की विश्व-शांति एवं सहयोग की स्थापना मे उपयुक्त भूमिका का अवबोध कराया जाय और अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध की अभिवृति का विकास किया जाय।

वस्तुतः परिवार, प्रदेश, राष्ट्र, धर्म, जाति, भाषा आदि अपेक्षाकृत छोटे समुदायो के प्रति व्यक्ति की निष्ठा तथा विशाल समुदाय विश्व के प्रतिनिष्ठा मे कोई अन्तर्विरोध नहीं हैं। वे दोनो एक दूसरे की पूरक हैं। मैकाइवर तथा पेज ने इस तथ्य को अपनी पुस्तक 'सोसाइटी' मे स्पष्ट किया है कि बड़े समुदाय से हमको अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध तथा विविध संस्कृति के लिये सतत प्रेरणा, अवसर, स्थायित्व व अर्थव्यवस्था उपलब्ध होती है। किन्तु छोटे समुदायों मे रहने से हमको अपेक्षाकृत निकट तथा अधिकघ निष्ठ संतुष्टियां प्राप्त होती हैं।....परिपूर्ण जीवन-प्रक्रिया के लिये इन दोनों का होना अनिवार्य है। के. नेसिया ने सामुदायिक जीवन के प्रति निष्ठा का आधार समुदाय के सदस्यों मे परस्पर अपनत्व की भावना बतलाते हुए उसे सामाजिक अध्ययन द्वारा क्रमशः परिवार, पड़ौस, नगर, प्रदेश, देश तथा विश्व के प्रति निष्ठाओं की परिधियों में विस्तृत किये जाने पर बल दिया है। अपने, परिवार, ग्राम, नगर व प्रदेश के प्रति अपनत्व की भावना ही जब संकीर्ण दायरे से उठकर विस्तार पाती है तो वह समूचे राष्ट्र एवं विश्व के प्रति

16. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम (एन. सी. ई. आर. टी.) पृ. 20

अपनत्व की भावना मे उदात्तीकरण की प्रक्रिया द्वारा क्रमश. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भावना मे परिणत हो जाती है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा है कि माध्यमिक शिक्षा का अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य सच्चे देश प्रेम की भावना जागृत करना होना चाहिए। आज विश्व मे इससे बढ़कर और कोई खतरनाक सिद्धान्त नही हो सकता जो यह सोचने पर बल दे कि मेरा देश ही सर्वोपरि है, चाहे वह सही हो या गलत। आज सारा विश्व इस घनिष्ठता से अन्तर्निर्भर हो चला है कि कोई भी देश एकाकी जीवन व्यतीत करने का साहस नही कर सकता तथा विश्व-नागरिकता की भावना का विकास राष्ट्रीय नागरिकता की भावना के समान ही महत्वपूर्ण हो गया है।[19]

नागरिक-शास्त्र का विद्यालय पाठ्यक्रम में प्रावधान

प्राचीन काल मे शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण नही था। नागरिको मे राजनैतिक चेतना के अभाव में नागरिक-शास्त्र का पृथक अस्तित्व नही था। वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा के अन्तर्गत सदाचरण के प्रायोगिक प्रशिक्षण के रूप मे वह प्रतिष्ठित था। पश्चिम मे यूनान के 'नगर राज्यो' मे प्राचीन काल मे प्रशासन में सक्रिय भाग लेने का अधिकार वहाँ के मूल निवासियों को ही प्राप्त था, विदेशी एवं दास श्रेणी के लोगों को नही था। नागरिकता का प्रशिक्षण प्रायोगिक रूप मे दिया जाता था।

मध्यकाल के उत्तरार्ध मे धर्म सुधार तथा पुनर्जागरण आन्दोलनों के फलस्वरूप नागरिको मे राजनैतिक चेतना जागृत हुई तथा स्वेच्छाचारी शासको का अन्त होकर राष्ट्रीय राज्यों का जन्म हुआ। इसके साथ ही लोकतन्त्र एवं साम्यवादी विचारधाराएं फ्रांस, ब्रिटेन तथा अमरीका की जन-क्रांतियो के कारण विकसित हुई। राज्यो ने शिक्षा के प्रति अपना दायित्व समझा तथा शिक्षा-पाठ्यक्रम में नागरिक के कर्तव्य एवं अधिकारों के प्रति प्रशिक्षण को महत्त्व दिया गया। वर्तमान मे नागरिक-शास्त्र का शिक्षा पाठ्यक्रम में पृथक अस्तित्व स्वीकार किया जाने लगा। 19 वी शताब्दी मे नागरिक-शास्त्र पाठ्यक्रम मे एक नवीन विषय के रूप मे प्रतिष्ठित हुआ। गुरुशरन दास त्यागी का यह कथन सत्य है कि 'नागरिक-शास्त्र, एक नवीन विषय है। परन्तु यह उतना ही प्राचीन है जितना कि एक नगर समाज।

वर्तमान युग मे नागरिक-शास्त्र का पाठ्यक्रम मे महत्त्व एवं स्थान का निर्धारण विभिन्न राज्यो के राजनैतिक आदर्शों एवं उनकी शासन-प्रणाली पर आधारित है। आई. ए. कैन्डेल ने कहा है कि 'किसी राज्य की प्रकृति ही उन व्यक्तियों की प्रतिष्ठा एवं प्रकार निर्धारित करती है जो उस राज्य के सदस्य हैं तथा इसके फलस्वरूप यह प्रकृति ही उस शिक्षा के स्वरूप को प्रभावित करती है जिससे कि इन व्यक्तियों का निर्माण होता है।'[20] आज के युग मे राज्य-संकल्पना की दो परस्पर विरोधी किन्तु प्रमुख विचार धाराएं प्रचलित हैं—(1) अधिनायक वादी, (2) लोकतान्त्रिक। इन संकल्पनाओं के कारण राज्य शिक्षा द्वारा अपने नागरिकों को प्रशिक्षित करना है।

---

19. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट पृ. 26
20. कैंडेल, आई. ए. 'न्यू एज इन एजूकेशन,' अंग्रेजी संस्करण

तानाशाही राज्य शक्ति के आधार पर प्रभुसत्ता सम्पन्न होते हैं जिनमें नागरिकों का अस्तित्व राज्य के लिए होता है तथा उनकी इच्छा राज्य की इच्छा के समक्ष गौण होती है। रूस, चीन तथा अन्य साम्यवादी देश इसी प्रकार की विचारधारा में विश्वास करते हैं। अतः उनकी शिक्षा-प्रणाली भी ऐसी होती है कि जिसके द्वारा साम्यवाद में दृढ़ आस्था वाले नागरिक तैयार हो सकें। उनके शिक्षा पाठ्यक्रम में ऐसे नागरिकों के अनुकूल नागरिक-शास्त्र की पाठ्यवस्तु एवं क्रियाकलापों का प्रावधान किया जाता है।

लोकतांत्रिक राज्यों में नीतियों का निर्धारण बहुमत के आधार पर किया जाता है तथा नागरिकों को स्वतन्त्रता एवं अधिकार प्रदान किये जाते हैं जिनके द्वारा वे अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकें तथा साथ-ही लोकहित की दृष्टि से अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकें. साम्यवादी तथा इस्लाम को राज्य धर्म मानने वाले कुछ राष्ट्रों के अतिरिक्त विश्व के अधिकांश राष्ट्रों में लोकतान्त्रिक शासन प्रणाली ही प्रचलित है। लोकतंत्र सर्वोत्तम शासन प्रणाली है। लिंकन के शब्दों में लोकतंत्री शासन 'जनता का जनता द्वारा तथा जनता के लिये' होता है। इन देशों के शिक्षा पाठ्यक्रम में नागरिक-शास्त्र को उचित महत्त्व दिया गया है। अब इसे एक स्वतंत्र पठन-पाठन का विषय मानकर या तो पाठ्यक्रम में एक पृथक शास्त्र के रूप में अथवा इतिहास, भूगोल, अर्थ-शास्त्र व समाजशास्त्र विषयों के साथ सम्मिलित कर 'सामाजिक ज्ञान' अथवा सामाजिक विज्ञान विषय-समूह-शीर्षक के अन्तर्गत स्थान दिया जाता है। कुछ पाठ्यक्रमों में इन रूपों में से किसी एक रूप में इसका अनिवार्य अथवा वैकल्पिक प्रावधान है।

नागरिक-शास्त्र एक अनिवार्य स्वतंत्र विषय के रूप में—विद्यालय पाठ्यक्रम में नागरिक-शास्त्र का एक स्वतंत्र विषय के रूप में प्रावधान किया जाना वर्तमान सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में नितान्त आवश्यक है।

प्रत्येक विषय की अपनी स्वतन्त्र प्रकृति उसकी पाठ्य-वस्तु एवं सम्बद्ध क्रियाकलापों के कारण होती है जिसका स्थान अन्य विषय नहीं ले सकते तथा अन्य विषयों के साथ सम्मिलित कर इसका अध्ययन करना भी वांछनीय नहीं है क्योंकि इसमें नाग-शास्त्र का स्वरूप विकृत होकर उसके शिक्षण-उद्देश्यों की पूर्ति नहीं होती। इस विषय में शिक्षाशास्त्रियों में मतैक्य नहीं है कि नागरिक-शास्त्र को एक पृथक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में अनिवार्य बनाया जाय। नागरिक-शास्त्र के महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुए विद्यालय पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य एवं पृथक विषय के रूप में इसका प्रावधान किया जाना अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

नागरिक-शास्त्र को पाठ्यक्रम में अनिवार्य नहीं बनाये जाने के पक्ष में प्रायः तर्क दिये जाते हैं कि विद्यालय पाठ्यक्रम में शिक्षण विषयों की संख्या पहले ही अधिक है अतः इसे अनिवार्य विषय बनाकर विद्यार्थियों पर भार लादना ठीक नहीं होगा। विद्यालय समय-सारणी में इसके अनिवार्य शिक्षण के लिए समयाभाव के कारण तथा अनिवार्य रूप से इसके अध्ययन द्वारा विद्यार्थियों में इसके प्रति अरुचि एवं उपेक्षा भाव उत्पन्न हो जायगा। किन्तु ये तर्क निराधार प्रतीत होते हैं क्योंकि जब नागरिक-शास्त्र का शिक्षण एक अपरिहार्य आवश्यकता है तो उसे भार-स्वरूप क्यों समझा जाय। नाग-

रिक-शास्त्र का अध्ययन यदि पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों एवं परम्परागत पुस्तकीय शिक्षण-विधि के स्थान पर विकासमान उन्नत विधियों द्वारा किया जाय तो समयाभाव एवं नीरसता के तर्क भी निरर्थक सिद्ध होंगे तथा नागरिक-शास्त्र जैसे महत्वपूर्ण विषय का अनिवार्य अध्ययन रोचक, उपयोगी तथा सार्थक बन सकेगा। जब समाज, राष्ट्र एवं विश्व की नागरिता मात्र की परिस्थितियों में वैकल्पिक नहीं अपितु अनिवार्य है तो नागरिक-शास्त्र का पाठ्यक्रम में विषय के रूप में प्रावधान अनिवार्य न किया जाय यह युक्ति-युक्त नहीं है।

नागरिक-शास्त्र सामाजिक ज्ञान के अन्तर्गत—सामाजिक ज्ञान के अन्तर्गत इतिहास, नागरिक-शास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र आदि विषयों का समेकित कर अध्ययन करने की सकल्पना नवीन है जो अमरीका से भारत में आई। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सर्वप्रथम इसे माध्यमिक शिक्षा तक अनिवार्य विषय के रूप में प्रस्तावित करते हुए इसका उद्देश्य यह बतलाया है कि अध्ययन का यह समूह (सामाजिक ज्ञान) एक अविभाज्य समष्टि के रूप में माना जाय, जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को उनके सामाजिक एवं पर्यावरण से समायोजन करने में सहायता करना है।[22] इस अभिप्सा के फल स्वरूप देश के अधिकांश राज्यों के पाठ्यक्रम में सामाजिकज्ञान विषय माध्यमिक कक्षाओं तक एक अनिवार्य विषय बन गया, किन्तु सामाजिक ज्ञान के उपर्युक्त समेकित पाठ्यक्रम के निर्माण एवं सामाजिक ज्ञान-शिक्षण के प्रभावी प्रशिक्षण एवं अभिनवन कार्यक्रमों के अभाव में इस विषय का शिक्षण मात्र परम्परागत पृथक विषय-शिक्षण के रूप में हो रहा है जिससे इसके उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो पाती।

इस विषय की उपयोगिता केवल प्राथमिक कक्षाओं तक ही मानी जा रही है जिनमें विद्यार्थियों को अपने पर्यावरण से अवगत होने के लिये इतिहास, भूगोल, व नागरिक-शास्त्र का समेकित रूप में जीवनोपयोगी प्रसंगों में विभक्त कर अध्ययन करना उपयुक्त है। कोठारी शिक्षा आयोग ने भी यही मत व्यक्त किया है कि प्रवर प्राथमिक स्तर पर, समेकित दृष्टिकोण वांछनीय है। बच्चे को इतिहास, भूगोल और नागरिक-जीवन, नीति और अन्य असम्बन्धित छोटी-छोटी सूचनाएँ देने के स्थान पर सामाजिक अध्ययन को एक समन्वयपूर्ण कार्यक्रम देना, जो मानव और उसके पर्यावरण पर आधारित हो, बेहतर होगा। प्राथमिक स्कूल की ऊँची कक्षाओं में कुछ विषयों के शिक्षण के सम्बन्ध में सामाजिक विषयों को समग्र समष्टि के रूप में संगठित किया जा सकता है, लेकिन छात्रों में धीरे-धीरे यह भावना पैदा करनी चाहिए कि इतिहास, भूगोल और नागरिक-शास्त्र पृथक विषय है। इस प्रकार आयोग ने प्राथमिक कक्षाओं से ही नागरिक-शास्त्र के पृथक विषय के रूप में अध्ययन पर बल दिया है। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक कक्षाओं के विषय में तो आयोगों ने स्पष्ट कहा है, कि माध्यमिक स्कूलों में विषय अलग विषयों के रूप में पढ़ाये जायेंगे और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विशेषीकृत अध्ययन के आधार पर बनेंगे।

---

22. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट पृ. 93

दस धन दो शिक्षा योजना के अनुकूल दस वर्षीय सामान्य शिक्षाक्रम में अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने नागरिक-शास्त्र के अध्ययन को प्राथमिक कक्षाओं में पर्यावरण-अध्ययन तथा कक्षा 6 से 10 तक सामाजिक-विज्ञान के अन्तर्गत प्रावधान किया है जिसका अनुसरण अनेक राज्यों के पाठ्यक्रम में किया जा रहा है।[23] इस प्रकार सामाजिक-अध्ययन के स्थान पर नागरिकशास्त्र के एक स्वतंत्र एवं अनिवार्य विषय के रूप में कक्षा दस तक अध्ययन करने का समर्थन किया जाता रहा है।

देश-विदेश के पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की तुलनात्मक स्थिति—विश्व में शासन प्रणालियाँ तीन स्वरूपों में पाई जाती है—साम्यवादी, लोकतान्त्रिक व धर्म आधारित। साम्यवादी प्रणाली का अनुसरण करने वाले देशों में रूस, चीन तथा अन्य साम्यवादी देश प्रमुख है तथा लोकतांत्रिक प्रणाली का अवलम्बन करने वालों में ब्रिटेन, अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी, भारत आदि प्रमुख हैं।

(क) सोवियत रूस की वर्तमान शिक्षा प्रणाली 1958 में वहाँ के साम्यवादी पार्टी द्वारा अनुमोदित कानून के अनुसार नियंत्रित है। विद्यालय-शिक्षा का उद्देश्य साम्यवादी आदेशों के वातावरण में विद्यार्थियों को विज्ञान एवं नियमित समाजोपयोगी शारीरिक श्रम का प्रशिक्षण देकर सांस्कृतिक दृष्टि से विकसित नागरिक बनाना है। रूस के आठ वर्षीय सामान्य पोलिटेक माध्यमिक विद्यालयों में पाठ्यक्रम के विषय हैं—मानविकी, विज्ञान श्रम-प्रशिक्षण तथा समाजपयोगी क्रियाकलाप, चित्रकला, संगीत और शारीरिक शिक्षा। साम्यवादी आदर्शों के अनुकूल नागरिक तैयार करने के लिए 'श्रम प्रशिक्षण तथा समाजपयोगी क्रियाकलाप' विषय नागरिकशास्त्र का ही रूपान्तर है जिसे शाला समय का 15·3 प्रतिशत भाग दिया गया है किन्तु इस विषय के शिक्षण में विद्यालय के समय के अतिरिक्त बाहर के प्रशिक्षण पर अधिक ध्यान दिया जाता है। रूस का शिक्षा पाठ्यक्रम सर्वत्र एक समान हैं तथा माध्यमिक स्तर तक शिक्षा निःशुल्क एवं अनिवार्य है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि रूस के पाठयक्रम में साम्यवादी आदर्शों के अनुकूल नागरिकों के प्रशिक्षण हेतु नागरिक शास्त्र को भारी महत्व दिया गया है तथा उसके शिक्षण में कक्षा-कक्ष की अपेक्षा कक्षा-बाह्य क्रियाकलापों पर अधिक बल दिया जाता है जिससे कि विद्यार्थी विज्ञान, तकनीक एवं शारीरिक श्रम में निष्णात होकर देश का उत्पादन बढ़ाने व उसे समृद्ध राष्ट्र बनाने में सक्षम नागरिक बन सकें। विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में साम्यवादी शासन प्रणाली के प्रारम्भ से अब तक की थोड़ी अवधि में ही रूस का विश्व में एक अग्रणी देश होना यह प्रमाणित करता है कि उसका शिक्षा पाठ्यक्रम एवं उसमें नागरिक शास्त्र के शिक्षण-प्रशिक्षण की विधि एवं उसका महत्व रूस को एक प्रगतिशील एवं शक्तिशाली देश बनाने में अधिक सहायक हुआ है। किन्तु साम्यवादी आदर्श

---

23. दस वर्षीय स्कूल पाठ्यक्रम (एन. सी. ई. आर. टी. पृष्ठ 28)

सर्वाधिकारी राज्य के पोषक होने के कारण रूस के पाठ्यक्रम में नागरिक शास्त्र की भूमिका व्यक्ति की अपेक्षा राज्य के विकास में अधिक है।

(ख) जर्मन लोकतान्त्रिक गणराज्यमें भी रूस के समान ही साम्यवादी आदर्शों पर आधारित शिक्षा पाठ्यक्रम जर्मन लोकतान्त्रिक गणराज्य (पूर्वी-जर्मनी) में प्रचलित है। 1946 के कानून एवं 1949 के संविधान के अनुसार पूर्वी जर्मनी की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था नियन्त्रित होती है। 18 वर्ष की आयु तक शिक्षा निःशुल्क एवं अनिवार्य है। कक्षा 10 तक आठ वर्षीय विद्यालय "ग्राउन्ड-शूल" को अब रूसी शिक्षा व्यवस्था के अनुसार दस वर्षीय सामान्य पोलीटेक माध्यमिक विद्यालय में परिणत किया जा रहा है। इन विद्यालयों के पाठ्यक्रम में हस्तोद्योग प्रशिक्षण जिसमें कृषि व फैक्ट्री उत्पादन कार्य के उपकरणों, मशीनों, तकनीकी प्रक्रियाओं एवं आर्थिक संगठनों का प्रशिक्षण दिया जाता है। गणित, विज्ञान तथा सामाजिक विषय के ज्ञान का मूल्यांकन उपलब्ध जीवन स्थितियों में उनके अनुप्रयोग किया जाता है। विद्यार्थियों में समाज में श्रम के महत्वपूर्ण स्थान का अवबोध तथा श्रमिकों के प्रति आदर की भावना विकसित की जाती है। स्कूली शिक्षा के उपरान्त दो वर्ष के व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात विद्यार्थी एक कुशल कारीगर बन जाता है।[24] इस प्रकार पूर्वी जर्मनी के पाठ्यक्रम में भी रूसी प्रतिरूप के अनुसार नागरिकशास्त्र को हस्तोद्योग प्रशिक्षण, सामाजिक ज्ञान एवं कक्षा बाह्य क्रियाकलापों द्वारा एक प्रमुख स्थान दिया गया है किन्तु इसका उद्देश्य साम्यवादी समाज के उपयुक्त नागरिक तैयार करना ही है।

(ग) साम्यवादी चीन के पाठ्यक्रम में भी साम्यवादी आदर्शों के अनुकूल नागरिक तैयार करने के लिए नागरिकता की शिक्षा दी जाती है। प्रारम्भ से ही विद्यार्थियों को खेतों या कलकारखानों में उत्पादक श्रम का प्रशिक्षण दिया जाता है। रूथ सीडेल का कथन है कि वहाँ बालकों को केवल भावी नागरिकों के दृष्टिकोण से उपयुक्त प्रशिक्षण ही नहीं दिया जाता बल्कि उन्हें वर्तमान में भी नागरिक मानकर शिक्षा दी जाती है।[25] अन्य साम्यवादी देशों में भी कुछ प्रकारान्तर से पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की यही स्थिति है।

(2) लोकतान्त्रिक राज्यों में से प्रमुख राज्यों के पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की स्थिति निम्नांकित है—(क) लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था का सर्व प्रथम विकास ब्रिटेन में ही हुआ, अतः वहाँ के पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र का महत्व भी सबसे पहले स्वीकार किया गया। ब्रिटेन में मुख्यतः चार प्रकार के विद्यालय हैं–(1) ग्रामर स्कूल, जो 16 वर्ष की आयु पर जी. सी. ई. परीक्षा के लिये विद्यार्थियों को तैयार करते हैं। यह परीक्षा भी दो स्तरों की होती है–सामान्य या मुख्यस्तरी तथा विकसित या ए स्तरी। पाठ्यक्रम में गणित, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, कला, संगीत, उद्योग, आधुनिक भाषा, धार्मिक शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा अनिवार्य विषय में है किन्तु उच्च कक्षाओं में कला या विज्ञान में विशिष्टीकरण वैकल्पिक है। (2) सैकण्डरी माडर्न स्कूल में संख्या सर्वाधिक है। इनमें क्रियात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है। (3) सैकण्डरी टेक्नीकल स्कूल सामान्य शिक्षा के साथ उद्योग, व्यवसाय तथा कृषि से सम्बद्ध हैं। (4) स्वतंत्र पब्लिक स्कूल, जिनमें

---

24. यूनेस्को : वर्ल्ड सर्वे ऑफ एजुकेशन तृतीय खंड अंग्रेजी संस्करण
25. सीडेल रूथ : वीमेन एण्ड चाइल्ड केयर इन चायना

आधार स्तर की शिक्षा के बाद प्रवेश दिया जाता है। विद्यालय पाठ्यक्रम मे विषयों के शिक्षण के अतिरिक्त युवक केन्द्रों पर प्रशिक्षित किया जाता है। इनका उद्देश्य विद्यार्थियो को समाज के उत्तरदायी सदस्य बनने के लिये घर तथा औपचारिक शिक्षा के पूरक के रूप में अपेक्षाकृत अच्छे अवसर प्रदान करने तथा अपने व्यक्तिगत ससाधनो को खोजने एवं विकसित करने मे सहायक होना है।[26]

ब्रिटेन मे शिक्षा-व्यवस्था का दायित्व स्थानीय शिक्षा अधिकरणों का है। ब्रिटिश स्कूलों के पाठ्यक्रम मे नागरिकशास्त्र को पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापो के रूप मे अधिक महत्त्व दिया गया है तथा कला विषय के अन्तर्गत इसे वैकल्पिक विषय की श्रेणी मे रखा गया है।

(ख) अमेरिका[27] सर्वाधिकारी राज्य रूस के विपरीत लोकतान्त्रिक किन्तु पूंजीवादी व्यवस्था में विश्वास रखने वाला शक्तिशाली देश है। अमेरिका मे 1952 की शिक्षा नीति आयोग ने 7 वर्ष की आयु के बाद 14 वर्ष की विद्यालय शिक्षा सब के लिये न्यूनतम आवश्यकता निर्धारित की तथा शिक्षा के उद्देश्यो मे वैयवसाय, वैयक्तिक विकास, सामाजिक कल्याण तथा नागरिकता को प्रमुख महत्त्व दिया गया। सुखी जीवन के लिये प्रयास, बौद्धिक उत्सुकता, समीक्षात्मक विचार तथा लोकतत्र मे नैतिक मूल्यो के विकास पर बल दिया गया। प्राथमिक शिक्षा के बाद दो प्रकार के विद्यालयों में माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था है। (1) जूनियर हाईस्कूल कक्षा 7 से 9 तक तथा (2) सीनियर हाई स्कूल कक्षा 10 से 12 तक पाठ्यक्रम मे अन्य सामाजिक विज्ञान विषय के साथ नागरिकशास्त्र समेकित कर सामाजिक अध्ययन विषय का प्रावधान किया गया है। अमरीका मे पाठ्यक्रम का विकास निरन्तर हो रहा तथा विद्यार्थियो की आवश्यकता के अनुसार पृथक विषयो के स्थान पर दो या दो से अधिक विषयो को समेकित कर अथवा नवीन विषयो को पाठ्यक्रम मे स्थान देने के प्रयोग किये जा रहे हैं। भारत मे इस आशय का सामाजिक अध्ययन प्रयोग उपयोगी एवं कार्यकारी सिद्ध नही हुआ।

उपर्युक्त अन्य देशो के पाठ्यक्रम तथा उनमे नागरिकशास्त्र की स्थिति के सर्वेक्षण के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शासन-प्रणाली चाहे सर्वाधिकारी हो अथवा लोकतान्त्रिक सभी देशो के पाठ्यक्रमों मे अपने आदर्श एवं मूल्यो के अनुसार नागरिकशास्त्र को शिक्षा पाठ्यक्रम मे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसे कक्षा-कक्ष में दिये जाने वाले पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा जीवन से हे सम्बन्धित क्रियाकलापो के माध्यम से अच्छे नागरिक तैयार करने के लिये एक प्रभावी कार्यक्रम के रूप मे स्वीकार किया गया है।

(ग) भारत में नागरिकशास्त्र की पाठ्यक्रम में स्थिति तथा भावी अपेक्षाएं एवं सम्भावनाएं—स्वाधीनोत्तर भारत में ही नागरिकशास्त्र को विद्यालय पाठ्यक्रम मे महत्त्व देकर उसे उचित स्थान देने का प्रयास किया गया। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् कुछ समय तक माध्यमिक कक्षाओ मे नागरिकशास्त्र एक वैकल्पिक विषय बना, किन्तु माध्यमिक शिक्षा आयोग की अभिशंसाओ के आधार पर अधिकाश राज्यों ने विद्यालय शिक्षा की संरचना 10—1 सूत्र अर्थात् 10 वर्ष की माध्यमिक तथा एक वर्ष की उच्च माध्यमिक शिक्षा के अनुसार करली तथा माध्यमिक, उच्च माध्यमिक कक्षाओं मे कला वर्ग के

26. किंग इ. जे. : मादर स्कूल एण्ड आवर्स (अंग्रेजी संस्करण)
27. यंग, डी. एजूकेशन इन यू. एस. ए.

अन्तर्गत नागरिकशास्त्र का एक वैकल्पिक स्तर दिया गया। कक्षा 1 से 10 तक सामाजिक अध्ययन को एक अनिवार्य विषय बना दिया गया जिसके अन्तर्गत इतिहास व भूगोल के साथ नागरिकशास्त्र को समेकित कर रखा गया। क्योंकि हमारा देश लोकतांत्रिक है तथा उसी के अनुकूल हमारा संविधान है, अत: साम्यवादी राज्यों के विपरीत लोकतांत्रिक राज्यों के अनुकूल नागरिकशास्त्र को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया और अमेरिका में प्रचलित सामाजिक अध्ययन की संकल्पना को अपना कर नागरिकशास्त्र को माध्यमिक कक्षा तक अनिवार्य पठन-पाठन का विषय बना दिया गया, किन्तु नागरिकशास्त्र का सामाजिक अध्ययन विषय से समेकन या एकीकरण न हो सका अतः इस विषय के पृथक अस्तित्व को बने रहने पर बल दिया जाने लगा।

कोठारी शिक्षा आयोग ने 10+2+3 अर्थात् 10 वर्ष तक माध्यमिक 2 वर्ष की उच्च माध्यमिक तथा तीन वर्ष की स्नातक स्तरीय शिक्षा की अभिशंसा की तथा माध्यमिक स्तर तक सामाजिक अध्ययन की अपेक्षा सामाजिक विज्ञान विषयों के अन्तर्गत पृथक विषय के रूप में नागरिकशास्त्र के अनिवार्य शिक्षण का सुझाव दिया। 10+2 विद्यालय शिक्षा योजना को क्रियान्वित करने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने 10 वर्षीय स्कूल शिक्षा का पाठ्यक्रम तैयार किया तथा ग्रडिसेषय्या समिति तथा एन. सी. ई. आर. टी. ने 10+2 या उच्च माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम प्रस्तावित किया। 10+2 शिक्षा योजना को केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल तथा कुछ राज्यों ने स्वीकार कर लिया है। इस योजना के अनुसार प्राथमिक कक्षाओं में भाषा, गणित, कार्यानुभव तथा स्वास्थ्यशिक्षा व खेलों के साथ नागरिकशास्त्र को पर्यावरण अध्ययन विषय-समूह के अन्तर्गत स्थान दिया गया है। इस विषय समूह में इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा सामान्य विज्ञान के साथ नागरिकशास्त्र को समेकित रूप में सम्मिलित किया गया है। इस विषय समूह को शाला समय का 15 से 20 प्रतिशत तक भाग शिक्षण के लिये नियत है। कक्षा 8 से 9 तक के पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञानों के विषय-समूह, जिसमें इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र व अर्थशास्त्र को सप्ताह में शिक्षण कार्य के 48 कालांशों में से 6—7 कालांश ही दिये गये हैं।[30]

उच्च माध्यमिक कक्षाओं में नवीन योजनानुसार दो धाराओं एकादमिक तथा व्यावसायिक का प्रावधान है। एकादमिक धारा के अन्तर्गत कोई तीन वैकल्पिक विषय लेने होते हैं जिनमें से राजनीति शास्त्र भी एक है—इन वैकल्पिक विषयों को शाला समय का 75 प्रतिशत भाग आवंटित है।[31]

संविधान के अनुसार शिक्षा राज्यों का विषय होने के कारण इस नवीन 10+2 शिक्षा योजना को निश्चय प्राय सभी राज्यों ने स्वीकार कर लिया है, किन्तु उसकी क्रियान्विति कुछ राजनैतिक एव आर्थिक कारणों से सभी राज्यों में एक समान नहीं है। अन्य कारणों में नवीन शिक्षा आयोजना को क्रियान्विति के लिए धनाभाव का होना,

---

30. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम. (रा. श. अ. प्र. प.) पृ. 28

31. उच्च माध्यमिक शिक्षा एव व्यवसायों का अंग्रेजी संस्करण प्रस्ताव पृ. 11 सारकृत पृष्ठ

शिक्षकों के अभिनवन कार्यक्रमों के आयोजन की कठिनाई तथा नयी योजना की क्रियान्विति के लिए तैयारी करना है। इस योजना को क्रियान्विति मे पश्चिमी बंगाल महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, असम, हरियाणा, तमिलनाडु, उडीसा तथा केरल अग्रणी राज्य हैं। उत्तर प्रदेश अभी पुरातन शिक्षा-व्यवस्था हाईस्कूल, इ टर तथा दो वर्षीय स्नातक पाठ्यक्रम को ही अपनाये हुए है।

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा आयोग बोर्ड ने 1976 मे ही 10+2 योजना की पूर्व तैयारी कर ली थी, किन्तु कभी तक राज्य मे उसकी क्रियान्विति नही हो पाई है। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने कक्षा 9 व 10 माध्यमिक कक्षाओं के लिये निम्नांकित पाठ्यक्रम योजना प्रकाशित की। भाषाएँ—हिन्दी, अंग्रेजी, तृतीय भाषा, गणित विज्ञान—भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान एवं जीव विज्ञान। सामाजिक ज्ञान—इतिहास एवं नागरिकशास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र व व्यावहारिक वाणिज्य। कार्यानुभव, स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा तथा पाठ्योतर प्रवृत्तियाँ।[32]

इस पाठ्यक्रम मे सामाजिक ज्ञान विषय को सप्ताह के 48 कालांशों मे से 9 कालांशों को महत्त्व दिया गया है।

भारत मे वर्तमान पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की स्थिति के उपर्युक्त संक्षिप्त सर्वेक्षण तथा विदेशों में इसकी स्थिति को देखने से निम्नांकित तथ्य प्रकट होते है 10+2 शिक्षा योजना के अन्तर्गत नागरिकशास्त्र को उचित महत्त्व देते हुए पाठ्यक्रम मे उसे एक पृथक एवं स्वतंत्र विषय के रूप में अध्ययन-विषय का स्थान दिया गया है, किन्तु अन्य सामाजिक विज्ञान-विषय-समूह के अन्तर्गत उसे शिक्षण समय का अत्यन्त न्यून अंश दिया गया है।

(2) वर्तमान मे प्रचलित पुरातन पाठ्यक्रम तथा माध्यमिक कक्षाओं मे सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत समेकित रूप मे नागरिकशास्त्र का अध्ययन इस विषय के प्रति न्याय नही कर पाता अतः नयी शिक्षा योजना की क्रियान्विति अपेक्षित है।

(3) विदेशो मे प्रचलित पाठ्यक्रमो मे नागरिकशास्त्र का शिक्षण कक्षा-कक्ष तक ही सीमित न ही है अपितु कक्षा-बाह्य स्थानीय समुदाय एवं सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं के दैनिक क्रिया-कलापो मे विद्यार्थियो की सक्रिय सहभागिता पर अधिक बल दिया जाता है। पाठ्यक्रम मे सहगामी क्रियाकलापो का स्पष्ट उल्लेख भी होना चाहिए।

(4) नागरिकशास्त्र की शिक्षण विधियो में विदेशो की भांति नवीन क्रियाशील विधियो, प्रयोजनाओं, विचार-विमर्श सर्वेक्षण, शिक्षा-यात्रा एवं भ्रमण परिपद्, संगोष्ठी परिचर्चा आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम में इसका स्पष्ट उल्लेख हो।

---

32. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर द्वारा प्रकाशित शिक्षा की नवीन योजना 10+2 सैकण्डरी कक्षाओं की पाठ्यक्रम योजना, पृष्ठ 2 से 4

□□□

3 नागरिकशास्त्र : अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध

नागरिकशास्त्र अपने पृथक एव स्वतन्त्र अस्तित्व मे आने के पूर्व धर्मशास्त्र, दर्शन-शास्त्र एव नीतिशास्त्र के अङ्ग के रूप मे शिक्षा-पाठ्यक्रम मे स्थान पाता रहा। नागरिक-शास्त्र की सकल्पना के विकास मे मानव-समाज एव राज्य के ऐतिहासिक विकास, भौगोलिक परिस्थितियो, वैज्ञानिक प्रगति, अर्थव्यवस्था, राजनैतिक चेतना आदि विभिन्न क्षेत्रो मे हुई प्रगति एव उनकी विषय-वस्तु की विशिष्ट भूमिका रही है। विशेष मानव-संबंधो की व्याख्या करने वाले 'सामाजिक विज्ञान' इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति के वर्ग मे शनै. शनै यह अपना पृथक एव विशिष्ट स्थान बनाता गया। मानव समाज एव राज्य के सदस्य के रूप मे नागरिक के कर्त्तव्यो एव अधिकारों, उसके परस्पर तथा सामाजिक एव राजनैतिक सस्थाओ से सम्बन्धो तथा एक उत्तम समाज, राष्ट्र एव विश्व के निर्माण में सहायक आदर्श नागरिक के गुणो की व्याख्या करने के कारण नागरिकशास्त्र का अपना पृथक क्षेत्र निश्चित हुआ तथा उसने सामाजिक विज्ञानो मे एक प्रतिष्ठित स्थान पाया और अन्य विज्ञानो से परस्पर सह-सम्बन्ध बनाते हुए वर्तमान जीवन प्रणाली का एक अभिन्न अङ्ग बन गया।

यह विषयो की परस्पर अन्योन्याश्रिता व ज्ञान की एकता की दृष्टि से जितनी आवश्यक है उतनी ही अपरिहार्य भी है। अन्य विषयो से अंतर्निर्भरता तथा इसके अध्ययन-अध्यापन की पाठ्यवस्तु का अन्य सम्बद्ध विषयो मे सह-सम्बन्ध का आना औचित्य है।

सह-सम्बन्ध का अर्थ है एक विषय के अध्ययन-अध्यापन के समय उसकी विषय-वस्तु के तथ्यों को स्पष्ट करने एव बोधगम्य बनाने हेतु अन्य संबद्ध विषयों के तथ्यों से सह-सम्बन्ध स्थापित करना। किन्तु यह सह-सम्बन्ध स्वाभाविक होगा, ऊपर से थोपा हुआ अथवा कृत्रिम नहीं। स्वाभाविक सह-सम्बन्ध से तात्पर्य है कि किसी विषय को पढ़ाते समय अनुभूत आव-श्यकता के अनुरूप विषय के स्पष्टीकरण हेतु अन्य विषयों से सहज सह-सम्बन्ध स्थापित करना।[1]

उदाहरण के लिए, नागरिकशास्त्र के 'स्थानीय स्वायत्त शासन-ग्राम पचायत' के प्रकरण के अध्ययन-अध्यापन के समय इतिहास के इस तथ्य से सह-सम्बन्ध स्थापित करना

---

1. दीक्षित उमेशनाथ तथा हेतसिंह बघेला : इतिहास शिक्षण (राज० हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ 161)

होगा कि प्राचीन काल से ही भारत में ग्राम-पंचायतों द्वारा स्थानीय स्वायत्त शासन की परम्परा रही है तथा पंचायतों के प्राचीन व अर्वाचीन कर्त्तव्य एवं अधिकारों में क्या अन्तर है। इसी प्रकार नागरिकशास्त्र के 'संयुक्त राष्ट्र संघ और विश्व शान्ति' प्रकरण के अध्ययन में विश्व के विभिन्न संघर्षरत देशों— मध्यपूर्व के देश इजरायल व सीरिया, लीबिया, ईराक व ईरान, अफगानिस्तान व रूस, चीन, वियतनाम आदि की भौगोलिक स्थिति पर प्रकाश डाल कर भूगोल से सह-सम्बन्ध स्थापित करना होगा।

सह-सम्बन्ध, समकलन तथा संलयन में भेद— अध्ययन-अध्यापन सामग्री का संगठन प्रायः विभिन्न विषयों के अन्तर्गत उसे विभाजित कर दिया जाता है। केवल सामाजिक अध्ययन तथा सामान्य विज्ञान जैसे विषयों को छोड़कर यही परम्परागत विधि अपनाई जाती है। विषयों को ज्ञान के संकीर्ण कटघरों में विभाजित कर उन्हें पढ़ाने की पुरानी प्रथा ही सामान्यतः अभी विद्यालयों में प्रचलित है। इससे विद्यार्थियों को विषयों की पाठ्य-वस्तु को समग्र रूप से समझने तथा उसका जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने में कठिनाई होती है। इसीलिए प्रभावी शिक्षण हेतु अब एक नवीन उपागम का अवलम्बन कर विषय-वस्तु का संगठन सह-सम्बन्ध, समकलन तथा संलयन के आधार पर किया जाने लगा है। डी० के० दरजी ने भी यही मत व्यक्त करते हुए कहा है कि पृथक एवं स्वतन्त्र विषयों की पवित्रता की रक्षा पर दुराग्रह करने से विद्यार्थियों को प्रभावी रूप से अधिगम नहीं हो पाता।[2]

सह-सम्बन्ध, समकलन तथा संलयन विषय-वस्तु को समझने एवं उसे जीवन से सम्बन्धित करने के नवीन उपागम हैं। किसी विषय की पाठ्य-वस्तु को स्पष्ट करने की दृष्टि से अनुभूत आवश्यकतानुसार उसे अन्य विषयों से सहज-स्वाभाविक रूप में सम्बन्धित करना सह-सम्बन्ध कहलाता है। सह-सम्बन्ध द्वारा सबद्ध विषयों को परस्पर एक दूसरे के तथ्यों को बोधगम्य बनाने एवं सम्बर्धित करने का अवसर मिलता है। वस्तुतः सह-सम्बन्ध पाठ्य-वस्तु के संगठन की एक विधि या उपागम होने के अतिरिक्त अधिगम को सोद्देश्य एवं प्रभावी बनाने की विचार-शैली या अभिव्यक्ति भी है।

समकलन वह प्रक्रिया है जिसमें एक विषय के अन्तर्गत अन्य विषयों को इस प्रकार समाहित कर पढ़ाया जावे कि सभी विषयों को समान प्रधानता मिल सके। 'संलयन' या 'गलन' प्रक्रिया में कुछ विषय परस्पर इस प्रकार मिश्रित कर दिये जाते हैं कि उनका पृथक अस्तित्व समाप्त होकर वे एकाकार हो जाते हैं। दरजी ने इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए कहा है कि— सह-सम्बन्ध विभिन्न विषयों का अंतःसम्बन्ध है।... समकलन में विषयों का अस्तित्व बना रहता है किन्तु शिक्षण की दृष्टि से पाठ्य-वस्तु के संगठन में विषयों की परिधियों का परस्पर कुछ सीमा तक अतिक्रमण हो जाता है।... संलयन दो या तीन विषयों का एकाकार हुई पाठ्यवस्तु है... इस संश्लेषण में विषय पूर्णतः अदृश्य हो जाते हैं।[3]

---

2. दरजी डी० के० : टीचिंग ऑफ सोशियल स्टडीज इन इण्डियन स्कूल्स, पृ. 18
3. उपर्युक्त पृ. 18—19

उदाहरण के रूप में नागरिकशास्त्र के 'मूलभूत अधिकार' प्रकरण के अध्ययन-अध्यापन के समय पाठ्यवस्तु का प्रारम्भ से वर्तमान तक भारत की विकास स्थितियों का उल्लेख कर इतिहास से, मनुष्यों की आदतों, रीति-रिवाजों व परम्पराओं पर जलवायु का प्रभाव बतलाकर भूगोल से तथा लोगों के अन्तर्गत आर्थिक जीवन की चर्चा कर नागरिकशास्त्र का इतिहास, भूगोल एवं अर्थशास्त्र से सह-सम्बन्ध किया जा सकता है। भूगोल के प्रकरण 'भारत का प्राकृतिक भूगोल' पढ़ाते समय पश्चिमोत्तर पर्वत-दर्रों से विदेशी आक्रमणकारियों के भारत आगमन (इतिहास), भारत की प्रमुख उपज, खनिज पदार्थ व उद्योगों की उपयोगिता एवं आयात-निर्यात (अर्थशास्त्र तथा 1947 में हुए भारत विभाजन के प्रभाव (नागरिकशास्त्र) से भूगोल की पाठ्यवस्तु का सम्बन्ध इस प्रकार बतलाना कि सभी विषयों को समान महत्व मिले, समन्वय की श्रेणी में आता। समन्वय का उदाहरण 'सामाजिक अध्ययन' के प्रकरणों में मिलता है जिसमें जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं पर आधारित इकाइयों में पाठ्यक्रम विभाजित होता है। जैसे—हमारा घर, हमारा पड़ोस, हमारा प्रदेश, हमारा राज्य आदि प्रकरणों में नागरिकशास्त्र के अतिरिक्त अन्य सामाजिक विषय इतिहास, अर्थशास्त्र, भूगोल आदि की पाठ्यवस्तु इस प्रकार संगठित की जाती है कि विषयों का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण के समय अन्य सम्बद्ध विषयों के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करना ही अभिप्रेत है। समाकलन या समन्वय द्वारा विषय के अस्तित्व को गौण बनाना या समाप्त करना नहीं है। सह-सम्बन्ध में नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु ही प्रमुख रहती है, अन्य विषय गौण रूप में उनके स्पष्टीकरण में सहायक होते हैं।

सह-सम्बन्ध की आवश्यकता एवं औचित्य—सह-सम्बन्ध का समाजशास्त्रीय आधार है। नागरिकशास्त्र शिक्षण में अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध की आवश्यकता एवं औचित्य से सम्बन्धित विचारणीय बिन्दु ज्ञातव्य है—

(1) नागरिकशास्त्र का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है जिसमें नागरिक कर्त्तव्य एवं अधिकारों के अतिरिक्त स्थानीय समाज, प्रदेश, राज्य व देश से ही नहीं बल्कि विश्व के वृहद् समाज एवं उसकी सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक समस्याओं से नागरिकों के सम्बन्धों की व्याख्या की जाती है एवं अनेक समस्याओं के कारण एवं समाधान खोजने का प्रयास किया जाता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण का उद्देश्य केवल पुस्तकीय ज्ञान देकर तथ्यों को रखना नहीं है बल्कि नागरिकों को समाज, राष्ट्र व विश्व की वर्तमान गतिविधियों से परिचित कराकर दैनिक जीवन-स्थितियों में सक्रिय योगदान करने का प्रशिक्षण भी देना है। यह तब ही सम्भव हो सकेगा जब जीवन के विभिन्न क्षेत्रों—सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि में नागरिक के सक्रिय योगदान का उपयोग कराया जाए।

(2) सह-सम्बन्ध का मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक आधार भी है। समग्राकृति मनोविज्ञान के अनुसार पूर्ण भावना अधिगम की है, न कि उसे खण्डशः देखने में है। ज्ञान की

एकता की दृष्टि से भी विभिन्न विषयों में विभाजित ज्ञान का सही अवबोध विषयगत सह-सम्बन्ध स्थापित करने पर सम्भाव्य है। नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु अन्य सम्बद्ध विषयों से सह-सम्बन्धित होकर ही सोद्देश्य एवं जीवनोपयोगी बन सकती है।

(3) सह-सम्बन्ध का शैक्षणिक महत्व प्रारम्भ से ही माना जाता रहा है। प्राचीन काल की शिक्षा पद्धति में नागरिकशास्त्र का ज्ञान अन्य विषयों—धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि से सह-सम्बन्धित था। पाश्चात्य शिक्षाविदों ने नवीन ज्ञान के प्रभावी अधिगम हेतु पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित करने पर बल दिया है। हर्बर्ट के सह-सम्बन्ध के सिद्धान्त का आधार समाकल्पक संहृति पूर्व ज्ञान ही है। हर्बर्ट के सह-सम्बन्ध के सिद्धान्त को उसके शिष्य ज़िलर ने एकाग्रता के सिद्धान्त मे विकसित कर किसी एक विषय को शिक्षण का केन्द्र मान कर अन्य विषयों को उससे सह-सम्बन्धित करने पर बल दिया है। इस सिद्धान्त के अनुसार विभिन्न शिक्षाविदों ने भिन्न-भिन्न विषयो को केन्द्रीय विषय बनाने का आग्रह किया। जॉन डिवी ने शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक कुशलता मानते हुए विद्यालय व समाज के जीवन को केन्द्रीय विषय बतलाया। महात्मा गाधी ने भी बुनियादी शिक्षा पद्धति में सह-सम्बन्ध का केन्द्र उद्योग अथवा सामाजिक एवं भौतिक पर्यावरण को माना। अत शैक्षिक दृष्टि से सह-सम्बन्ध का प्रभावी अधिगम में भारी महत्त्व है तथा सामाजिक जीवन एवं पर्यावरण को केन्द्रीय विषय मानना नागरिकशास्त्र की विषय-वस्तु से अन्य विषयो को सह सम्बन्धित करने के लिए आवश्यक है।

सह-सम्बन्ध का उद्देश्य—सह-सम्बन्ध के अर्थ एवं उसकी आवश्यकता के सन्दर्भ में विशेषत: नागरिकशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध के परिप्रेक्ष्य मे ये उद्देश्य निम्नांकित हो सकते हैं—

(1) अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध द्वारा नागरिकशास्त्र की विषय-वस्तु एव अध्यापन बिन्दुओ को सरल, सुबोध एव रोचक बनाना। उदाहरणार्थ—भारत की खाद्य समस्याओं के तथ्यों को तत्सम्बन्धी इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र के तथ्यो से सह-सम्बन्धित कर उस उद्देश्य की पूर्ति करना।

(2) विद्यार्थियों के अधिगम को प्रभावी, सोद्देश्य एव जीवनोपयोगी बनाना। उदाहरणार्थ–सरकार के अङ्ग व्यवस्थापिका के कार्य प्रकरण के अन्तर्गत विद्यार्थियों को तथ्यो की सुस्पष्टता हेतु अन्य विषयो मे सम्बद्ध जानकारी की जिज्ञासा एवं अनुभूत आवश्यकता होती है जैसे वित्त व्यवस्था पर नियन्त्रण के कार्य को समझाने के लिए अर्थशास्त्र, विधि निर्माण सम्बन्धी कार्य के लिए इतिहास एवं भूगोल से सह-सम्बन्ध उपयोगी रहता है।

(3) ज्ञान की एकता की दृष्टि से सह-सम्बन्ध नागरिकशास्त्र एवं अन्य विषयों को परस्पर योगदान करने का अवसर प्रदान करना है जिससे तथ्यों या समग्र रूप से अवबोध हो सके।

सह-सम्बन्ध के प्रकार—नागरिकशास्त्र शिक्षण एव पाठ्य-वस्तु नियोजन की दृष्टि सह-सम्बन्ध के निम्नाङ्कित दो प्रकार हैं—

(1) प्रासंगिक या आकस्मिक सह-सम्बन्ध—जब किसी प्रकरण को पढ़ाते समय शिक्षक अनायास बिना किसी पूर्व योजना के अध्याप्य-विषय के तथ्यों को अन्य विषयों से सम्बन्धित करता है तो उसे प्रासंगिक सह-सम्बन्ध कहेंगे। जैसे 'संयुक्त राष्ट्र संघ व विश्व शान्ति' प्रकरण के अध्यापन के समय अनायास ही विभिन्न राष्ट्रों के संघर्ष का इतिहास बतलाना, साम्यवाद एवं पूँजीवादी शासन प्रणालियों का राजनीति-विज्ञान से तथा अर्थ-व्यवस्था का अर्थशास्त्र से सह-सम्बन्ध स्थापित करना प्रासंगिक सह-सम्बन्ध है जो पूर्व नियोजित न होने के कारण आवश्यकता से अधिक या अस्वाभाविक हो जाता है जिससे व्यर्थ समय नष्ट होता है।

(2) पूर्व नियोजित सह-सम्बन्ध—नागरिकशास्त्र शिक्षक को अपनी पाठ्य-वस्तु को सम्बद्ध विषयों के शिक्षकों के साथ विचार-विमर्श कर सत्र के आरम्भ में ही अध्यापन हेतु इस प्रकार नियोजित कर लेना चाहिए कि विभिन्न विषयों के शिक्षण में परस्पर सह-सम्बन्ध समुचित रूप से स्थापित किया जा सके। इस प्रकार पूर्व नियोजित सह-सम्बन्ध के अनुसार पाठ्य-वस्तु के संगठन द्वारा तथ्यों के अनावश्यक दुहराव से बचा जा सकेगा तथा समय व शक्ति का सदुपयोग हो सकेगा। कक्षागत कक्षावार पाठ्यक्रम की दृष्टि से सह-सम्बन्ध के निम्नांकित दो प्रकार का हो सकता है—

(i) क्षैतिज सह सम्बन्ध—किसी एक कक्षा के किसी विषय का उसी कक्षा के पाठ्य-क्रम में निर्धारित अन्य विषयों से सह सम्बन्ध क्षैतिज सह-सम्बन्ध है क्योंकि उसमें कक्षागत समानान्तर सह-सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। नागरिकशास्त्र के प्रकरणों को किसी कक्षा में पढ़ाते समय उसी कक्षा के अन्य विषयों की पाठ्य-वस्तु से स्वाभाविक सह-सम्बन्धित किया जा सकता है। इसके लिए नागरिकशास्त्र शिक्षक को उस कक्षा में सम्बन्धित अन्य विषयों का सामान्य ज्ञान होना चाहिये अन्यथा गलत तथ्यों से भ्रान्ति उत्पन्न हो सकती है।

(ii) उदग्र अथवा लम्बान्तर सह-सम्बन्ध—जब अध्यापक नागरिकशास्त्र के किसी प्रकरण को कक्षा में पढ़ाते समय उसकी पिछली कक्षाओं या आगामी कक्षा की नागरिक-शास्त्र की पाठ्य-वस्तु से सह-सम्बन्धित करे तो वह लम्बान्तर सह-सम्बन्ध होगा। इस प्रकार के सम्बन्ध से पूर्व कक्षाओं में पढ़ाये गये तथ्यों की पुनरावृत्ति न होने से समय नष्ट नहीं होता तथा आगामी कक्षाओं के अध्यापन तथ्यों से सह-सम्बन्ध करने से प्रस्तुत पाठ का संवर्धन होता है।

(3) जीवन से सह-सम्बन्ध—नागरिकशास्त्र का उद्देश्य व्यावहारिक जीवन में कुशल नागरिक तैयार करना है। अतः पाठ्यक्रम में सहगामी क्रियाकलापों द्वारा नागरिक-शास्त्र की पाठ्य-वस्तु का वास्तविक जीवन स्थितियों से सह-सम्बन्ध किया जाना वांछनीय है। ड्यूई, जॉन डिवी तथा महात्मा गाँधी ने सामाजिक वातावरण में विषयों के समवाय तथा सह-सम्बन्ध का प्रतिपादन किया है। संसद या विधान सभा या सुरक्षा परिषद् की कार्य-प्रणाली, निर्वाचन पद्धति, ग्राम पंचायत या नगरपालिका के कर्तव्य आदि प्रकरणों को सम्बन्धित संस्थाओं के प्रत्यक्ष परिदर्शन के अनुरूप क्रियाओं भ्रमण, यात्रा, सम्बद्ध

पदाधिकारियों की वार्ताओं, विचार-गोष्ठियों आदि क्रियाकलापों के माध्यम से वास्तविक जीवन स्थितियों से सह-सम्बन्धित किया जा सकता है।

नागरिकशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध : सीमाएं तथा सावधानियां

नागरिकशास्त्र शिक्षण में अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध की सम्भावनाएँ असीमित या अनियन्त्रित नहीं है। विद्यालय पाठ्यक्रम मे विषयों की संख्या, उनका महत्व एवं उपयोगिता, उपलब्ध समय सीमा, शिक्षकों की योग्यता एव क्षमता तथा प्रशासनिक व्यवस्था के कारण सह-सम्बन्ध की निम्नाङ्कित सीमाएँ व सतर्कताएँ वाछनीय है—

(1) नागरिकशास्त्र पाठ्यक्रम की सीमा में रहते हुए ही अन्य पाठ्यक्रमों-भाषाएँ, गणित, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, कला, उद्योग या कार्यानुभव, स्वास्थ्य शिक्षा एवं खेल तथा नैतिक शिक्षा आदि अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध स्थापित करना होगा।

(2) नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रत्येक प्रकरण का अन्य विषयों से समबाह किया जाना सम्भव नहीं है क्योंकि विद्यालय समय-विभाग-चक्र मे इस विषय को जितना समय आवटित है, उसी सीमा के अन्तर्गत केवल अपरिहार्य प्रकरण एवं तथ्यों का सह-सम्बन्ध करना व्यावहारिक है।

(3) सह-सम्बन्ध जितना स्वाभाविक होगा उतना ही यह प्रासङ्गिक एव प्रभावी होगा। ऊपर से थोपा हुआ सह-सम्बन्ध कृत्रिम एव हास्यास्पद होता है तथा पाठ्य-वस्तु के अन्तर्गत विषयान्तर द्वारा निरर्थक सिद्ध होता है। स्वाभाविकता के लिए विद्यार्थियों में प्रस्तुत तथ्यों के स्पष्टीकरण हेतु अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध की जिज्ञासा एवं अनुभूत आवश्यकता का होना वाछनीय है।

(4) विद्यार्थियों की आयु, योग्यता एव दक्षता के अनुकूल सह-सम्बन्ध किया जाना अपेक्षित है। यदि अन्य विषयों की सह-सम्बन्धित सामग्री विद्यार्थियों की समझ से बाहर है या उनमे इसके लिए आवश्यक पूर्व ज्ञान नहीं है तो सह-सम्बन्ध निष्प्रयोजन एवं समय का अपव्यय ही माना जायगा।

(5) नागरिकशास्त्र के व्यापक क्षेत्र को देखते हुए इसका सह-सम्बन्ध अनेक विषयों से हो सकता है किन्तु विद्यार्थियों के लाभ एवं विषय की प्रकृति की दृष्टि से यह सह-संबंध केवल विद्यालय पाठ्यक्रम मे निर्धारित विषयों से ही किया जाना उपयोगी रहता है। ये विषय इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र, राजनीतिविज्ञान, अर्थशास्त्र, सामान्य विज्ञान एवं साहित्य हो सकते हैं।

नागरिकशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध

(1) नागरिकशास्त्र एवं इतिहास—इतिहास मानव के अतीत का पूर्ण अभिलेख है तथा अतीत की घटनाओं से मानव समाज, सभ्यता एवं संस्कृति के विकास को स्पष्ट करता है जबकि नागरिकशास्त्र नागरिकों के कर्त्तव्य व अधिकार तथा सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं से उसके सम्बन्धों की व्याख्या करता है। प्रारम्भ मे नागरिकशास्त्र एवं राजनीति-

शास्त्र इतिहास के अङ्ग थे। इतिहास से ही इनकी उत्पत्ति हुई। नागरिकशास्त्र एवं इतिहास दोनों ही सामाजिक विज्ञान हैं। अन्तर केवल यह है कि इतिहास का क्षेत्र व्यापक है तथा वह अतीत से सम्बन्धित है किन्तु नागरिकशास्त्र का क्षेत्र सीमित है तथा वह वर्तमान में नागरिकता के पक्षों का ही विवेचन करता है। नागरिकशास्त्र वर्तमान में उन परिणामों का उपयोग करता है जो इतिहास द्वारा किये गये प्रयोगों से निकले हैं। इसलिए इतिहास को मानव की प्रयोगशाला के समान माना गया है। नागरिकशास्त्र को वर्तमान में अपनी विषय वस्तु को समझने के लिए इतिहास की सामग्री से सहायता लेनी पड़ती है।

नागरिकशास्त्र एवं इतिहास के घनिष्ठ सम्बन्ध को विभिन्न विद्वानों ने स्वीकार किया है। सीले के अनुसार नागरिकशास्त्र (राजनीतिशास्त्र) इतिहास का फल है तथा इतिहास नागरिकशास्त्र का मूल है। ब्राइस का कथन है कि राजनीति विज्ञान (नागरिकशास्त्र) इतिहास व राजनीति के बीच की कड़ी है और वह अतीत को वर्तमान से जोड़ता है। वह इतिहास से अपनी सामग्री प्राप्त करता है और राजनीति में उस सामग्री का प्रयोग करता है। फ्रीमैन के शब्दों में—इतिहास पुरानी राजनीति है और राजनीति वर्तमान का इतिहास है। बर्गेस का मत है कि यदि राजनीति विज्ञान और इतिहास का सम्बन्ध तोड़ दिया जाय तो उनमें से अगर एक मरेगा नहीं तो पंगु अवश्य हो जायगा और दूसरा कूड़े का ढेर मात्र रह जायगा। लीकाक का यह वचन उचित है कि इतिहास का कुछ भाग राजनीति विज्ञान है, इनके विषयों के वृत्त प्रत्येक के द्वारा घेरे हुए क्षेत्र को आवृत्त करते हैं। राजनीतिशास्त्र, नागरिकशास्त्र के एक अङ्ग 'राज्य' का विशिष्ट विवेचन करता है, अतः ये कथन इतिहास व नागरिकशास्त्र के घनिष्ठ सम्बन्धों को ही प्रकट करते हैं।

(:) नागरिकशास्त्र एवं भूगोल

नागरिकशास्त्र व भूगोल का परस्पर सम्बन्ध है। यह तथ्य सर्वमान्य है कि किसी देश की भौगोलिक अवस्था का प्रभाव वहाँ के नागरिकों के चरित्र, सामाजिक व राजनैतिक जीवन एवं संस्थाओं पर पड़ता है। अरस्तू का कथन है कि भूगोल के बिना राजनैतिक ज्ञान प्राप्त नहीं होता। फ्रांसीसी विचारक रूसो का मत है कि उष्ण जलवायु स्वेच्छाचारी शासन को जन्म देता है, शीत जलवायु क्रूरता व कठोरता उत्पन्न करता है तथा शीतोष्ण जलवायु अच्छी सामाजिक व्यवस्था को उत्पन्न करता है। किसी देश की आर्थिक दशा उसकी भौगोलिक स्थिति एवं वहाँ की उपज, खनिज पदार्थों एवं उद्योगों पर निर्भर होती है। राष्ट्रों की कार्यभिन्नता उनकी भौगोलिक विशेषताओं के कारण ही होती है। भूगोल प्राकृतिक वातावरण की व्याख्या के माध्यम से मानवीय कार्यों की ही व्याख्या करता है क्योंकि मानव अपने प्राकृतिक वातावरण के परिप्रेक्ष्य में समस्त कार्यकलाप करता है।[5] इसीलिये पी. डी. घाटे का कथन है कि मानव को अपनी भूमिका का अभिनय करने के लिए भूगोल एक रङ्ग-

---

5. दीक्षित, उपेन्द्रनाथ व बघेला, हेतसिंह : इतिहास शिक्षण (राज० हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृष्ठ 166)

मंच प्रस्तुत करता है। इस प्रकार नागरिकशास्त्र की अध्याप्य-वस्तु नागरिकों के सम्बन्ध एवं क्रियाकलापों का रङ्गमंच भूगोल है जिससे सह-सम्बन्ध किये बिना नागरिकशास्त्र के तथ्य स्पष्ट नहीं होते।

नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु मे कुछ प्रकरण एवं प्रसंग ऐसे चुने जा सकते हैं जिनके अध्ययन-अध्यापन मे भूगोल से सह-सम्बन्ध किया जाना अपेक्षित रहता है। जैसे, राज्य के तत्व प्रकरण में भौगोलिक एकता तत्व को विभिन्न राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाएँ, विश्व-शान्ति में सयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका प्रकरण मे विश्व के संघर्षरत राष्ट्रों की स्थिति, संघर्ष के कारणों एवं उनके समाधान के उपाय, भारत की खाद्य समस्या प्रकरण को भारत की भौगोलिक विशेषताओं तथा भारत की विदेश नीति का स्पष्टीकरण भी भूगोल से सह-सम्बन्ध किये बिना नहीं हो सकता। यह सह-सम्बन्ध मानचित्र, ग्लोब चित्र आदि उपकरणों की सहायता से दर्शाना चाहिए।

(3) नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र

नागरिकशास्त्र एव अर्थशास्त्र के घनिष्ठ सम्बन्ध का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 18वी शताब्दी तक नागरिकशास्त्र एव राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र के ही अङ्ग माने जाते थे तथा इन्हें सम्मिलित रूप से राजनैतिक अर्थशास्त्र कहा जाता था। महान् विद्वान एव राजनयिक कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' में नागरिकता, राजनीति, व्यापार, व्यवसाय आदि सभी प्रशासनिक तथ्यो एवं सिद्धान्तों का समावेश किया था। अर्थशास्त्र मानव की समस्त आर्थिक क्रियाओं, धन की उत्पत्ति, वितरण, उपभोग व विनिमय का विवेचन करता है। मार्शल के शब्दों मे, अर्थशास्त्र जीवन के साधारण व्यापार में मनुष्य का अध्ययन है। वह व्यक्तिगत एव सामाजिक व्यापार के उस अङ्ग का परीक्षण करता है जिसका समृद्धि, भौतिक आवश्यकताओं की प्राप्ति तथा उनके प्रयोग के साथ अत्यन्त गहरा सम्बन्ध है। नागरिकशास्त्र नागरिको के कर्तव्यो एवं अधिकारों तथा सुखद सामाजिक जीवन का विवेचन करता है। किसी देश के नागरिको की नागरिक भावना का वहाँ की अर्थव्यवस्था से घनिष्ठ सम्बन्ध है। नागरिकों की मूल आवश्यकताओं—रोटी, कपडा और मकान की पूर्ति अर्थ-व्यवस्था ही करती है। अर्थशास्त्र व नागरिकशास्त्र दोनों की अन्तर्निर्भरता को प्रकट करते हुए बी० एन० अवस्थी का कथन है *कि एक जीवन के साधन प्रदान करता है तो* दूसरा उन साधनों के उचित उपयोग की शिक्षा प्रदान करता है।[6] उमेश चन्द्र कुदेसिया के शब्दों मे अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र दोनो विषयों की क्रियाओं के समन्वय से ही समाज सुखी और शान्त रह सकता है।[7] सामाजिक जीवन की भांति राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी अर्थशास्त्र का प्रभाव दृष्टव्य है। आर्थिक व्यवस्था के आधार पर ही समाजवादी, साम्यवादी एव पूँजीवादी विचारधाराएँ शासन प्रणालियों को प्रभावित करती हैं तथा आर्थिक अन्तर्निर्भरता ही अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का विकास करती है।

---

6. बी. एन. अवस्थी 'नागरिकशास्त्र शिक्षण', पृ० 25
7. उमेशचन्द्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण-कला, पृ० 143

भारत में निर्धनता व बेकारी की समस्या, कर व्यवस्था, संविधान में नीति निर्देशक सिद्धान्त आदि अनेक ऐसे नागरिकशास्त्र के प्रकरण हैं जिन्हें अर्थशास्त्र से सह-सम्बन्धित कर सुनियोजित विधि से पढ़ाया जा सकता है।

(4) नागरिकशास्त्र तथा राजनीति विज्ञान

नागरिकशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान दोनों की उत्पत्ति समानार्थक लैटिन भाषा के शब्दों से हुई है। अतः दोनों की विषय वस्तु में समानता होना स्वाभाविक है। नागरिकशास्त्र राजनीति विज्ञान का वह अंश है जो नागरिक के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों से सम्बन्धित है। गार्नर ने राजनीति विज्ञान का क्षेत्र केवल राज्य की व्यवस्था एवं अध्ययन करने तक सीमित रखा है। गेटल ने भी इसे राज्य से सम्बन्धित क्षेत्र बतलाया है। सीले के अनुसार राजनीति विज्ञान का सम्बन्ध मुख्यतः शासन अथवा सरकार से है। लास्की तथा गिलक्राइस्ट ने राजनीति विज्ञान में राज्य और शासन दोनों का अध्ययन सम्मिलित किया है। लास्की का मत है कि राजनीति विज्ञान के अध्ययन का सम्बन्ध मानव संगठित राज्य से है।[8] डा० रघुवीरसिंह एवं के के कुलश्रेष्ठ ने उक्त सभी परिभाषाओं का समाहार करते हुए कहा है कि राजनीति विज्ञान राज्य, समाज, सरकार और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्धों का एक क्रमबद्ध और संश्लिष्ट अध्ययन है। इसमें राज्य और सरकार के साथ ही एक राजनैतिक इकाई के रूप में मानव जाति का अध्ययन किया जाता है।[9] डा० बेनीप्रसाद के मतानुसार दोनों (नागरिकशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान) में अध्ययन-विषय का अन्तर नहीं है। वरन् विषय पर बल का अन्तर है।

नागरिकशास्त्र के अनेक प्रकरण जैसे राज्य के तत्व, राज्य की उत्पत्ति, राज्य के कार्य, सरकार के अङ्ग, संविधान आदि को राजनीति-विज्ञान से सह-सम्बन्धित कर तथ्यों का गहन अध्ययन किया जा सकता है। दोनों के सह-सम्बन्ध से राजनैतिक तथ्य अधिकाधिक व्यवहारोन्मुख एवं नागरिकता सम्बन्धी तथ्य व्यावहारिक बनकर स्पष्ट हो सकेंगे।

नागरिकशास्त्र एवं समाजशास्त्र

समाजशास्त्र एक सामान्य सामाजिक शास्त्र है। यह सामाजिक समुदायों पर विचार करता है और सम्पूर्ण सामाजिक जीवन सम्बन्धी नियमों एवं तथ्यों की खोज करने का प्रयत्न करता है। समाजशास्त्र सभी सामाजिक विज्ञानों का जनक है क्योंकि इसके व्यापक क्षेत्र में सम्पूर्ण समाज समाविष्ट है तथा समाजशास्त्र में समाज के गुण-दोष आदि सभी प्रकार के मानव कार्यों का विश्लेषण किया जाता है। नागरिकशास्त्र समाजशास्त्र का ही अङ्ग है तथा इसका क्षेत्र सीमित है। नागरिकशास्त्र में सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के वर्तमान स्वरूप का ही अध्ययन किया जाता है जबकि समाजशास्त्र उनकी उत्पत्ति, विकास, गुण-दोष आदि सभी की व्याख्या करता है। नागरिकशास्त्र में समाजोपयोगी प्रवृत्तियों का ही अध्ययन होता है जबकि समाजशास्त्र में समाज की प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया जाता है। इस

---

8. हेरल्ड लास्की : ए ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स, अंग्रेजी संस्करण

9. डा० रघुवीरसिंह एवं के० के० कुलश्रेष्ठ : राजनीतिशास्त्र के आधार खण्ड पृ० 2

प्रकार समाजशास्त्र एवं नागरिकशास्त्र दोनों ही सामाजिक जीवन का अध्ययन करते हैं किन्तु अन्तर केवल उनके क्षेत्र के आदर्श का है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-वस्तु में विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं से नागरिक के सम्बन्धों के प्रकरणों को समाजशास्त्र से सह-सम्बन्ध कर नागरिक के कर्त्तव्यों एवं अधिकारों को स्पष्टता से समझाया जा सकता है। इसी प्रकार राज्य की उत्पत्ति के सिद्धान्त प्रकरण को बिना समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य के नहीं समझा जा सकता। गिडिंग्स ने सह-सम्बन्ध को अपरिहार्य बतलाते हुए कहा है कि समाजशास्त्र के प्रारम्भिक सिद्धान्तों से अनभिज्ञ व्यक्ति को राज्य के सिद्धान्तों की शिक्षा देना, न्यूटन के गति के नियमों से अपरिचित व्यक्ति को खगोल विद्या या ऊष्मा गतिकी से सम्बन्धित शास्त्र की शिक्षा देने जैसा है।

(6) नागरिकशास्त्र तथा सामान्य विज्ञान

नागरिकशास्त्र के स्वरूप का विवेचन करते समय हम देख चुके हैं कि वह एक कला एवं विज्ञान दोनों है। इसके दोनों ही स्वरूप अपेक्षित हैं। नागरिकशास्त्र नागरिकता एवं विभिन्न सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं के सफल संचालन के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देने के कारण कला है तथा कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित कर निष्कर्ष निकालने एवं किसी समस्या के समाधान हेतु वैज्ञानिक पद्धति अपनाने के कारण वह विज्ञान भी है। अतः सामान्य विज्ञान के तथ्यों से सह-सम्बन्ध नागरिकशास्त्र के शिक्षण में सहायक हो सकता है। इसके अतिरिक्त सामान्य विज्ञान के अन्तर्गत विज्ञान की विभिन्न शाखाएँ—स्वास्थ्य व सफाई, जीव विज्ञान आदि तथा वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रभाव से नागरिक जीवन से सह-सम्बन्ध है। यद्यपि यह सह-सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप में नहीं होता तथापि परोक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में यह सम्बन्ध अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

जीव विज्ञान से विदित होता है कि पेड़-पौधों में भी जीवन होता है। यह ज्ञान नागरिकों में पेड़-पौधों के प्रति सहानुभूति तथा उनके संरक्षण की अभिवृत्ति उत्पन्न कर सकता है। विभिन्न उपयोगी वैज्ञानिक आविष्कारों ने मानव जाति का कल्याण किया है व विश्व एकता स्थापित की है तथा विध्वंसकारी आविष्कारों ने मानव जाति का संहार किया है, यह अवबोध विज्ञान से होता है जिसका सह-सम्बन्ध नागरिकशास्त्र की विषय-वस्तु से यथास्थान वांछनीय है। विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं का वैज्ञानिक विधि से विश्लेषण कर उनका समाधान खोजने में विज्ञान से सह-सम्बन्ध विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण में ऐसे अनेक प्रकरणों का चयन किया जा सकता है जिनका सह-सम्बन्ध विज्ञान से करना प्रासङ्गिक एवं उपयोगी रहेगा। जैसे—नागरिकों के गुण कर्त्तव्य अन्तर्राष्ट्रीय, सद्भाव, ग्राम पंचायत या नगरपालिका के कार्य, जिला परिषद् एवं स्वास्थ्य व सफाई, जनसंख्या सम्बन्धी समस्या, विदेश नीति आदि प्रकरणों में प्रसंगानुकूल विज्ञान से सह-सम्बन्ध द्वारा तथ्यों को स्पष्ट, रोचक एवं बोधगम्य बनाया जा सकता है।

(7) नागरिकशास्त्र तथा साहित्य—

नागरिकशास्त्र शिक्षण में कुछ प्रकरणों का साहित्य से सह-सम्बन्ध स्थापित करना उपयोगी रहता है। साहित्य की विभिन्न विधाओं—काव्य, नाटक कहानी, उपन्यास, जीवनी आदि में ऐसे महापुरुषों का चित्रण मिलता है जो आदर्श नागरिक थे एवं जिन्होंने अपने चारित्रिक गुणों—वीरता, त्याग, कर्त्तव्य पालन, ईमानदारी, देश-भक्ति, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव, राष्ट्रीय भावात्मक एकता आदि के कारण समाज, राष्ट्र व विश्व की अमूल्य सेवा की। उमेशचन्द्र कुदेसिया के शब्दों में—किसी भी साहित्य के गद्य, पद्य, कहानी तथा अन्य अंश नागरिकों के चरित्र-निर्माण में सहायक होते हैं।[10] चरित्र निर्माण में सहायक होने के अतिरिक्त साहित्य काल-विशेष की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति को प्रतिबिम्बित करने के कारण विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं तथा नागरिकों के सम्बन्धों का विकास समझने में सहायक हो सकता है। प्रारम्भ में नागरिकशास्त्र साहित्य का ही अङ्ग रहा था। वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृति एवं धर्मशास्त्र आदि साहित्यिक ग्रन्थों के माध्यम से नागरिकता की शिक्षा देना प्राचीन भारत की परम्परा थी। अब भी अपने इस घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण साहित्य एवं नागरिकशास्त्र परस्पर प्रेरणा एवं सहयोग के स्रोत बने हुए हैं। इनका उपयोग साहित्य एवं नागरिकशास्त्र के सह-सम्बन्ध हेतु विविध शिक्षण विधियों—परिवीक्षित अध्ययन, नाट्यीकरण, सहवर्ती पठन विधियों द्वारा किया जा सकता है।

10. उमेशचन्द्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण कला पृ०, 147

नागरिकशास्त्र शिक्षण : लक्ष्य, मूल्य एवं उद्देश्य | 4

नागरिकशास्त्र की विशिष्ट प्रकृति के कारण इसके शिक्षण के उद्देश्य स्वतन्त्र एवं निरपेक्ष रूप से निर्धारित नहीं किये जा सकते, वे अन्ततः विद्यालय-शिक्षा के निर्दिष्ट उद्देश्यों पर आधारित रहते हैं। समाज, शिक्षा तथा शिक्षा-क्रम का घनिष्ठ सम्बन्ध है तथा वे अन्योन्याश्रित हैं। मुनेश्वर प्रसाद का यह कथन उपयुक्त है कि समाज और शिक्षा तथा शिक्षा एवं शिक्षा-क्रम में कार्यकारक सम्बन्ध है। समाज के उद्देश्य स्कूलों के उद्देश्य निर्दिष्ट करते हैं। स्कूलों के उद्देश्य शिक्षा क्रम का रूप निर्दिष्ट करते हैं।[1] समाज देश-काल की परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित होता रहता है जो शिक्षा में भी उद्देश्यगत परिवर्तन करता है। शिक्षा के उद्देश्यों में समय-समय पर हुए परिवर्तनों संशोधनों एवं परिवर्धन के अनुरूप नागरिकशास्त्र शिक्षण-उद्देश्य भी परिवर्तित होते रहे हैं। उद्देश्य-निर्धारण के सन्दर्भ में प्रायः 'लक्ष्य, मूल्य एवं उद्देश्य' शब्दों का उल्लेख किया जाता है जिनका कभी-कभी समानार्थक शब्दों के रूप में प्रयोग अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न कर देता है। अतः इन शब्दों का उपर्युक्त अर्थ समझना आवश्यक है।

लक्ष्य, मूल्य एवं उद्देश्य का अर्थ और विभेद—कार्टर ने लक्ष्य का अर्थ यह बतलाया है कि 'लक्ष्य किसी क्रियाकलाप का दिशानिर्देशन करने हेतु पूर्वानुमानित गंतव्य है।' अर्थात् लक्ष्य वह आदर्श बिन्दु या स्थल है जिसकी दूरदर्शिता द्वारा पूर्व में ही कल्पना कर ली जाती है तथा जो किसी निर्दिष्ट क्रिया को निरन्तर अपनी ओर अग्रसर होने के लिये प्रेरित करता है। जैसे शिक्षा का एक लक्ष्य है विद्यार्थियों को आदर्श नागरिक बनाना। इस लक्ष्य की प्राप्ति में शिक्षा क्रम के विषय समग्र रूप में तथा नागरिकशास्त्र विशिष्ट रूप में प्रयत्नशील रहते हैं किन्तु लक्ष्य का स्वरूप आदर्श होने के कारण वह पूर्णरूपेण प्राप्य नहीं होकर अपनी ओर से सभी प्रयासों को अग्रसर होते रहने की प्रेरणा देता रहता है।

मूल्य का अर्थ—गुरुशरणदास त्यागी ने मूल्य को परिभाषित करते हुए कहा है कि 'लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग में बहुत से अनुभव प्राप्त होते हैं। ये अनुभव ही मूल्य कहलाते हैं।[2] आदर्श नागरिक बनाना शिक्षा का लक्ष्य है जिसको प्राप्त करने का नागरिकशास्त्र की पाठ्य वस्तु एवं क्रियाकलाप प्रयास करते हैं किन्तु इस लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग में अनेक उपयोगी

---

1. कार्टर, वी गुड : डिक्शनरी ऑफ एजुकेशन अंग्रेजी (पृ. 19)
2. गुरुशरण दास त्यागी : नागरिकशास्त्र का शिक्षण, पृष्ठ 40

अनुभव उप-उत्पादन के रूप में उपलब्ध होते हैं जैसे चारित्रिक गुण ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा सहयोग आदि जिन्हें मूल्य कहा जा सकता है।

उद्देश्य का अर्थ—कार्टर के शब्दों में, उद्देश्य वह मानक या गन्तव्य है जो विद्यार्थियों को विद्यालय के किसी क्रियाकलाप की समाप्ति पर प्राप्त है। ... विद्यालय द्वारा निर्देशित अनुभव के फलस्वरूप विद्यार्थियों के व्यवहार में हुआ वांछित परिवर्तन उद्देश्य कहलाता है।[3]

लक्ष्य, मूल्य तथा उद्देश्य में विभेद—लक्ष्य व्यापक हैं जिसे प्राप्त करने में अधिक समय लगता है। लक्ष्य आदर्श पर आधारित है जिसे प्राप्त करने के लिए विद्यालय के समस्त पाठ्यक्रमीय एवं पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलाप प्रयास करते हैं। मूल्य लक्ष्य की प्राप्ति के मार्ग में प्राप्त उपयोगी अनुभव हैं तथा ये लक्ष्य की भाँति आदर्शवादी नहीं बल्कि व्यावहारिक एवं वास्तविक हैं। लक्ष्यों का निर्धारण अध्ययन-अध्यापन के पूर्व किया जाता है तथा उनकी प्राप्ति आवश्यक नहीं है जबकि मूल्य पहले से निर्धारित नहीं होते, वे अध्ययन अध्यापन के पश्चात् प्राप्त होते हैं। उद्देश्यों का क्षेत्र सीमित होता है, वे लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होते हैं। उद्देश्य व्यावहारिक एवं प्राप्य होते हैं तथा उनकी प्राप्ति में अधिक समय नहीं लगता क्योंकि विशिष्ट उद्देश्य सम्बन्धित पाठ के अध्ययन के बाद ही प्राप्य है। लक्ष्य के सहायक होने के कारण उद्देश्यों का लक्ष्य के समान ही किसी विषय के अध्ययन-अध्यापन के पूर्वनिर्धारण करना आवश्यक है।

अन्य विषयों की भाँति नागरिकशास्त्र शिक्षण में यद्यपि लक्ष्य, मूल्य एवं उद्देश्य महत्त्वपूर्ण होते हैं किन्तु 'उद्देश्यों का विशेष महत्त्व है जिनके बिना शिक्षण-कार्य दिशाहीन रहता है। जगदीश नारायण पुरोहित के शब्दों में, 'उन अभीष्ट व्यवहारगत परिवर्तनों को, जिन्हें शिक्षक शिक्षार्थियों के व्यक्तित्व में लाना चाहता है, शिक्षण-उद्देश्य कहते हैं। ये वे लक्ष्य-बिन्दु हैं जिनकी ओर शिक्षण की सम्पूर्णधारा प्रवाहित होती है। जब तक शिक्षण-उद्देश्य निर्धारित नहीं कर लिये जाते तब तक शिक्षण-प्रक्रिया की दिशा ही अनिश्चित रहती है।[4] वस्तुतः शिक्षण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा शिक्षार्थी के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाया जाता है।[4]

नागरिकशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य—स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय समाज की सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक व्यवस्थाओं में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए हैं तथा तेजी से होते जा रहे हैं। संविधान के अनुसार हमारा देश 'सम्पूर्ण प्रभुता सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य' है। हम एक ऐसे समाज की स्थापना करने जा रहे हैं जिसके आधार-स्तम्भ समाजवाद, धर्म-निरपेक्षता, स्वतन्त्रता, समता, बन्धुत्व एवं न्याय हैं। हमारा संविधान अपने नागरिकों को राजनैतिक अधिकार एवं कर्त्तव्य ही प्रदान नहीं करता बल्कि नीति निर्देशक तत्त्वों के माध्यम से आदर्श आचरण सम्बन्धी निर्देश भी देता है। आर्थिक दृष्टि से भारत के नागरिकों का दायित्व देश को आर्थिक ...

3 उपर्युक्त पृ 278
4. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन (राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर पृ. 9 1982)

लम्बन की ओर गतिशील बनाना है तथा साधनों के उचित नियोजन एवं उत्पादन-वृद्धि द्वारा देशवासियों का जीवन-स्तर उन्नत करना है। इसके लिए पंच वर्षीय विकास योजनाओं को सफल बनाना है। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव द्वारा विश्व-शांति की स्थापना में सक्रिय सहयोग देना है। इस प्रकार समाज एवं राष्ट्र की आकांक्षाओं के अनुकूल क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए नागरिकों को तैयार करने का दायित्व शिक्षा का है। कोठारी शिक्षा आयोग के शब्दों में 'यदि बिना किसी हिंसात्मक क्रांति के बड़े पैमाने पर यह परिवर्तन करना है तो केवल एक ही साधन है जिसका प्रयोग किया जा सकता है और वह है 'शिक्षा'।[5]

समाज एवं राष्ट्र की वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षा के लक्ष्य तदनुकूल निर्धारित किये गये तथा पाठ्यक्रम में भावी सुयोग्य नागरिकों के निर्माण हेतु नागरिकशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य भी विभिन्न शिक्षा-आयोगों एवं शिक्षाविदों ने निर्दिष्ट किये जो निम्नांकित हैं—

(1) लोकतान्त्रिक नागरिकता—देश की स्वाधीनता के पश्चात् शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्य लोकतान्त्रिक समाज एवं राष्ट्र के उपयुक्त नागरिक तैयार करना है ताकि लोकतन्त्र की रक्षा हो सके। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस तथ्य को इस प्रकार प्रकट किया है—'शिक्षा प्रणाली का योगदान ऐसा होना चाहिए कि नागरिकों में लोकतांत्रिक नागरिकता के दायित्वों का योग्यतापूर्वक वहन करने के लिये उपयुक्त प्रवृत्तियों, अभिवृत्तियों एवं चारित्रिक गुणों का विकास हो सके।[6] नागरिकशास्त्र शिक्षण का लक्ष्य ऐसे ही नागरिकों का निर्माण करना है। आयोग ने माना है कि लोकतन्त्र के उपयुक्त नागरिकता अत्यन्त श्रमसाध्य एवं चुनौतीपूर्ण दायित्व है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को सावधानीपूर्वक प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। इस प्रकार की नागरिकता में अनेक बौद्धिक, सामाजिक एवं नैतिक गुण निहित हैं जो स्वतः उत्पन्न नहीं होते हैं। इनका विकास शिक्षाक्रम के सभी विषयों तथा विशेषतः नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम व सम्बद्ध क्रियाकलापों द्वारा किया जा सकता है।

(2) स्पष्ट चिन्तन एवं नवीन विचारों की ग्राहिता—लोकतान्त्रिक समाज में नागरिकों को अपने विचारों की स्पष्ट विचारणा कर दूसरों पर प्रकट करना महत्त्वपूर्ण है जिससे कि वे दूसरों को भी बोधगम्य हो सकें। आज के युग में मिथ्या प्रचार एवं विरोधी विचार जन-संचार साधनों (समाचारपत्र, रेडियो, टेलिविजन आदि) द्वारा जन-मानस को आन्दोलित करते रहते हैं। ऐसे वातावरण में प्रबुद्ध नागरिकों को सही तथ्यों के आधार पर वस्तुपरक विचारणा करना अत्यन्त आवश्यक है। इसके अतिरिक्त लोकतान्त्रिक जीवन-पद्धति में अपने दुराग्रह के कारण दूसरों के विचारों के प्रति असहिष्णु होना उचित नहीं है, अतः प्रबुद्ध

---

5. कोठारी शिक्षा आयोग पृष्ठ 5

6. माध्यमिक शिक्षा आयोग पृ. 23

नागरिकों का यह कर्तव्य है कि वह मुक्त मस्तिष्क से नवीन विचारों के लिये अपनी ग्राह्य शक्ति का विकास करें। नागरिकशास्त्र शिक्षण द्वारा इस अभिवृत्ति को विकसित करना है।[7]

(3) प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास—प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करना लोकतान्त्रिक जीवन-पद्धति का लक्ष्य है। इसके लिये नागरिकों को अपने विभिन्न समुदायों में इस प्रकार जीवन व्यतीत करने की कला में प्रशिक्षित होना है, ताकि उनके तथा अन्य सभी नागरिकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास हो सके। इस विकास में सहायक गुण हैं-अनुशासन, सहयोग, सामाजिक संवेदनशीलता, जिनका समुचित विकास करना। शिक्षा तथा शिक्षा-क्रम में इसके लिए विशेषतः उपयुक्त विषय नागरिकशास्त्र के शिक्षण का लक्ष्य होना चाहिए।[8]

(4) नेतृत्व का विकास—माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा द्वारा जिस नेतृत्व के विकास पर बल दिया है, वह राजनैतिक नेतृत्व से भिन्न सामाजिक एवं व्यावसायिक क्षेत्र में दक्षता प्राप्त नेतृत्व है। आयोग का कथन है कि व्यापक अर्थ में नेतृत्व (जो राजनैतिक नेतृत्व का समानार्थक नहीं है) शिक्षा के उच्चतर मानक, सामाजिक समस्याओं के गहन एवं स्पष्ट अवबोध तथा अधिकाधिक तकनीकी दक्षता की अपेक्षा रखता है।[9] इस (नेतृत्व के लिये विद्यार्थियों में स्वोपक्रम (सूझबूझ) तथा दायित्व के कार्यों के लिये क्रियात्मक अभिवृत्ति एवं मानसिक चेतना विकसित करनी है। शिक्षा क्रम में नागरिकशास्त्र का लक्ष्य नेतृत्व का विकास होना अपेक्षित है।

(5) सच्ची देश-भक्ति की भावना का विकास—नागरिकशास्त्र शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों की निष्ठाओं का विस्तार करना है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सच्ची देश-भक्ति की भावना के विकास पर बल दिया है जिसमें तीन बातें निहित हैं—(1) अपने देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों के प्रति हार्दिक लगाव, (2) देश की दुर्बलताओं को स्पष्ट स्वीकारोक्ति, तथा (3) इन दुर्बलताओं के निराकरण एवं अपने वैयक्तिक स्वार्थों से ऊपर उठकर राष्ट्रहित में देश की तनमन धन से सेवा करने का दृढ़ संकल्प।[10]

(6) विश्व-नागरिकता की भावना का विकास—नागरिकशास्त्र शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों की निष्ठाओं को केवल अपने देश तक ही दिग्भ्रान्त करना नहीं है बल्कि उसे विश्व नागरिकता की वृहद् एवं उदार मानवतावादी भावना में विकसित करना होना चाहिए। सच्ची देश भक्ति की भावना 'मेरा देश सर्वोत्तम है, चाहे वह सही हो या गलत' जैसी मिथ्या देश भक्ति सही नहीं होती। वह अन्य देशों के प्रति उदार होकर उनकी उपलब्धियों से लाभान्वित

7. माध्यमिक शिक्षा आयोग पृ. 26
8. उपर्युक्त पृ. 25—28
9. उपर्युक्त, पृ. 29
10. उपर्युक्त, पृ. 26

हो आभारी होती है तथा अपनी उपलब्धियों में दूसरों को सामान्वित करने में सहयोग देती है। माध्यमिक शिक्षा आयोग की दृष्टि से आज के युग में विश्व-नागरिकता राष्ट्रीय-नागरिकता की भांति ही महत्त्वपूर्ण हो गई है[11] जो नागरिकशास्त्र शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य होना चाहिए।

(7) राष्ट्रीय भावनात्मक एकता की भावना का विकास—यह नागरिकशास्त्र शिक्षण का यह एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। देश में विभिन्न धर्म, भाषा, स्थानीय एव प्रादेशिक विभिन्नताएँ संकीर्ण निष्ठाओं के कारण देश की एकता में बाधक हैं। अतः 'विभिन्नता में एकता' तथा धर्म निरपेक्षता के आधार पर निष्ठाओं को उदार बना कर समग्र राष्ट्र के प्रति अपनत्व की भावना के विकास में सक्रिय योगदान करना प्रत्येक भारतीय नागरिक का कर्त्तव्य होना चाहिए। इस दृष्टि से सामाजिक अध्ययन अनिवार्य विषय के अंग के रूप में नागरिकशास्त्र की प्रमुख भूमिका रहनी चाहिए। कोठारी शिक्षा आयोग का कथन है कि *नागरिकता और भावनात्मक एकीकरण के विकास के लिये भारत में सामाजिक अध्ययन का प्रभावी कार्यक्रम अत्यावश्यक है*।[12]

(8) वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं आधुनिकीकरण का विकास—आज के वैज्ञानिक एवं औद्योगीकरण के युग में जब सभी देश वैज्ञानिक प्रगति एवं उत्पादन वृद्धि द्वारा अपना जीवन-स्तर उन्नत कर रहे हैं तो हमें भी चाहिए कि हम भी इस दौड़ में पीछे न रहें। किन्तु कोठारी शिक्षा आयोग के शब्दों में हमें विज्ञान से काम लेना सीखना चाहिए किन्तु यह सीखना जरूरी है कि विज्ञान हम पर हावी न हो। शांति और स्वतन्त्रता, सत्य और करुणा के महान आदर्शों के के लिए जीवित रहने के रूप में हमारा नया अभिमान और गहरी आस्था अभिव्यक्त हो।''''''यदि विश्वास और क्रिया के सर्जनात्मक समन्वय में विज्ञान और अहिंसा सहयोग करें तो मानवता सप्रयोजन, समृद्धि और आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि के एक नये स्तर को प्राप्त कर सकेगी।[13] नागरिकशास्त्र का यही समन्वय होना चाहिए। अन्य सामाजिक विज्ञानों की भांति नागरिकशास्त्र शिक्षण में भी इस वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समावेश होना चाहिए। कोठारी आयोग का मत है कि वैज्ञानिक भावना और सामाजिक विज्ञान की पद्धतियों का कुछ अंश अवर कक्षाओं में भी सामाजिक अध्ययन, इतिहास, भूगोल और नागरिकशास्त्र के शिक्षण में व्याप्त होना चाहिए।[14]

उपर्युक्त लक्ष्यों का क्षेत्र व्यापक है जबकि उद्देश्यों का क्षेत्र सीमित होकर वे लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं। अत. लक्ष्यों के सहायक उद्देश्यों के निर्धारण की नवीन संकल्पना का विकास हुआ है। अभी तक प्रायः विषयों के शिक्षण उद्देश्य लक्ष्यों के रूप में ही निर्धारित होते है जो अत्यन्त अस्पष्ट एवं अप्राप्य होने के कारण अनुपयोगी सिद्ध होते हैं। नागरिकशास्त्र शिक्षण में भी उद्देश्याधारित शिक्षण की नवीन संकल्पना के आधार पर अब

11. उपर्युक्त, पृ. 26
12. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 223
13. उपर्युक्त पृ. 25-26
14. उपर्युक्त पृ. 224

लक्ष्यों को पाठ्यक्रम के द्वारा प्राप्य उद्देश्यों के रूप में नियोजित करना अपेक्षित माना गया है। इस नवीन संकल्पना को नागरिकशास्त्र शिक्षण के संदर्भ में समझना आवश्यक है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य-निर्धारण की नवीन संकल्पना—शैक्षणिक उद्देश्य-लक्ष्यों के निर्धारण के साथ विषय के अध्यापन के लिये उद्देश्यों का निर्धारण भी अत्यन्त आवश्यक है। लक्ष्य जहाँ हमारे गंतव्य की ओर इंगित करता है वहाँ उद्देश्य हमारे प्रयासों की परिधि में आ जाते हैं और आजकल विशेष आग्रह इन शैक्षणिक उद्देश्यों पर है जिन्हें हम उपलब्ध कर सकते हैं।[15] इस नवीन संकल्पना का प्रवर्तन ब्लूम तथा क्रेथोल ने किया। इन्होंने शैक्षणिक उद्देश्यों को परिभाषित करते हुए कहा है कि शैक्षणिक उद्देश्यों से हमारा अभिप्राय उन तरीकों का स्पष्ट निर्धारण कर देना है जिनके आधार पर शैक्षणिक प्रक्रिया के फलस्वरूप बालकों में परिवर्तन आयेगा। इसका आशय यह है कि किस प्रकार वे अपने चिन्तन, संवेदनाओं एवं कार्यों में बदलाव लायेंगे अर्थात् शिक्षा के फलस्वरूप उनमें क्या परिवर्तन आयेगा। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि उन अभीष्ट व्यवहारगत परिवर्तनों को, जिन्हें शिक्षक विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में लाना चाहता है, शैक्षणिक उद्देश्य कहते हैं। ये उद्देश्य शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को निम्नांकित तीन प्रकार से प्रभावित करते हैं—

(क) शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को दिशा प्रदान करते हैं।

(ख) इनके द्वारा शिक्षण का आयोजन व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध होता है।

(ग) ये शिक्षण-प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर, पाठ, इकाई व वार्षिक योजना पर शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के मूल्यांकन के आधार पर यह ज्ञात करने में सहायक होते हैं कि विद्यार्थी किस सीमा तक लाभान्वित हो रहे हैं।

शिक्षा के लक्ष्यों तथा शैक्षणिक उद्देश्यों में अन्तर—जगदीश नारायण पुरोहित ने यह अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा है कि 'शिक्षा के लक्ष्यों का सम्बन्ध शिक्षाक्रम के सभी विषयों तथा सहशैक्षिक प्रवृत्तियों से होता है जबकि शिक्षण-उद्देश्यों से अधिक समय लगता है अर्थात् लक्ष्य व उद्देश्य क्रमशः दीर्घकालिक व अल्पकालिक हैं। लक्ष्यों का क्षेत्र व्यापक व उद्देश्यों का क्षेत्र सीमित होता है तथा उद्देश्यों को स्पष्टतः परिभाषित किया जा सकता है।[16]

व्यवहार के तीन पक्ष और उद्देश्य—शैक्षणिक उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया के फलस्वरूप होने वाले वांछित व्यवहारगत परिवर्तन हैं जो व्यवहार के तीनों पक्षों ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों में होते हैं। ये सभी पक्षों के परिवर्तन समग्र रूप से व्यक्तित्व का विकास कहलाता है। ब्लूम तथा क्रेथोल ने इन तीनों पक्षों के परिवर्तनों को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया है। यह विभाजन निम्नांकित रूप में किया गया है—

---

15. उमेशनाथ दीक्षित एवं हेतसिंह बघेला (इतिहास शिक्षण), राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृ 33

16. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षा के लिए आयोजन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृष्ठ 9

(क) ज्ञानात्मक पक्ष

(i) ज्ञान—ज्ञानात्मक उद्देश्य के अंतर्गत विद्यार्थी विषय से संबंधित तथ्यों, घटनाओं, पदों, प्रत्ययों, निष्कर्षों, सिद्धान्तों, समस्याओं, विधियों आदि का ज्ञान अर्जित करता है तथा उद्देश्य की संप्राप्ति पर इस ज्ञान का प्रत्यास्मरण एवं पुनर्पहचान करता है। इसमें विद्यार्थी की स्मरण शक्ति प्रमुख होती है और यह विषय शिक्षण का प्रारंभिक उद्देश्य होता है। उदाहरण के लिये नागरिक शास्त्र के 'स्थानीय स्वशासन' प्रकरण के ज्ञानात्मक शिक्षण-उद्देश्य में विद्यार्थियों से यह अपेक्षा की जायेगी कि इसका अर्थ, इसके लाभ, इस प्रकार की संस्थाओं के नाम व उनके कार्यों का प्रत्यास्मरण व पुनर्परिचिन्तन कर सकें।

(ii) अवबोध—इस उद्देश्य से विद्यार्थी को उपर्युक्त ज्ञानात्मक उद्देश्य के अंतर्गत निर्दिष्ट तथ्यों का अवबोध होता है अर्थात् इस उद्देश्य की सम्प्राप्ति पर वह उन तथ्यों का विभेदीकरण, विवेचन, तुलना, वर्गीकरण, स्पष्टीकरण, अशुद्धि पहचानने व शुद्ध करने, व्याख्या व कार्यकारण संबंध बतलाने आदि उच्च स्तरीय मानसिक क्रियाएं करने में समर्थ होता है। उदाहरणार्थ उक्त प्रकरण 'स्थानीय स्वशासन' में विद्यार्थियों द्वारा यह अवबोध होना वाञ्छनीय है कि स्थानीय समस्याओं का निराकरण स्थानीय लोगों के सहयोग से ही हो सकता है तथा स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं का कुशल संचालन उनके निर्वाचित सदस्यों द्वारा उत्तरदायित्व की भावना से कार्य करने से ही सम्भव है।

(iii) ज्ञानोपयोग—इस उद्देश्य की संप्राप्ति पर अर्जित ज्ञान का विद्यार्थियों द्वारा नवीन परिस्थितियों में उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में ज्ञान तथा अवबोध से उच्च मानसिक क्रियाएँ निहित हैं क्योंकि ज्ञानोपयोग में विश्लेषण करने, निर्णय करने, संबंध स्थापित करने, निष्कर्ष निकालने व संश्लेषण करने आदि मानसिक क्रियाओं का उपयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, स्थानीय स्वशासन प्रकरण के ज्ञानोपयोग उद्देश्य में विद्यार्थी, ग्रामपंचायत संस्था द्वारा ग्राम की निरक्षरता, गरीबी, बेकारी आदि समस्याओं के निराकरण के उपाय बतलाने में समर्थ होना माना जायगा।

(ख) भावनात्मक पक्ष

(i) अभिवृत्ति—भावनात्मक पक्ष के अभिवृत्यात्मक उद्देश्य के अंतर्गत विद्यार्थियों में ऐसे दृष्टिकोण का सर्जन करना है जिससे वह किसी वस्तु, परिस्थिति या व्यक्ति के प्रति विशिष्ट प्रकार का व्यवहार प्रदर्शित कर सके। 'स्वायत्त प्रशासन" का वाञ्छित अभिवृत्यात्मक उद्देश्य यह होगा कि विद्यार्थी अपने परिवार, समुदाय या राष्ट्रीय जीवन में व्यक्तिगत दायित्व के निर्वाह हेतु तत्पर होगा।

(ii) अभिरुचि—भावनात्मक पक्ष के अभिरुच्यात्मक उद्देश्य के अंतर्गत विद्यार्थियों में किसी अनुभव में संविलीन होने और उसमें लगे रहने की मानसिक प्रवृत्ति का विकास करना है। उक्त 'स्वायत्तशासन' का अभिरुच्यात्मक उद्देश्य यह माना जा सकता है कि विद्यार्थी स्थानीय ग्राम या नगर के कल्याणकारी कार्यों में रुचि लेता है तथा शाला की विद्यार्थी परिषद् द्वारा निर्धारित कार्यक्रमों में अभिरुचि पूर्वक भाग ले।

(ग) क्रियात्मक पक्ष

कौशल—क्रियात्मक पक्ष का संबंध विद्यार्थियों के पाठ से संबंधित क्रियात्मक कौशल के विकास से है। कौशल का तात्पर्य शारीरिक मांसपेशियों एवं यान्त्रिक गतियों को किसी प्रयोजन के निमित्त नये प्रतिमान में संगठित करने से है। नागरिकशास्त्र शिक्षण के उक्त प्रकरण में कौशल संबंधी उद्देश्य की संप्राप्ति पर विद्यार्थियों की शाला की स्वायत्त स्वशासन पर आधारित 'विद्यार्थी परिषद्' की बैठकों में भाग लेने, समस्याओं पर विचार-विमर्श कर निर्णय लेने तथा उन निर्णयों को क्रियान्वित करने के कौशल का विकास होगा।

व्यवहार के तीनों पक्षों का सामंजस्य—उक्त व्यवहार के तीनों पक्षों—ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक में सामंजस्य रहता है क्योंकि ये परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ नागरिकशास्त्र के प्रकरण 'स्वायत्त स्वशासन' के शिक्षण के उपरान्त उन तीनों पक्षों में विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों का परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध है—स्वायत्त स्वशासन संस्थाओं (ग्राम पंचायत व नगर पालिका) के ज्ञान के आधार पर ही अवबोध व ज्ञानोपयोग की उच्च मानसिक क्रियाएं संभव हैं तथा ज्ञानात्मक पक्ष के परिवर्तन पर ही व्यवहार के भावात्मक पक्ष में अभिवृत्ति एवं अभिरुचि तथा क्रियात्मक पक्ष में कौशल का विकास किया जा सकता है। भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों के व्यवहारगत परिवर्तन से ज्ञानात्मक पक्ष के परिवर्तन स्थायी होते हैं। यह सामंजस्य व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से आवश्यक है। जगदीश नारायण पुरोहित के शब्दों में—"शिक्षण के समय व्यक्तित्व का कोई पक्ष ध्यान से ओझल न हो जाय, इसी तथ्य को ध्यान में रखकर तीनों पक्षों की दृष्टि से शिक्षण किया जाना है"।[17]

शिक्षण-उद्देश्य उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण की नवीन संकल्पना में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं जिनका संबंध दो अन्य प्रमुख प्रक्रियाओं–शिक्षण व अधिगम स्थितियों तथा मूल्यांकन से समझना आवश्यक है। इस संबंध में उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण के त्रिकोण से दर्शाया जा सकता है।

उद्देश्यनिष्ठ-शिक्षण का त्रिकोण—शिक्षण-उद्देश्य, शिक्षण-अधिगम स्थितियाँ तथा मूल्यांकन उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण के नियोजन के आधार हैं।

त्रिकोण में तीर चिह्नों से उन तीनों की अन्योन्याश्रितता प्रकट की जाती है। शिक्षण-उद्देश्य शिक्षण-प्रक्रिया अर्थात् शिक्षण-अधिगम स्थितियां उद्देश्यों व मूल्यांकन की उपयुक्तता का मापदण्ड हैं अथवा अनुपयुक्तता की दशा में उनमें आवश्यक संशोधन व परिवर्तन का संकेत देते हैं। मूल्यांकन यद्यपि उद्देश्यों एवं शिक्षण-अधिगम स्थितियों से प्रभावित होता है किन्तु वह भी उद्देश्यों की यथार्थता एवं इन स्थितियों की अनुपयुक्तता को दर्शा कर उनमें सुधार करता है। इस प्रकार शिक्षण-उद्देश्यों के निर्धारण में उद्देश्य-निष्ठ शिक्षण के इन दो पक्षों का ध्यान रखना वांछनीय है। उदाहरण के रूप में नागरिकशास्त्र शिक्षण की योजना बनाते समय उद्देश्यों का निर्धारण इस प्रकार किया

---

17 उपर्युक्त पृष्ठ 12

जाय कि वे प्राप्य हो सकें, उनकी सप्राप्ति के अनुकूल शिक्षण अधिगम स्थितियों का नियोजन किया जा सके तथा उनका मूल्याकन सभव हो सके।

उद्देश्यों को परिभाषित करना

शिक्षण-उद्देश्य शिक्षण-प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियो के तीनो पक्षो—ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक मे वाछित व्यवहारगत परिवर्तनो की सप्राप्ति होते है। अतः इन तीनो पक्षो से संबधित विभिन्न क्षेत्रों—ज्ञान अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिवृत्ति, अभिरुचि एवं कौशल मे वाछित व्यवहारगत परिवर्तनो को स्पष्टतः प्रकट करना ही उद्देश्यो को परिभाषित करना है ?

इस नवीन सकल्पना के अनुसार विद्यालय शिक्षा के विभिन्न स्तरों—प्राथमिक, उच्च माध्यमिक एवं माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तरो के लिये नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य "राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान एव प्रशिक्षण परिषद्' कुछ राज्यो के माध्यमिक शिक्षा मंडलो, तथा राज्य शिक्षा संस्थानो एव विभागो ने निर्धारित किये हैं। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा मण्डल, अजमेर ने माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक कक्षाओ के लिये तथा राजस्थान शिक्षा विभाग ने प्राथमिक एव उच्च माध्यमिक कक्षाओं के लिये निम्न नागरिक शास्त्र शिक्षण के लिये निम्न प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किये हैं।

(क) प्राथमिकस्तर पर नागरिक शास्त्र के उद्देश्य[18]

शिक्षा विभाग—प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा-राजस्थान, बीकानेर द्वारा प्रकाशित 'शिक्षाक्रम' मे कक्षा 1 से 5 तक के लिये सामाजिक-ज्ञान विषय के अतर्गत नागरिक शास्त्र के निम्नाकित उद्देश्य एव लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं।

कक्षा 1 व 2—

(1) अपने साथियो, विद्यालय के संबद्ध व्यक्तियों तथा घर एव गाव के बडे-बूढे लोगो के प्रति समुचित व्यवहार शिष्टाचार करने का ज्ञान।

(2) विभिन्न स्थानो एवं परिस्थितियो को देखते हुए समुचित व्यवहार।

(3) नैतिक एव सामाजिक मूल्यो को व्यवहार मे लाने की आदत का विकास।

कक्षा 3 से 5—

1. हमारे देश, राज्य व स्थानीय शासन व्यवस्था का साधारण परिचय।

2. देश की कुछ बडी-बडी आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओ तथा उनके निराकरण संबंधी उपायो की सरल जानकारी।

3. जन-सेवा एव जन-कष्ट निवारण हेतु राज्य द्वारा संचालित अभिकरणो का सामान्य ज्ञान।

4. देश, राज्य एवं समाज के विभिन्न स्तरो तथा वर्गों मे पारस्परिक सहयोग की अनिवार्यता का अनुभव।

5. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, भाई चारे एवं समझौते की भावना की आवश्यकता का आभास।

---

18. शिक्षा-क्रम—कक्षा 1 से 6 तक, शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर, पृष्ठ 56.

6 जनतान्त्रिक प्रशासन व्यवस्था में आस्था का विकास तथा जनतान्त्रिक ढंग से काम करने के तरीकों का अभ्यास।

7 राष्ट्रीय एकता के प्रतीकों के प्रति सम्मान एवं अपनत्व की भावना का विकास।

(ख) उच्च प्राथमिक स्तर पर नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य[19]

शिक्षा विभाग, राजस्थान ने उच्च प्राथमिक कक्षाओं (कक्षा 6 से 8 तक) के लिये निम्नांकित लक्ष्य एवं अपेक्षाएं नागरिकशास्त्र शिक्षण के लिये निर्धारित किये हैं:—

(1) विद्यार्थियों को अच्छे नागरिक बनने के लिये आवश्यक मोटी-मोटी बातों की जानकारी तथा उनके अनुरूप व्यवहार करने की आवश्यकता का यथोचित आभास।

(2) विद्यार्थियों को अपने राज्य एवं देश के प्रशासन सम्बन्धी मोटी-मोटी बातों की जानकारी हो तथा उनके मन में हमारे देश की धर्म निरपेक्षता, जनतान्त्रिक गुणात्मक प्रशासन प्रणाली एवं संविधान के प्रति आस्था पैदा हो।

(3) हमारी सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं जैसे मूल्यवृद्धि, राष्ट्रीय-सुरक्षा, न्यायोचित-वितरण जनसंख्या वृद्धि, बेकारी, पूँजीवादी प्रवृत्ति, छुआछूत, अपव्यय आदि की मोटी-मोटी जानकारी प्राप्त हो तथा इनके यथोचित समाधान में रुचि।

(4) वैज्ञानिक खोज एवं अनुसंधान के परिणामस्वरूप उद्योग धन्धों एवं संहारक शस्त्रों की होड़ के इस युग में विश्व-शांति की आवश्यकता का अभिज्ञान संयुक्त राष्ट्र संघ इसके अभिकरणों तथा इनके द्वारा विभिन्न देशों के विकास एवं विश्व शांति हेतु किये जा रहे प्रयत्नों के प्रति आस्था।

(5) नागरिक ज्ञान के अध्ययन में प्रयुक्त होने वाली सहायक सामग्री, चित्र चार्ट्स आदि को समझ कर उनमें अन्तर्निहित विषय वस्तु का मर्म लगाने एवं सरल सूचनाओं, आंकड़ों आदि को विभिन्न प्रकार से दिखाने का कौशल।

(6) कुछ ऐसी वस्तुओं को समुचित रूप से संग्रह करने की वृत्ति उत्पन्न हो जो उनके लिए इस विषय के अध्ययन में सहायक हो सके।

(ग) माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य।[20]

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर द्वारा प्रकाशित नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्य वर्णित है—

---

19. शिक्षा-क्रम कक्षा 6 से 8 तक शिक्षा विभाग, राजस्थान बीकानेर पृ. 91
20. नागरिकशास्त्र शिक्षण में उद्देश्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिये इसके विषयों का विभाजन राजस्थान माध्यमिक शिक्षा मण्डल अजमेर पृ 1 से 6

1. विद्यार्थियों में व्यक्ति तथा समाज के सम्बन्ध का अवबोध कराना ।

2. नागरिक तथा समाज के सदस्य के रूप में उन्हें उनके अधिकार व कर्त्तव्यों से परिचित कराना ।

3. देश के कानून के प्रति सम्मान तथा अपने दायित्वों के निर्वाह हेतु उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना ।

4. प्रशासन की विभिन्न प्रणालियों से अवगत कराना जिससे कि वे लोकतन्त्र की श्रेष्ठता एवं महत्त्व को समझ सकें तथा उसमें निष्ठा रख सकें ।

5. अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग द्वारा विश्व-शांति एवं मानव प्रेम की भावना का विकास करना ।

6. विद्यार्थियों में देश-प्रेम उत्पन्न कर उनमें देश के हितों के लिये सेवा करने की उत्कृष्ट अभिलाषा जगाना ।

7. विद्यार्थियों में प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा एवं योग्यता के प्रति सम्मान का भाव पैदा करना ।

8. उन्हें लोकतांत्रिक न्यायपूर्ण व समान स्तर पर आधारित सामाजिक व्यवस्था में बिना जाति, धर्म व वर्ग भेद के विश्वास रखने योग्य बनाना ।

9. देश की राजनैतिक समस्याओं को संक्षेप में समझने योग्य बनाना ।

10. सहनशीलता, क्षमा, देश-प्रेम, अंतर्राष्ट्रीय सदभाव व आत्मनिर्भरता आदि अच्छे नागरिकों के गुणों को विकसित करना ।

11. भारत के विभिन्न वर्गों के बीच राष्ट्रीय भावनात्मक एकता की भावना का (सांस्कृतिक, भाषायी, धार्मिक, नैतिक तथा प्रादेशिक) विकास करना ।

12. विभिन्न सामाजिक व्यवस्था वाले देशों के मध्य शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धांत के महत्त्व की श्लाघा करना ।

स्पष्ट अवबोध हेतु आधार भूत संकल्पना

1. व्यक्ति, परिवार, पड़ौस, समुदाय, समाज, संस्था व संघ तथा राष्ट्र

2. राज्य, सरकार, प्रशासन के विविध रूप, राजतन्त्र, कुलीन तंत्र, तानाशाही, लोकतन्त्र ससदीय, अध्यक्षीय, गणतन्त्र एवं एकात्मक (भारतीय उदाहरणों से समझाया जावे)

3. लोकतंत्र, एवं स्थानीय स्वशासन,

4. नागरिकता—नागरिकों के आधार एवं कर्त्तव्य-नागरिकों के गुण,

5. संविधान,—मौलिक अधिकार व नीति निदेशक तत्त्व

6. अन्तर्राष्ट्रीयता एवं विश्व-शांति, विषय के अवबोध द्वारा निम्नांकित अभिवृत्तियों को विकसित किया जाय ।

1. दूसरों के प्रति सहनशीलता व आदर,

2. जीवन के आध्यात्मिक पक्ष की श्लाघा,

3. देश के विभिन्न भागों की विभिन्न जीवन-शैली, धर्म, रीति-रिवाजों व शिष्टाचार का अवबोध एवं आदर तथा साथ ही हमारे विशाल देश की एकता का अनुभाव,

4. अफवाहों एवं भावनात्मक प्रतिक्रिया द्वारा समस्याओं के समाधान से बच कर विवेक, विश्वसनीय तथ्यों एवं आलोचनात्मक विचारण की भूमिका को महत्व,

5. परिवार, समुदाय तथा राष्ट्रीय जीवन के लिये व्यक्तिगत दायित्व की सहर्ष स्वीकृति,

6. फल की कामना न करते हुए कर्म करना, जीवन संग्राम को खिलाड़ी की भावना से लेना न कि जीतने के लिये अनुचित साधनों का प्रयोग करना,

7. आत्मानुशासन द्वारा सादा जीवन व्यतीत करना,

8. सत्यनिष्ठा तथा व्यक्तिगत सम्मान के साथ ईमानदारी की भावना,

9. कम बात तथा अपने हाथों से अधिक कार्य करना एवं श्रम की प्रतिष्ठा करना,

10. बहुमत के निर्णयों की सहर्ष स्वीकृति तथा अल्पमत का आदर,

11. संविधान के प्रावधानों के अनुकूल सभी समस्याओं को लोकतान्त्रिक विधि से हल करने की इच्छा,

12. राष्ट्रीय एकता के प्रतीकों— संविधान, राष्ट्र-ध्वज, राष्ट्र-गीत, राष्ट्र-चिह्न तथा राष्ट्रीय उत्सवों के प्रति आदर की भावना,

13. ईमानदारी, उचित साधनों व निष्पक्षता में दृढ़ आस्था

14. मताग्रह से मुक्त स्वतन्त्र चिन्तन की अभिवृत्ति का विकास,

15. देश की स्वतन्त्रता की रक्षा हेतु सर्वस्व बलिदान करने की अभिलाषा,

16. भारतीय संस्कृति के प्रमुख मूल्यों के प्रति आदर की भावना का विकास।

आवश्यक कौशल व योग्यताओं का विकास

(1) संसदीय प्रक्रियाओं एवं निर्वाचन सहित निर्णय-प्रक्रिया में विवेकपूर्ण सहभागी होने की योग्यता,

(2) आवश्यकतानुसार अपने वर्ग के सदस्य एवं नेता के रूप में रचनात्मक एवं लोकतान्त्रिक विधि से भाग लेने का कौशल,

(3) मत व तथ्य एवं प्रचार व तर्क में भेद करने हेतु आलोचनात्मक विचारण की योग्यता,

(4) कार्य करने व नियोजन की अच्छी आदतें व अवकाश के समय का सोद्देश्य उपयोग,

(5) मानचित्र, चार्ट, ग्राफ, तालिकाओं, आंकड़ों व राजकीय प्रतिवेदनों जैसे सामाजिक विज्ञान के अन्य उपकरणों के उपयोग की योग्यता,

(6) स्वार्थी लोगों के मन्तव्य में पूर्वाग्रहों की पहचान, प्रचार को जानने व उसका विरोध करने में साक्ष्यों की जांच तथा स्वतंत्र निर्णय लेने की कुशलता,

(7) औपचारिक निर्वाचन प्रक्रिया को समझना व निष्पक्ष सही तरीके से मत देना तथा निर्वाचन प्रक्रिया में सहयोग देना,

(8) राज्य की नागरिक समस्याओं पर विचार-विमर्श करने तथा शाला-समुदाय के सामाजिक कार्यों व समाज-सेवा कार्यक्रमों का संचालन व उनमें भाग लेने की योग्यता,

(9) मानचित्र, चार्ट, ग्राफ व समाचार पत्रों को बनाने व अध्ययन करने की योग्यता आदि प्रमुख हैं।

विद्यार्थियों में निम्नांकित में अभिरुचियों का विकास—

(1) राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय एकता एवं स्वतंत्रता की रक्षा हेतु कार्यक्रम,

(2) विश्व-शांति व अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ के क्रियाकलाप,

(3) राष्ट्रीय उत्सव व महापुरुषों की जयन्तियाँ,

(4) शाला द्वारा आयोजित विचारगोष्ठियाँ, प्रदर्शनियाँ व मेले,

(5) विद्यार्थी परिषद्, शाला-संसद, बाल-सभा आदि में विद्यार्थियों के कार्यकलाप,

(6) एन० सी० सी०, नागरिक सुरक्षा, होम गार्ड और अन्य संगठन,

(7) जन-कल्याण, शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य सुधार योजनाएँ,

(8) शैक्षणिक-यात्राएँ, समाचारपत्र-वाचन, रेडियो-श्रवण, तथा राष्ट्रीय व सामाजिक क्रियाकलापों में भाग लेना,

निम्नांकित व्यक्तित्व विशेषकों का विकास

(1) वैयक्तिक विशेषक—ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, देश-भक्ति, पहल, नेतृत्व, अध्ययन की आदतें, आत्मानुशासन, आत्मनिर्भरता, सहनशीलता, धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण, अनुशासन, आलोचनात्मक चिन्तन, जिज्ञासु मस्तिष्क, स्वास्थ्य, शरीर-निर्माण, साहस, संवेगात्मक संन्तुलन, सहकारिता, राष्ट्रीयता, समाज-सेवा, नेतृत्व का सम्मान, प्राकृतिक प्रकोपों व राष्ट्रीय आपातकाल में सेवा-तत्परता तथा जीवन की अच्छी आदतें।

(2) सामाजिक-विशेषक

(1) स्वच्छता, स्वास्थ्य व सौन्दर्य की दृष्टि से पर्यावरण का सुधार,

(2) अपने भौतिक एवं सामाजिक वातावरण में विवेकपूर्ण समायोजन

(3) स्वयं की सुख-सुविधाओं की अपेक्षा समाज के सदस्यों के साथ स्नेहपूर्ण एवं मधुर सम्बन्धों को प्राथमिकता देना,

(4) जाति, धर्म व सम्प्रदाय के भेदभाव रहित दूसरों को कल्याण;

(5) बड़ों का सम्मान तथा उनके लिये स्वयं के हितों व सुखों का त्याग,

(6) उत्कृष्टता का आदर तथा वरीयता को मान्यता देना।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण के उद्देश्यों के स्तरोनुकूल निर्धारण में सावधानियाँ

उपर्युक्त विभिन्न स्तरों पर नागरिकशास्त्र-शिक्षण के उद्देश्यों को देखने पर विदित होता है कि उद्देश्याधारित शिक्षण की नवीन संकल्पना के अनुसार उद्देश्यों को व्यवहार के

विभिन्न पक्षों में वांछित परिवर्तनों की दृष्टि से परिभाषित करने का प्रयत्न किया गया है जो परम्परागत अस्पष्ट लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के स्थान पर प्राप्य उद्देश्यों के रूप में निर्धारित किये गये हैं। इससे शिक्षण प्रक्रिया एवं मूल्यांकन विधि को वस्तुनिष्ठ, वैध एवं विश्वसनीय बनाया जा सकता है। उद्देश्यनिष्ठ-शिक्षण के त्रिकोण से प्रदर्शित सम्बन्ध के आधार पर शिक्षण प्रक्रिया के अन्य दो घटक अध्यापन-अधिगम स्थितियों एवं मूल्यांकन द्वारा उद्देश्यों को प्रभावी बनाने हेतु निरन्तर संशोधन, परिवर्तन व परिवर्धन करने की आवश्यकता है। उद्देश्य-निर्धारण में निम्नांकित सावधानियाँ वांछनीय हैं—

(1) उद्देश्यों को बालक, पाठ्यवस्तु, समाज की आवश्यकता एवं उपलब्ध समय की दृष्टि से निर्धारित करना चाहिए ताकि वे प्राप्य बन सकें।

(2) उद्देश्यों को परिभाषित करते समय यह ध्यान रखा जाये कि वे मूर्तरूप में प्रस्तुत हों, अमूर्त बन कर अप्राप्य, अस्पष्ट एवं भ्रामक न हो जायें।

(3) उद्देश्य इस प्रकार के हों जिनका मापन व मूल्यांकन सम्भव हो सके।

(4) उद्देश्य शिक्षा के लक्ष्यों के अनुकूल हों जिनसे राष्ट्रीय एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके, अर्थात् वे उपयुक्तता पर आधारित हो।

(5) उद्देश्य व्यावहारिक हों। उनका निर्धारण विद्यालय के भौतिक एवं मानवीय साधनों को ध्यान में रख कर किया जाय।[21]

(6) बालकों की मानसिक परिपक्वता के स्तर का ध्यान रख कर उद्देश्यों का निर्धारण किया जाय, ताकि वे प्राप्य हो सकें।

(7) उद्देश्यों के निर्धारण में अतिमहत्वकाक्षी होना ठीक नहीं है। प्राप्यता की दृष्टि से उन्हें उचित अनुपात में निर्धारित किया जाय।

(8) निर्धारित उद्देश्यों को शिक्षण अधिगम स्थितियों एवं मूल्यांकन के प्रकाश में निरन्तर संशोधित करते रहने की आवश्यकता है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण के संदर्भ में शिक्षण-उद्देश्यों के उपर्युक्त विस्तृत विवेचन द्वारा उद्देश्यों का अर्थ, लक्ष्य व मूल्य से भेद, उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण के अनुरूप उनके निर्धारण एवं उनमें सावधानी रखने सम्बन्धी महत्वपूर्ण तथ्य स्पष्ट किये गये हैं जिनका ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है नागरिकशास्त्र के ये उद्देश्य पाठ्यवस्तु को समग्र रूप से दृष्टिगत रखते हुए स्तरानुकूल निर्धारित किये गये हैं। इन्हीं उद्देश्यों को विशिष्ट रूप से प्रत्येक कक्षा के नागरिकशास्त्र-शिक्षण में सत्र के लिये, प्रत्येक इकाई के लिये तथा प्रत्येक पाठ के लिए भी निर्धारित किया जा सकता है।

---

21. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन पृ. 13

□□□□

नागरिकशास्त्र : पाठ्यक्रम | 5

नागरिकशास्त्र के उद्देश्यों के आधार पर उनकी उपलब्धि हेतु विद्यालय-शिक्षा के विभिन्न स्तरो के अनुकूल पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। पाठ्यक्रम का अर्थ, परम्परागत एव आधुनिक सकल्पना, निर्माण के प्रमुख सिद्धात तथा देश-विदेश मे प्रचलित नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम के संक्षिप्त सर्वेक्षण व उपयुक्त पाठ्यक्रम की रूपरेखा पर विचार करना वांछनीय है।

पाठ्यक्रम का अर्थ

लेटिन में "करीकलम" शब्द का प्रयोग पाठ्यक्रम के लिए अंग्रेजी में प्रचलित है जिसका अर्थ है—दौड का मैदान या ट्रैक धावक को अपने गंतव्य तक पहुंचने के लिये एक निश्चित दिशा एवं मार्ग प्रदान करता है उसी तरह विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम शिक्षक तथा शिक्षार्थी को उस विषय के निर्धारित उद्देश्यों एवं तथ्यो की उपलब्धि हेतु शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को दिशा, मार्ग एवं गति प्रदान करते है।

वैसले के अनुसार पाठ्यक्रम एक ऐसा शैक्षणिक उपकरण है जिसका नियोजन एवं प्रयोग विद्यालय द्वारा अपने उद्देश्यो की पूर्ति हेतु किया जाता है। कनिंघम का मत है कि पाठ्यक्रम कलाकार (अध्यापक) के हाथों में एक ऐसा उपकरण है जिसमे वह अपनी कार्यशाला मे अपने कच्चे माल (विद्यार्थी) को अपने आदर्शों क अनुकूल सांचे में ढालता है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्दो में पाठ्यक्रम मे वे समग्र अनुभव सम्मिलित होते हैं जिनका कि विद्यार्थी विद्यालय, कक्षाकक्ष, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, व खेल के मैदान में तथा शिक्षक व शिक्षार्थियों के मध्य अनेक अनौपचारिक सम्पर्कों में अर्जित करता है। इस दृष्टि से विद्यालय का वह सम्पूर्ण जीवन ही पाठ्यक्रम बन जाता है जो विद्यार्थियों के जीवन को स्पर्श करता है तथा जो संतुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायक होता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित दस-वर्षीय विद्यालय के पाठ्यक्रम में कहा गया है कि विद्यालय द्वारा बालक को प्रदत्त विचारविमर्श से नियोजित समस्त शैक्षणिक अनुभवो का समग्र योग ही पाठ्यक्रम माना जा सकता है। पाठ्यक्रम का सम्बन्ध निम्नांकित से होता है—

1. किसी स्तर या कक्षा के लिये सामान्य शैक्षणिक उद्देश्य, 2. विषयवार शिक्षण-उद्देश्य तथा पाठ्यवस्तु 3. पाठ्यविवरण तथा समय आवंटन 4. शिक्षण-अधिगम अनुभव

---

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) पृ. 80, 3.

शिक्षण-उपकरण एवं सामग्री, 6. अधिगम-निष्कर्षों का मूल्यांकन तथा विद्यार्थी, शिक्षक एवं अभिभावकों को संशोधन निर्देश[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से पाठ्यक्रम या पाठचर्या का अर्थ व्यापक हो गया है। पाठ्यक्रम में वे सभी शिक्षण-अधिगम अनुभव सम्मविष्ट हैं जिनमे शैक्षणिक-उद्देश्यों की उपलब्धि होनी है। नागरिक-शास्त्र शिक्षण के संदर्भ में भी यही व्यापक अर्थ मान्य होना चाहिए।

प्राय पाठ्यक्रम या पाठ्यचर्या के समानार्थक रूप मे पाठ्यविवरण (Syllabus) का प्रयोग भी किया जाता है जो भ्रामक है। पाठ्यक्रम या पाठ्यचर्या पाठ्यवस्तु के आधारभूत अंशों का सोद्देश्य अंकन है जबकि "पाठ्यविवरण" पाठ्यचर्या या पाठ्यक्रम का विस्तार से प्रकरण एवं इकाइयों में विभक्त विवरण है। पाठ्यक्रम एक विशाल क्षेत्र के लिये निर्धारित किया जाता है जबकि पाठ्यविवरण स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल पाठ्यक्रम पर ही आधारित विस्तृत विवरण मात्र है।

नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पना

पाठ्यक्रम की परम्परागत धारणा या संकल्पना अत्यन्त सीमित एवं संकुचित रही है। पी. एन. अवस्थी का कथन है कि वही पाठ्यवस्तु जो अध्यापक द्वारा छात्रों को कक्षा में बतलाई जाती थी, पाठ्यक्रम समझी जाती थी। कक्षा के बाहर विषय वस्तु के अतिरिक्त जो ज्ञान बालक प्राप्त करता था उसे पाठ्यक्रम के अन्तर्गत नही समझा जाता था।[3] स्पष्ट है कि पहले अन्य विषयों की भांति नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम भी पाठ्यवस्तु के प्रमुख तथ्यों-नागरिकों के गुण, संविधान की विशेषताएं, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार के अंग आदि को कक्षा में विद्यार्थियों को पुस्तकीय ज्ञान के रूप में रटा दिया जाता था। नागरिकशास्त्र का उद्देश्य परीक्षा में छात्र को उत्तीर्ण कराना नहीं अपितु आदर्श नागरिक तैयार करना है। इसलिये माध्यमिक शिक्षा आयोग ने परम्परागत पाठ्यक्रम को लक्ष्यहीन बतलाया है।[4]

आधुनिक युग मे ज्ञान के प्रखर प्रवाह, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों, तथा सामाजिक विज्ञानों की संरचना में मे क्रान्तिकारी परिवर्तन आने के कारण सामाजिक विज्ञान की एक शाखा होने से नागरिकशास्त्र की पुरातन संकल्पना के प्रति गहरा असन्तोष पैदा हुआ। फलत: नागरिक शास्त्र की धारणा में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन-आया। कोठारी शिक्षा आयोग ने परम्परागत पाठ्यक्रम की अनिश्चितता एवं अनुपयुक्तता को प्रकट करते हुए कहा है कि—आजकल दुनिया में सब जगह स्कूल पाठ्यचर्या बड़ी अनिश्चित अवस्था

---

2. उपर्युक्त,
3. पी. एन अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण-विधि (मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल-पृ. 49)
4. माध्यमिक शिक्षा आयोग पृ. 74.

में है। इसकी आलोचना करते हुए कहा जाता है कि विकसित देशों मे सामान्यतः यह अधूरी है और पुरानी पड़ गई है और आज की अवस्था को ध्यान में रख कर नही बनाई गई है।[5] भारत के संदर्भ में आयोग ने आगे कहा है कि विदेशों में पाठ्यचर्या का चमत्कारी विकास हो रहा है। इस पृष्ठ-भूमि मे भारत की स्कूल पाठ्यचर्या को देखने पर प्रतीत होगा कि वह बहुत ही संकुचित दृष्टि से तैयार की गई है और अधिक पुरानी पड़ गई है। शिक्षा एक तिहरी प्रक्रिया है जो ज्ञान देती है, योग्यता का विकास करती है और उचित रुचि, अभिवृत्ति और मूल्य संबंधी भावना जागृत करती है। हमारे अधिकतर स्कूल और कालेज भी इस प्रक्रिया के पहले भाग से अर्थात् ज्ञान देने से ही अपने को सबंधित रखते हैं और यह कार्य भी संतोषजनक रीति से नहीं करते। पाठ्यचर्या मे किताबी ज्ञान और रटने पर अधिक बल दिया जाता है। कार्यकलापों तथा कार्य-अनुभवों की पर्याप्त व्यवस्था नही की जाती और बाह्य व आन्तरिक परीक्षाओं को महत्त्व दिया जाता है। इसके अलावा उपयोगी कौशलों के विकास और उचित रुचियों, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों की भावना जगाने पर पर्याप्त जोर नही दिया जाता, जिससे पाठ्यचर्या न केवल आधुनिक ज्ञान से दूर पड़ गई है, अपितु लोगों के जीवन से भी उसका सबंध कट सा गया है। इसलिए इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि स्कूल पाठ्यचर्या का स्तर ऊँचा उठाया जाय और उसमें आवश्यक सुधार किये जाय।'[6]

कोठारी शिक्षा आयोग के उपर्युक्त कथन से परम्परागत पाठ्यक्रम के दोष, पाठ्यक्रम की आधुनिक संकल्पना एवं पुरातन पाठ्यक्रम मे तदनुकूल परिवर्तन करने की अपरिहार्यता स्पष्ट होती है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम की परंपरागत सकल्पना में, जिसमें तथ्यनिरूपण एवं परीक्षा को ही केवल महत्त्व दिया गया है आमूलचूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम की आधुनिक संकल्पना में उद्देश्याधारित शिक्षण के अनुरूप ज्ञान के अतिरिक्त विद्यार्थियों में अन्य वांछित व्यावहारिक परिवर्तनों, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल-की उपलब्धि हेतु पाठ्यवस्तु एवं जीवन से संबधित उपयोगी क्रिया कलापों का समावेश जरूरी है। पाठ्यक्रम की इस नवीन संकल्पना के अनुरूप नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की पाठ्यवस्तु का चयन एवं संगठन किया जाना अपेक्षित है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-सामग्री के चयन के सिद्धान्त—नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम-निर्माण नवीन सकल्पना के अनुसार एक कठिन एवं चुनौती पूर्ण कार्य है क्योंकि उसमें आधुनिक समाज, राष्ट्र एवं विश्व के उपयुक्त नागरिकों की तैयारी हेतु विद्यार्थियो में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने के लिये उचित पाठ्य-सामग्री एवं पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों

5. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 203.

6. उपर्युक्त, पृ. 204,

शिक्षण-उपकरण एवं सामग्री, 6. अधिगम-निष्कर्षों का मूल्यांकन तथा विद्यार्थी, शिक्षक एवं अभिभावकों को संशोधन निर्देश[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से पाठ्यक्रम या पाठचर्या का अर्थ व्यापक हो गया है। पाठ्यक्रम में वे सभी शिक्षण-अधिगम अनुभव सम्मिविष्ठ है जिनसे शैक्षणिक-उद्देश्यों की उपलब्धि होती है। नागरिक-शास्त्र शिक्षण के संदर्भ में भी यही व्यापक अर्थ मान्य होना चाहिए।

प्रायः पाठ्यक्रम या पाठ्यचर्या के समानार्थक रूप मे पाठ्यविवरण (Syllabus) का प्रयोग भी किया जाता है जो भ्रामक है। पाठ्यक्रम या पाठ्यचर्या पाठ्यवस्तु के आधारभूत अंशों का सोद्देश्य अंकन है जबकि "पाठ्यविवरण" पाठ्यचर्या या पाठ्यक्रम का विस्तार से प्रकरण एवं इकाइयों में विभक्त विवरण है। पाठ्यक्रम एक विशाल क्षेत्र के लिये निर्धारित किया जाता है जबकि पाठ्यविवरण स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल पाठ्यक्रम पर ही आधारित विस्तृत विवरण मात्र है।

नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पना

पाठ्यक्रम की परम्परागत धारणा या संकल्पना अत्यन्त सीमित एवं संकुचित रही है। पी. एन. अवस्थी का कथन है कि वही पाठ्यवस्तु जो अध्यापक द्वारा छात्रों को कक्षा में बतलाई जाती थी, पाठ्यक्रम समझी जाती थी। कक्षा के बाहर विषय वस्तु के अतिरिक्त जो ज्ञान बालक प्राप्त करता था उसे पाठ्यक्रम के अन्तर्गत नही समझा जाता था।[3] स्पष्ट है कि पहले अन्य विषयो की भांति नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम भी पाठ्यवस्तु के प्रमुख तथ्यों-नागरिकों के गुण, संविधान की विशेषताएं, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार के अंश आदि को कक्षा मे विद्यार्थियो को पुस्तकीय ज्ञान के रूप में रटा दिया जाता था। नागरिकशास्त्र का उद्देश्य परीक्षा मे छात्र को उत्तीर्ण कराना नहीं अपितु आदर्श नागरिक तैयार करना है। इसलिये माध्यमिक शिक्षा आयोग ने परम्परागत पाठ्यक्रम को लक्ष्यहीन बतलाया है।[4]

आधुनिक युग में ज्ञान के प्रखर प्रवाह, शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधानो, तथा सामाजिक विज्ञानो की संकल्पना में मे क्रांतिकारी परिवर्तन आने के कारण सामाजिक विज्ञान की एक शाखा होने से नागरिकशास्त्र की पुरातन संकल्पना के प्रति गहरा असंतोष पैदा हुआ। फलतः नागरिक शास्त्र की धारणा मे भी क्रांतिकारी परिवर्तन आया। कोठारी शिक्षा आयोग ने परम्परागत पाठ्यक्रम की अनिश्चितता एवं अनुपयुक्तता को प्रकट करते हुए कहा है कि—आजकल दुनिया में सब जगह स्कूल पाठ्यचर्या बड़ी अनिश्चित अवस्था

---

2. उपर्युक्त,
3. पी. एन अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण-विधि (मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल–पृ. 49)
4. माध्यमिक शिक्षा आयोग पृ. 74.

में है। इसकी आलोचना करते हुए कहा जाता है कि विकसित देशों में सामान्यतः यह अधूरी है और पुरानी पड़ गई है और आज की अवस्था को ध्यान में रख कर नहीं बनाई गई है।[5] भारत के संदर्भ में आयोग ने आगे कहा है कि विदेशों में पाठ्यचर्या का चमत्कारी विकास हो रहा है। इस पृष्ठ-भूमि में भारत की स्कूल पाठ्यचर्या को देखने पर प्रतीत होगा कि वह बहुत ही संकुचित दृष्टि से तैयार की गई है और अधिक पुरानी पड़ गई है। शिक्षा एक तिहरी प्रक्रिया है जो ज्ञान देती है, योग्यता का विकास करती है और उचित रुचि, अभिवृत्ति और मूल्य संबंधी भावना जागृत करती है। हमारे अधिकतर स्कूल और कालेज भी इस प्रक्रिया के पहले भाग से अर्थात् ज्ञान देने से ही अपने को संबंधित रखते हैं और यह कार्य भी संतोषजनक रीति से नहीं करते। पाठ्यचर्या में किताबी ज्ञान और रटने पर अधिक बल दिया जाता है। कार्यकलापों तथा कार्य-अनुभवों की पर्याप्त व्यवस्था नहीं की जाती और बाह्य व आन्तरिक परीक्षाओं को महत्त्व दिया जाता है। इसके अलावा उपयोगी कौशलों के विकास और उचित रुचियों, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों की भावना जगाने पर पर्याप्त जोर नहीं दिया जाता, जिससे पाठ्यचर्या न केवल आधुनिक ज्ञान से दूर पड़ गई है, अपितु लोगों के जीवन से भी उसका संबंध कट सा गया है। इसलिए इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि स्कूल पाठ्यचर्या का स्तर ऊँचा उठाया जाय और उसमें आवश्यक सुधार किये जाय।'

कोठारी शिक्षा आयोग के उपर्युक्त कथन से परम्परागत पाठ्यक्रम के दोष, पाठ्यक्रम की आधुनिक संकल्पना एवं पुरातन् पाठ्यक्रम में तदनुकूल परिवर्तन करने की अपरिहार्यता स्पष्ट होती है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम की परंपरागत संकल्पना में, जिसमें तथ्यनिरूपण एवं परीक्षा को ही केवल महत्त्व दिया गया है आमूलचूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है। नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम की आधुनिक संकल्पना में उद्देश्याधारित शिक्षण के अनुरूप ज्ञान के अतिरिक्त विद्यार्थियों में अन्य वांछित व्यावहारिक परिवर्तनों, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल-की उपलब्धि हेतु पाठ्यवस्तु एवं जीवन से संबंधित उपयोगी क्रिया कलापों का समावेश जरूरी है। पाठ्यक्रम की इस नवीन संकल्पना के अनुरूप नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की पाठ्यवस्तु का चयन एवं संगठन किया जाना अपेक्षित है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-सामग्री के चयन के सिद्धान्त—नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम-निर्माण नवीन संकल्पना के अनुसार एक कठिन एवं चुनौती पूर्ण कार्य है क्योंकि उसमें आधुनिक समाज, राष्ट्र एवं विश्व के उपयुक्त नागरिकों की तैयारी हेतु विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने के लिये उचित पाठ्य-सामग्री एवं पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों

5. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 203.

6. उपर्युक्त, पृ. 204,

का समावेश आवश्यक है। पाठ्यक्रम निर्माण मे पाठ्यवस्तु के चयन के लिये निम्नांकित प्रमुख सिद्धातो का ध्यान रखना होगा।

(1) जीवन-अनुभव से प्रासंगिकता—पाठ्यवस्तु के चयन में सबसे प्रमुख सिद्धात जिसका ध्यान रखना है, वह है जीवन-अनुभवों से प्रासगिकता। इसका तात्पर्य यह है कि ऐसी पाठ्यवस्तु का चुनाव किया जाय जो विद्यार्थी की अनुभूत आवश्यकता के अनुसार उसके अपने जीवन से सबधित हो तथा उसकी आयु एव मानसिक परिपक्वता के अनुकूल हो। नागरिकशास्त्र की चयनित पाठ्य-वस्तु विभिन्न स्तरों पर आयु एवं मानसिक परिपक्वता के आधार पर विद्यार्थी के अपने स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय जीवन-अनुभवों से संबंद्ध हो। जो भी जीवन-अनुभव प्रत्यक्ष (तथ्य) रूप मे अथवा अप्रत्यक्ष (क्रियाकलाप) के रूप मे विद्यार्थियो को प्रदान किये जायें वे उनके स्वय के अनुभवों से प्रासगिक हो ताकि वे भली भांति अवबोध कर सकें।

(2) नमनीयता—पाठ्यक्रम मे पर्याप्त विविधता तथा नमनीयता हो जो वैयक्तिक विभिन्नताओ एव वैयक्तिक आवश्यकताओ और अभिरुचियो के अनुरूप हो।[7] माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस सिद्धात को पाठ्यक्रम-निर्माण का प्रमुख तत्त्व माना है। नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में तत्सबधी कक्षा या स्तर के विद्यार्थियो की वैयक्तिक विभिन्नताओं एवं वैयक्तिक आवश्यकताओ एवं अभिरुचियो का ध्यान रखा जाना वांछनीय है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि एक ही कक्षा या स्तर के विद्यार्थी मानसिक क्षमता एवं अधिगम की गति की दृष्टि से भिन्न होते हैं।

वैयक्तिक विभिन्नता की दृष्टि से विद्यार्थियों को तीन श्रेणियों—मंदबुद्धि, औसत तथा कुशाग्रबुद्धि- मे विभाजित किया जा सकता है। पाठ्यवस्तु का चयन प्रायः औसत विद्यार्थियो की दृष्टि से किया जाता है जिससे मदबुद्धि एव कुशाग्रबुद्धि के विद्यार्थी लाभान्वित नही हो पाते। अत मदबुद्धि एवं कुशाग्रबुद्धि के बालको के अनुरूप भी कुछ पाठ्य सामग्री एवं क्रियाकलाप क्रमशः औसत से सरल एव उच्च स्तर के, पाठ्यक्रम मे समाविष्ट हों। कोठारी शिक्षा आयोग ने पाठ्यक्रम के स्तरोन्नयन हेतु उच्च पाठ्यक्रम के शनैः शनैः समावेश का सुझाव दिया है। उच्च पाठ्यचर्या से हमारा तात्पर्य यह नही कि सामान्यतः उच्च कक्षाओं के लिये निर्धारित विषय पढाये जायें। इसका यह भी आशय हो सकता है *कि किसी विषय का अध्ययन साधारण पाठ्यचर्या मे जितनी गहराई से हो रहा है* उससे अधिक गहराई से हो।[8] इसी प्रकार स्तरोनुकूल आयु-वर्ग के विद्यार्थियो के शारीरिक एवं मानसिक विकास के अनुरूप उनकी आवश्यकताओ एव अभिरुचियो का पाठ्यवस्तु एव क्रिया कलापों के चयन में ध्यान रखना आवश्यक है।

(3) समुदायिक जीवन से संबद्धता—नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम-निर्माण में यह सिद्धांत अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि नागरिकशास्त्र का उद्देश्य लोकतांत्रिक समाज के उपयुक्त

---

7. नेसियाह के सोशल स्टडीज इन स्कूल्स मं. संस्करण, पृ. 30
8. माध्यमिक शिक्षा आयोग पृ.–80

नागरिकों का निर्माण करना है जो विभिन्न सामुदायिक एवं सामाजिक संस्थाओं के सदस्य होने के नाते उनके क्रियाकलापों में सक्रिय एवं विवेकपूर्ण ढंग से भाग ले सकें और सामुदायिक जीवन के प्रति अपनी निष्ठाओं का क्रमशः घर, पड़ोस, विद्यालय, ग्राम या नगर, प्रदेश एवं देश के प्रति निष्ठाओं में विकसित कर विश्व एवं मानव समुदाय या समाज के प्रति निष्ठा में ढाल सकें। नागरिक शास्त्र का पाठ्यक्रम स्थानीय आवश्यकताओं एवं स्थितियों के अनुरूप समायोजित किया जाना चाहिए ताकि, सामुदायिक जीवन से वह सबद्ध हो सके। माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्दों में 'पाठ्यक्रम सामुदायिक जीवन से जीवन्त तथा अटूट रूप से संबद्ध होना चाहिए। [9] कोठारी शिक्षा आयोग ने पाठ्यक्रम को समुदाय से क्रमशः संबद्ध करने के लिये ही प्राथमिक कक्षाओं के सामाजिक अध्ययन विषय के अंतर्गत नागरिक शास्त्र को पर्यावरण अध्ययन के रूप में पढाये जाने का सुझाव दिया है तथा उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक कक्षाओं, में नागरिकशास्त्र का स्वतंत्र विषय के रूप में अध्ययन पर बल दिया है। [10]

(4) लोकतंत्रीय सिद्धांत—नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु एवं क्रियाकलापों का चयन भारत के लोकतंत्रीय समाज एवं शासन-व्यवस्था के स्वीकृत मूल्यों के अनुकूल होना चाहिए। पाठ्यवस्तु एवं विभिन्न पाठ्यक्रम सहगामी क्रिया-कलापों के माध्यम से विद्यार्थियों के व्यवहारगत परिवर्तनों—ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल, में लोकतान्त्रिक, समाजवादी, धर्मनिरपेक्षता, समता आदि मूल्यों की उपलब्धि होनी चाहिए।

(5) चयन का सिद्धांत—नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तक में कक्षा स्तर के अनुकूल प्राथमिकता की दृष्टि से ऐसे मुख्य तथ्यों एवं क्रियाकलापों को ही चुनना चाहिए जो विद्यार्थियों को सामाजिक जीवन से समायोजित होने में सहायक हों। इस सिद्धांत को इस दृष्टि से भी देखा जा सकता है कि पाठ्य-सामग्री वही चुनी जाय जो विद्यालय एवं स्थानीय समुदाय में उपलब्ध संसाधनों एवं शिक्षक की योग्यता एवं क्षमता के अनुकूल हों।

(6) क्रिया का सिद्धांत—नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में केवल सैद्धांतिक पाठ्यवस्तु ही पर्याप्त नहीं है बल्कि व्यवहारिक जीवन में कुशल नागरिक तैयार करने के लिये उसमें ऐसे क्रियाकलापों का समावेश भी आवश्यक है जो नागरिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप में संबन्धित हों। पाठ्यक्रम सहगामी क्रिया कलापों का नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में अत्यन्त महत्व है। ऐसे क्रियाकलापों में स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं का परिदर्शन विषय से संबंधित सर्वेक्षण, प्रायोजनाएं, शालापरिषद् के कार्य आदि उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। क्रियाकलापों के माध्यम से विद्यार्थी वास्तविक अधिगम स्थितियों में प्रत्यक्ष सामाजिक अनुभव प्राप्त करते हैं। गुरुशरणदास त्यागी का कथन है कि इस 'सिद्धांत को अ-

9. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, अंग्रेजी संस्करण पृ. 80
10. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 209

नाकर नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम को चारित्रिक रूप से प्रायोगिक बनाया जाये जिससे बालकों को सामाजिक क्रियाम्रो के माध्यम से सामाजिक व्यवहार मे प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके।'[11]

(7) औपचारिकता का सिद्धांत—पी. एन. अवस्थी के शब्दों में, 'इस सिद्धान्त के अनुसार नागरिक-शास्त्र के पाठ्यक्रम मे उन विषयो को रखा जाय जिनसे बालको को अपने समाज तथा उसकी सभ्यता और संस्कृति को समझने तथा उसे सुरक्षित रख कर उसमे अपना मौलिक योगदान देने की क्षमता का विकास हो।'[12]

इस प्रकार की पाठ्यवस्तु उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए अधिक उपयुक्त होती है क्योंकि उनमे पर्याप्त परिपक्वता के कारण ऐसे प्रकरणो का औपचारिक शिक्षण किया जा सकता है। उदाहरणार्थ हमारे संविधान मे समाविष्ट भारतीय मूल्यों धर्मनिरपेक्षता, विश्वबन्धुत्व, समता, लोक कल्याण, नागरिक के नैतिक कर्त्तव्य, गणतन्त्रात्मक शासन-पद्धति, स्वायत्त शासन संस्थाए आदि का विवेचन उच्च कक्षाओं मे ही किया जाना उपयोगी रहता है।

(8) उपयोगिता का सिद्धांत—डा. उमेश चन्द्र कुदेसिया ने इस सिद्धात को स्पष्ट करते हुए कहा है। कि 'नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम का चयन करते समय सर्वप्रथम यह देखना है कि वह विद्यार्थियों को जीवनोपयोगी ज्ञान किस सीमा तक प्रदान करता है। विषय के उपयोगी होने पर ही हमारे विद्यार्थी उसमें रुचि लेंगे।'[13] व्हाइटहैड ने शैक्षिक जीवन को तीन भागो कौतूहल, उपयोगिता तथा सामान्यीकरण में विभाजित किया है। उपयोगिता की दृष्टि से नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम मे उन्ही तथ्यों का चयन किया जाय जो विद्यार्थियो को आदर्श नागरिक बनाने मे उपयोगी हो।

(9) अंतर्साम्प्रदायिक सद्भाव का विकास—अमरीका की राष्ट्रीय शैक्षिक परिषद् ने सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम निर्माण हेतु अंतर्साम्प्रदायिक सद्भाव के विकास पर बल दिया है क्योंकि दक्षिणी-पूर्वी 'एशिया के देशों मे धर्म, भाषा, संप्रदाय, जाति, वर्ग आदि मे समाज विभाजित है। पाठ्यक्रम को इन विभिन्न सम्प्रदायों को जोड़ने में एक पुल का कार्य करना चाहिए। भारत में भी विभिन्न सम्प्रदायो व वर्गों के परस्पर द्वेष एवं प्रतिस्पर्धा के कारण देश विघटित हो रहा है। अतः राष्ट्रीय भावात्मक एकता की भावना का विद्यार्थियों में विकास हेतु नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम मे उपयुक्त पाठ्य सामग्री एव क्रियाकलापों का चयन करना चाहिए।

(10) समीक्षात्मक अभिवृत्ति का विकास—यूनेस्को ने सिद्धात को पाठ्यक्रम-निर्माण हेतु आवश्यक माना है। यूनेस्को विद्यार्थियो में समीक्षात्मक अभिवृत्ति के विकास पर बल देते हुए कहा गया है कि उनमे सूक्ष्म पर्यवेक्षण, विवेकपूर्ण चिंतन, सत्यान्वेषण निष्पक्ष एवं दुराग्रह रहित विचारण तथा निर्णय, वस्तुनिष्ठ विश्लेषण व संश्लेषण आदि

---

11. गुरुशरणदास त्यागी : नागरिकशास्त्र शिक्षण, पृ. 46
12. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र विधि, पृ. 55
13. डा. उमेश चन्द्र कुदेसिया : नागरिक शास्त्र शिक्षण कला पृ. 18

की अभिवृत्ति विकसित की जानी चाहिए। इसके साथ ही दूसरे के विचारों को धैर्यपूर्वक सुनने व समझने तथा अपने विचार स्पष्टता व निर्भीकता से व्यक्त करने की क्षमता भी विकसित की जाय। ये अभिवृत्तियां एवं कौशल लोकतान्त्रिक व्यवस्था में नागरिक के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-सामग्री गठन के सिद्धांत

नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम-निर्माण हेतु पाठ्यसामग्री का चयन करने के पश्चात् उसे सुबोध, रोचक एवं सरल बनाने हेतु तथा उसमें क्रमबद्धता एवं सुसंबद्धता लाने के लिये उसके उचित गठन की आवश्यकता है। इससे संबंधित निम्नांकित प्रमुख सिद्धांत हैं:—

(1) विद्यार्थियों की आवश्यकता—पाठ्यक्रम की चयनित सामग्री विभिन्न स्तरों तथा कक्षा के आयु-वर्ग के विद्यार्थियों के शारीरिक एवं मानसिक विकास, परिपक्वता एवं अर्जित अनुभव के अनुकूल गठित की जाती है। विभिन्न आयु-वर्ग के विद्यार्थियों की अभिरुचियों एवं कौशल के आधार पर पाठ्य वस्तु को समायोजित किया जाय।

यदि संभव हो तो इस पाठ्य सामग्री को एक ही आयु-वर्ग में वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुरूप भी व्यवस्थित करना चाहिए जो व्यक्तिगत आवंटित कार्य के प्रावधान द्वारा सर्वोत्तम विधि से किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, नागरिक के समाजोपयोगी गुणों के प्रशिक्षण हेतु प्राथमिक स्तर पर शिष्टाचार संबंधी नियम विद्यालय एवं घर के पर्यावरण से समायोजित कर सिखलाये जा सकते है तथा उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर क्रमशः इन गुणों का प्रशिक्षण विद्यार्थियों के बढ़ते हुए परिवेश—पड़ौस, ग्राम या नगर, प्रदेश, राज्य एवं देश में विभिन्न संस्थाओं के पर्यवेक्षण, उनकी गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने तथा समस्याओं पर विचार विमर्श कर निर्णय लेने व आयोजनाओं को सम्पन्न करने दिया जा सकता है।

(2) समन्वय का सिद्धांत—नागरिक शास्त्र की पाठ्यवस्तु का समन्वय दो प्रकार से किया जाय। पहला तो यह कि प्रत्येक कक्षा की पाठ्यवस्तु का पिछली कक्षा की पाठ्यवस्तु से समन्वय हो तथा साथ ही वह आगामी कक्षा की पाठ्यवस्तु का आधार भी बने। यह समन्वय शीर्षात्मक या लम्बान्तर है। दूसरा यह किसी कक्षा के सभी विषयों का परस्पर समन्वय किया जाय जो क्षैतिज या अनुप्रस्थीय हो। इस प्रकार का समन्वय नागरिक शास्त्र की पाठ्यवस्तु की बोधगम्यता एवं अन्य विषयों से सहसम्बन्ध की दृष्टि से उपयोगी रहता है।

(3) संकेन्द्री गठन का सिद्धांत—नागरिक शास्त्र की पाठ्यवस्तु का संकेन्द्री गठन किया जाना विभिन्न स्तरों के विद्यार्थियों की विकास-स्थितियों के अनुकूल रहता है। संपूर्ण पाठ्यवस्तु को तीन वृतों में विभाजित कर लेना चाहिए तथा प्रत्येक वृत्त की पाठ्यवस्तु को कुछ निश्चित इकाइयों में विभक्त करें। पाठ्यवस्तु के ये तीन वृत्त क्रमशः प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों में विभक्त रहेंगे। पाठ्यवस्तु की प्रत्येक इकाई का प्रत्येक स्तर पर उत्तरोत्तर अपेक्षाकृत अधिक गहनता से अध्ययन-अध्यापन किया जाय। एन. सी. ई. आर. टी. द्वारा प्रकाशित दस वर्षीय विद्यालय के

पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन के संदर्भ मे इसी विधि का समर्थन किया गया है। उदाहरणार्थ—स्वायत्त शासन इकाई का तीनों स्तरों पर क्रमश: ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद्, नगर-पालिका या नगर-निगम के रूप में उत्तरोत्तर अधिक गहनता से अध्ययन वाछनीय है। प्रत्येक वृत्त के अंतर्गत विभिन्न इकाइयों को सुसंबद्धता एवं सुसंगतता मे गठित किया जायगा। इसके अतिरिक्त इकाइयों को तिथिक्रम में गठित किया जाना भी तर्कसम्मत होगा। इस प्रकार का गठन संकेन्द्री कहा जाता है जिसमें इकाइयों को केन्द्र मान कर विभिन्न स्तर पर विभिन्न अर्धव्यास द्वारा खीचे गये वृत्तो की परिधि में उनका अध्ययन सरल से जटिल की ओर उन्मुख होता है। इकाइया विभिन्न प्रकरणों में इसी गठन-पद्धति के आधार पर विभक्त की जा सकती हैं।

उपर्युक्त सिद्धांतों के आधार पर पाठ्यवस्तु के चयन एवं गठन द्वारा नागरिक शास्त्र का पाठ्यक्रम निर्मित किया जाय। किन्तु यह तथ्य ध्यान मे रखना होगा कि पाठ्यक्रम सदैव स्थिर नही रहना चाहिए, उसे समाज की परिवर्तित परिस्थितियो के अनुकूल गतिशील होना चाहिए ताकि उसकी उपयोगिता बनी रहे।

उद्देश्याधारित-शिक्षण की नवीन संकल्पना तथा पाठ्यक्रम-निर्माण के सिद्धान्तो के आधार पर नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम के निर्माण के प्रयास भारत मे किये गये हैं। परम्परागत पाठ्यक्रम मे परिवर्तन करने के प्रयास सर्वप्रथम विदेशों मे हुए हैं। नागरिकशास्त्र के पठ्यक्रम में विदेशों में हुए परिवर्तन का आभास कुछ प्रमुख देशो के नागरिक शास्त्र पाठ्यक्रम का संक्षिप्त सर्वेक्षण करते से हो सकता है।

विदेशों में नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम

संयुक्त राज्य अमेरिका—

अमेरिका में नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों पर आधारित पाठ्यक्रम एवं सम्बन्धित क्रियाकलाप विभिन्न स्तरों पर इस प्रकार हैं—

(1) पूर्व प्राथमिक स्तर—नर्सरी अथवा किंडर गार्टेन स्तर पर शिक्षा का उद्देश्य है बालक के सहज व्यवहार को समाज के मानदण्डो के अनुकूल ढालना, स्वस्थ आदतो का निर्माण, दूसरों के साथ सहयोग आत्मनिर्भरता, आदि शिष्टाचार का प्रशिक्षण देकर उसे समाज का एक सहयोगी, सुखी एवं सुरक्षित सदस्य बनाना। ये उद्देश्य एक अच्छे नागरिक को तैयार करने मे सहायक है। पाठ्यक्रम केवल क्रियाकलापों के रूप हैं जो दो प्रकार के हैं—दैनिक नियमित क्रियाएं तथा वैकल्पिक क्रियाएं। इन क्रियाओ मे स्वास्थ्य निरीक्षण, उन्मुक्त खेल, सफाई, कहानियाँ व विचार विमर्श, गायन व नृत्य प्रमुख है। यह स्तर प्राथमिक स्तर की तैयारी का आधार बनता है।

(2) प्राथमिक स्तर पर—लोकतान्त्रिक मूल्यो के विकास को तात्कालिक उद्देश्य माना गया है। ये मूल्य हैं—आत्मनिर्भरता, पहल, दूसरों के साथ भ्रातृत्व एवं कल्याणकारी भावना तथा वर्ग-विचार विमर्श मे कुशलता व स्वतन्त्रता के साथ सहभागिता।

इन मूल्यों के विकास के कई उपाय हैं—समस्याओ के निराकरण एवं समाधान मे मूल कुशलताओं, स्वतंत्रता एवं सहनशक्ति का विकास, प्रत्येक बालक की प्रतिभा की खोज

एवं उसका विकास, तथा सामाजिक संस्थाओं के सुधार हेतु सामाजिक दायित्व एवं सहकारी कुशलताओं पर बल। प्राथमिक स्तर पर पाठ्यक्रम नमनीय है जिसमें विषयों के आवश्यकतानुकूल समय आवंटित होता है। नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु एवं क्रियाकलाप सामाजिक-अध्ययन विषय के अन्तर्गत अन्य विषयों के साथ समन्वित किये गये हैं जो इकाइयों में विभक्त है। पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र व इतिहास अमरीकी इतिहास एवं प्रशासन-पद्धति विषय-समूह के अन्तर्गत अनिवार्य है।

(3) माध्यमिक स्तर पर—शिक्षा के उद्देश्य को प्रकट करते हुए रैल्फ का कथन है कि पब्लिक स्कूलों का आधारभूत उद्देश्य है प्रत्येक व्यक्ति को समुदाय एवं राष्ट्र के जीवन से समन्वित करना तथा उसे एक आत्मनियंत्रित एवं आत्मनिर्देशित नागरिक बनाना। शिक्षा का यह उद्देश्य नागरिकशास्त्र का ही उद्देश्य है। अर्थात समूची शिक्षा-प्रक्रिया एक अच्छा नागरिक बनने हेतु है। माध्यमिक स्तर पर सामाजिक अध्ययन विषय के अंतर्गत समेकित रूप से नागरिकशास्त्र का पाठयक्रम निर्धारित है। परंपरागत हाई स्कूलों में स्वतंत्र रूप से निर्धारित नागरिक शास्त्र का पाठ्यक्रम अब समन्वित रूप में सामाजिक अध्ययन के अंतर्गत लाया जा रहा है। नागरिक-शास्त्र के पाठ्यक्रम में कक्षा-बाह्य क्रिया-कलाप जैसे वाद-विवाद, नाटक, विशिष्ट अभिरुचि के क्लब विद्यार्थी-प्रकाशन, सेवा-क्लब, विद्यार्थी-स्वशासन, विद्यार्थी-संघ आदि में विद्यार्थियों का भाग लेना अपेक्षित है। इन क्रिया, कलापों का उद्देश्य लोकतंत्र के उपयुक्त नागरिक तैयार करना है।

ब्रिटेन

ब्रिटेन में विद्यालय-शिक्षा दो वर्गों में विभक्त है—पब्लिक स्कूल तथा सामान्य स्कूल। सामान्य स्कूलों से पब्लिक स्कूलों की शिक्षा का स्तर काफी ऊँचा माना जाता है तथा वे अभिजात्य वर्ग के बालकों के लिए है तथा खर्चीले भी हैं। पब्लिक स्कूलों के लिए प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों को तैयार करने वाले स्कूल-प्रेपरेटरी स्कूल कहलाते हैं जो 12–14 वर्ष की आयु पर विद्यार्थियो को पब्लिक स्कूलों मे प्रवेश दिलाने हेतु कॉमन ऐन्ट्रैंस परीक्षा की तैयारी कराते हैं। इनके पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र स्वतंत्र विषय के रूप मे नही है किन्तु सामान्य विषय-समूह के अंतर्गत ब्रिटिश इतिहास के अंग के रूप में पढ़ाया जाता है। नागरिकशास्त्र का अध्ययन एवं प्रशिक्षण इन स्कूलों में क्रियाकलापों तथा युवक केन्द्रों के माध्यम से दिया जाता है। चरित्र-निर्माण की दृष्टि से ये स्कूल उच्च कोटि के माने जाते हैं। इनमें हाउस-पद्धति प्रीफेक्ट-पद्धति तथा आवासीय होने के कारण ये चरित्र-निर्माण संबंधी क्रियाकलापो मे प्रशिक्षण देते हैं किन्तु लोकतंत्रीय व्यवस्था में ऐसे स्कूलों का औचित्य विवादास्पद बना हुआ है। ब्रिटेन के ग्रामर-स्कूल भी इन्हीं का अनुकरण करते हैं।

ब्रिटेन की सामान्य विद्यालय शिक्षा-व्यवस्था स्थानीय शिक्षा परिषदों के अधीन है। सरकार द्वारा इनके स्कूलों का निरीक्षण किया जाता है। इन विद्यालयों में नागरिकशास्त्र का शिक्षण एवं प्रशिक्षण एक औपचारिक पाठ्यक्रम के रूप में नहीं दिया जाता बल्कि युवक केन्द्रों एवं विभिन्न प्रकार के संगठनों द्वारा अनौपचारिक

रूप में दिया जाता है। 1944 के शिक्षा-अधिनियम ने स्थानीय शिक्षा परिषदों द्वारा युवा-सेवा की सुविधाएं उपलब्ध कराना अनिवार्य कर दिया तथा 1960 में एल्बेमार्ले रिपोर्ट द्वारा युवक-सेवा-विकास समिति का निर्माण किया गया। युवा सेवा का उद्देश्य 21 वर्ष की आयु के नीचे वाले सभी युवजनों को अवकाश के सदुपयोग हेतु क्रिया कलापों को उपलब्ध कराना है तथा उन्हें उनके घर पर औपचारिक शिक्षा तथा कार्य के पूरक के रूप में अपने ससाधनों को खोजने व विकसित करने के अवसर प्रदान करना है, जिससे वे समाज के उत्तरदायी सदस्य के रूप में तैयार हो सकें। युवा-सेवा के अन्तर्गत युवक केन्द्रों की स्थापना की जाती है जिसे सरकार से अनुदान मिलता है। इनके अतिरिक्त अनेक संगठन हैं जिनकी सदस्यता स्वेच्छा पर निर्भर है जैसे स्काउटिंग, गाइडिंग आर्मी केडेट कोर, रैड क्रॉस आदि। इन युवा केन्द्रों व सगठनों के माध्यम से नागरिकशास्त्र की अनौपचारिक शिक्षा व प्रशिक्षण दिया जाता है।

सोवियत रूस

अमेरिका तथा ब्रिटेन की शिक्षा-व्यवस्था लोकतांत्रिक समाज एवं राष्ट्र के अनुकूल है, जबकि रूस की शिक्षा-व्यवस्था इनके प्रतिकूल वहां के साम्यवादी समाज एवं राष्ट्र के अनुरूप है। मार्क्स के साम्यवादी दर्शन के अनुकूल लेनिन ने कहा था कि बालकों की सम्पूर्ण शिक्षा तथा पालन-पोषण का उद्देश्य उन्हें साम्यवादी आदर्शों में प्रशिक्षित करना है। स्टालिन का कथन है कि शिक्षा एक ऐसा हथियार है जिसका प्रभाव उसके चलाने वाले पर निर्भर करता है। यूनेस्को द्वारा प्रकाशित शिक्षा के विश्व-सर्वेक्षण में रूस की शिक्षा के उद्देश्य है विज्ञान एवं भौतिकतावादी विश्व-दृष्टिकोण के आधारभूत सिद्धांतों का ठोस ज्ञान प्रदान करना, समाजवादी उत्पादन के सिद्धान्तों का समाजवादी पुनर्निर्माण की समस्याओं से समन्वय, समाजवादी मातृभूमि के प्रति दृढ आस्था एवं समर्पण की भावना का विकास, स्वास्थ्य-प्रशिक्षण एवं सौंदर्यबोध की शिक्षा। उद्देश्यों से स्पष्ट है कि रूस की शिक्षा का उद्देश्य साम्यवादी समाज के उपयुक्त नागरिक तैयार करना है, अतः इस आदर्श के अनुकूल ही वहाँ नागरिकशास्त्र की शिक्षा एवं प्रशिक्षण सरकार की ओर से निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के आधार पर दिया जाता है।

रूस में परम्परागत विद्यालयों को अब दस वर्षीय पालीटेक्निक स्कूलों में परिवर्तित किया गया है जिनके पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की औपचारिक शिक्षा समाजशास्त्र व अर्थशास्त्र के साथ समन्वित कर दी जाती है। पाठ्यक्रम में विज्ञान व इन्जीनियरिंग विषयों को प्रमुखता दी गई है। साम्यवादी आदर्शों के अनुकूल नागरिकशास्त्र का प्रशिक्षण अनौपचारिक विधि से विभिन्न क्रियाकलापों के माध्यम से दिया जाता है। रूस में पायनियर 'यंग कम्युनिस्ट लीग' तथा अनेक प्रकृतिवादी, तकनीकी, कलात्मक व शरीर शिक्षा सबंधी केन्द्रों पर विद्यार्थियों को उनकी रुचि, अभिवृत्ति, योग्यता एवं क्षमता के अनुसार क्रिया-कलापों द्वारा साम्यवादी नागरिक बनने का प्रशिक्षण दिया जाता है। शारीरिक श्रम व उत्पादन-कार्य में भाग लेना प्रत्येक विद्यार्थी के लिये अनिवार्य है।

विदेशों में विद्यालय शिक्षा के पाठ्यक्रम में नागरिकशास्त्र की शिक्षा एवं प्रशिक्षण का औपचारिक रूप से तो कम दिया जाता है किन्तु अनौपचारिक रूप से किया कलापों एव युवा संघो के माध्यम से अधिक दिया जाता है। अमेरिका तथा ब्रिटेन में नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में हुए परिवर्तन भारत के लिये अधिक प्रासंगिक हैं क्योंकि हमारे देश में लोकतान्त्रिक व्यवस्था है जबकि रूस में प्रचलित नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम से भारत इस दृष्टि से लाभान्वित हो सकता है कि वहां उत्पादन को बढाने तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति में अवगत होना प्रत्येक नागरिक के लिये अनिवार्य है जो हमारे देश की भी आवश्यकता है।

भारत में विभिन्न स्तरों के अनुकूल नागरिक शास्त्र का पाठ्यक्रम

उद्देश्याधारित शिक्षण के नवीन दृष्टिकोण के अनुसार परम्परागत पाठ्यक्रम का स्तरोन्नयन करने में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने सर्वप्रथम राजस्थान के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा राज्य शिक्षा संस्थान, जो अब शैक्षिक जीवन प्रशिक्षण संस्थान में परिवर्तित हो गया है, के माध्यम से पाठ्यक्रम-स्तरोन्नयन का महत्वपूर्ण कार्य किया है। राजस्थान शिक्षा विभाग व राज्य शिक्षा संस्थान द्वारा निर्धारित प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर का नागरिकशास्त्र-पाठ्यक्रम तथा राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम इस दिशा में उपयोगी है।

(1) प्राथमिक स्तर[14]

कक्षा 1 व 2—(क) मन में अच्छी आदतों का अंकुरण, (ख) पास पड़ोस के वातावरण की जानकारी, (ग) अच्छी आदतों के निर्माणगत व्यवहार (इन्हे विद्यालय, बड़ों के प्रति, शिक्षक के प्रति, भोजन, वस्तु, खेल, घर व सभा संबंधी शिष्टाचार में विभाजित कर उनके उपयुक्त परिस्थितियां निर्दिष्ट की गई है)।

कक्षा 3—(क) प्रशासनिक अध्ययन के अन्तर्गत पंचायत या नगरपालिका के संगठन व कार्य, (ख) सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत कर्तव्य-पालन व असामाजिक प्रथाओं की जानकारी (ग) सामाजिक जीवन व उपलब्ध सुविधाएं, (घ) सामाजिक प्रवृत्तियां तथा सामाजिक सेवा (इनके उपयुक्त क्रियाकलाप घर व विद्यालय के वातावरण में निर्धारित किये गये है)।

कक्षा 4—(क) प्रशासनिक अध्ययन के अन्तर्गत अपनी तहसील व जिले की पंचायत समिति और जिला परिषद् का स्वरूप व कार्य, (ख) सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत राष्ट्रीय एकता, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन व विश्राम की समस्याएं, (ग) सामाजिक जीवन तथा उपलब्ध सामाजिक सुविधाएं, (घ) सामाजिक प्रवृत्तियां व सेवा (इनके उपयुक्त क्रियाकलाप भी निर्दिष्ट है)।

---

14 शिक्षा-क्रम (कक्षा 1 से 5 तक) शिक्षा विभाग, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर—1972 पृ. 56-66

कक्षा 5 (क) प्रशासनिक अध्ययन के अन्तर्गत भारत का संविधान, राज्य व केन्द्र की शासन-व्यवस्था का सरल अध्ययन, (ज) सामाजिक समस्याओं मे गरीबी, बेकारी एवं आर्थिक विषमता, पंचवर्षीय योजनाओं का महत्त्व, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, मुनाफाखोरी व मिलावट का निराकरण, (ग) सामाजिक जीवन व उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं मे शिक्षा, चिकित्सा व यातायात परिवहन, राष्ट्रीय पर्व व त्यौहार, पिछड़ी व जनजातियों का विकास, विभिन्न धर्म (घ) सामाजिक प्रवृत्तियों व समाज सेवा के अन्तर्गत विद्यालय व स्थानीय समुदाय से सम्बन्धित क्रियाकलाप ।[15]

(2) उच्च प्राथमिक स्तर

कक्षा 6—(क)प्रशासन के अध्ययन के अन्तर्गत स्वायत्तशासन संस्थाएं,(ख) हमारी समस्याओं के अन्तर्गत संयुक्त परिवार प्रथा, जाति प्रथा, छुआ-छूत, पर्दा, सती, दहेज, बाल-विवाह एवं समाज मे स्त्रियों का स्थान, (ग) सामाजिक जीवन तथा उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं के अन्तर्गत विकास कार्य, शिक्षा, स्वास्थ्य, हस्तउद्योग, यातायात, सहकारी संस्थाएं आदि, (घ) सामाजिक प्रवृत्तियों तथा सामाजिक सेवा के अन्तर्गत शाला व समाज से सम्बन्धित क्रियाकलाप ।

कक्षा 7—(क) प्रशासनिक अध्ययन के अन्तर्गत व्यक्ति, समाज और राज्य के सिद्धांत तथा राजस्थान के शासन की सरल रूपरेखा, (ख) हमारी समस्याओं के अन्तर्गत महंगाई, धन का वितरण, सहकारिता, पिछड़ी व जनजाति विकास, राष्ट्रीय व नागरिक सुरक्षा, (ग) सामाजिक जीवन तथा उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं के अन्तर्गत अपने जिले से सम्बद्ध ज्ञान व क्रियाकलाप ।

कक्षा 8—(क) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध तथा विश्व शान्ति के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव व पंचशील, (ख संयुक्त राष्ट्र संघ व भारत, (ग) भारतीय संविधान की रूपरेखा, (घ) सामाजिक जीवन तथा उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं के अध्ययन के अन्तर्गत सामुदायिक विकास परियोजनाएं तथा ग्राम या नगर के कुछ असंतोषजनक परिवारों का अध्ययन व उनकी समस्या का ज्ञान (च) सामाजिक प्रवृत्तियों तथा समाज सेवा कार्यों के अन्तर्गत स्कूल गांव, नगर, व क्षेत्र सम्बन्धित क्रियाकलाप ।

(3) माध्यमिक स्तर[16]

कक्षा 1—निम्नांकित दो प्रश्न-पत्रों मे विभाजित पाठ्यक्रम—

प्रथम प्रश्न पत्र प्रारम्भिक सिद्धान्त—(1) नागरिकशास्त्र और आधुनिक समाज में उसके अध्ययन का महत्त्व, (2) व्यक्ति, समाज और राज्य—समाज व राज्य की सकल्पनाएं तथा व्यक्ति, समाज और राज्य में पारस्परिक सम्बन्ध, (3) राज्य—आधुनिक

15 शिक्षा-क्रम (कक्षा 6 से 8 तक) उपर्युक्त पृ. 93-97

16. सैकण्डरी स्कूल परीक्षा 1982 की विवरणिका (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान पृ. 74-78)

राज्य का संक्षिप्त ऐतिहासिक विकास (पश्चिम और भारत में), सरकार और राज्य में भेद, (4) राज्य के कार्य, कल्याणकारी राज्य, राज्य विहीन समाज, (5) सरकार के अंग, कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, न्यायपालिका-उनका सम्बन्ध, सापेक्षिक महत्त्व, शक्तियों को पृथक्करण।

द्वितीय प्रश्न पत्र (भारत सरकार एवं राष्ट्रीय समस्याएं)—(1) भारतीय राज्य-प्रजातांत्रिक गणराज्य, धर्मनिरपेक्ष, संघीय, (2) भारतीय संघ, केन्द्रीय सरकार, राज्य, केन्द्रशासित प्रदेश-नाम तथा स्थिति, (3) भारतीय संविधान–प्रमुख विशेषताएं–(i) प्रजातांत्रिक गणराज्य और (ii) संघीय राज्य अन्य प्रमुख विशेषताएं–(अ) अलिखित किन्तु लचीला संविधान, (आ) मौलिक अधिकार एवं नीति निर्देशक सिद्धान्त, (इ) संसदात्मक व्यवस्था, (ई) केन्द्र और राज्यों में विधायी, कार्यपालिका और वित्तीय शक्तियों का विभाजन, (उ) स्वतंत्र न्यायपालिका, (ऊ) इकहरी नागरिकता, (4) महत्त्वपूर्ण मौलिक अधिकार व नीति निर्देशक सिद्धान्त और इन दोनों में अन्तर, (5) संघीय सरकार—(क) संघीय व्यवस्थापिका, इनके घटक—(i) राष्ट्रपति, लोकसभा व राज्य सभा, (ii) दो सदन-लोकसभा व राज्य सभा की सदस्यता के स्वरूप एवं योग्यता, न्यूनतम आयु, भारतीय नागरिकता, सदनों की वर्तमान सदस्य संख्या, अवधि, अधिकार, कार्य व परस्पर सम्बन्ध, (ख) संघीय कार्यपालिका—(i) उत्तरदायी सरकार की मंत्रिमण्डलीय व्यवस्था, (ii) राष्ट्रपति—निर्वाचक मण्डल द्वारा चयन, अवधि व कार्यपालिका, विधायी एवं आपात-शक्तियां, (iii) मंत्रिपरिषद् एवं प्रधान मंत्री—मंत्रियों की विभिन्न श्रेणियां, मंत्रिमण्डल व मंत्रिपरिषद् में अन्तर तथा राष्ट्रपति के प्रति मंत्रि मण्डल का उत्तरदायित्व, (ग) उपराष्ट्रपति का चयन व कार्य (घ) संघीय न्यायपालिका—(1) सर्वोच्च न्यायालय का संगठन, (2) अधिकार क्षेत्र, (3) परामर्शदात्री संस्था के रूप में, (4) महान्यायवादी की नियुक्ति व कार्य, (6) राज्य सरकार—(1) राज्य कार्यपालिका–(अ) राज्यपाल की नियुक्ति, शक्तियां व कार्य (2) मंत्रिपरिषद् व मुख्य मंत्री (संघीय कार्यपालिका के समान अध्ययन राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में), (ब) राज्य व्यवस्थापिका–विधानसभा, विधान-परिषद् तथा उनके सम्बन्ध (राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में), (ग) महाधिवक्ता की नियुक्ति व कार्य, (घ) राज्य न्यायपालिका–(1) उच्च न्यायालय का संगठन, (2) क्षेत्राधिकार, (3) अधीनस्थ न्यायालय (राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में)।

कक्षा 10 निम्नांकित दो प्रश्न पत्रों में विभाजित पाठ्यक्रम

प्रथम प्रश्न पत्र (प्रारम्भिक सिद्धान्त)—

(1) आधुनिक राज्य, लोकतांत्रिक अधिनायकवादी राज्य, (2) प्रजातंत्र की संकल्पना, प्रकार, सफलता की शर्तें, चुनाव, चुनाव पद्धतियां, राजनैतिक दल, दल विहीन जनतंत्र, नागरिकता के कर्तव्य एवं अधिकार, निष्ठाओं का उचित क्रम।

(3) स्थानीय स्वशासन—आवश्यकता व कार्य, (4) संयुक्त राष्ट्र संघ, संक्षिप्त इतिहास, संगठन, सफलताएं एवं असफलताएं।

द्वितिय प्रश्न पत्र (भारतीय सरकार और राष्ट्रीय समस्याएं)

(1) केन्द्र शासित प्रदेश-उनका प्रशासन, (2) लोक सेवा आयोग (राजस्थान) (3) चुनाव आयोग, (4) राजस्थान में राज्य प्रशासन-(i) राज्य स्तर सचिवालय व राजस्व मण्डल, (ii) जिला से ग्रामीण स्तर-राजस्थान में राजस्व, पुलिस व न्यायिक प्रशासन, (iii) पंचायती राज्य और नगरीय स्वशासन, (4) विकास संगठन—(i) नगरीय स्वाशासन, नगर-परिषद्, नगरपालिका, (ii) नगर सुधारन्यास (5) राजस्थान सरकार के कतिपय विभाग-(i) राज्य परिवहन निगम, (ii) विद्युत मण्डल, (6) भारत मे राजनैतिक दल, (7) भारत में प्रजातंत्र-इसकी सफलता में अवरोध व उनका निराकरण, (8) भारत की प्रमुख आधुनिक समस्याएं--राष्ट्रीय एकीकरण, सांप्रदायिक समस्या, अल्प संख्यकों की समस्या, राष्ट्रीय सुरक्षा, विदेश नीति, आन्तरिक प्रशासन, पिछड़े वर्ग की समस्या, सामाजिक व आर्थिक समस्या, राष्ट्रीय चरित्र-निर्माण तथा जनसंख्या की समस्या।

(4) उच्च माध्यमिक स्तर [17]

कोठारी शिक्षा आयोग की अभिशंसानुसार केवल कुछ राज्यों तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा उच्च माध्यमिक स्तर पर दो वर्ष (कक्षा 11 व 12) का पाठ्यक्रम अपनाया गया है। राजस्थान तथा कुछ राज्यों ने इस स्तर पर केवल एक वर्ष (कक्षा 11) का पाठ्यक्रम अपनाया है जबकि उत्तर प्रदेश ने अभी इस स्तर पर दो वर्षीय इंटर पाठ्क्रम ही अपना रखा है। नवीन शिक्षा योजना 10+2+3 के अन्तर्गत उच्च माध्यमिक स्तर की अवधि दो वर्ष (कक्षा 11 व 12) की होनी चाहिए। निम्नांकित पाठ्यक्रम राजस्थान को दृष्टिगत रखते हुए दिया जा रहा है—

प्रथम प्रश्न पत्र (नागरिकशास्त्र के प्रारम्भिक सिद्धान्त)—(1) संघ--परिभाषा व इसका जनतांत्रिक समाज में स्थान व भूमिका, (2) राष्ट्र, राष्ट्रीयता व अन्तर्राष्ट्रीयता, (3) राज्य, समाज, राष्ट्रराज्य-इनमें अन्तर, (4) सरकार के विविध रूप--प्रजातन्त्र-(i) संसदात्मक, अध्यक्षात्मक, (ii) एकात्मक, संघात्मक, (5) लोकमत, (6) राजनीतिक संकल्पनाएं—स्वतन्त्रता, समानता, कानून, नागरिक अवज्ञा, (7) पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद व सर्वोदय।

द्वितीय प्रश्न पत्र (भारत सरकार और राष्ट्रीय समस्याएं)—(1) संवैधानिक विकास का संक्षिप्त इतिहास, (2) संविधान में मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धान्तो का महत्त्व व उनके क्रियान्वयन में प्रगति, (3) राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का निर्वाचन, पदच्युति, स्थिति व भूमिका, (4) वैधानिक प्रक्रिया संविधान में संशोधन किस प्रकार होता है, दोनों सदनों का सापेक्षिक महत्त्व, (5) मंत्रिमण्डल की स्वेच्छाचारिता प्रधानमंत्री की भूमिका, (6) वित्त आयोग, योजना आयोग, महालेखा-परीक्षक इनकी नियुक्ति व कार्य,

---

17. हायर सैकण्ड्री स्कूल परीक्षा-1982, विवरणिका माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राज.

(7) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनरीक्षण संसद बनाम सर्वोच्च न्यायालय की स्वतंत्रता, (8) केन्द्र और राज्यों का सम्बन्ध, (i) शक्तियों का विभाजन, (ii) प्रशासनिक सम्बन्ध (iii) वित्तीय सम्बन्ध (iv) आपात व्यवस्था, (v) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारवाणिज्य, (9) भारतीय विदेश नीति व क्रियान्विति, गुट निरपेक्षता, (10) भारतीय शिक्षा, (11) धर्म निरपेक्ष वाद, (12) भाषा समस्या, (13) भारतीय संस्कृति के मूल तत्व और आधुनिकीकरण की समस्याएं, (14) भारत और विश्वशांति।

वर्तमान पाठ्यक्रम की समीक्षा—उपर्युक्त तीनों स्तरों पर नागरिकशास्त्र का पाठ्यक्रम राजस्थान शिक्षा विभाग (राज्य शिक्षा संस्थान) तथा राजस्थान माध्यमिक बोर्ड द्वारा निर्मित है जिसे देश की परिवर्तित सामाजिक व राजनैतिक स्थिति के अनुकूल बनाने का प्रयास किया गया है। राजस्थान देश का अग्रणी राज्य है जिसने कोठारी आयोग की अभिशंसाओं के अनुसार राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन सम्बन्धी परिवर्तन किये हैं तथा राजस्थान में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की भांति 10+2 शिक्षा योजना क्रियान्वित करने का प्रयास विचाराधीन है। माध्यमिक स्तर पर अन्य राज्यों में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, हरियाणा आदि में भी नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में लगभग ऐसी ही पाठ्यवस्तु का चयन किया गया है। राजस्थान शिक्षा बोर्ड ने नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम के इकाईवार सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्य वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के रूप में परिभाषित किये हैं। इसमें कुछ असंगतियां हैं जिनका निराकरण जरूरी है।

वर्तमान नागरिकशास्त्र पाठ्यक्रम के दोष एवं उनका निराकरण

(1) प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर के अनुसार माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में पाठ्यवस्तु के साथ पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों का भी स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए। विदेशों में नागरिकशास्त्र की शिक्षा एवं प्रशिक्षण औपचारिक रूप से कक्षा में कम किन्तु अनौपचारिक रूप से कक्षा-बाह्य क्रियाकलापों द्वारा अधिक दिया जाता है जिससे यह विषय व्यावहारिक बन गया है। भारत में भी विद्यार्थियों को लोकतांत्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत कुशल नागरिक बनाने के लिये नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में क्रियात्मक या व्यावहारिक प्रशिक्षण देने हेतु क्रियाकलापों, प्रायोजनाओं, सर्वेक्षणों आदि का समावेश किया जाय जिससे इस विषय का ज्ञान मात्र सैद्धान्तिक बन कर न रह जाय।

(2) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा प्रकाशित नागरिकशास्त्र के उद्देश्यों एवं इकाइयों को नवीन पाठ्यक्रम के अनुसार संशोधित, परिवर्तित एवं परिवर्धित करने की आवश्यकता है। नागरिकशास्त्र शिक्षकों के मार्गदर्शन हेतु पाठ्यक्रम में ही उसके इकाईवार उद्देश्य एवं सम्बद्ध क्रियाकलापों का स्पष्ट उल्लेख किया जाय।

(3) इस पाठ्यक्रम में विद्यार्थियों की वैयक्तिक विभिन्नताओं की दृष्टि से मंद बुद्धि एवं कुशाग्रबुद्धि वाले विद्यार्थियों के लिये कोई प्रावधान नहीं रखा गया है जिसका

होना आवश्यक है। पाठ्यवस्तु एवं क्रियाकलापों में इसका निर्देश किया जाना चाहिए।

(4) वर्तमान पाठ्यक्रम अब भी परीक्षा से नियंत्रित है। सतत समग्र आन्तरिक मूल्यांकन तथा अर्धवार्षिक एवं वार्षिक परीक्षाओं में लिखित की अपेक्षा व्यावहारिक क्रियाकलापों के मूल्यांकन को उचित महत्त्व दिया जाय।

(5) पाठ्यक्रम की समस्त पाठ्यवस्तु को लोकतंत्रीय सिद्धान्तों के अनुरूप तथा जीवन से सम्बद्ध करने का प्रयास किया जाना चाहिए। अधिकांश प्रकरण सैद्धांतिक, एवं किताबी ज्ञान पर बल देते हैं जबकि सभी प्रकरणों में वांछित ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल के विकास को महत्त्व दिया जाना चाहिए।

(6) पाठ्यक्रम का गठन पूर्व उल्लिखित सिद्धांतों के अनुसार सावधानी से किया जाय। समन्वय के सिद्धान्त के पाठ्यक्रम के आधार पर पाठ्यक्रम में पूर्व तथा आगामी कक्षाओं की पाठ्यवस्तु से समन्वय किया जाना अपेक्षित है।

□□□

6 | नागरिकशास्त्र-शिक्षण : परम्परागत विधियां

नागरिकशास्त्र की संकल्पना, महत्त्व, उसके शिक्षण उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम के विवेचन के पश्चात् यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि इन उद्देश्यों तथा उन पर आधारित पाठ्यक्रम से विद्यार्थियों को प्रभावी अधिगम किस प्रकार हो अर्थात् शिक्षक इस पाठ्यक्रम को किस विधि से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करे जिससे पाठ्यवस्तु के माध्यम से निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि हो सके। नागरिकशास्त्र के सन्दर्भ में शिक्षण-विधि की आवश्यकता, महत्त्व, विकास-क्रम, अर्थ एवं वर्गीकरण पर विचार करते हुए परंपरागत शिक्षण-विधियों का विवेचन आवश्यक है।

शिक्षण-विधि की आवश्यकता एवं महत्त्व

मुनेश्वर प्रसाद के शब्दों में—'शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये, जो भोजन और मकान के उद्देश्यों से कहीं दुरूह तथा पेचीदे हैं, केवल अच्छे शिक्षाक्रम का आयोजन पर्याप्त नहीं। शिक्षा क्रम हमें केवल उन सामग्रियों को उपलब्ध कराता है, जिनके सहारे हम अपने उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। किन्तु इन सामग्रियों का उपयोग कैसे किया जाय, ताकि वे ज्ञान प्राप्ति के साधन बन सकें। इसकी जानकारी बहुत जरूरी है। शिक्षण-विधि शिक्षा की सामग्रियों के उपयोग तक ही सीमित नहीं, बल्कि इनकी आवश्यकता इससे भी बढ़ कर है।'[1]

शिक्षण-उद्देश्यों का विवेचन करते समय शिक्षा-प्रक्रिया के त्रिकोण द्वारा इसके तीन घटकों—(1) शिक्षा-उद्देश्य, (2) शिक्षण-अधिगम स्थितियां तथा (3) मूल्यांकन-की परस्पर अंतर्निर्भरता स्पष्ट की जा चुकी है। दूसरे घटक शिक्षण-अधिगम स्थितियों को ही शिक्षण-विधि की संज्ञा दी गई है। पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों एवं उन पर आधारित पाठ्यक्रम का प्रभावी शिक्षण करने हेतु शिक्षक-विद्यार्थी क्रियाकलापों का आयोजन किया जाता है ताकि शिक्षण के पश्चात् मूल्यांकन द्वारा उद्देश्यों एवं शिक्षण-विधि की उपयुक्तता, विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों की उपलब्धि से यह जानी जाती है। यदि इन तीन घटकों पर परस्पर अंतःक्रिया द्वारा किसी एक घटक में कमी पाई जाती है तो

1. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन का शिक्षण, पृ० 61

उसमें आवश्यक परिवर्तन, परिवर्धन एवं संशोधन किये जाते हैं। इस प्रकार शिक्षा-क्रिया में शिक्षण-विधि एक आवश्यक घटक होने के कारण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

उपर्युक्त अंतर्निर्भरता के आधार पर शिक्षण-विधि तथा शिक्षक, शिक्षा-प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा है कि सर्वोत्तम पाठ्यक्रम की समुचित शिक्षण-विधि एवं योग्य शिक्षकों के अभाव में निर्जीव हो जाता है।[2] कोठारी शिक्षा आयोग ने पाठचर्या, शिक्षण-विधि एवं मूल्यांकन के अंतःसम्बन्ध को प्रभावी बनाने हेतु इनमें निरन्तर सुधार की ओर संकेत करते हुए कहा है कि 'पाठचर्या को सतत गहन बनाने की आवश्यकता है। इस आवश्यकता का शिक्षण-पद्धति और मूल्यांकन में निरन्तर सुधार की तात्कालिक आवश्यकता से गहरा सम्बन्ध है।'[3] नागरिक शास्त्र-शिक्षण की प्रक्रिया में भी उद्देश्यों की उपलब्धि हेतु शिक्षण-विधि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार नागरिक शास्त्र के 'नागरिकों के गुण'—प्रकरण हेतु निर्दिष्ट उद्देश्य—'विद्यार्थियों में सहयोग, सद्भाव, सेवा, कर्त्तव्य-पालन आदि गुणों के विकास' के कथन-मात्र से उनकी उपलब्धि नहीं होती बल्कि विद्यार्थियों के अनुकूल शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण अर्थात् उपयुक्त शिक्षण-विधि के द्वारा ही संभव होगी जिसे उद्देश्य एवं मूल्यांकन की दृष्टि से निरन्तर संशोधित कर गतिशील एवं प्रभावी बनाये रखना आवश्यक है।

शिक्षण-विधि का अर्थ : परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पनाएं

(क) परम्परागत संकल्पना—शिक्षण विधि में तीन तत्त्व निहित हैं—शिक्षक, पाठ्यक्रम (पाठ्यवस्तु) तथा विद्यार्थी। इन तीनों तत्त्वों में शिक्षक विधि का संचालक या आयोजक होने के कारण प्रमुख है। शिक्षक इन तत्त्वों में किसको प्रमुखता देता है, इस तथ्य पर शिक्षण-विधि की संकल्पना एवं अर्थ निर्भर करते हैं। प्राचीन एवं मध्य काल में प्रथम दो तत्त्वों—शिक्षक एवं पाठ्यक्रम या पाठ्यवस्तु-को प्रमुखता दी गई। अतः शिक्षण प्रक्रिया में या तो शिक्षक प्रमुख बन गया या पाठ्यवस्तु। विद्यार्थी को गौण स्थान देकर उसकी उपेक्षा की गई। अतः परम्परागत संकल्पना में शिक्षण-विधि मात्र ज्ञान को सूचना या तथ्यों के रूप में देने का एक साधन था जिसे शिक्षक मौखिक या पुस्तक के माध्यम से विद्यार्थियों को हस्तान्तरित करता था और विद्यार्थी उस सूचनात्मक ज्ञान को बिना सोचे-समझे कंठस्थ कर परीक्षा में शब्दशः प्रस्तुत कर देते थे। इस परम्परागत संकल्पना के अनुकूल उपयुक्त शिक्षण-विधियाँ—व्याख्यान विधि, पाठ्यपुस्तक विधि, कहानी कथन विधि तथा प्रश्नोत्तर विधि थी। इन विधियों में निर्धारित पाठ्यक्रम को शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष मंत्रवत् प्रस्तुत कर देता था। स्पष्ट है कि इन विधियों का उद्देश्य तथ्यात्मक ज्ञान को रट कर उसी रूप में उसे पुनः प्रस्तुत करना था। शिक्षार्थियों की व्यवहारगत परिवर्तन, अभिरुचि एवं आवश्यकताओं से इनका कोई संबंध नहीं था तथा एक अधिनायक के रूप में शिक्षक के कठोर अनुशासन में शिक्षार्थी शिक्षक द्वारा प्रदत्त ज्ञान का अंधानुकरण करते थे।

---

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1952-53), अंग्रेजी संस्करण, पृ० 102
3. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ० 25।

अतः शिक्षण-विधि का परम्परागत अर्थ पाठ्यवस्तु को तथ्यात्मक रूप में प्रस्तुत करना था। नागरिकशास्त्र शिक्षण में भी यही विधि लंबे समय तक अपनाई जाती रही है तथा वर्तमान में भी अधिकांश शिक्षक परीक्षा के दृष्टिकोण से इसी विधि का प्रयोग कर रहे हैं। नेमियाह के शब्दों में[4]—'यह आम प्रथा है कि पाठ्यपुस्तक अध्यायक्रम में पढ़ ली जाती है तथा पढ़ते समय शिक्षक द्वारा आँखों देखा हाल की भाँति टिप्पणी दी जाती है। कभी-कभी शिक्षक स्वयं पठित दूसरी पुस्तकों से एकत्रित नोट लिखकर विद्यार्थियों का ज्ञानवर्धन करते हैं।....नये शिक्षक व्याख्यान विधि का प्रयोग करते हैं, किन्तु उच्च कक्षाओं या विश्व विद्यालयों में सीखे हुए अपने ज्ञान-भार को वे अपरिपक्व मस्तिष्क के विद्यार्थियों पर उतार कर रखने का लोभ संवरण नहीं कर सकते। परम्परागत शिक्षण-विधियाँ भी आधुनिक संकल्पना के अनुरूप प्रयुक्त किये जाने पर उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

(ख) आधुनिक संकल्पना

मनोविज्ञान एवं शिक्षा के क्षेत्र में हुए अनुसंधानों एवं प्रयोगों के फलस्वरूप शिक्षण-विधि को पूर्व चर्चित शिक्षा-प्रक्रिया की त्रिकोणात्मक अंतर्निर्भरता के आधार पर शिक्षण-उद्देश्य एवं मूल्यांकन के समान ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। वस्तुतः शिक्षा-प्रक्रिया में उद्देश्यों की उपलब्धि का साधन तथा मूल्यांकन का आधार होने के कारण शिक्षण-विधि का केन्द्रीय एवं सर्वाधिक महत्त्व है। नवीन संकल्पना के अनुसार शिक्षण-विधि की परिभाषा देते हुए वैसले ने कहा है कि शिक्षा में विधि शब्द का प्रयोग शिक्षक द्वारा संचालित उन क्रम-बद्ध क्रियाकलापों को प्रकट करता है जिनके फलस्वरूप छात्रों में अधिगम होना है।[5] अतः शिक्षण विधि द्वारा निर्धारित उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम की उपलब्धि हेतु 'शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण शिक्षक करता है। परम्परागत सूचनात्मक ज्ञान के हस्तान्तरण के विपरीत शिक्षण-विधि को माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इन शब्दों में परिभाषित किया है, 'विधि मात्र कुछ सूचनात्मक तथ्यों को विद्यार्थियों तक संचारित करने की युक्ति नहीं है और न यह केवल उस अध्यापक का दायित्व है जो (ज्ञान) प्रदान करने के सिरे पर स्थित है। कोई भी अच्छी या बुरी विधि अध्यापक को अपने विद्यार्थियों से समग्र रूप से सतत परस्पर सम्बन्धों द्वारा जोड़ती है तथा वह विद्यार्थियों के केवल मस्तिष्क पर ही नहीं अपितु उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रतिक्रिया करती है।'[6]

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षण-विधि अब परम्परागत अर्थ में मात्र सूचनात्मक ज्ञान देने का यांत्रिक साधन नहीं है बल्कि यह पूर्व निर्धारित वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों तथा विद्यार्थी के समग्र व्यक्तित्व के विकास हेतु उपयुक्त शिक्षण-अधिगम स्थितियों का आयोजन एवं संचालन है। शिक्षण-विधि की आधुनिक संकल्पना में शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों क्रियाशील रहते हैं—अध्यापक पथ-प्रदर्शक के रूप में कार्य करता

---

4. नेमियाह. के. : सोशल स्टडीज इन द स्कूल्स, अंग्रेजी संस्करण, पृ० 69
5. वैस्ले : टीचिंग द सोशल स्टडीज़ इन हाई स्कूल्स, अंग्रेजी संस्करण, पृ० 422
6. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, अंग्रेजी संस्करण, पृ. 102

है तथा विद्यार्थी क्रियाकलापों में सक्रिय भाग लेकर अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर अधिगम या ज्ञानार्जन करते हैं। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित दस वर्षीय विद्यालय शिक्षा-क्रम में स्पष्ट कहा गया है कि शिक्षा-प्रक्रिया में शिक्षक-शिक्षार्थी क्रियाकलाप तथा उनका सगठन महत्वपूर्ण है। इनकी समुचित परिकल्पना एवं प्रभावी सचालन से पाठ्य-क्रम के उद्देश्यों की उपलब्धि होना आवश्यक है। विद्यार्थी की प्रकृति एव पृष्ठभूमि एव स्थानीय परिस्थितियों व उपलब्ध संसाधनों को दृष्टिगत रखते हुए अधिगम-स्थितियों का इस प्रकार निर्माण करना है कि वांछित अधिगम परिवर्तन उपलब्ध हो सकें। ये स्थितियाँ कक्षागत एव कक्षाबाह्य दोनों हो सकती हैं।""शिक्षक की भूमिका आदेश प्रदान करना नहीं अपितु परामर्श प्रस्तुत करना होगी।[7] इस प्रकार आधुनिक अर्थ में शिक्षण-विधि अत्यन्त व्यापक, मनोवैज्ञानिक एव वस्तुनिष्ठ प्रक्रिया बन गई है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण की विधि भी इसी नवीन संकल्पना के अनुकूल समायोजित की जानी अपेक्षित है। शिक्षण-विधि के विकास-क्रम का संक्षिप्त सर्वेक्षण इस दिशा में उचित रहेगा जिससे कि परम्परागत विधियों की पृष्ठभूमि समझी जा सके।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण की विधियों का विकासक्रम

नागरिकशास्त्र का शिक्षण काफी समय से विद्यालयों में किया जा रहा है किन्तु अभी तक इस विषय का शिक्षण प्राय परम्परागत विधि से ही होता है। यह परम्परा काफी प्राचीन रही है। भारत में वैदिक काल से ही वेद, पुराण, स्मृति, महाकाव्य, धर्म आदि के ग्रन्थों में राजा व प्रजा (नागरिक) के कर्त्तव्य एव अधिकारों का अध्ययन-अध्यापन मौखिक व्याख्यान विधि या आरण्यक या गुरु-शिष्य सवाद विधि से होता था। जब हस्तलिखित ग्रन्थ उपलब्ध होने लगे तो इनकी विधि ग्रन्थ-पाठन पर आधारित होने लगी। उपनिषदों से अध्ययन-अध्यापन की प्रश्नोत्तर विधि अपनाई गई। प्राचीन काल में तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला, उज्जैन तथा अन्य बौद्ध शिक्षा-केन्द्रों में ये ही तीन शिक्षण-विधियाँ—व्याख्यान, कथा, (ग्रन्थ) एव प्रश्नोत्तर विधियाँ—लोकप्रिय थी। पाश्चात्य देशों में भी यही स्थिति रही। प्लेटो (427–347 ईसा पूर्व) ने छोटे बालकों के शिक्षण हेतु कहानी-कथन पद्धति का सुझाव दिया था। बाद में कार्लाइल ने इस पद्धति को जीवन गाथा पद्धति का रूप दिया। महापुरुषों के जीवन द्वारा चारित्रिक गुणों की शिक्षा दी जाने लगी। सुकरात ने प्रश्नोत्तर शैली में शिक्षण की विधि का प्रचलन किया। व्याख्यान विधि तो मध्यकाल तक पाश्चात्य विश्वविद्यालयों एवं विद्यालयों में प्रचलित रही। इन सभी पद्धतियों का उद्देश्य केवल तथ्यात्मक ज्ञान प्रदान करना तथा विद्यार्थियों को परीक्षा में उन तथ्यों को प्रस्तुत कर उत्तीर्ण कराना रहा है।

आधुनिक काल में कुछ शिक्षा-शास्त्रियों ने इस परम्परागत शिक्षण विधियों का विरोध कर शिक्षण-प्रक्रिया में बालक को प्रमुख स्थान दिया तथा क्रियाकलापों के माध्यम

7. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम—एक रूपरेखा : शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (अंग्रेजी संस्करण) पृ० 32

से अनुभव प्राप्त करने पर बल दिया। रूसो ने सर्वप्रथम अपने ग्रन्थ 'एमील' में इस नवीन धारणा का सूत्रपात किया जिसे अन्य पाश्चात्य शिक्षाविदों—पेस्तालॉजी, हर्बर्ट, हेलेन पार्गस्ट, स्टेवेंसन, किल्पैट्रिक, जॉन डिवी आदि ने विकसित किया। अनेक शैक्षणिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों एवं प्रयोगों से शिक्षण-विधि में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए तथा इसकी आधुनिक सकल्पना का उदय हुआ। इस संकल्पना के आधार पर अनेक विकासमान विधियों का प्रवर्तन किया गया। विदेशों में इन विकासमान पद्धतियों को अपनाया जा रहा है किन्तु भारत में अभी इस दिशा में कोई विशेष उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण विधियों की वर्तमान स्थिति एवं परिवर्तन की आवश्यकता

(क) वर्तमान स्थिति—वर्तमान में देश के अधिकाश विद्यालयों में नागरिकशास्त्र-शिक्षण की परम्परागत विधियाँ प्रचलित हैं जबकि, विदेशों में विकासमान विधियों का प्रचलन काफी समय पूर्व से हो गया है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा है कि कई कार्यरत स्कूलों के प्रेक्षण तथा अनुभवी शिक्षाविदों की साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रचलित शिक्षण विधियाँ अब भी परम्परागत तौर-तरीके से नियन्त्रित हैं। अब भी रटने पर काफी जोर दिया जा रहा है तथा शिक्षण जीवन से सम्बद्ध नहीं है, और न मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति के गिरते हुए स्तर को रोकने का कोई निश्चित उपाय किया गया है।[8] नागरिकशास्त्र-शिक्षण भी अन्य विषयों की भांति व्याख्यान, पाठ्यपुस्तक तथा प्रश्नोत्तर जैसी परम्परागत विधियों से किया जा रहा है। नागरिकशास्त्र का उद्देश्य लोकतान्त्रिक व्यवस्था के लिये योग्य नागरिकों का निर्माण करना है जो सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के ज्ञान के साथ इनकी गतिविधियों में सक्रिय भाग ले सकें तथा अपना योगदान कर सकें।

परिवर्तन की आवश्यकता—माध्यमिक शिक्षा आयोग ने ही इस स्थिति में तुरन्त सुधार लाने की दिशा में प्रयास करने पर बल दिया है तथा प्रभावी शिक्षण-विधि के निम्नांकित तत्त्व प्रकट करते हुए उन्हें अपनाने का सुझाव दिया है।[9]

नागरिकशास्त्र-शिक्षण विधियों के आवश्यक तत्त्व

(1) शिक्षण विधि तथा शिक्षण उद्देश्यों का सामंजस्य—उद्देश्यनिष्ठ शिक्षा पर आधारित शिक्षण-उद्देश्यों के अनुकूल विद्यार्थियों के व्यवहार के तीनों पक्षों—ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक में वांछित परिवर्तनों की उपलब्धि हेतु शिक्षण-विधि का चुनाव एवं क्रियान्वयन किया जाय। केवल ज्ञानात्मक उद्देश्य की पूर्ति हेतु ही नहीं बल्कि अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल सम्बन्धी उद्देश्यों की उपलब्धि हेतु भी शिक्षण-विधि की प्रक्रिया को प्रभावी बनाना है।

---

8. उपर्युक्त, पृ० 105
9. उपर्युक्त, पृ० 103 से 109

(2) स्वक्रिया द्वारा अधिगम—आयोग ने विद्यार्थियों को स्वक्रिया द्वारा अधिगम करने में सहायक शिक्षण-विधि को उत्तम माना है। बालकों में कार्य करने की अभिवृत्ति जागृत कर उन्हें व्यक्तिगत प्रयास द्वारा ज्ञानार्जन करने योग्य बनाना है। आयोग के शब्दों में सभी शिक्षण-विधियों की प्रमुख विशेषता यह होनी चाहिए कि वे कार्य के प्रति प्रेम विकसित करें तथा उस कार्य को अधिकाधिक कार्य-कुशलता से सम्पन्न करने योग्य बनायें। विधियों के सुधारों में यह परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगत हो कि प्रत्येक विद्यार्थी को व्यक्तिगत सक्रिय प्रयास द्वारा ज्ञानार्जन योग्य बनाया जाता है। दूसरे शब्दों में क्रियाशीलन प्रधान शिक्षण विधियाँ' ही प्रभावी होती हैं। इसके लिए नागरिकशास्त्र के विषय-वस्तु को विभिन्न 'प्रायोजनाओं' में विभाजित कर पढ़ाया जाना उपयोगी है।

(3) स्पष्ट चिन्तन की क्षमता—आयोग का मत है कि बौद्धिक दृष्टि से अच्छी शिक्षण विधि का महत्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में स्पष्ट चिन्तन की क्षमता विकसित करना है। अधिकांश विद्यार्थियों का माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा ही उपलब्ध हो पाती है, अतः इस स्तर पर इस क्षमता का विकास किया जाना उन्हें एक कुशल नागरिक बनाने में सहायक हो सकेगा।

(4) स्वस्थ अभिरुचियों का विकास—शिक्षण विधि विद्यार्थियों के स्वस्थ अभिरुचियों का विकास कर उन्हें सुसज्जित नागरिक बनाने में सहायक होती है। ये अभिरुचियाँ, रुचि कार्य एवं रचनात्मक कार्य कक्षान्तर्गत एवं कक्षाबाह्य दोनों प्रकार के हो सकते हैं। नागरिकशास्त्र-शिक्षण की अच्छी विधियाँ विद्यार्थियों में विभिन्न क्रियाकलापों, प्रायोजनाओं एवं सामुदायिक विकास कार्यों के माध्यम से इनका विकास कर सकती है।

(5) विभिन्न बौद्धिक स्तरों के अनुकूल विधियों का समायोजन—आयोग के अनुसार 'क्रियाशीलन प्रधान शिक्षण-विधियाँ ही उत्तम हैं, क्योंकि ये विद्यार्थियों को स्वतन्त्र कार्य करने का अवसर देती हैं। इन क्रियाशीलन युक्त विधियों से विद्यार्थियों को उनके बौद्धिक स्तर के अनुसार विभिन्न वर्गों में विभाजित कर अपनी क्षमता एवं गति के अनुरूप प्रगति करने का अवसर दिया जाता है। नागरिकशास्त्र-शिक्षण में प्रायोजना जैसी विधि इस दृष्टि से उचित रहती है किन्तु अन्य विधियों में भी इसका प्रावधान किया जा सकता है।

(6) व्यक्तिगत एवं वर्ग कार्य का संतुलन—अच्छी शिक्षण विधियों में योग्य शिक्षण के मार्गदर्शन में विद्यार्थियों के व्यक्तिगत एवं वर्ग-कार्य में सतुलन रखा जा सकता है। वर्ग कार्य में ही विद्यार्थी इस संतुलन द्वारा अच्छे नागरिक की वांछित विशेषताओं जैसे सहयोग, अनुशासन, नेतृत्व आदि का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकता है। आयोग ने सुझाव दिया है कि नागरिकशास्त्र जैसे विषयों के पाठ्यक्रम को स्थानीय समुदाय के परिवेश में प्रायोजनाओं में विभक्त कर पढ़ाया जाना चाहिए।

(7) उत्प्रेरणा आधारित अधिगम—राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने दस वर्षीय स्कूल पाठ्यक्रम में कहा है कि 'शिक्षण का प्राथमिक कार्य पर्यावरण का इस प्रकार उपयोग किया जाना है जिससे बालकों को अधिगम की उत्प्रेरणा मिले।.... विद्यार्थियों के समक्ष समस्याएं एवं स्थितियां इस प्रकार प्रस्तुत की जायें जिनमें वह अपने

अर्जित ज्ञान का उपयोग कर सफलता की संतुष्टि प्राप्त कर सकें और उसमे अपने ज्ञान एवं कौशल का विकास कर सकें।[10] नागरिकशास्त्र शिक्षण मे प्राथमिक कक्षाओं मे पर्यावरण-अध्ययन तथा उच्च कक्षाओं मे प्रयोजना व समस्या विधियों का प्रयोग कर विद्यार्थियों को अधिगम हेतु उत्प्रेरित किया जा सकता है तथा उनमें क्रियाशीलन द्वारा अच्छे नागरिक के उपयुक्त ज्ञान एवं कौशल का विकास हो सकता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण की विधियों को मुख्यतः दो वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है—

(क) परम्परागत शिक्षण-विधियां तथा

(ख) विकासमान शिक्षण विधियां।

नागरिकशास्त्र शिक्षण की विधियों का वर्गीकरण

नागरिकशास्त्र-शिक्षण की परम्परागत विधियो के निम्नांकित प्रचलित प्रकारों का विवेचन करेंगे—

(1) कहानी कथन विधि'

(2) व्याख्यान विधि,

(3) पाठ्य-पुस्तक विधि,

(4) प्रश्नोत्तर विधि,

(1) कहानी कथन विधि

(क) विधि-प्रक्रिया—शिक्षण की कहानी कथन विधि का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है। विशेषत: छोटी आयु के अर्थात् प्राथमिक स्तर के बालकों के लिये यह अधिक उपयुक्त है। दीक्षित एवं बघेला के शब्दों मे–'बिना उपकरणों का सहारा लिये सबसे अधिक व्यवहृत विधि जो आज भी विद्यालयो में दृष्टिगत होती है कहानी विधि है। कहानी मे बालक को प्रारम्भ से ही रुचि होती है और यदि इस विधि को ठीक प्रकार से उपयोग मे लिया जाय तो अपनी सीमाओं के बावजूद बहुत उपादेय है।[11] छोटी कक्षाओं में इतिहास शिक्षण के लिए तो यह प्रभावी विधि मानी जाती है किन्तु नागरिकशास्त्र के शिक्षण में भी यह उपयोगी हो सकती है। इस विधि मे शिक्षक अध्याप्य प्रकरण को अपनी सरल, सुबोध एवं रोचक भाषा-शैली मे कहानी के रूप मे प्रस्तुत करता है। कहानी को दो या तीन इकाइयों में विभक्त कर प्रत्येक इकाई के पश्चात् विद्यार्थियों से प्रश्नोत्तर कर उनके ज्ञानार्जन का मूल्यांकन करता है तथा उनकी रुचि एवं अवधान को बनाये रखता है। कहानी को उपलब्ध चित्रों से और भी रोचक बनाया जा सकता है।

(ख) नागरिकशास्त्र शिक्षण में विधि का अनुप्रयोग—प्राथमिक कक्षाओं मे यद्यपि नागरिकशास्त्र 'सामाजिक अध्ययन' विषय के साथ समन्वित कर पढ़ाया जाता है तथा 'पर्यावरण-अध्ययन' के रूप मे उसे स्थानीय समुदाय से सम्बद्ध किया जाता है, फिर भी इन

---

10. दसवर्षी स्कूली पाठ्यक्रम, प्रसंस्करण, पृ. 33

11. उपेन्द्रनाथ दीक्षित एवं हेतसिंह बघेला : इतिहास-शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृ. 61

कक्षाओं में नागरिक के लिए उपयुक्त शिष्टाचार के नियम एवं गुणों का अवबोध कराने के लिये कहानी कथन-विधि प्रभावी रहती है। भावी नागरिक के अपेक्षित गुण-सहयोग, साहस, वीरता, देश-प्रेम, धर्म-निरपेक्षता, राष्ट्रीय भावात्मक एकता, ईमानदारी, कर्त्तव्यपरायणता आदि की अमूर्तता के कारण तथा इनके प्रशिक्षण के अनुकूल क्रियाकलापों एवं संसाधनों के अभाव में इन गुणों का अवबोध इनसे सम्बद्ध उपयुक्त महापुरुषों की कहानियों से कराया जा सकता है। जैसे महाराणा प्रताप व शिवाजी वीरता के लिये, पन्नाधाय व भामाशाह त्याग व बलिदान के लिये, महात्मा गांधी देश-प्रेम, धर्मनिरपेक्षता एवं सत्यनिष्ठा के लिये। ऐसे महापुरुषों एवं उनके गुणों की कहानियाँ 'नागरिक के गुण' प्रकरण के लिये सर्वथा उपयुक्त हैं। कहानी कथन-विधि के लिये ऐतिहासिक, पौराणिक, नैतिक एवं स्थानीय समुदाय से सम्बन्धित कहानियों का चुनाव किया जा सकता है।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं उपयोग में सावधानियाँ—इस विधि को लाभ व गुणों की दृष्टि से देखा जाय तो यह कम आयु के बालकों की कल्पनाशील एवं जिज्ञासावृत्ति के सर्वथा अनुकूल है, इससे बालकों की सर्जनात्मक शक्ति का विकास होता है, इसके उपयोग में उपकरणों की आवश्यकता नहीं जिससे यह कम खर्चीली है तथा बालकों में सद्‌गुणों के विकास में सहायक है।

इस विधि के दोष इसके प्रयोग में निहित हैं। यह बड़ी कक्षाओं के लिये अनुपयुक्त है, कहानी कथन शैली की क्षमता से रहित शिक्षक द्वारा प्रयोग से यह अप्रभावी तथा हास्यास्पद भी बन जाती है, कहानी के गलत तथ्यों के कारण भ्रांति उत्पन्न होने की आशंका रहती है। कहानी में कल्पना के तत्त्व की अतिरंजना से इसके अवास्तविक व अविश्वसनीय हो जाने का खतरा रहता है तथा कहानी कथन की नीरसता के कारण बालकों के निष्क्रिय होने का डर भी बना रहता है।

अतः उपर्युक्त दोषों के निराकरण एवं इसके गुणों से लाभान्वित होने के लिए शिक्षक को कहानी-कथन की क्षमता विकसित करने, कहानियों के प्रकरण के अनुकूल उचित चुनाव करने, छोटी कक्षाओं में ही प्रयोग करने तथा कहानी के मध्य प्रश्नोत्तर व चित्रों का उपयोग कर उसे रोचक बनाने एवं बालकों को सक्रिय रखने की सावधानियाँ रखनी चाहिए।

(2) व्याख्यान विधि

(क) विधि प्रक्रिया—जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि व्याख्यान विधि का प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है। पश्चिमी देशों में तो मध्य युग तक इसका उपयोग विद्यालयों तथा विश्व-विद्यालयों में होता रहा। वर्तमान में इसका प्रचलन महाविद्यालयों एवं विश्व-विद्यालयों में तो होता ही है किन्तु अधिकांश विद्यालयों में भी इसका परम्परागत उपयोग किया जा रहा है। इस विधि में शिक्षक व्याख्यान प्रकरण की पूर्व तैयारी पाठ्य-पुस्तक तथा अन्य सहायक पुस्तकों से करता है। सुचयनित पाठ्यवस्तु को वह उचित इकाइयों में विभाजित कर कक्षा में विद्यार्थियों के समक्ष व्याख्यान या भाषण के रूप में प्रस्तुत करता है। विधि के प्रयोग में शिक्षक अपनी भाषा-शैली एवं अभिव्यक्ति को प्रभावी बनाने का प्रयास करता है, विद्यार्थियों को मानसिक रूप से सक्रिय रखने के लिये व्याख्यान के मध्य या अन्त में प्रश्नोत्तर कर शंका समाधान करता है, उपलब्ध शिक्षण-

उपकरणों जैसे मानचित्र, चार्ट आदि का उपयोग कर व्याख्यान को रोचक एवं बोधगम्य बनाता है तथा व्याख्यान की रूपरेखा सारांश देने के लिये श्यामपट्ट का प्रयोग भी करता है। यह विधि छोटी कक्षाओं के उपयुक्त नहीं है। इसे माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक कक्षाओं के अनुकूल बनाया जा सकता है। विवरणात्मक, तथ्यात्मक एवं क्लिष्ट प्रकरणों के लिये यह विधि उपयुक्त है।

(ख) नागरिकशास्त्र शिक्षण मे इसका अनुप्रयोग—नागरिकशास्त्र शिक्षण की यद्यपि क्रियाशीलन प्रधान विधि ही अधिक उपयुक्त है तथापि माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक कक्षाओं मे कुछ विवरणात्मक एवं तथ्यात्मक प्रकरणों मे इसका प्रयोग यदि सावधानी से किया जाय तो उपयोगी रहता है। नागरिकशास्त्र के ये प्रकरण हैं—नागरिकशास्त्र अध्ययन का महत्त्व, व्यक्ति, समाज व राज्य के पारस्परिक सम्बन्ध, राज्य के तत्त्व, राज्य की उत्पत्ति के सिद्धात, भारतीय संविधान की विशेषताएं, संयुक्त राष्ट्र संघ का परिचय, आधुनिक भारत की समस्याएं आदि। इन प्रकरणो में क्रियाकलाप या स्थानीय सामुदायिक संसाधनों के आयोजन में कठिनाई होती है, अतः इनके शिक्षण मे व्याख्यान विधि का प्रयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकरणो मे इसका आंशिक प्रयोग, प्रस्तावना या पाठप्रेरणा के रूप में, किसी प्रकरण की रूपरेखा देने के लिये, विषय के स्पष्टीकरण के लिये, अन्य विधियो से अर्जित ज्ञान को परिपूरित करने या संकलित करने के लिये, समय की बचत हेतु, किसी पाठ की पृष्ठभूमि देने या उसके सिंहावलोकन करने हेतु किया जा सकता है। शाला पाठ्यक्रम तथा समय सारणी मे विषयों की संख्या अधिक होने व नागरिकशास्त्र को कम समय आवटित होने के कारण सभी प्रकरणों का विकासमान विधियो द्वारा पढ़ाया जाना सम्भव नहीं है, अतः व्याख्यान विधि का प्रयोग कुछ प्रकरणों में कर पाठ्यक्रम सत्र में पूरा किया जा सकता है। जिस प्रकरण को इस विधि से पढाने के लिये चुना जाय उसके शिक्षण मे व्याख्यान की प्रभावोत्पादकता व रोचकता तथा विद्यार्थियों की रुचि, अवधान एवं यथासंभव मानसिक सक्रियता को बनाये रखने का प्रयास किया जाय।[12]

(ग) व्याख्यान विधि के गुण-दोष एवं उपयोग में सावधानियाँ—गुणों एव उपादेयता की दृष्टि से व्याख्यान विधि का प्रयोग पाठ्यवस्तु के स्पष्टीकरण, समय की बचत, सुनकर सीखने के अनुभव, शिक्षक के व्यक्तित्व से प्रेरित होने तथा तर्क-शक्ति के विकास मे अधिक सहायक हो सकता है। अन्य परम्परागत विधियों की अपेक्षा व्याख्यान विधि अधिक उपयोगी है। पाठ्य-पुस्तक की अपेक्षा प्रत्यक्ष शिक्षक के सम्पर्क से अधिक सरलता से ज्ञानार्जन करना, कहानी-कथन की अपेक्षा अधिकाधिक शक्तियों का विकास करना तथा प्रश्नोत्तर विधि की अपेक्षा कम समय में अधिक स्पष्टता व सरलता से तथ्यों से अवगत होना व्याख्यान शैली मे सम्भव है।

दोषों की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि इस विधि में विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता बन कर रह जाते हैं, उन्हें क्रियाशीलन द्वारा सीखने का अवसर नहीं मिलता। किन्तु पी० एन० अवस्थी का मत है कि यदि विद्यार्थी कक्षा मे निष्क्रिय बैठे कोई बातें सुन रहे हैं तो

12. गुरुशरण दास त्यागी : नागरिकशास्त्र शिक्षण पृ. 73

इसका यह तात्पर्य नही है कि उनके मस्तिष्क भी निष्क्रिय हैं।[13] शिक्षक की योग्यता एवं क्षमता पर इस विधि का सफलता निर्भर रहती है। अयोग्य शिक्षक की व्याख्यान विधि नीरस, अरुचिकर एवं दुर्बोध बन कर विद्यार्थियो मे विषय के प्रति विपरीत अभिवृत्ति विकसित करती है। इस विधि मे विषय के सैद्धांतिक पक्ष पर बल अधिक दिया जाता है, व्यावहारिक पक्ष उपेक्षित रहता है। शिक्षक की प्रमुखता के कारण यह विधि अमनोवैज्ञानिक एवं अप्रजातान्त्रिक भी है। विद्यार्थियो को व्याख्यान के मध्य मानसिक रूप से सक्रिय रखने हेतु प्रश्नोत्तर एवं शिक्षण उपकरणों के अभाव मे यह विधि विद्यार्थियो के अवधान को बनाये रखने मे असमर्थ रहती है। ये दोष व्याख्यान विधि के गलत प्रयोग के कारण ही होते हैं।

अत शिक्षक को इस विधि को प्रभावी बनाने हेतु विधि प्रक्रिया के बतलाये गये बिंदुओ पर ध्यान देना चाहिए। व्याख्यान के उपयुक्त प्रकरण का चुनाव, अच्छी तैयारी, व्याख्यान द्वारा प्रभावी सचरण प्रक्रिया, विद्यार्थियो को प्रश्नोत्तर एवं विचार विमर्श द्वारा सक्रिय रखना, शिक्षण उपकरणो का प्रयोग एवं कक्षा-सहयोग से श्याम-पट्ट सारांश का अकन आदि कुछ प्रमुख सावधानियो का इस विधि के प्रयोग मे ध्यान रखना वाछनीय है। वाईनिंग का कथन है 'कि यही एकमात्र व्यावहारिक विधि है जो बड़ी मात्रा मे कक्षाओ मे प्रयोग की जाती है और इसका वर्तमान समय मे विस्तृत रूप से प्रयोग होने का नि.सदेह प्रमुख कारण यही है।'[14]

(3) पाठ्यपुस्तक विधि

(क) विधि प्रक्रिया—यह विधि भी लेखन-कला व लिपि के आविष्कार के बाद प्राचीन काल से ही प्रचलित है। शिक्षण प्रक्रिया मे पाठ्यपुस्तक के प्रयोग के सबंध मे दो विरोधी मत हैं—एक मत के अनुसार इसका प्रयोग अमनोवैज्ञानिक, रूढ़िवादी एव हानिकारक है जबकि दूसरे मतानुसार यह पाठ्यपुस्तक शिक्षण का आधार होना चाहिए। वस्तुत इन दोनो मतो के मध्य का मार्ग ग्रहण करना ही उपयुक्त होगा। अर्थात् न तो पाठ्यपुस्तक को शिक्षण हेतु एकमात्र आधार ही माना जाय और न उसका पूर्णतः बहिष्कार ही किया जाय। इसे शिक्षक का अनुपूरक माना जा सकता है।[15] कोठारी शिक्षा आयोग ने कहा है कि—'एक ऐसी पाठ्यपुस्तक जो एक सुशिक्षित एव सुयोग्य विषय-विशेषज्ञ द्वारा लिखी गई हो और जिसके निर्माण मे मुद्रण स्तर, चित्र एव सामान्य सज्जा के प्रति समुचित सावधानी बरती गई हो, छात्रो की रुचि को जगायेगी और अध्यापक के कार्य मे पर्याप्त सहायक सिद्ध होगी।'[16] अत: अच्छी पाठ्यपुस्तक तथा इस पर आधारित शिक्षण आज भी उपयोगी माना जाता है।

---

13. पी० एन० अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण विधि पृ. 72
14. वाईनिंग एण्ड वाईनिंग : टीचीग द् सोशल स्टडीज इन सैकण्डरी स्कूल अं. सस्करण
15. द टीचिंग ऑफ हिस्ट्री, प्र सस्करण, पृ० 46
16. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ० 256 व 258

पाठ्य-पुस्तक विधि की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए वैस्ले ने बतलाया है कि 'पाठ्यपुस्तक विधि का आवश्यक लक्ष्य पाठ्यपुस्तक में दी गई विभिन्न सूचनाओं को समझना है। यह अनुपयुक्त और कम महत्वपूर्ण उद्देश्य की ओर इंगित नहीं करती बल्कि इसका अर्थ कोई ऐसी प्रक्रिया में है जो पाठ्यपुस्तक के चारों ओर वैसी ही घूमती है जैसे अन्य प्रक्रिया प्रयोगशाला अथवा समस्या के चारों ओर घूमती है।' पाठ्यपुस्तक विधि के अनेक रूप हैं जो शनैः शनैः विकसित हुए हैं—(1) प्राचीन काल में पाठ्यपुस्तक को तथ्यों को रटने का आधार माना गया था, (2) शिक्षक द्वारा आवंटित पाठ्यपुस्तक के अंश का विद्यार्थी पठन करते हैं और बाद में उसके सारांश को प्रस्तुत करते हैं, (3) शिक्षक-शिक्षार्थी दोनों मिलकर कक्षा में पाठ्यपुस्तक का पठन करते हैं तथा शिक्षक कठिन अंशों की व्याख्या करता जाता है या विद्यार्थियों की शंका का समाधान करता रहता है। (4) एक पाठ्यपुस्तक के स्थान पर अनेक पाठ्य-पुस्तकों के अध्ययन द्वारा शिक्षक के निर्देशन में विद्यार्थी किसी प्रकरण का अध्ययन करते हैं। (5) परिवीक्षित अध्ययन विधि में शिक्षक के परिवीक्षण में विद्यार्थी पाठ्यपुस्तक के निर्धारित अंश पढ़ते हैं व बाद में विचार-विमर्श होता है। यह विकासमान या उन्नत विधि है। तथा इस विधि का ही अधिक प्रचलन है। इस विधि में किसी प्रकरण के विभिन्न अंशों को शिक्षक के मार्गदर्शन में विद्यार्थी सस्वर अथवा मौन पठन करते हैं, सस्वर वाचन विद्यार्थियों द्वारा एक-एक करके होता है जबकि मौन वाचन पूरी कक्षा ही एक साथ करती है। यह वाचन विभिन्न इकाइयों या अनुच्छेदों में किया जाता है जहाँ प्रत्येक इकाई के बाद प्रश्नोत्तरों द्वारा अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन किया जाता है। कठिन अंश जो छात्रों की समझ में नहीं आते उन्हें शिक्षक व्याख्या द्वारा स्पष्ट करता है तथा कालांश के अन्त में संपूर्ण पठित अंश का सारांश कक्षा-सहयोग से श्याम पट्ट पर अंकित करता है। पाठ्यपुस्तक वाचन के साथ-साथ पाठ को रोचक, सुबोध एवं संवर्धित बनाने के लिये शिक्षक व्याख्या व स्पष्टीकरण करता है जिसमें शिक्षण-सहायक सामग्री तथा अन्य पुस्तकों के तथ्यों का समुचित प्रयोग किया जाता है। गृह-कार्य हेतु पाठ्यपुस्तक के पठित अंश पर सारांश लिखने व प्रश्नों के उत्तर लिखने को कहा जाता है।

(ख) नागरिकशास्त्र-शिक्षण में विधि का अनुप्रयोग—वैसे तो नागरिकशास्त्र शिक्षण की कितनी ही नवीन-नवीन शिक्षण-विधियाँ ही उपयुक्त रहती हैं किन्तु स्वाध्याय एवं पठन की आदत का विकास करने हेतु इस विधि का प्रयोग भी उपयोगी रहता है। समय की बचत के लिये नागरिकशास्त्र के कुछ विवरणात्मक प्रकरणों का अध्ययन इस विधि से किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—'राज्य का ऐतिहासिक विकास', राजनैतिक दलों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि', लोक सेवा आयोग या चुनाव आयोग का गठन, कार्य एवं उत्तरदायित्व', 'आधुनिक भारत की प्रमुख समस्याएँ' आदि प्रकरण प्रायः इकाइयों वर्णनात्मक एवं विवरणात्मक प्रकृति के हैं, अतः इनके शिक्षण में इस विधि का प्रयोग उपयोगी रहता है। पाठ्यपुस्तक विधि का उपयोग अन्य विकासमान विधियों के पूरक रूप में, अर्जित तथ्यों को व्यवस्थित रूप से समझने व याद रखने, कठिन पाठ्यसामग्री के स्पष्टीकरण, किसी प्रकरण की पृष्ठभूमि अथवा आवृत्ति तथा अन्य विधियों से उपलब्ध ज्ञान के संवर्धन हेतु किया जाना उपयुक्त रहता है। किन्तु एक पाठ्य-पुस्तक की अपेक्षा अनेक पाठ्यपुस्तकों

एव संदर्भ पुस्तकों के आधार पर इस विधि का प्रयोग लाभप्रद होता है। नागरिक-शास्त्र शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य राष्ट्रीय भावात्मक एकता की भावना का विकास करना भी है। इस दृष्टि से समग्र देश के प्रति या समूची मानवता व विश्व के प्रति निष्ठा के विकास मे सहायक पाठ्यपुस्तक का पठन सकीर्ण निष्ठाओं—(अपने ग्राम, नगर, प्रदेश, राज्य, धर्म, जाति, सप्रदाय, भाषा आदि) से ऊपर उठने का सर्वोत्तम साधन है। कोठारी शिक्षा आयोग ने कहा है कि 'राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से प्रामाणिक रूप से सुरचित पुस्तकें अध्यापक के लिए अधिक लाभकारी हो सकती हैं।[17] स्पष्ट है कि नागरिकशास्त्र शिक्षण मे इस विधि के प्रयोग हेतु उच्च स्तर की पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता है।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं उपयोग में सावधानियाँ

इस विधि के प्रमुख लाभ हैं—विद्यार्थियों मे पढ़ने की आदत डालना, मौन वाचन द्वारा समझ कर पढने योग्य बनाना सुनियोजित एवं व्यवस्थित पाठ्यवस्तु से अवगत होना, स्मरण-शक्ति का विकास, समय की बचत, प्रश्नोत्तरो के आकार एव विषय वस्तु से परिचित होना, पाठ्यप्रकरण के अनुपूरक आवृत्ति, संवर्धन, उत्प्रेरण में सहायक होना आदि। किन्तु ये लाभ विधि के समुचित प्रयोग पर निर्भर है।

दोषो की दृष्टि से परपरागत रूप मे यह विधि तथ्यों के रटने पर बल देती है, समझने पर कम। वाचन के अतिरिक्त अन्य जीवन से सबद्ध क्रियाशीलन का इसमे नितान्त अभाव है, अधिगम-सूत्रो (सरल से कठिन, उदाहरण से सिद्धात, ज्ञात से अज्ञात की ओर ले जाने वाले सूत्रों) की अपेक्षा कर पाठ्यपुस्तकों मे सामान्यीकरण, अधिक होते है जो अमनोवैज्ञानिक है, पाठ्यपुस्तक के तथ्यो के प्रति अध-विश्वास या अतिनिर्भरता, पाठ्य-पुस्तक का शिक्षण-साधन होने की अपेक्षा साध्य बन जाने की आशका तथा वैयक्ति विभिन्नताओ के स्थान पर औसत श्रेणी के विद्यार्थियो के अनुकूल पाठ्य सामग्री का होना आदि प्रमुख दोष इस विधि मे पाये जाते हैं ये दोष भी इस विधि पर आत्यन्तिक निर्भरता या इसके पूरक रूप मे अन्य क्रियाशीलन विधियो के प्रयोग न करने के कारण हैं।

अत शिक्षक को इस विधि के प्रयोग में उपर्युक्त प्रक्रिया को सही ढंग से अपनाने व दोषो से बचने के उपाय काम में लेने चाहिए ताकि इसके गुणों से लाभान्वित हुआ जा सके। सक्षेप मे शिक्षक को ये सावधानिया रखनी चाहिए—प्रश्नोत्तर, स्पष्टीकरण तथा अन्य शिक्षण सहायक सामग्री के उपयोग द्वारा विद्यार्थियों को मानसिक रूप से सक्रिय रखना, केवल विवरणात्मक प्रकरणों के शिक्षण मे इसका प्रयोग एक पुस्तक की अपेक्षा अधिक पाठ्यपुस्तकों को आधार बनाना, अन्य विधियों के अनुपूरक रूप मे इस विधि का प्रयोग, विद्यार्थियो मे रटने की प्रवृत्ति के स्थान पर तर्कशक्ति का विकास, तथा वैयक्तिक विभिन्नताओ का ध्यान रखना चाहिए।

(4) प्रश्नोत्तर विधि

यह विधि भी प्राचीनकाल से प्रचलित है जिसका पूर्वाभास उपनिषद् ग्रंथों तथा सुकरात की शिक्षण-शैली में मिलता है। अन्य परम्परागत शिक्षण विधियो की अपेक्षा

17. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ० 258

इसका प्रयोग आज तक विद्यालयों एवं शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं में अधिकाधिक रूप से हो रहा है क्योंकि प्रश्नोत्तर द्वारा विद्यार्थी अन्य विधियों के विपरीत सक्रिय रखे जाते हैं। बटलर का कथन है कि 'माध्यमिक स्कूलों में अधिकांश शिक्षण प्रश्नोत्तर विधि से किया जाता है।'[18] इसका कारण शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इस विधि पर बल देना है। दरजी का कथन है कि "प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों द्वारा अपने अध्यापनाभ्यास के अन्तर्गत स्थानीय माध्यमिक स्कूलों में किया जाता है।"[19] पश्चिमी देशों तथा भारत में यह परम्परागत शिक्षण-विधि ही ऐसी है जो सर्वाधिक लोकप्रिय है। इसका कारण यह हो सकता है कि कक्षा में अन्य विकासमान विधियों का प्रयोग दुःसाध्य है तथा शिक्षक-शिक्षार्थी दोनों को कम से कम मानसिक रूप से सक्रिय बना रहना प्रश्नोत्तर विधि में ही सम्भव है।

प्रश्नोत्तर विधि तथा प्रविधि दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं। विधि तथा प्रविधि का उत्तर केवल यह है कि जब शिक्षण कार्य किसी निश्चित एवं व्यापक स्वरूप के अनुसार आयोजित किया जाता है तो इस निश्चित स्वरूप को विधि की संज्ञा दी जाती है। वास्तव में विधि शिक्षण कार्य को वांछित दिशा तथा आवश्यक गति प्रदान करती है।…… परन्तु विधियों के अन्तर्गत विभिन्न युक्तियों (प्रविधियों या तकनीक) का प्रयोग करना होता है, जैसे प्रश्न पूछना, विवरण देना, वर्णन करना, व्याख्या व तुलना आदि। इन युक्तियों का प्रयोग विधि द्वारा निर्धारित ढांचे में किया जाना है स्पष्ट है। युक्तियाँ शिक्षण कार्य से सीधी सम्बन्धित होते हैं।[20] मुनेश्वर प्रसाद ने इस अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया है—प्रश्नोत्तर केवल एक विधि नहीं, अपितु एक उपयोगी व्यवहार (प्रविधि) भी है। इसका उपयोग हम एक स्वतंत्र रूप में किसी विषय के शिक्षण में कर सकते हैं। साथ ही, इसका व्यवहार हम अन्य विधियों द्वारा किये गये शिक्षण में भी, एक उपयोगी साधन के रूप में कर सकते हैं।[21] अतः प्रश्नोत्तर विधि के अतिरिक्त एक प्रविधि या तकनीक जिसे उक्त उद्धरणों में युक्ति व्यवहार या साधन के नाम से भी पुकारा गया है—के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं।

(क) विधि प्रक्रिया—प्रश्नोत्तर विधि में शिक्षक अध्याप्य-प्रकरण की प्रस्तावना, विकास तथा मूल्यांकन प्रश्नोत्तरों द्वारा करते हैं। प्रश्नों द्वारा विद्यार्थी मानसिक रूप से से सक्रिय रहते हैं क्योंकि वे ज्ञानार्जन हेतु जिज्ञासु होते हैं तथा प्रश्नों के उत्तर देते समय उन्हें पाठ के विकास में अपनी भूमिका निभाने का अवसर मिलता है। इस विधि के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक प्रश्न करने की कला में कुशल हो। प्रश्न किस प्रकार के किये जाय, कैसे पूछे जाय, एवं उनके उत्तरों को किस प्रकार संशोधित किया जाय—इसका

18. बुचर : इम्प्रूवमेंट ऑफ टीचिंग इन सैकण्डरी स्कूल्स, संस्करण पृ. 233
19. दरजी. डी. आर : टीचिंग सोशल स्टडीज इन इंडियन स्कूल्स, द्वि. संस्करण पृ. 81-82
20. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर पृ. 154 तथा 202
21. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन का शिक्षण पृ. 87

ध्यान रखना इस विधि में महत्त्वपूर्ण है। इस विधि से किसी प्रकरण को पढाने में मुख्यतः निम्नांकित प्रश्न प्रयुक्त होते हैं जो पाठ के विभिन्न सोपानों के अनुसार होते है:—

(1) प्रस्तावनात्मक प्रश्न—ये प्रश्न अध्याप्य प्रकरण की भूमिका हेतु विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से सम्बद्ध करने या पाठ प्रेरणा देने के लिये हैं। इन प्रश्नों के उत्तरों द्वारा विद्यार्थी नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिये जिज्ञासु हो जाते हैं।

(2) विकासात्मक प्रश्न—इन प्रश्नों का उद्देश्य पाठ्यवस्तु का विकास करना है। नवीन तथ्यों से अवगत कराने हेतु ये प्रश्न एक व्यवस्थित क्रम मे पूछे जाने चाहिए जो परस्पर पूर्वापर सम्बन्ध से तार्किक रूप में सुसम्बद्ध एवं क्रमबद्ध हों।

(3) आवृत्यात्मक प्रश्न—पाठ की विभिन्न इकाइयो के पश्चात् पूछे जाने वाले ये प्रश्न पठित अंश एवं तथ्यो की आवृत्ति करने हेतु होते हैं। इनके आधार पर श्याम पट्ट सारांश लिखा जाता है।

(4) मूल्यांकन प्रश्न—पाठ के अन्त मे सम्पूर्ण पठित सामग्री पर आधारित पूर्व निर्धारित पाठ के उद्देश्यो का मूल्यांकन करने हेतु होते हैं। विभिन्न उद्देश्यों पर आधारित वस्तुनिष्ठ व लघुत्तरात्मक प्रकार के प्रश्न पूछना समय-सीमा की दृष्टि से उपयुक्त रहते हैं।

(ख) नागरिकशास्त्र-शिक्षण मे विधि का अनुप्रयोग—प्रायः विद्यालयों एवं प्रशिक्षण संस्थाओं मे इसी विधि का प्रयोग नागरिकशास्त्र-शिक्षण मे किया जा रहा है। इस विधि पर आधारित एक पाठ परिशिष्ट में दिया जा रहा है जो दृष्टव्य है। उदाहरण के रूप मे ग्रामीण क्षेत्र मे यदि हम कक्षा 9 को ग्राम पचायत प्रकरण का पाठ इस विधि से पढाने जा रहे हैं तो उसकी पाठ योजना में प्रस्तावनात्मक प्रश्नों के अन्तर्गत ये प्रश्न पूछे जा सकते हैं—

आप के ग्राम मे सफाई की व्यवस्था कौन करता है ?
सफाई के अतिरिक्त ग्राम पंचायत के और कार्य क्या है ?
शहरो मे यह कार्य कौन करता है ?
ग्राम पंचायत का सगठन किस प्रकार होता है ?

शिक्षक अपनी सूझबूझ से विद्यार्थियों के जीवन अनुभवों से सम्बन्धित प्रश्नों द्वारा पाठ की प्रेरणा विभिन्न प्रकार से दे सकता है। पाठ के दूसरे सोपान पाठ के विकास के अन्तर्गत विकासात्मक प्रश्नो के माध्यम से शिक्षक-शिक्षार्थी अधिगम स्थितियो का निर्माण किया जा सकता है जो पाठ्यवस्तु के विकास मे सहायक हो। इस प्रकरण मे पाठ को दो अन्विितियो—

(1) ग्राम पचायत का संगठन व चुनाव तथा
(2) ग्राम पंचायत के कार्य व अधिकार से जोडा जा सकता है।

प्रथम अन्विति में संगठन से सम्बन्धित अंश के तथ्यो के विकास हेतु ये प्रश्न पूछे जा सकते हैं—

ग्राम पंचायत के कितने सदस्य होते हैं ?
इन सदस्यों को कौन चुनता है ?

ये चुनाव जनसंख्या के किस आधार पर होते हैं ?

चुनाव मे मत देने का अधिकार किस आयु के व्यक्तियों को है ?

अनुसूचित जाति व जनजाति तथा महिला सदस्य की नियुक्ति किस प्रकार होती है ?

इस प्रकार संपूर्ण पाठ्यवस्तु का विकास किया जा सकता है । पाठ की प्रत्येक अन्विति के बाद कुछ आवृत्त्यात्मक प्रश्न पठित अंश की आवृत्ति हेतु पूछे जाते हैं ताकि अधिगम का स्थिरीकरण हो सके ।

ये प्रश्न प्रथम अन्विति के बाद इस प्रकार के हो सकते हैं—

ग्राम पंचायत में कितने सदस्य होते हैं ?

पंचायत का कार्यकाल कितना होता है ?

इन आवृत्त्यात्मक प्रश्नों के आधार पर श्याम-पट्ट पर सारांश प्रस्तुत किया जा सकता है । अन्त में सम्पूर्ण पाठ के निर्धारित उद्देश्यों के अनुकूल मूल्यांकन प्रश्न पूछने चाहिए जो वस्तुनिष्ठ एवं लघुत्तरात्मक प्रकार के हो जैसे-वस्तुनिष्ठ प्रकार का नमूना निम्नांकित हैं—

ग्राम पंचायत के महिला प्रतिनिधि की नियुक्ति किस आधार पर होती है ? (किसी एक सही विकल्प पर ✓ चिह्न लगाना है)

(क) चुनाव,

(ख) योग्यता,

(ग) सहवरण,

(घ) सरकार द्वारा ।

अथवा

ग्राम पंचायत कितने रुपये की सीमा तक के दीवानी मामले सुन सकती है—

.... (एक शब्द मे पूर्ति करनी है)

लघुत्तरात्मक प्रश्न—(एक पंक्ति या 10 शब्दों मे उत्तर देना है)

(1) ग्राम पंचायत स्वास्थ्य एवं शिक्षा की दृष्टि से क्या कार्य करती है ?

....

(2) ग्राम पंचायत की आय के दो मुख्य साधन बतलाइये ।

....

(ग) विधि के गुण-दोष एवं उपयोग में सावधानियाँ—प्रश्नोत्तर विधि के गुण हैं—शिक्षक-शिक्षार्थी दोनों को मानसिक रूप से सक्रिय रखना, छात्रों की जिज्ञासावृत्ति का ज्ञानार्जन में उपयोग करना, कम समय मे शिक्षण-प्रक्रिया सम्पन्न होना तथा न्यूनतम शिक्षण उपकरणों से शिक्षण-कार्य सम्भव बनाना, किन्तु प्रश्नोत्तर विधि का प्रभावी होना प्रश्नों के प्रकार एवं उनके पूछने की विधि पर अधिक निर्भर होता है । प्रश्न स्पष्ट व निश्चित हो, भाषा सरल, शुद्ध एवं बोधगम्य हो, प्रश्न विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुसार हो, प्रश्नों में परस्पर क्रमबद्धता एवं तार्किक सम्बद्धता हो, प्रश्न विचार-प्रेरक हों ।

प्रश्नों में विशिष्टता अवश्य हो अर्थात् उनका एक निश्चित उत्तर हो, निर्धारित उद्देश्यों के अनुकूल हों, हां/ना के प्रश्न न हों । जैसे—क्या ग्राम पंचायत के सदस्य चुने जाते हैं ? प्रतिध्वन्यात्मक प्रश्न न हों, जैसे—ग्राम पंचायत बाहर से आयातित माल पर चुंगी

कर लेती ? यह तथ्य बतलाने के पश्चात् तत्काल पूछना कि ग्राम पंचायत कौन सा कर लेती है ? दो प्रश्न परस्पर सम्मिलित कर नहीं पूछने चाहिए। जैसे 'ग्राम पंचायत का कार्यकाल एवं कार्य क्या है ?''

प्रश्नों के सही प्रकार एवं गठन के अतिरिक्त प्रश्न के पूछने की सही विधि भी पाठ को प्रभावी बनाती है। इस सम्बन्ध में ध्यान रखने योग्य बात यह है कि प्रश्न पूरी कक्षा को सम्बोधित कर पूछा जाय, फिर छात्रों को कुछ सोचने का समय दे कर किसी एक छात्र को उत्तर देने को कहा जाय, अशुद्ध या आंशिक शुद्ध उत्तर प्राप्त होने पर अन्य छात्रों से क्रमशः शुद्ध उत्तर देने को कहा जाय, प्रश्न कुछ चुने हुए कुशाग्रबुद्धि छात्रों से ही न पूछ कर सम्पूर्ण कक्षा में समान रूप से वितरित किया जाय तथा अज्ञात तथ्य पर प्रश्न पूछना निरर्थक है। जैसे सहवरण द्वारा महिला सदस्य को कैसे नियुक्त करते हैं ? इस अवसर पर प्रश्न की अपेक्षा सहवरण प्रक्रिया को कथन द्वारा स्पष्ट करना ही उचित होगा। प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की विधि भी प्रभावी होनी चाहिए जैसे उत्तर सहानुभूति एवं धैर्यपूर्वक सुने जायें, शुद्ध उत्तरों की सराहना की जाय, किन्तु अशुद्ध उत्तरों पर ताड़ना देना उचित नहीं, विद्यार्थियों को उच्च स्वर में पूर्ण वाक्य में उत्तर देनेको प्रोत्साहित किया जाय, कक्षा सहयोग से शुद्ध किये गये उत्तर को अशुद्ध उत्तर देने वालों से पुनः शुद्ध रूप में बोलने को कहा जाय तथा विद्यार्थियों को भी अपनी शंका-समाधान हेतु शिक्षक से प्रश्न करने की अनुमति दी जाय ये प्रश्नोत्तर विधि में ध्यान रखने योग्य सावधानियाँ हैं जिनकी अवहेलना किये जाने पर विधि दोषपूर्ण बन जाती है।

नागरिकशास्त्र की परम्परागत शिक्षण विधियों की वर्तमान में उपयोगिता

नागरिकशास्त्र शिक्षण की परम्परागत विधियाँ यद्यपि आज भी विकासमान विधियों की अपेक्षा अधिक व्यवहृत हो रही हैं तथापि शिक्षण विधि की मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक एवं लोकतान्त्रिक संकल्पना के अनुरूप इनमें परिवर्तन एवं संशोधन हो गया है। कहानी-कथन विधि आज भी कम आयु के बालकों के चारित्रिक गुणों का अवबोध कराने हेतु सबसे. प्रभावी एवं रोचक विधि मानी जाती है, किन्तु इस विधि के परम्परागत दोष कहानी में कल्पना की अतिरंजना, धार्मिक एवं पौराणिक कथानक, श्रोता (बालक) की निष्क्रियता आदि का वास्तविक जीवन एवं इतिहास के महापुरुषों की कहानियों तथा प्रश्नोत्तर के समावेश से निराकरण कर दिया गया है। व्याख्यान विधि अब भी उच्च कक्षाओं के शिक्षकों में लोकप्रिय है, किन्तु इसके दोष शिक्षक के कथावाचक जैसे स्वरूप व शिक्षार्थियों में स्वक्रिया के अभाव को प्रश्नोत्तर तथा शिक्षण सहायक सामग्री के प्रयोग द्वारा दूर कर दिया गया है। पाठ्य-पुस्तक विधि भी विद्यालय में अन्य सहायक सामग्री के अभाव में शिक्षण का विश्वसनीय आधार बना हुआ है। अच्छी पाठ्य पुस्तकों के निर्माण, परिवीक्षित अध्ययन विधि के समन्वय तथा शिक्षक द्वारा पाठ्यवस्तु के संवर्धन द्वारा इस विधि के परम्परागत दोष कम हो गए हैं। इसी प्रकार प्रश्नोत्तर विधि तथा प्रविधि तो विकासमान विधियों में भी आंशिक रूप से प्रयुक्त होती है। प्रश्नों के गठन तथा प्रश्नोत्तर पूछने व संशोधन करने में शिक्षक अभ्यास द्वारा कौशल का विकास कर इस विधि को प्रभावी बना रहे हैं।

वस्तुतः हमारे विद्यालयों में उपयुक्त भवन, उपकरण, पुस्तकालय, वाचनालय तथा योग्य व कुशल शिक्षकों का जब तक अभाव बना रहेगा तथा अन्य सामुदायिक संसाधनों को शैक्षिक प्रशासकों एवं शिक्षकों द्वारा जब तक शिक्षण-प्रक्रिया हेतु नियोजित ढंग से प्रयुक्त नहीं किया जायेगा, तब-तक ये परम्परागत विधियाँ ही नागरिकशास्त्र शिक्षण का आधार बनी रहेंगी।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण की विधि की आवश्यकता, महत्त्व, पुरातन व नवीन संकल्पना तथा ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में परम्परागत प्रचलित शिक्षण विधियों का परिचय मिलता है। वर्तमान में भी इन विधियों की उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक है कि शैक्षिक नियोजक, प्रशासक, पाठ्यक्रम निर्माता तथा शिक्षक-प्रशिक्षक शिक्षकों को परम्परागत शिक्षण विधियों को प्रभावी रूप से प्रयुक्त करने में सहायक हों। प्रशिक्षण संस्थाओं, पुनश्चर्या कार्यक्रमों व विचार-गोष्ठियों में इस पक्ष को महत्त्व दिया जाय।

नागरिकशास्त्र शिक्षण : विकासमान विधियाँ | 7

यद्यपि यह सत्य है कि देश के अधिकाश विद्यालयों मे न्यूनतम शिक्षण-उपकरणों एव ससाधनों का अभाव है जिसके कारण परम्परागत शिक्षण विधियों के अनुसरण का औचित्य अभी बना हुआ, किन्तु कुछ कम व्ययशील विकासमान शिक्षण-विधियाँ ऐसी भी है जिनका प्रयोग उपलब्ध उपकरण एवं स्थानीय सामुदायिक ससाधनों की सहायता से भी किया जा सकता है। देश की आर्थिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य मे आज शिक्षण विधियों को को उन्नत करने के लिए भौतिक संसाधनों की अपेक्षा मानवीय संसाधनो की जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी, स्थानीय समुदाय, शिक्षा-प्रशासक आदि हैं कम महत्त्वपूर्ण नही है।

आवश्यकता –परम्परागत शिक्षण-विधियो की लीक से अलग हट कर शिक्षको को नवीन प्रभावी विधियों के प्रयोग की स्वतन्त्रता दिये जाने पर बल देते हुए कोठारी शिक्षा आयोग ने कहा है कि (परम्परागत) प्रविधियो को हम ट्राम की पटरी के समान मान सकते हैं।.........प्रशासक का यह कर्तव्य है कि वह आम अध्यापक समुदाय के लिए कार्य सम्बन्धी 'ट्राम लाइन' की व्यवस्था करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखे कि कुछ साहसी अध्यापको को निर्बाध यात्रा करने के लिये फिर भी पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त हो।......... प्रतिभाशाली अध्यापक को इन ट्राम पटरियों से हटकर चलने की जो सुविधाएं प्रदान की गई हैं, वे बाकी अध्यापकों को भी यथासमय उन पटरियों को छोड़ने मे सहायता करेंगी।....हमारी मान्यताओं का यह निष्कर्ष है कि केवल एक गतिशील एव लचीली शिक्षा प्रणाली ही अध्यापकों मे पहल-शक्ति, प्रयोगशीलता एव सृजन-शीलता को प्रोत्साहित करने की आवश्यक शर्तों की पूर्ति कर सकती है और इस प्रकार शैक्षिक प्रगति की नींव डाल सकती है।[1] आयोग ने शिक्षा-प्रशासकों द्वारा शिक्षण-विधि की पुरानी परिपाटी से हट कर विकासमान विधियों के प्रयोग करने की स्वतन्त्रता शिक्षकों को देने के नवीन दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया है। यही नई मान्यताओं के अनुसार एक गतिशील पाठ्यक्रम भी गतिशील शिक्षण विधियों के अभाव में मृतप्रायः हो जाता है। यही मान्यता माध्यमिक शिक्षा आयोग की है जिसको पहले उद्धृत किया जा चुका है।[2]

परम्परागत विधियों मे शिक्षण-प्रक्रिया मे अन्य गनी बन पाता है अर्थात् शिक्षक वक्ता तथा विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता रहता है। यह स्थिति शोचनीय है जिसे 'क्रियाशीलन

1. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 256
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग, पृ. 102

विधियों द्वारा सुधारा जा सकता है, जिसमें शिक्षक-शिक्षार्थी दोनों ही सक्रिय हो शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को दोनों ओर से खोल कर प्रभावी बना सकते हैं। विकासमान विधियों का समावेश नागरिकशास्त्र शिक्षण में किया जाना लोकतान्त्रिक व्यवस्था के उपयुक्त प्रबुद्ध नागरिक के निर्माण में सहायक होगा। के. एम. याज्ञनिक के शब्दों में तैरने या साइकिल चलाने की भांति लोकतंत्र भी पुस्तकों या कक्षा में व्याख्यानों द्वारा नहीं सीखा जा सकता, इसका दैनिक जीवन में नियमित अभ्यास करने की आवश्यकता है। वर्तमान में नागरिकशास्त्र एवं लोकतन्त्र का शिक्षण अत्यधिक सैद्धान्तिक है।[3]

यह केवल अनुसंधानोन्मुख रुचिप्रद एवं विकासमान विधियां दूसरे शब्दों में 'क्रियाशीलन विधियां' हैं। विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के सदस्य के रूप में उनकी गतिविधियों में सक्रिय सहभागिता हेतु भावी नागरिकों में उपयुक्त ज्ञान, ज्ञानोपयोग, अवबोध, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल को विकसित करने के लिए विकासमान विधियां ही सहायक हो सकती है।

वर्गीकरण—नागरिकशास्त्र की विकासमान विधियों को मुख्यतः निम्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(1) समाजीकृत अभिव्यक्ति अथवा विचार-विमर्श विधि
(2) प्रायोजना विधि
(3) समस्या समाधान विधि
(4) प्रयोगशाला विधि
(5) अवलोकन या पर्यवेक्षण विधि
(6) अभिक्रमित अधिगम विधि
(7) परिवीक्षित अध्ययन विधि

उपर्युक्त वर्गीकरण में वे ही विकासमान शिक्षण-विधियां ली गई हैं जो मुख्यतः नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रयुक्त की जा सकती हैं तथा उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

(1) समाजीकृत अभिव्यक्ति अथवा विचार-विमर्श विधि—समाजीकृत अभिव्यक्ति को 'समाजीकृत विचार-विमर्श कहना अधिक उपयुक्त है। विचार-विमर्श शिक्षण विधि में शिक्षक और विद्यार्थी मिलजुलकर किसी विषय, प्रश्न अथवा समस्या के सम्बन्ध में सहयोग से सामूहिक वातावरण में अपने-अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। विचार-विमर्श को समाजीकृत अभिव्यक्ति मानने का कारण बतलाते हुए वाइनिंग ने कहा है कि कोई भी कक्षा-कार्य जिसमें वर्ग-चेतना तथा एक वर्ग के प्रति व्यक्तिगत दायित्व की भावना प्रदर्शित हो, समाजीकृत अभिव्यक्ति है।[4] विचार-विमर्श के माध्यम से विद्यार्थी-वर्ग या समाज के छोटे रूप का सदस्य होने के नाते गम्भीर होकर किसी समस्या या प्रश्न के समाधान हेतु अपने विचार अभिव्यक्त करता है। एम. पी. मोफैट के शब्दों में—'समाजीकृत अभिव्यक्ति

3. याज्ञनिक के. एम : द टीचिंग ऑफ सोशल स्टडीज इन इण्डिया, अं. संस्करण पृ० 163–164.
4. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन का शिक्षण, पृ० 92

व्याख्यान विधि की अपेक्षा विद्यार्थी को सहभागिता के अधिक अवसर प्रदान करती है। यह एक सामान्य वर्ग विचार विमर्श विधि है जिसमें समस्त विद्यार्थी सहकारिता की भावना से से भाग लेते हुए प्रश्न पूछकर तथा समस्या समाधान का प्रयास कर अपना योगदान करते हैं।[5] इस विधि में शिक्षक पृष्ठभूमि में रहकर विद्यार्थियों को समाजीकृत प्रक्रिया तथा उनके सहकारी प्रयास द्वारा अधिगम करने के लिए प्रेरित करता है। नागरिकशास्त्र शिक्षण हेतु यह सर्वोत्तम विधियों में से एक है क्योंकि लोकतन्त्रीय व्यवस्था की अपेक्षा के अनुकूल इसके द्वारा विद्यार्थियों में अनेक समाजोपयोगी गुणों का विकास होता है तथा उनका सामाजीकरण होता है।

(ख) विधि प्रक्रिया—समाजीकृत अभिव्यक्ति या विचार-विधि को निम्नाङ्कित प्रमुख रूपों में प्रयुक्त किया जा सकता है—

(1) विचार गोष्ठी विधि—इस विधि में किसी समस्या पर विचार-विमर्श करने हेतु कक्षा के विद्यार्थियों को 3 या 4 वर्गों में विभक्त कर दिया जाता है, प्रत्येक वर्ग में 5 से 10 तक विद्यार्थी रहते हैं। प्रत्येक वर्ग को समस्या का एक निश्चित पक्ष विचार-विमर्श हेतु आवंटित कर दिया जाता है। प्रत्येक वर्ग अपने निर्वाचित नेता तथा सचिव के साथ पूर्व निर्धारित विभिन्न स्थानों पर बैठकर विचार विमर्श करते हैं। वर्ग के सभी सदस्य मिल कर नेता के सचालन में अपने समस्या-पक्ष पर विचार विमर्श कर निर्णय लेते हैं जिन्हें प्रतिवेदन के रूप में वर्ग सचिव लिखकर पूरी कक्षा के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक प्रतिवेदन पर विद्यार्थी प्रश्न पूछते हैं जिनका उत्तर अथवा शका समाधान सम्बन्धित वर्ग नेता या सदस्य देते हैं। कक्षा में विचार-विमर्श के फलस्वरूप यदि कोई संशोधन, परिवर्तन या परिवर्धन प्रतिवेदनों में अपेक्षित होता है तो कर लिया जाता है। अन्त में शिक्षक सम्पूर्ण विचार-विमर्श का समाहार करता है और प्रतिवेदनों को अन्तिम रूप देकर या तो शाला-बुलेटिन बोर्ड पर प्रदर्शित किया जाता है या उसे किसी पंजिका में लगा कर वाचनालय में अन्य सभी विद्यार्थियों के अवलोकनार्थ रखा जाता है।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र के 'आधुनिक भारत की जनसंख्या समस्या' को कक्षा 10 में विचार गोष्ठी विधि से पढ़ाने हेतु उपर्युक्त प्रक्रिया के अनुसार कक्षा को 10–10 छात्रों के 4 वर्गों में विभक्त कर लेंगे तथा प्रत्येक वर्ग को इस समस्या के समाधान के 4 पक्ष (1) जनसंख्या वृद्धि के सामाजिक कारण व समाधान हेतु सुझाव, (2) जनसंख्या वृद्धि के आर्थिक प्रभाव व उनके निवारण के सुझाव तथा (3) जनसंख्या वृद्धि के कारण बेरोजगारी व उसके निवारण के उपाय, (4) जनसंख्या वृद्धि का देश के विकास पर प्रभाव व सुझाव—क्रमशः विचार-विमर्श हेतु आवंटित कर दिया जावेगा। प्रत्येक वर्ग अपने पक्ष के प्रतिवेदन तैयार कर कक्षा में प्रस्तुत करेंगे और उसे अन्तिम रूप देंगे। इस प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका एक पथ प्रदर्शक, सहायक तथा सबसे अधिक एक प्रबुद्ध मित्र की होगी, जिसमे

5. उपर्युक्त,

आवश्यकतानुसार विद्यार्थी अपनी कठिनाई निवारण एवं कोई सूचना प्राप्त करने हेतु खुशी-खुशी एवं आत्मविश्वास से मार्गदर्शन प्राप्त करेंगे। शिक्षक आदेश देने के स्थान पर सुझाव देने व (आवश्यक सामग्री) प्रस्तुत करने का कार्य करेगा। विचार विमर्श विधि में विद्यार्थियों को स्वतन्त्रतापूर्वक प्रस्तुत समस्या पर अपने विचारों के आदान-प्रदान करने एवं किसी निर्णय पर पहुँचने की छूट होगी। शिक्षक केवल पृष्ठभूमि में सूत्रधार का कार्य करेगा।

(2) कार्यगोष्ठी विधि—इस विधि में प्रक्रिया तो विचार-गोष्ठी के समान ही रहती है किन्तु विद्यार्थी विचार विमर्श के अतिरिक्त किसी रचनात्मक कार्य में भाग लेते हैं। विचार गोष्ठी में विचार पक्ष पर अधिक बल रहता है और कार्य गोष्ठी में कार्य पक्ष पर अधिक।[6]

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र के राष्ट्रीय भावनात्मक एकता की समस्या प्रकरण का इस विधि द्वारा अध्ययन करने में विद्यार्थी अपने वर्गों में इस समस्या के निर्धारित पक्षों पर कुछ रचनात्मक कार्य भी करते हैं। जैसे भारत का राजनैतिक मानचित्र, आर्थिक अन्तर्निर्भरता के आँकड़ों का रेखाचित्र, विभिन्न राज्यों के रहन-सहन के चित्रों का संग्रह, देश की राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक एकता के चित्रों का एलबम बनाना आदि कार्य। अन्त में प्रतिवेदन में इन कार्यों को भी सम्मिलित किया जाता है।

(3) पेनल चर्चा विधि—कक्षा में विद्यार्थियों की अधिक संख्या को देखते हुए तथा स्थानाभाव के कारण जब उपर्युक्त विधियाँ प्रयुक्त करना सम्भव न हो तो पेनल चर्चा विचार-विमर्श की उपयोगी विधि हो सकती है। इस विधि में कक्षा के कुशाग्र बुद्धि वाले कुछ विद्यार्थियों (संख्या 3 से लेकर 7 तक) का पैनल बनाया जाता है जो इनके द्वारा ही चुने गये अपने समायोजक के संचालन में कक्षा के समक्ष बैठकर परस्पर विचार-विमर्श करते है। शेष विद्यार्थी पेनल की चर्चा को ध्यानपूर्वक सुनते रहते हैं तथा अपनी शंकाओं को प्रश्न के रूप में लिख लेते हैं। पैनल द्वारा विचार विमर्श की समाप्ति पर पैनल से शंका-समाधान हेतु प्रश्न पूछे जाते हैं। शंका समाधान के बाद समायोजक चर्चा का समाहार करता है। शिक्षक मार्गदर्शक का काम पृष्ठभूमि में रहकर ही करता है। पैनल चर्चा विधि का प्रयोग नागरिकशास्त्र की किसी इकाई के अध्ययन के पश्चात् आवृत्यात्मक पाठ के रूप में करना प्रभावी होता है क्योंकि प्रस्तुत समस्या के तथ्यों से सभी छात्र पहले से ही परिचित होते हैं, पेनल चर्चा द्वारा पठित सामग्री का संवर्धन हो जाता है।

उदाहरणार्थ—आधुनिक राज्य इकाई के अध्ययन के बाद पेनल चर्चा द्वारा राज्य के विभिन्न रूपों—निरंकुश, एकतन्त्र, लोकतन्त्र, सीमित राजतन्त्र (एकात्मक व संघात्मक) गणतन्त्र (एकात्मक व संघात्मक) तथा संघात्मक के संसदीय एवं अध्यक्षीय रूपों की विशेषताओं से सम्बद्ध सामग्री का संवर्धन किया जा सकता है। वर्तमान में बहुचर्चित विवादास्पद प्रश्न—भारत में संसदीय या अध्यक्षीय संघात्मक लोकतन्त्र प्रणाली पर पैनल चर्चा आयोजित की जा सकती है। इसकी पूर्व तैयारी हेतु समाचारपत्रों में प्रकाशित

---

6. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन; पृ. 169

सम्बन्धित सामग्री का अवलोकन किया जा सकता है। इस पैनल चर्चा द्वारा विद्यार्थियों को संसदीय तथा संघात्मक दोनो शासन प्रणालियों के गुणदोष भली भांति समझने का अवसर मिल पायेगा।

(4) परिचर्चा विधि—इस विधि मे कुछ चुने हुए विद्यार्थी किसी प्रकरण या समस्या के विभिन्न पक्षो पर सक्षेप मे किन्तु विचार प्रेरक रूप मे कक्षा के समक्ष शिक्षक की अध्यक्षता मे भाषण देते हैं या पत्रवाचन करते हैं। भाषण एव पत्रों के वाचन के उपरान्त शेष विद्यार्थी उस समस्या से सम्बन्धित प्रश्न पूछते है तथा भाषण कर्त्ता या पत्रवाचक अथवा शेष विद्यार्थियो मे से कुछ छात्र उनके उत्तर देते हैं। शिक्षक इन प्रश्नोत्तरो मे उन्हे सहयोग देता है व अन्त मे परिचर्चा का समाहार करता है जिसमें विचार विमश के प्रमुख बिंदु एवं निष्कर्षों का उल्लेख किया जाता है।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र के लोकतन्त्र मे द्विदलीय एव बहुदलीय पद्धति प्रकरण को परिचर्चा हेतु चुना जा सकता है तथा इसे—(1) राजनैतिक दल जनतन्त्र के आधार, (2) राजनैतिक दलो के कार्य, (3) द्विदलीय पद्धति के गुण दोष, (4) बहुदलीय पद्धति के गुण दोष, (5) भारत में बहुदलीय पद्धति का औचित्य—पक्षो मे विभाजित कर उन पर चुने हुए विद्यार्थियो द्वारा भाषण एवं पत्रवाचन कराये जा सकते हैं। शिक्षक परिचर्चा का संचालन एवं समायोजन कर दलीय पद्धति के चर्चित बिन्दुओ का समाहार करेगा।

(ग) विचार-विमर्श विधि के गुण दोष एवं प्रयोग में सावधानियाँ—समाजीकृत अभिव्यक्ति एव विचार विमर्श विधि से विद्यार्थियों में नेतृत्व का प्रशिक्षण मिलता है, उनमें परस्पर सहयोग करने की भावना का विकास होता है, आत्माभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर मिलता है तथा समस्या को व्यापक परिप्रेक्ष्य में समझने के अवसर मिलते हैं। इन सबका समग्र लाभ यह होता है कि विद्यार्थियो को लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सक्रिय भाग लेने व अपना विधायक योग देने का प्रशिक्षण मिलता है।

विचार-विमर्श विधि की कुछ परिसीमाएँ हैं जिनका अतिक्रमण करने से विधि दोषपूर्ण हो जाती है। इस विधि का प्रयोग केवल उच्च कक्षाओ (कक्षा 8 से 11) मे उपयोगी रहता है क्योंकि छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के अनुभव पर्याप्त नही होते और उनकी अभिव्यक्ति भी विकसित नहीं हो पाती। दूसरी परिसीमा अध्यापक की योग्यता एवं कुशलता से सम्बन्धित है। अकुशल शिक्षकों द्वारा इसका प्रयोग अप्रभावी एवं अनुपयोगी बन कर समय नष्ट करने का कारण हो जाता है। तीसरी परिसीमा अच्छे पुस्तकालय का होना इसकी सफलता के लिए आवश्यक है। विचार-विमर्श हेतु पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त अन्य सन्दर्भ ग्रन्थ एव पत्र-पत्रिकाओं का उपलब्ध होना वांछनीय है, जिससे कि पूर्व तैयारी की जा सके। इन्हीं गुण दोषो को ध्यान में रखते हुए शिक्षक को पृष्ठभूमि मे रहते हुए विद्यार्थियो का मार्गदर्शन करना चाहिये ताकि उन्हे स्वतन्त्रतापूर्वक अपने, विचार अभिव्यक्त करने का अवसर मिले। विचार विमर्श के समय शिक्षक को अनुशासन बनाये रखना चाहिए और यह ध्यान रखना चाहिए कि आक्रामक व्यवहार वाले विद्यार्थी दूसरो पर हावी न होने पायें तथा मन्द बुद्धि विद्यार्थी भी अपने विचार व्यक्त कर सकें। शिक्षक को यह भी सावधानी रखनी

है कि परम्परागत शिक्षण-विधियों से अभ्यस्त विद्यार्थियों पर यह विधि बिना पूर्व तैयारी से सहसा नहीं थोपनी चाहिए, उन्हें शनैः शनैः इसके सही प्रयोग द्वारा लाभान्वित होने के अवसर देने चाहिए।

2. प्रायोजना विधि

(क) अर्थ—विकासमान शिक्षण-विधियों में यह विधि प्रमुख है। विशेषकर नागरिकशास्त्र-शिक्षण में व्यावहारिक ज्ञान देने हेतु यह अत्यन्त उपयोगी विधि है। प्रायोजना की परिभाषा देते हुए स्टेवेन्सन ने कहा है कि प्रायोजना एक समस्यामूलक कार्य है, जो अपनी स्वाभाविक परिस्थितियों में पूर्णता को प्राप्त होता है। डा० किलपैट्रिक के शब्दों में 'प्रायोजना वह प्रयोजनशील प्रवृत्ति है जो सम्पूर्ण तन्मयता से सामाजिक पर्यावरण में क्रियान्वित होती है।' गुड का कथन है कि 'प्रायोजना कार्य एक विशिष्ट इकाई है जिसका शैक्षणिक महत्त्व होता है तथा जिसका उद्देश्य अवबोध के एक या एक से अधिक लक्ष्य होते हैं, जिसमें समस्याओं का अनुसंधान एवं समाधान तथा बहुधा भौतिक सामग्री का हस्तादिप्रयोग होता है तथा जिसे प्राकृतिक जीवन-स्थितियों में विद्यार्थी एवं शिक्षक नियोजित एवं क्रियान्वित करते हैं।'

प्रायोजना विधि का प्रवर्तन अमरीका में हुआ। पहले प्रोजेक्ट शब्द का प्रयोग इंजीनियरिंग में रूपरेखा बनाने के लिए किया गया। 1908 में मैसेचुसेट्स राज्य के 'बोर्ड ऑफ एजुकेशन' ने प्रोजेक्ट शब्द का प्रयोग विद्यार्थियों के गृह-कार्य के लिए किया जिसमें 'फुलवारी, मुर्गी पालन आदि शारीरिक क्रिया सम्बन्धी कार्य होते थे। शिक्षा-क्षेत्र में प्रायोजना विधि का एक उपयोगी व्यावहारिक विधि के रूप में शनैः शनैः विकास हुआ।

प्रायोजना विधि की निम्नांकित विशेषताएँ हैं—

(1) प्रयोजनशीलता—शिक्षक एवं शिक्षार्थी अपनी अनुभूत आवश्यकता के अनुसार किसी समस्या का हल प्राप्त करने के लिए जो प्रवृत्ति एवं कार्य प्रायोजना हेतु चुनते हैं, उसके लक्ष्यों की उपलब्धि हेतु तत्परता से संलग्न हो जाते हैं।

(2) क्रियाशीलता—प्रायोजना के क्रियान्वयन में विद्यार्थी तन्मयता एवं उत्तरदायित्व की भावना से क्रियाशील हो जाते हैं। इस विधि में 'करो व सीखो' का सिद्धांत निहित है।

(3) यथार्थता—प्रायोजना जीवन की वास्तविक स्थितियों में क्रियान्वित की जाती है क्योंकि वह अनुभूत समस्या से प्रेरित होती है, उसमें कृत्रिमता नहीं होती।

(4) उपयोगिता—प्रायोजना समस्यामूलक कार्य की क्रियान्विति है, अतः इसके चुनाव, नियोजन एवं क्रियान्वयन में विद्यार्थियों को इसकी उपयोगिता का सदैव ध्यान रहता है।

(5) स्वतंत्रता—प्रायोजना विधि में विद्यार्थियों को कार्य करने की पूरी स्वतंत्रता दी जाती है क्योंकि यह एक लोकतांत्रिक विधि है।

(ख) विधि-प्रक्रिया—प्रायोजना विधि के निम्नांकित चार मुख्य पद या चरण होते हैं—

1 परिस्थिति का निर्माण या उद्देश्य निरूपण—प्रायोजना विधि का महत्वपूर्ण प्रथम चरण है। इसके अन्तर्गत शिक्षक किसी कार्य या समस्या को सप्रयोजन एवं सार्थक

बनाने हेतु ऐसी परिस्थिति का निर्माण करता है जिसमें विद्यार्थी उस समस्या को जीवन की अनुभूत आवश्यकता समझ कर उसके निराकरण के विषय मे सोचने तथा कार्य करने के लिये अनुप्रेरित हो ।[7] उदाहरणार्थ-नागरिकशास्त्र के नगर पालिका चुनाव पर प्रायोजना के लिये शिक्षक कक्षा मे विद्यार्थियों का ध्यान लोकतंत्र एवं निर्वाचन की ओर आकर्षित करेगा तथा लोकतंत्र मे नगरपालिका के महत्त्व को प्रकट करते हुए नगरपालिका के निर्वाचन के प्रति उनकी जिज्ञासा जागृत करेगा । यदि निकट भविष्य मे होने वाले नगरपालिका चुनाव की चर्चा समाचार-पत्रों में हो रही है तो उसकी ओर विद्यार्थियो का ध्यान आकर्षित किया जायेगा जिससे वे नगरपालिका के गठन एवं कार्यों को जानने के लिये उत्सुक होंगे । इस प्रकार उपर्युक्त परिस्थिति के निर्माण द्वारा शिक्षक इस प्रायोजना को विद्यार्थियो द्वारा एक सोद्देश्य एवं सार्थक समस्या के रूप में चयन किये जाने का अवसर देगा ।

(2) योजना निर्माण—प्रायोजना को उपयुक्त परिस्थिति निर्माण द्वारा विद्यार्थियों की स्वेच्छा से एक सोद्देश्य कार्य एवं समस्या के रूप में चुन लिये जाने के पश्चात् (शिक्षक विद्यार्थियों के सहयोग से प्रायोजना की रूप रेखा तैयार करेगा । विचार-विमर्श द्वारा स्वयं विद्यार्थी ही इस प्रायोजना मे क्या करना है तथा कैसे करना है पक्षों का नियोजन करेंगे जिससे वे इस कार्य को अपना समझकर पूर्ण तन्मयता से पूरा करने का निश्चय करेंगे । प्रायोजना के विभिन्न पक्षों के क्रियान्वयन हेतु कक्षा के विद्यार्थियों को चार-पांच टोली मे विभक्त कर दिया जायेगा । उपरोक्त नगरपालिका चुनाव प्रायोजना दलों मे विभक्त होकर अपने दल का नेता तथा सचिव या प्रतिवेदक निर्वाचित कर लेंगे । प्रत्येक दल को नगरपालिका क्षेत्र के कुछ क्षेत्र आवंटित कर दिये जायेंगे ।

(3) योजना का क्रियान्वयन—प्रत्येक दल अपना आवंटित कार्य योजनानुसार करने में लीन हो जायेगा । शिक्षक मार्गदर्शन हेतु उपस्थित रहेगा । प्रत्येक-दल कार्य का प्रतिवेदन तथा किया हुआ कार्य समस्त कक्षा के समक्ष विचार-विमर्श हेतु प्रस्तुत करने के लिये व्यवस्थित कर लिया जायेगा । उपरोक्त उदाहरण में प्रत्येक दल अपने निर्धारित वार्डों की निर्वाचन सम्बन्धी सूचनाओं—क्षेत्रफल, जनसंख्या, मतदाता, वार्ड की समस्याएं आदि एकत्रित करेगा तथा उन सूचनाओं का संग्रह नगरपालिका के मुख्य निर्वाचन अधिकारी से प्राप्त चुनाव सम्बन्धी प्रकाशित साहित्य से करेगा । इस प्रकार प्रत्येक दल के पास अपने वार्डों के मान-चित्र (जिसमे सड़क, स्कूल, बाजार, अस्पताल आदि का अंकन होगा), मतदाता सूचियां, मतपत्र के नमूने तथा विभिन्न चुनाव-प्रत्याशियों का चुनाव-प्रचार साहित्य (चुनाव सभाओं तथा समाचार पत्रो से एकत्रित) अध्ययन हेतु उपलब्ध हो जायेगा । चुनाव के दिन प्रत्येक दल अपने समीपस्थ निर्वाचन केन्द्र का पर्यवेक्षण करेगा एवं चुनाव परिणाम जान कर सम्पूर्ण निर्वाचन प्रक्रिया को नोट करेगा । इसके पश्चात् प्रत्येक दल अपना प्रतिवेदन तथा किये हुए कार्य एवं एकत्रित सामग्री को पूरी कक्षा के समक्ष प्रस्तुत करने के लिये व्यवस्थित करेगा ।

---

7. मानानिक के. एस. : द टीचिंग ऑफ सोशल स्टडीज इन इण्डिया प्र. संस्करण, पृ. 163-164

(4) मूल्यांकन या निर्णय—योजना के क्रियान्वयन के पश्चात् प्रायोजन का मूल्यांकन अथवा उसकी सफलता एवं असफलता के कारणों का निर्णय पूरी कक्षा में विचार-विमर्श द्वारा किया जायेगा। प्रत्येक दल का प्रतिवेदन एवं कार्य पूरी कक्षा के समक्ष शिक्षक की अध्यक्षता में प्रस्तुत किया जायेगा तथा विचार-विमर्श के पश्चात् प्रायोजना का समग्र प्रतिवेदन तैयार कर उसे सभी के अवलोकनार्थ प्रदर्शित किया जायेगा।

(ग) नागरिकशास्त्र शिक्षण में विधि का अनुप्रयोग—प्रायोजना विधि की उपर्युक्त प्रक्रिया के अनुसार नागरिकशास्त्र की नगरपालिका चुनाव प्रायोजना को जिस प्रकार क्रियान्वित करने का सुझाव दिया है, इसी प्रकार प्रायोजना विधि के प्रयोग हेतु अन्य प्रकरण भी चुने जा सकते हैं, जैसे विधान सभा की बैठक का पर्यवेक्षण, मुहल्ले की सफाई प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र का संचालन, पंचवर्षीय योजना के आधार पर स्वतंत्रता के पश्चात् भारत का आर्थिक विकास, विभिन्न धर्मों के परिचय के आधार पर धर्म सहिष्णुता का विकास, लोक कल्याणकारी राज्य एवं सामुदायिक विकास योजनाएँ, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव एवं विश्व-एकता, नगर या ग्राम की जनसंख्या समस्या, नगर या ग्राम की निरक्षरता का सर्वेक्षण आदि। प्रायोजना विधि के लिये प्रकरण एवं समस्याओं के चुनाव हेतु यह ध्यान रखना चाहिए कि जो प्रायोजना चुनी जाय वह नागरिकशास्त्र से सम्बद्ध तथ्यों एवं सिद्धान्तों का व्यावहारिक प्रशिक्षण दे, विद्यार्थियों की रुचियों एवं क्षमता के अनुकूल हो, उनकी पूर्ण सहमति से चुनी जाय, क्रियान्वयन हेतु सभी संसाधन उपलब्ध हो तथा यह योजनानुसार क्रियान्वित हो सके। कम संसाधनों के होते हुए भी उपयोगी प्रायोजनाएँ चुनी जा सकती हैं। जैसा कक्षा 8 के लिये स्वतंत्रता दिवस समारोह का आयोजन एक सरल एवं उपयोगी प्रायोजना हो सकती है।

इस विधि के प्रथम पद में शिक्षक प्रश्नोत्तरों द्वारा विद्यार्थियों को स्वतंत्रता-दिवस आकर्षक एवं प्रभावी ढंग से मनाने के लिये प्रेरित करेगा। छात्रों द्वारा इसे चुन लिये जाने के बाद दूसरे पद में इसकी योजना विचार-विमर्श के आधार पर बना ली जायेगी। योजना में झण्डाभिवादन, साहित्यिक कार्यक्रम, प्रदर्शनी का आयोजन, परिदृश्य (झांकियों) प्रदर्शन आदि कार्यक्रम रखे जा सकते हैं। विद्यार्थी वर्गों में विभक्त हो, उपर्युक्त प्रक्रियानुसार झण्डा बनाने, झण्डारोहण की सामग्री लाने, राष्ट्रगान का अभ्यास करने, मुख्य अतिथि को आमंत्रित करने, बैठने की व्यवस्था करने एवं साहित्यिक कार्यक्रम, प्रदर्शनी, परिदृश्य आदि की पूर्व तैयारी करने की विस्तृत योजना बनायेंगे। तीसरे पद में योजनानुसार प्रायोजना को क्रियान्वित किया जायेगा। प्रत्येक वर्ग अपना आवंटित कार्य वर्ग-नेता के निर्देशन में करेगा व वर्ग सचिव प्रतिवेदन लिखेगा। अन्तिम पद में समारोह के पश्चात् कक्षा में सम्पूर्ण प्रायोजना का मूल्यांकन निर्धारित विधि के अनुसार किया जायेगा।

(घ) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियां—प्रायोजना विधि के अनेक लाभ हैं जैसे—

(1) ज्ञान की समग्रता,

(2) नागरिक गुणों का व्यावहारिक प्रशिक्षण,

(3) विद्यार्थियों के स्वेच्छा से तन्मय हो कार्य करने से अनुशासनहीनता की कोई समस्या नहीं रहती,

(4) जीवन की वास्तविक स्थितियों में अधिगम होने के कारण प्रशिक्षण का अन्तरण सम्भव है, अर्थात् एक प्रायोजना में अर्जित कौशल अन्य स्थितियों मे भी प्रयुक्त होते हैं,

(5) लोकतान्त्रिक जीवन के लिये व्यावहारिक तैयारी होती है,

(6) ज्ञानार्जन वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक होता है,

(7) मानसिक शक्तियों (तर्क, तुलना, भेद, निर्णय आदि) तथा शारीरिक कौशल का संतुलित विकास होता है तथा

(8) क्रियाशीलन द्वारा अधिगम। मोफेट के शब्दों में–'प्रायोजना अधिगम-स्थिति या समस्त वर्ग की विशिष्ट रुचि से सम्बद्ध किसी घटना से स्वतः स्फुरण उत्पन्न होता है। वर्ग के अनुभव एवं योगदान से विशिष्टय पाठ्यवस्तु के ज्ञान का संवर्धन होना चाहिए।' इस प्रकार प्रायोजना विधि को प्रभावी बनने हेतु चयनित प्रायोजना का विद्यार्थियों की अनुभूत आवश्यकता से सम्बद्ध होना तथा वर्गगत अनुभवों एवं योगदान से समस्या या प्रकरण की पाठ्यवस्तु का संवर्धन होना आवश्यक है।

इस विधि के गलत प्रयोग से उत्पन्न दोष एवं परिसीमाएँ भी हैं जैसे—

(1) कहा जाता है कि इससे विषय का विस्तृत ज्ञान नहीं होता किन्तु यह आक्षेप विधि के प्रति नहीं बल्कि विधि के दुरुपयोग के प्रति उचित है,

(2) इस विधि में पुस्तकों का सम्यक् अध्ययन नही किया जा सकता,

(3) कभी-कभी सामान्य एवं महत्त्वहीन समस्याओं की प्रायोजनाओं में समय नष्ट होता है,

(4) समयाभाव के कारण पाठ्यक्रम समाप्त नहीं होता,

(5) यह उच्च कक्षाओं के लिए अधिक उपयुक्त है,

(6) उत्साही योग्य शिक्षक ही इस विधि को प्रभावी बना सकता है,

(7) पुस्तकालय एव शिक्षण सहायक सामग्री के अभाव में विधि का प्रयोग कठिन होता है तथा

(8) इससे मन्द बुद्धि बालक लाभ नही उठा पाते।

इनमें से अधिकांश दोष विधि के दुरुपयोग के कारण हैं जिन्हें दूर करने की सावधानी शिक्षक को रखनी चाहिए। कुछ दोषों एवं परिसीमाओं के होते हुए भी यदि शैक्षणिक दृष्टि से यह विधि उपयुक्त है तो इसे प्रयुक्त किया जाना चाहिए। सैम्फोर्ड व स्कोटिश का कथन है कि 'यदि यह विधि (प्रायोजना विधि) कक्षा की आकांक्षाओं एवं शिक्षक के व्यक्तित्व व क्षमिदक्षता के अनुकूल है तो इसे सर्वोत्तम परिणामों के बीजभूत उत्पादक के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए।' वस्तुतः तथ्यात्मक ज्ञान की अपेक्षा विद्यार्थी का विकास, कार्य सम्पन्न करने का आनन्द तथा कार्य को सहकारिता से नियोजित करने एवं सम्पन्न करने की उपलब्धि ही प्रायोजना विधि की उत्कृष्टता का द्योतक है।

3 समस्या समाधान विधि

(क) अर्थ—समस्या समाधान विधि तर्क के आधार पर किसी समस्या का मानसिक स्तर पर हल ज्ञात करने की प्रक्रिया है। याजनिक के शब्दों में 'समस्या समाधान विधि क्रिया प्रधान विधि है, जो विद्यार्थियों को पहल करने, दायित्व निभाने एवं स्थिति पर नियन्त्रण करने का प्रशिक्षण देती है। वे समस्याओं के समाधान खोजने व उनसे संघर्ष करने से आत्म-निर्भर बनते हैं।' समस्या विधि में मानसिक क्रिया पर अधिक बल दिया जाता है।

प्रायोजना विधि एवं समस्या समाधान विधि में काफी समानता है, क्योंकि दोनों में क्रिया द्वारा व्यक्तिगत प्रयास से ज्ञानार्जन होता है। किन्तु इनमें क्रिया सम्बन्धी अन्तर भी है। भट्टाचार्य एवं दरजी का कथन है कि प्रायोजना में मानसिक तथा शारीरिक दोनों क्रियाओं द्वारा कोई कार्य सम्पन्न होता है, जबकि समस्या समाधान विधि में सन्निहित क्रिया द्वारा मानसिक समाधान निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त प्रायोजना विधि में वास्तविक परिस्थिति में किसी कार्य को व्यावहारिक रूप से सम्पन्न करना होता है, किन्तु समस्या विधि में किसी शारीरिक कार्य की आवश्यकता नहीं होती बल्कि मानसिक रूप से समस्या-समाधान हेतु निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इस प्रकार समस्या समाधान विधि गुड के शब्दों में—एक विशिष्ट प्रक्रिया है, जिससे सम्बद्ध अनेक छोटी समस्याओं के सम्मिलित समाधानों के आधार पर किसी बड़ी समस्या का समाधान किया जाता है।'

(ख) विधि-प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनुप्रयोग—समस्या विधि के निम्नांकित चरण (पद) होने हैं।[8]

(1) समस्यानुभूति—हम किसी समस्या के समाधान हेतु तब ही प्रेरित होते हैं जब हमें उस समस्या की अनुभूत आवश्यकता हो अर्थात् हम समस्या की स्वयं अनुभूति करने के बाद ही उसके हल का प्रयास करते हैं। इस चरण में शिक्षक कक्षा में किसी उपयुक्त विधि (प्रश्नोत्तर, समसामयिक घटना, समाचार-पत्र में प्रकाशित सामग्री, किसी उद्धरण, दैनिक जीवन के प्रसंग या स्थिति, आदि) द्वारा विद्यार्थियों को किसी ऐसी समस्या की अनुभूति कराता है जो जन-जीवन को प्रभावित करती हो। विद्यार्थी स्वयं ही ऐसी अनुभूति करते हैं कि अमुक समस्या स्वयं उनकी है और इसका हल उन्हें खोजना है। इस प्रकार स्वयं अनुभूति से प्रेरित हो, विद्यार्थी समस्या का चयन करते हैं तथा शिक्षक सभी विद्यार्थियों का इस समस्या के समाधान हेतु आह्वान करता है अर्थात् पाठ-प्रकरण की घोषणा करता है।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र-शिक्षण हेतु गरीबी की समस्या का चयन किया जाना है तो शिक्षक कक्षा में विद्यार्थियों को दैनिक जीवन में परिलक्षित निर्धन लोगों की विपन्न दशा के प्रति आत्मीयता एवं सहानुभूति जाग्रत करने का प्रयास करेगा यह प्रश्नोत्तर द्वारा भी सम्भव है अथवा सरकार द्वारा चलाये जा रहे किसी कार्यक्रम जैसे—गरीबी हटाओ, अन्त्योदय, योजना, बीस सूत्री योजना आदि पर चर्चा द्वारा अथवा समाचार-पत्र में प्रकाशित

8. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर पृ. 178–180

गरीबों से पीड़ित लोगों की किसी प्रमुख घटना पर चर्चा द्वारा अथवा गरीब-अमीर के मध्य जीवन-स्तर के शोचनीय अन्तर को लक्ष्य कर विद्यार्थियों को समस्या की अनुभूति कराई जा सकती है।

(2) समस्या की व्याख्या—समस्या को स्वानुभूति के आधार पर चुन लिये जाने के बाद उस समस्या के सभी पक्षों व पहलुओं का विश्लेषण कर उन्हें स्पष्ट किया जाता है। उदाहरणार्थ—गरीबी की समस्या को सर्वप्रथम परिभाषित किया जा सकता है जैसे, वह व्यक्ति जो अपनी आय द्वारा अपने परिवार का भरण-पोषण करने में असमर्थ हो, गरीब हैं, तथा गरीबी के कारण को जन्म देते हैं। गरीबी के विभिन्न पक्ष जैसे—किसानों की गरीबी, श्रमिकों की गरीबी, नौकरीपेशा लोगों की गरीबी, कुटीर उद्योग-धंधों में लगे लोगों की गरीबी, वृद्ध तथा अपंग व निस्सहाय लोगों की गरीबी आदि—भी स्पष्ट किये जायेंगे। यह कक्षा में विचार-विमर्श द्वारा किया जाना चाहिए।

(3) समस्या का विश्लेषण—इस चरण के अन्तर्गत समस्या के अर्थ एवं विभिन्न पक्षों के परिप्रेक्ष्य में उसके कारणों का पता लगाया जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष जन-जीवन की विभिन्न स्थितियाँ प्रस्तुत कर उन्हें इन संभावित कारणों को खोजने में सहायता करता है। केवल प्रमुख सम्भावित कारणों का निर्धारण कर लिया जाता है।

उदाहरणार्थ—गरीबी की समस्या के सम्भावित कारण विचार-विमर्श द्वारा स्पष्ट किये जा सकते हैं, जैसे—देश की विषम आर्थिक व्यवस्था, देश में उत्पादन की कमी, अमीरों द्वारा गरीबों का शोषण, बेकारी बढ़ना, वेतन और मजदूरी कम होना, प्राकृतिक प्रकोप (बाढ़, सूखा, महामारी आदि), जनसंख्या की वृद्धि, शारीरिक श्रम के प्रति उपेक्षा, मंहगाई में वृद्धि आदि।

(4) तथ्य संकलन—उपयुक्त कारणों का औचित्य सिद्ध करने के लिये सम्बन्धित तथ्य या आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं। शिक्षक के मार्गदर्शन में विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध इन तथ्यों व आंकड़ों को परखा व समझा जा सकता है। गरीबी की समस्या के कारणों से सम्बद्ध तथ्य इसी प्रकार इस चरण में एकत्रित किये जायेंगे।

(5) सम्भावित समाधान—इस चरण में विचार-विमर्श द्वारा विद्यार्थी समस्या के कारणों व तथ्यों के आधार पर सम्भावित हल या समाधान प्रस्तावित करते हैं। ये समाधान एक या एक से अधिक हो सकते हैं।

जैसे—गरीबी की समस्या के समाधान—सरकार द्वारा उचित आर्थिक व्यवस्था अपनाना देश के उत्पादन में वृद्धि करना गरीबी दूर करने के उपाय जैसे अन्त्योदय योजना व बीस सूत्री योजना, वेतन व मंहगाई भत्ता बढ़ाना किसान-मजदूरों की उचित मांगें मानना, सरकार द्वारा वृद्ध एवं अपंगों की सहायता, बेकारी दूर करने के लिये नये अवसर प्रदान करना आदि सुझाये जा सकते हैं।

(6) समाधानों का परीक्षण—इस चरण में कक्षा के विद्यार्थियों को 3 या 4 वर्गों में विभाजित कर वर्गगत विचार-विमर्श करने को कहा जाता है। प्रत्येक वर्ग अपने निर्वाचित नेता या संयोजक के संचालन में तार्किक विवेचन कर संभावित समाधानों की उपयुक्तता की जांच करते हैं तथा वर्ग-सचिव निर्णयों को प्रतिवेदन के रूप में अंकित करते हैं।

(7) सही समाधान का सत्यापन—इस सोपान में पूरी कक्षा के समक्ष प्रत्येक वर्ग के नेता अपने प्रतिवेदन को विचार-विमर्श हेतु प्रस्तुत करते हैं। शंका एवं जिज्ञासा का नेता द्वारा तर्कयुक्त उत्तर दिया जाता है। पूरी कक्षा के अभिमत से जो समाधान युक्तिसंगत प्रतीत होते हैं उन्हें समग्र प्रतिवेदन में समाविष्ट कर लिया जाता है। गरीबी की समस्या के सम्भावित समाधान भी इसी प्रकार आलोचनात्मक दृष्टि से सत्यापित कर उन्हें निश्चित किया जायेगा।

(8) अन्तिम निर्णय—अन्तिम सोपान में कक्षा-सहयोग से वर्ग-प्रतिवेदनों को समग्र प्रतिवेदन में संशोधित, परिवर्तित एवं परिवर्द्धित रूप में अंकित कर लिया जाता है। विचार-विमर्श पूर्णतः लोकतांत्रिक पद्धति से शिक्षक के मार्गदर्शन में किया जाता है तथा बहुमत से निर्णय लिये जाते हैं।

नागरिक शास्त्र-शिक्षण में इस विधि के उपयुक्त अनेक समस्याएं चुनी जा सकती हैं। जैसे 'ग्राम पंचायतें क्यों असफल हैं ?' नागरिक के अधिकारों एवं कर्तव्यों का संतुलन किस प्रकार किया जाय ? संसदीय एव अध्यक्षीय शासन प्रणालियों में सर्वश्रेष्ठ कौन सी है ? चुनाव-प्रक्रिया में भ्रष्टाचार की समस्या, बेकारी या निरक्षरता राष्ट्रीय एकीकरण की समस्या, विश्व शांति की समस्या, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका का अंतर्विरोध आदि।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियां—इस विधि के अनेक लाभ हैं। जैसे जीवन की अनुभूत समस्याओं का वैज्ञानिक समाधान, जनतांत्रिक अभिरुचियों, अभिवृत्तियों एवं कुशलताओं का विकास, विद्यार्थियों की सोद्देश्य क्रियाशीलता, समस्या-समाधान की प्रक्रिया का जीवन में उपयोग, तर्क एव निर्णय-शक्ति तथा स्वाध्याय एवं आत्मनिर्भरता का विकास। इस विधि के दोषो एवं परिसीमाओं के अन्तर्गत कहा जा सकता है कि ये समयाभाव के कारण पाठ्यक्रम को समाप्त करने में सहायक नहीं हैं, छोटी कक्षाओं के उपयुक्त नही। पुस्तकों के सम्यक् अध्ययन को प्रोत्साहित नही करती व विषय वस्तु का विस्तृत ज्ञान प्रदान करने में असमर्थ हैं। शारीरिक क्रियाकलाप के अवसर कम देती है, तथा केवल सैद्धान्तिक स्तर पर समाधान प्रस्तुत करती हैं, व्यावहारिक स्तर पर नही। समस्यात्मक प्रकरणों के ही अधिक अनुकूल है तथा कभी-कभी कम महत्त्वपूर्ण समस्याओं के समाधान में समय नष्ट करती है। इन गुण-दोषों के देखते हुए शिक्षक को इस विधि के उपयोग में पूर्ण सावधानी बरतनी होगी और यह प्रयास करना होगा कि इससे विद्यार्थी लाभान्वित हो।

4. प्रयोगशाला-विधि

(क) नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु का अध्ययन भी सामाजिक विज्ञान की भांति वैज्ञानिक विधि से होना अपेक्षित है। इसीलिए नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रयोगशाला-विधि का महत्त्व है।

प्रयोगशाला-विधि में विद्यार्थी शिक्षक के मार्गदर्शन में विभिन्न उपकरणों एवं संदर्भ सामग्री का निरीक्षण, प्रयोग, अध्ययन एवं वर्गीकरण कर क्रमबद्ध रूप से अध्ययन कर

किसी प्रकरण या समस्या के कार्यकारण संबंध का पता लगाता है। इस प्रकार अर्जित ज्ञान प्रयोगाधारित होने के कारण स्थायी रहता है। नागरिकशास्त्र शिक्षण का एक मात्र उपकरण अब पाठ्यपुस्तक ही नहीं रह गई है बल्कि विभिन्न प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री-सहायक पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं, मानचित्र, चार्ट, ग्राफ, चित्र, स्लाइड्स, फिल्म, रेडियो, टेलीविजन, अभिक्रमित अध्ययन उपकरण आदि उपलब्ध हैं जिनका उपयोग नागरिकशास्त्र शिक्षण में किया जा सकता है। मुनेश्वर प्रसाद के शब्दों में—'समाज-अध्ययन का शिक्षण इन सामग्रियों से सुसज्जित प्रयोगशाला द्वारा अत्यन्त रोचक तथा प्रभावोत्पादक ढंग से किया जा सकता है। प्रयोगशाला विधि अध्ययन की सामग्रियों के प्रयोग को प्रमुखता देती है।'[9]

वाइनिंग के मतानुसार, 'प्रयोगशाला पद्धति का स्वरूप विभिन्न विद्यालयों में भिन्न-भिन्न है। सामान्यतः इस पद्धति में शिक्षक का कार्य केवल कक्षा के कार्य का निरीक्षण करना है। शिक्षक छात्रों के बीच में कार्य करता है, वह उनकी अशुद्धियों को सुधारता है और समय-समय पर उन्हें प्रोत्साहन तथा सुझाव देता है।'[10]

नागरिकशास्त्र शिक्षण की प्रयोगशाला विधि के मुख्यतः दो रूप प्रचलित हैं:—
(1) सामान्य प्रयोगशाला (नागरिक शास्त्र की कक्षा) में उपलब्ध सामग्री के प्रयोग द्वारा शिक्षक के मार्गदर्शन में ज्ञानार्जन करना।

(2) डाल्टन-प्रयोगशाला प्रणाली—जिसमे विषय-कालांशों का बन्धन न होकर विद्यार्थी विषय-प्रयोगशालाओं में समय पर निर्धारित कार्य पूरा कर शिक्षक को देना होता है।

(ख) विधि प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र-शिक्षण में अनुप्रयोग—इस विधि में शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को प्रयोगशाला में पूरा करने हेतु एक निर्दिष्ट कार्य आवंटित किया जाता है। यह कार्य किसी प्रश्न का उत्तर देने, किसी समस्या का अध्ययन करने, कोई सूचना स्रोत सन्दर्भ ग्रंथों से एकत्रित करने, कोई मानचित्र या ग्राफ का चार्ट बनाने, नागरिक शास्त्र से संबंधित किसी रेडियो-वार्ता या फिल्म या टी.वी. से प्रसारित किसी प्रसंग का विश्लेषण-संश्लेषण करने आदि के रूप में हो सकता है। विद्यार्थी प्रयोगशाला में जाकर अपना निर्धारित कार्य वहां उपलब्ध सामग्री के प्रयोग द्वारा संपन्न करते हैं तथा शिक्षक आवश्यकतानुसार मार्गदर्शन करता है। प्रयोगशाला कार्य के पश्चात् विद्यार्थी कक्षा में आकर किये हुए कार्य की समीक्षा करते हैं तथा उसके आधार पर सामान्यीकरण के आधार पर किसी सिद्धांत, नियम, समस्या का समाधान आदि निश्चित करते हैं।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र-शिक्षण प्रयोगशाला विधि से किये जाने हेतु कक्षा 10 में भारतीय आर्थिक समस्याओं की इकाई के अन्तर्गत 'निर्धन किसानों की समस्या' प्रकरण चुना जा सकता है। शिक्षक विद्यार्थियों को इस समस्या के प्रति उत्प्रेरित कर उन्हें इस समस्या के स्वरूप, उसके कारणों तथा समाधान का पता लगाने के लिये प्रयोग-

9. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन की शिक्षण-विधियां, पृ. 123
10. गुरुशरण त्यागी : नागरिकशास्त्र-शिक्षण, पृ. 13

शाला (नागरिकशास्त्र-कक्ष) में उपलब्ध सामग्री का प्रयोग करने हेतु निर्देश देगा। इस प्रकरण से संबद्ध सामग्री में भारतीय किसानों की निर्धनता से सम्बन्धित सहायक ग्रन्थों के अंश, पत्र-पत्रिकाओं में लेख व चित्र, भारतीय कृषि के आंकड़े, भारत का प्राकृतिक मानचित्र, 'भूदान' नामक फिल्मस्ट्रिप, रेडियो से टेप की हुई वार्ता आदि के प्रयोग करने हेतु विद्यार्थियों को निर्देश दिये जा सकते हैं। विद्यार्थी प्रयोगशाला में जाकर इस सामग्री के आधार पर निर्धारित समयावधि के अन्तर्गत निर्धन किसानों की समस्या से सम्बन्धित प्रयोग करेगा तथा निष्कर्षों व तथ्यों को अंकित करेगा एवं समस्या से सम्बन्धित तथ्यों एवं आंकड़ों के मानचित्र, चार्ट, ग्राफ आदि का निर्माण भी करेगा। शिक्षक प्रयोगशाला में उपस्थित होकर विद्यार्थियों को आवश्यकतानुकूल व्यक्तिगत मार्गदर्शन देता रहेगा। प्रयोगशाला कार्य के पश्चात् पूरी कक्षा के समक्ष व्यक्तिगत कार्य की समीक्षा की जायेगी एवं प्रकरण के प्रायोगिक कार्य का लेखा-जोखा तैयार किया जायेगा।

इसी प्रकार के अनेक प्रकरण नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु से चुने जा सकते हैं जिनका प्रयोगशाला विधि से अध्ययन किया जाना अपेक्षित है। जैसे 'विधान सभा या लोक सभा में किसी विषय पर वाद विवाद का विश्लेषण-संश्लेषण', 'छठी पंचवर्षीय योजना', 'पंचायत राज', 'राष्ट्रीय भावात्मक एकता', '1981 की जनगणना' आदि।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियां—सभी विकासमान विधियों में से यह प्रयोगशाला विधि ही एक ऐसी विधि है जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी कार्यशील रहता है। एच. सी. हिल ने इस विधि की उपयोगिता को प्रकट करते हुए कहा है कि 'कभी कभी कोई आलसी या उद्दण्ड विद्यार्थी दिख जायेगा। सामान्यतः फिर भी कक्ष (प्रयोगशाला) कुछ अव्यवस्थित होते हुए भी उसमें विद्यार्थी एक से एक उपयोगी क्रियाकलापों में तन्मयता से व्यस्त रहते हैं।' प्रयोगशाला विधि में प्रत्येक विद्यार्थी का सोद्देश्य क्रिया में संलग्न रहना इसकी प्रमुख विशेषता है। अन्य विशेषतायें हैं—आत्मविश्वास एवं आत्मानुशासन का विकास, यंत्रों, उपकरणों, संदर्भ-ग्रन्थों आदि के प्रयोग की कुशलता, क्रिया द्वारा अधिगम, स्थायी ज्ञान की उपलब्धि, अधिगम का अन्तरण, शिक्षक-शिक्षार्थी के आत्मीय संबंधों का विकास तथा सहयोग एवं उत्तरदायित्व की भावना का विकास। प्रयोगशाला विधि के दोष उसकी परिसीमाओं के कारण उत्पन्न होते हैं। इस विधि की कुछ परिसीमाएं भी हैं। प्रयोगशाला विधि के प्रयोग हेतु विद्यालय में नागरिकशास्त्र की प्रयोगशाला के रूप में एक पृथक् कक्ष होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि यह उपलब्ध न हो सके तो इतिहास अथवा 'सामाजिक अध्ययन' विषय के लिये आवंटित कक्ष को ही सहकारिता के आधार पर इसके लिये प्रयुक्त किया जा सकता है। किन्तु अधिकांश विद्यालयों में ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। प्रयोगशाला में अनेक उपकरणों एवं सामग्री के कारण यह अधिक खर्चीली है, पाठ्यक्रम की इस विधि से अध्याप्य सभी प्रकरणों का अध्ययन संभव नहीं है, शिक्षक के कुशल मार्गदर्शन के अभाव में सामग्री के गलत प्रयोग होने की आशंका रहती है, कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने से प्रत्येक विद्यार्थी को उपकरणों का प्रयोग करने का अवसर नहीं मिलता तथा समयाभाव एवं धनाभाव के कारण नागरिकशास्त्र की प्रयोगशाला में समस्त

उपकरण जुटा पाना व पाठ्यक्रम समाप्त करना संभव नहीं होता। अतः शिक्षक को सावधानीपूर्वक कुछ उपयुक्त प्रकरणों का चुनाव कर शाला की साधन-सुविधा के अनुसार इस विधि का प्रयोग करना चाहिए।

5. अवलोकन या प्रेक्षण विधि

(क) अवलोकन या प्रेक्षण विधि अधिनियम के क्रियाशीलन सिद्धांत के प्रयोग की एक प्रभावी विधि है।

प्रयोगशाला विधि में भी विद्यार्थी अवलोकन का अवलम्बन करते हैं किन्तु अप्रत्यक्ष माध्यम पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, मानचित्र, चार्ट, फिल्म आदि के माध्यम से करते हैं जबकि अवलोकन विधि में सामाजिक संस्थाओं, स्थानीय समुदाय की गतिविधियों, व्यक्तियों, सामाजिक एवं राजनैतिक घटनाओं के स्थलों का प्रत्यक्ष अवलोकन किया जाता है। अत. अवलोकन विधि अधिक प्रभावी विधि है। उमेश चन्द्र कुदेसिया के शब्दों में— 'इस विधि द्वारा शिक्षार्थी किसी तथ्य, घटना एवं कार्य प्रणाली आदि का निरीक्षण एवं अवलोकन करके ज्ञान प्राप्त करते हैं।'[11]

गुरुशरण त्यागी का मत है कि 'इसमें शिक्षक स्वयं न बताकर छात्रों को निरीक्षण करने के लिए उत्तेजित करता है और छात्र पर्यावलोकन तथा निरीक्षण करके स्वयं ज्ञानार्जन करते हैं। ...जो ज्ञान छात्र निरीक्षण तथा अवलोकन द्वारा प्राप्त करता है, वह स्थायी होता है।'[12]

अवलोकन के निम्नांकित रूप हो सकते हैं—

1. स्थानीय परिदर्शन—इसके अन्तर्गत शिक्षक के मार्गदर्शन में विद्यार्थी स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थाओं-ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद् या नगरपालिका का परिदर्शन करते हैं अथवा स्थानीय सामाजिक समस्याओं के अध्ययन हेतु जनजाति/अनुसूचित जाति/पिछड़ी जाति के जीवन, लोगों की सामाजिक कुरीतियों, आर्थिक, शैक्षिक व धार्मिक पक्षों का अवलोकन करते हैं। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा प्रदत्त नागरिक सुविधाओं के स्थल जैसे जल, प्रकाश, यातायात, सुरक्षा, मनोरंजन आदि के केन्द्र या स्थानों का भी परिदर्शन भी किया जा सकता है।

2. शैक्षणिक भ्रमण—अवलोकन हेतु शैक्षणिक यात्राएं या भ्रमण विशेष महत्त्व रखते हैं। अपने प्रदेश या देश के महत्त्वपूर्ण स्थल जो नागरिकशास्त्र की ज्ञान-वृद्धि में उपयोगी हों का अवलोकन किया जा सकता है। जैसे विधानसभा, विद्युतगृह, जल प्रदाय संयत्र, शिक्षा-संस्थाएं, विकास-कार्यों के स्थल आदि।

3. स्थानीय सर्वेक्षण—नागरिकशास्त्र से सम्बद्ध स्थानीय जन-जीवन के विभिन्न पक्षों के सर्वेक्षण, अवलोकन द्वारा ज्ञानार्जन का प्रमुख साधन है। [illegible]

---

11. उमेश चन्द्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण-कला, पृ० 82
12. गुरुशरणदास त्यागी : नागरिकशास्त्र शिक्षण, पृ० 76–77

स्थानीय निष्ठाओं को अपने प्रदेश, देश एवं विश्व के प्रति निष्ठाओं में प्रस्तारित कर उनमें राष्ट्रीय भावात्मक एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव विकसित करने का यह सशक्त माध्यम है। नेसिवाह के शब्दों में–'यह खोज करना कि स्थानीय ग्राम या नगर बाहरी दुनिया से संबद्ध है, स्थानीय वस्तुओं में हमारी रुचि को और ताजा कर देता है। इसके साथ ही विद्यार्थी यह अनुभव करते हैं कि एक साथ अपने नगर, देश तथा विश्व के नागरिक हैं।"

अवलोकन की उपर्युक्त विधियों में कोई भी विधि विद्यालय की साधन-सुविधा एवं विद्यार्थियों की रुचि एवं क्षमता के अनुकूल प्रयुक्त की जा सकती है।

(ख) विधि-प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनुप्रयोग—उपर्युक्त अवलोकन को सभी विधियों को वैज्ञानिक विधि से संचालित किया जाना आवश्यक है। परिदर्शन, पर्यटन या सर्वेक्षण के पूर्व शिक्षक विद्यार्थियों की अभिरुचि उनमें जागृत करेगा और उसके बाद कक्षा-सहयोग से ही योजना बनाई जायेगी। प्रकरण या समस्या के विभिन्न पक्षों का अवलोकन द्वारा अध्ययन करने के लिये विद्यार्थियों को तीन या चार वर्गों में विभक्त कर कार्य आवंटित कर दिया जायेगा। शिक्षक के मार्गदर्शन में विद्यार्थी अवलोकनीय स्थल पर जाकर अवलोकन करेंगे व संबद्ध पक्ष के तथ्य नोट करेंगे। शिक्षक प्रश्नों द्वारा विद्यार्थियों को अवलोकनीय पक्षों का सूक्ष्म निरीक्षण करने हेतु प्रेरित करेगा तथा अवलोकन के समय विद्यार्थियों की शंकाओं एवं जिज्ञासाओं का समाधान भी करेगा। अवलोकन के पश्चात प्रत्येक वर्ग का नेता अपना प्रतिवेदन कक्षा के समक्ष समीक्षा हेतु प्रस्तुत करेगा जिसे विचार विमर्श द्वारा अंतिम रूप देकर समग्र प्रतिवेदन तैयार किया जायेगा।

उदाहरणार्थ, कक्षा 5 के 'ग्राम पंचायत' प्रकरण का अवलोकन विधि द्वारा अध्ययन किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्र में यह उपयुक्त रहेगा अन्यथा शहरी क्षेत्र में 'नगरपालिका' प्रकरण चुना जा सकता है। शिक्षक सर्वप्रथम ग्राम पंचायत द्वारा किये गये किसी कार्य से सम्बन्धित प्रश्न कर छात्रों की रुचि प्रकरण में जागृत कर सकता है। विद्यार्थियों द्वारा अध्याप्य प्रकरण में जिज्ञासा प्रकट करने पर ग्राम पंचायत के अवलोकन की योजना बनाई जायगी। विद्यार्थियों को चार दलों में विभक्त कर उन्हें ये पक्ष अवलोकनार्थ आवंटित करेंगे—

1. ग्राम पंचायत की बैठक देखकर उसकी कार्य प्रणाली एवं संगठन,
2. पंचायत के सरपंच से साक्षात्कार कर ग्राम पंचायत के कार्यों का विवरण,
3. ग्राम पंचायत के अधिकारों का विवरण, तथा
4. ग्राम पंचायत द्वारा किये गये कार्यों की प्रगति (अभिलेख देखकर या साक्षात्कार द्वारा)।

सरपंच की अनुमति लेकर विद्यार्थियों सहित शिक्षक ग्राम पंचायत की बैठक का अवलोकन करेंगे तथा सरपंच से साक्षात्कार व पंचायत कार्यालय के अभिलेख देखकर संबंद्ध तथ्य एकत्रित करेंगे। अवलोकन के पश्चात् प्रत्येक दल द्वारा देखे गये या नोट किये गये तथ्यों को कक्षा के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा व विचार-विमर्श के आधार पर शिक्षक अवलोकन प्रक्रिया से प्राप्त तथ्यों का समाहार करेगा। स्पष्ट है, इस विधि द्वारा जो ज्ञान

विद्यार्थियों को प्राप्त होगा, वह कक्षा मे कथन या प्रश्नोत्तर विधि की अपेक्षा अधिक स्थायी, रोचक एव बोधगम्य होगा।

उपर्युक्त उदाहरण परिदर्शन का ही एक रूप है। शैक्षिक पर्यटन द्वारा अवलोकन बड़ी कक्षाओं के अधिक उपयुक्त है क्योंकि शारीरिक एवं मानसिक परिपक्वता की दृष्टि से इन कक्षाओं के विद्यार्थी सुदूर स्थानों की यात्रा करने तथा बड़ी सस्थाओं के अवलोकन की क्षमता रखते हैं। नागरिकशास्त्र के ऐसे प्रकरण हैं, 'विधान-सभा' या 'लोक-सभा' की कार्यवाही का अवलोकन करने हेतु अपने ग्राम या नगर से अपने राज्य की राजधानी या देश की राजधानी दिल्ली की यात्रा, 'भारत-दर्शन' मे देश के प्रमुख स्थलों की यात्रा एवं विभिन्न प्रान्तों के लोगों की वेश-भूषा, खान, पान, भाषा, धर्म एवं संस्कृति के अवलोकन से राष्ट्रीय भावात्मक एकता की अनुभूति करना आदि। स्थानीय सर्वेक्षण के उपर्युक्त प्रकरण है–अपने ग्राम या नगर का सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक प्रथाओं व विकास-कार्य आदि की दृष्टि से सर्वेक्षण।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियाँ—सभी विकासमान क्रियाशीलन प्रधान विधियो के गुण इस विधि मे विद्यमान हैं। प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा अधिगम होना, इस विधि की विशिष्टता है। विधि के दोष इसके अनुचित प्रयोग मे निहित हैं। शिक्षक को निम्न सावधानियां रखनी हैं,—विद्यार्थियो की क्षमता के अनुकूल प्रयोग, विद्यालय की सुविधा-साधनों का ध्यान रखना, अवलोकन की पूर्व योजना बना कर प्रभावी अवलोकन करना, अवलोकन के पश्चात् मूल्यांकन करना व भविष्य मे अवलोकन की कमियों को दूर करना तथा नागरिकशास्त्र के प्रकरण स्थानीय संसाधनों के उपयुक्त चुनना। इस विधि के प्रयोग हेतु अभिभावकों की रुचि एव सहयोग का ध्यान भी रखना आवश्यक है। नसियाह का कथन है कि 'क्षेत्र अनुसंधान (अवलोकन-यात्राओं) के लिये बाहर जाने की अनुज्ञा विद्यार्थियों को उनके अभिभावकों से मिलना आवश्यक है।'

6. अभिक्रमित अधिगम विधि

(क) पृष्ठभूमि, अर्थ एवं महत्व

आज के वैज्ञानिक एव तकनीकी युग में शिक्षा-क्षेत्र भी विज्ञान एवं तकनीक से अछूता नहीं रहा। अधिगम प्रक्रिया को अधिक सरल, सुबोध एवं आत्मनिर्भर बनाने के लिए शिक्षण-विधियों मे भी क्रान्तिकारी तकनीकी प्रभाव शैक्षणिक उपयोग हेतु रेडियो, फिल्म, टेलीविजन, शिक्षण-यन्त्रों तथा अभिक्रमित अधिगम विधि में परिलक्षित हो रहा है। अभिक्रमित अधिगम विधि के प्रवर्तक डा० बी० एफ० स्किनर ने कहा है कि 'परिवार के रसोई गृह मे कम स्वचालित कक्षा-कक्ष भी क्यों रहें ?'

अभिक्रमित अधिगम विधि के बीज तो प्राचीन काल में ही यूनानी दार्शनिक की प्रश्नोत्तर विधि मे विद्यमान थे किन्तु उन्हें तकनीकी स्वरूप बीसवीं शताब्दी मे प्रदान किया गया। 1926 में अमेरिका की ओहियो राज्य विश्वविद्यालय के डॉ० प्रैसे ने एक मशीन का आविष्कार किया जिसके द्वारा बालक स्वयं अपने ज्ञान की जांच कर सकता था। 1931 में पीटर्सन 1934 में लिटिल तथा 1948 में एंजिल ने प्रैसे की मशीन पर प्रयोग करे

यह निष्कर्ष निकाला कि, 'यदि बालक को प्रत्येक प्रश्न के पश्चात् यह बता दिया जाय कि उनका उत्तर सही है अथवा गलत तो उसके सीखने की गति में वृद्धि हो सकती है।' सन् 1950 के बाद डॉ० स्किनर ने प्रयोगों के आधार पर इस सिद्धांत का उपयोग शिक्षा में किये जाने पर बल दिया तथा एक शिक्षण-यंत्र का निर्माण किया। शिक्षण-यंत्र के अतिरिक्त अभिक्रमित अधिगम विधि का प्रयोग इस उद्देश्य से निर्मित पुस्तकों में भी किया जाने लगा।

अभिक्रमित अधिगम या शिक्षण का सम्बन्ध स्वशिक्षण के ऐसे उपकरणों, शिक्षण-यंत्रों या स्वचालित शिक्षण तकनीक से है जिनमें अनुशिक्षण या प्रश्नोत्तर शिक्षण-विधि निहित होती है। अध्याप्य पाठ्य-वस्तु को एक अभिक्रम के रूप में विकसित किया जाता है, जिसके निर्माण में अधिगम-सिद्धांत सम्बन्धित विद्यार्थियों की प्रकृति तथा प्रयुक्त उपकरण (मशीन या अभिक्रम पुस्तक) का ध्यान रखा जाता है। यह अभिक्रम अनेक इकाइयों की शृंखलाओं में विभाजित होता है जिन्हें खाका कहते हैं। इनमें पाठ्यवस्तु एकांशों की शृंखला में तथा प्रश्न, समस्या, रिक्तस्थानों की पूर्ति प्रतिक्रियों हेतु रेखाचित्र आदि के रूप से प्रस्तुत की जाती हैं। ये खाके तर्क सम्मत अनुक्रम में व्यवस्थित किये जाते हैं जिससे कि अधिगम क्रमबद्ध हो सके। इसको पढ़ कर विद्यार्थी प्रश्नों के उत्तर देते हैं तथा प्रत्येक प्रश्न के उत्तर देने के बाद खाके में ही अन्यत्र दिये गये सही उत्तर से अपने उत्तर की तुलना करते हैं। यदि उनका उत्तर सही होता है तो वे अगले प्रश्न का उत्तर देते हैं अन्यथा पुनः उत्तर देने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार विद्यार्थी को तत्काल स्वक्रिया द्वारा अधिगम होता है। इस प्रक्रिया में शिक्षक की सहायता नहीं होती। शिक्षक केवल 'प्रोग्राम' के फ्रेमों का निर्माण करता है तथा उसे विद्यार्थी के समक्ष प्रस्तुत कर उसकी स्वचालित अधिगम-प्रक्रिया का अवलोकन कर आवश्यकतानुकूल सहायता करता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण के अंतर्गत इस विधि का प्रयोग अधिकांश प्रकरणों में किया जा सकता है, यदि शिक्षक इस तकनीक का समुचित प्रशिक्षण प्राप्त कर अध्याप्य प्रकरणों के अनुकूल प्रोग्राम व फ्रेम का निर्माण कर सकें।

अभिक्रमित अधिगम विधि की आवश्यकता एवं महत्व विद्यालयों में विद्यार्थियों की बढ़ती हुई संख्या एवं प्रशिक्षित अध्यापकों के अभाव में प्रकट होता है। इस विधि से प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी क्षमता एवं गति से अधिगम करने का अवसर मिलता है तथा कुशलता से निर्मित प्रोग्राम से शिक्षक के अभाव में भी विद्यार्थी को ज्ञानार्जन होता है।

(ख) विधि-प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र-शिक्षण में अनुप्रयोग—इस विधि में शिक्षक की भूमिका मार्गदर्शक एवं व्यवस्थापक की होती है। वह अभिक्रमित अधिगम सामग्री का चुने हुए प्रकरण के आधार पर निर्माण कर उसकी प्रतिलिपियां कर कक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी को वितरित कर आवश्यक निर्देश देगा। वह विद्यार्थियों को इस सामग्री में एकांशवार पाठ्यसामग्री या प्रश्न या रिक्तस्थानों के खानों को ध्यान से पढ़ कर उत्तर देने या

रिक्त स्थान भरने का निर्देश देगा तथा प्रत्येक एकांश के उत्तर के बाद इसका मिलान या तुलना पाठ्यसामग्री के बाईं ओर अंकित उत्तर से करने को कहेगा। यदि उत्तर सही है तो आगे बढ़ने का, और यदि उत्तर गलत है तो उसे शुद्ध कर आगामी प्रश्न का उत्तर देने का निर्देश देगा। यह ध्यातव्य है कि विद्यार्थी बाईं ओर दिये उत्तरों को किसी वस्तु (पैमाने या कागज या कार्ड बोर्ड) से छिपा कर रखें व प्रत्येक उत्तर को यथासमय ही खोल कर देखा जाय। 'प्रोग्राम' के प्रत्येक 'फ्रेम' के बाद शिक्षक प्रश्नोत्तर द्वारा विद्यार्थियों का मूल्यांकन करेगा।

नागरिकशास्त्र की कक्षा 9 के लिये इकाई के 'सरकार के अंग' में 'व्यवस्थापिका के कार्य प्रकरण का इस विधि से अध्ययन करने हेतु निम्नांकित अभिक्रमित सामग्री क्रमबद्ध 'फ्रेमों' के रूप में प्रस्तुत है। इस प्रोग्राम को विद्यार्थियों पर पूर्वपरीक्षण कर संशोधित, परिवर्तित तथा परिवर्धित किया जा सकता है।

अभिक्रमित अधिगम विधि पर आधारित पाठ का नमूना

कक्षा-9 समय-30 मिनट

प्रकरण—व्यवस्थापिका के कार्य।

निर्देश—यह पाठ छोटे छोटे पदों में विभक्त है। प्रत्येक पद में एक रिक्त स्थान है। आपको रिक्त स्थान की पूर्ति करनी है। प्रत्येक रिक्त स्थान की पूर्ति के बाद बाईं ओर लिखे हुए उत्तरों में से सम्बन्धित उत्तर से अपने उत्तर का मिलान करना है। यदि आपका उत्तर सही है अथवा गलत है तो सही उत्तर के अनुसार उसे शुद्ध कर अगला पद करना है। यह ध्यान रहे कि बाईं ओर लिखे उत्तर पैमाने से ढके हुए रहें तथा पैमाने को नीचे खिसकाते हुए उत्तरों का मिलान करते हुए आगे बढ़ें।

व्यवस्थापिका	कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के अतिरिक्त सरकार का तीसरा अंग..................है।
लोकसभा	व्यवस्थापिका राज्य के शासन सुचारु रूप से चलाने हेतु कानून बनाती है। हमारे देश में केन्द्र में सबसे अधिक सदस्य वाली संस्था ....है।
राज्यसभा	लोकसभा के अतिरिक्त दूसरी कानून बनाने वाली संस्था कौनसी है?...........................
संसद	लोकसभा व राज्य सभा ....के सदन कहलाते हैं।
विधानसभा	राज्यों में कानून बनाने वाली संस्था ....है।
विधान परिषद्	कुछ राज्यों में विधान सभा के अतिरिक्त दूसरी संस्था.................. होती है।
जनता	लोकसभा एव विधानसभा के सदस्यों को.................. निर्वाचित करती है।
अप्रत्यक्ष	राज्यसभा एवं विधानपरिषद् का चुनाव ....विधि से होता है।

शक्तिशाली या अधिकार सम्पन्न	लोकसभा राज्यसभा से तथा विधानसभा विधानपरिषद् से अधिक ....होती है।
व्यवस्थापिका	ये संस्थाए मिल कर........................कहलाती हैं।
विधेयक	व्यवस्थापिका द्वारा कानून बनाने के लिये लोकसभा या विधानसभा में .... पेश किया जाता है।
राज्यसभा	लोकसभा में पारित विधेयक को ऊपर के कौन से सदन में पेश किया जाता है?........................
विधानपरिषद्	इसी प्रकार जहाँ दो सदन हों वहां विधान सभा से पारित विधेयक ऊपर के कौन से सदन में भेजा जाता है?........................
समय	लोकसभा तथा विधानसभा से पारित विधेयकों को ऊपर के सदनों में विधेयकों पर विचार करने हेतु अधिक........................मिलने के उद्देश्य से किया जाता है।
नही	क्या विधेयक को ऊपर के सदनों द्वारा पारित किया जाना कानून बनाने के लिये आवश्यक है?........................
वित्त	बजट विधेयक लोकसभा मे पेश किया जाता है। लोकसभा को ....संबधी कानून बनाने का अधिकार है।
कार्यपालिका	मंत्रिपरिषद् व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी है। व्यवस्थापिका का........................पर नियंत्रण होता है।
संशोधन	व्यवस्थापिका को संविधान में........................करने का अधिकार है।
न्याय	व्यवस्थापिका महाभियोग लगाकर न्यायाधीशों को पदच्युत कर सकती है। व्यवस्थापिका को........................सम्बन्धी अधिकार प्राप्त है।
राष्ट्रपति	हमारे देश की संसद और राज्यों की विधानसभाए किस का निर्वाचन करती हैं?........................
निर्वाचन	व्यवस्थापिका को........................सबधी अधिकार प्राप्त है।
अविश्वास	सरकार के कार्य से असंतुष्ट हो विरोधी दल के सदस्य व्यवस्थापिका में........................प्रस्ताव पेश करते हैं?
बहुमत	व्यवस्थापिका सभी निर्णय सदस्यों के........................से लेती है।
जनता	व्यवस्थापिका के सदस्य........................के प्रतिनिधि होने के कारण सरकार का ध्यान जनता के कष्टों की ओर आकर्षित करते हैं।

उपर्युक्त अभिक्रमित सामग्री की पूर्ति कर शिक्षक विद्यार्थियों का मूल्यांकन इन प्रश्नों से करेगा.—1. व्यवस्थापिका किसे कहते हैं ? 2. संसद के दोनो सदनों मे किस सदन को अधिकार प्राप्त हैं और क्यों 3. व्यवस्थापिका के कार्य कौन-कौन से है ? सरकार पर व्यवस्थापिका किस प्रकार नियंत्रण करती है ? 4. सरकार किस के प्रति ...

और क्यों ? 5 ससद के दो सदनों का क्या औचित्य है ? 6. इस प्रोगाम में दिये कार्यों के अतिरिक्त व्यवस्थापिका के अन्य कौन से कार्य हैं ?

(ग) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियां—अभिक्रमित अधिगम विधि की निम्नांकित विशेषताएं तथा गुण हैं—1. इसमें मनोविज्ञान के पुनर्वलन के सिद्धात का प्रभावी उपयोग होता है। अर्थात जब कोई प्राणी (विद्यार्थी) अपने पर्यावरण-यहा 'प्रोग्राम' के सपर्क में आकर व्यवहारित प्रतिक्रिया करता है तो पर्यावरण (प्रोग्राम के फ्रेम मे विद्यमान सही या गलत उत्तर का परिविज्ञान) भी पृष्ठपोषण द्वारा सही प्रतिक्रिया या व्यवहार का पुनर्वलन करता है। पुनर्वलन द्वारा ज्ञानार्जन की प्रक्रिया में प्रगति होती है।[13] 2. इसमें 'सरलता' का तत्व है अर्थात् इसमे क्रमबद्ध एक-एक एकाश का उत्तर देकर विद्यार्थी उसकी शुद्धता से अवगत हो अपनी गति एवं क्षमता के अनुसार अग्रसर होता है, जो मदबुद्धि एव कुशाग्रबुद्धि दोनो प्रकार के विद्यार्थियो के हित मे है। 3. इससे कक्षा में अनुशासनहीनता की समस्या का निराकरण स्वतः ही हो जाता है 4. शिक्षक की अनुपस्थिति मे भी विद्यार्थी ज्ञानार्जन कर सकता है, जिससे उसमे आत्मविश्वास की भावना जागृत होती है। 5. इस विधि में विद्यार्थी अत्यधिक सक्रिय रहते हैं। 6. इस विधि से विद्यार्थियों मे स्वाध्याय की प्रवृत्ति विकसित होती है। 7. उत्तरो की तुरन्त पुष्टि हो जाने से विद्यार्थियों का पर्याप्त उत्प्रेरण हो जाता है।

इस विधि की परिसीमाओं के अंतर्गत ये बिन्दु ध्यातव्य है—1. इसकी उपयोगिता एवं अनुपयोगिता क्रमशः इसके रचनात्मक तथा यंत्रवत् प्रयोग पर निर्भर है। 2. प्रायः यह आलोचना की जाती है कि इस विधि से शिक्षक का महत्व समाप्त हो जायेगा और वे बेकार हो जायेंगे, किंतु यह आशका निर्मूल है क्योंकि इसके उपयोग से शिक्षक को विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करने तथा प्रभावी 'प्रोग्राम' उपकरण तैयार करने के लिए पर्याप्त समय मिलेगा। डेल ने इस विधि के प्रयोग से शिक्षक की परिवर्तित भूमिका के विषय मे कहा है कि अभिक्रमित सामग्री से अध्यापक 'विस्थापित' न होकर 'पुनंस्थापित' हो सकेगा, उसे मार्गदर्शक, परामर्शदाता, उत्प्रेरक आदि की महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सहायता मिलेगी। 3. अभिक्रमित अध्ययन सामग्री का निर्माण परिश्रमी एवं कुशल शिक्षक ही कर सकते हैं, 'सामान्य शिक्षक से यह अपेक्षा करना वास्तविकता से अपने आपको दूर रखना होगा।'[14]

अतः केवल योग्य, परिश्रमी एवं प्रशिक्षित शिक्षक ही अभिक्रमित सामग्री का निर्माण करें किन्तु सामान्य शिक्षक सुनिर्मित सामग्री का उपयोग कर सकते हैं। उपर्युक्त परिसीमाओं का ध्यान रखते हुए नागरिकशास्त्र शिक्षक को इस विधि से विद्यार्थियो को सामाजिक करने का प्रयास करना चाहिए तथा कुछ उपयुक्त प्रकरणो पर आधारित अभिक्रमित सामग्री के निर्माण का भी अभ्यास करना चाहिए।

---

13. कक्षाभ्यास में प्रोग्राम्ड लनिंग की उपादेयता—भागीरथ सिंह शेखावत : 'नया शिक्षक'—अप्रेल जून 1970, पृ. 83
14. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षक के लिये आयोजन, पृ. 196

7. परिवीक्षित अध्ययन विधि

(क) अर्थ एवं महत्व—कुछ लोग 'परिवीक्षित' को 'निरीक्षित' अध्ययन विधि कहते हैं जो अनुचित है क्योंकि 'निरीक्षण' का अर्थ किसी कार्य के गुण-दोष देखना है जबकि "परिवीक्षण या पर्यवेक्षण" का अर्थ किसी कार्य में विद्यार्थियों का यथावश्यकता मार्गदर्शन करना है। परिवीक्षित अध्ययन विधि में परिवीक्षण का यही अर्थ अभिप्रेत है क्योंकि यह लोकतांत्रिक व्यवस्था के अनुकूल है। इस विधि की प्रमुख परिभाषाएं निम्नांकित हैं—

(1) पी० एन० अवस्थी का कथन है कि 'निरीक्षित अध्ययन' पद का अर्थ स्वतः स्पष्ट है। इसका तात्पर्य यह है कि जब विद्यार्थी कार्यरत हों तो शिक्षक द्वारा उनका निरीक्षण कर इस प्रक्रिया में विद्यार्थियों को कार्य प्रदत्त कर दिया जाता है तथा वे उस कार्य में व्यस्त रहते हैं। जब उन्हें कोई कठिनाई अनुभव होती है तो वे शिक्षक से सहायता अथवा मार्गदर्शन लेते हैं।[15]

(2) वाइनिंग का मत है कि परिवीक्षित अध्ययन विधि का हमारा अर्थ शिक्षक द्वारा कक्षा तथा छात्रों के एक समूह का उस समय निरीक्षण किया जाना है, जब वे अपनी डेस्कों या मेजों पर कार्यरत होते हैं।

(3) डा० आत्मानन्द मिश्र के शब्दों में, 'निरीक्षित-स्वाध्याय विधि का प्रयोजन शिक्षार्थी को सुचारु अध्ययन रीतियाँ समझने में दिशा दिखाना तथा उन रीतियों का कार्य साधक ढंग से प्रयोग करने में सिद्धहस्त बनाना है। इसमें अध्ययन कक्षा में पूर्व निर्दिष्ट ढंग से स्वाध्याय करने की आदत पड़ती है और वह किसी की सहायता के अपनी कठिनाइयों को सुलझाना सीखता है।[16]

उपर्युक्त परिभाषाओं से इस विधि की निम्नांकित प्रमुख विशेताएँ प्रकट होती है[17]—

(1) वैयक्तिक विभिन्नताएं—इस विधि में मानसिक योग्यता एवं रुचि की दृष्टि से विद्यार्थियों की वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान रख उन्हें कार्य आवंटित कर परिवीक्षण द्वारा मार्गदर्शन दिया जाता है।

(2) ज्ञानार्जन में स्वावलम्बन—आवंटित कार्य को अपनी क्षमता एवं गति से करने में विद्यार्थियों के स्वावलम्बन की वृद्धि होती है।

(3) शिक्षार्थियों की सक्रियता—अपनी क्षमता एवं रुचि के अनुसार आवंटित कार्य में दायित्व की भावना से विद्यार्थी कार्यरत रहते हैं तथा कठिनाई के समक्ष शिक्षक की सहायता से अग्रसर होते रहने में उनकी सक्रियता बनी रहती।

(ख) विधि-प्रक्रिया तथा नागरिकशास्त्र-शिक्षण में अनुप्रयोग—इस विधि में शिक्षक विद्यार्थियों को स्वाध्याय हेतु चुने गये प्रकरण के प्रति उत्प्रेरित कर उन्हें कार्य-आवंटन में मन्दबुद्धि, औसत एवं कुशाग्र बुद्धि के विद्यार्थियों की मानसिक क्षमता एवं रुचि का ध्यान

15. पी० एन० अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण विधि, पृ. 118
16. डा० आत्मानन्द मिश्र : शैक्षणिका
17. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृ. 188–189

रखा जाता है जिसके लिये कक्षा को समान क्षमता वाले 3-4 वर्गों (दलों) में विभक्त किया जाना उपयोगी रहता है। आवंटित कार्य के अन्तर्गत पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त अन्य सन्दर्भ ग्रन्थों का अध्ययन (जो कक्षा-पुस्तकालय या विषय-पुस्तकालय में उपलब्ध किये जायें) तथा मानचित्र, चार्ट आदि सम्बन्धित प्रायोगिक कार्य भी किया जाना वांछनीय है। आवश्यकतानुकूल कक्षा में विद्यार्थियों के अध्ययन का परिवीक्षण कर मार्गदर्शन देना शिक्षक का कर्त्तव्य है। पाठ के अन्त में विद्यार्थियों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र शिक्षण में इस विधि का प्रयोग राज्यपाल के अधिकार प्रकरण के अध्ययन में किया जा सकता है। सर्वप्रथम अपनी पूर्व योजनानुकूल शिक्षक विद्यार्थियों को उनके राज्य के राज्यपाल के विषय में जिज्ञासा जागृत करेगा। विद्यार्थियों को उनकी क्षमता के अनुसार चार वर्गों में विभक्त कर उन्हें इस प्रकरण के चार पक्ष—

(1) राज्यपाल के कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार,

(2) व्यवस्थापिका एवं वित्तीय अधिकार,

(3) न्याय सम्बन्धी अधिकार,

(4) संकटकालीन अधिकार—आवंटित किये जायेंगे।

ये पक्ष क्रमशः मन्दबुद्धि, औसत, तीव्र बुद्धि तथा अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि मानसिकता क्षमता वाले वर्गों को आवंटित किया जाय। विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त अन्य स्रोत, सन्दर्भ ग्रन्थ एवं पत्र पत्रिकाएँ उपलब्ध कराई जायें तथा उन्हें इन अधिकारों को प्रत्यक्ष उदाहरण देकर तथा उपर्युक्त चार्ट, उद्धरण आदि से संबंधित कर निर्धारित पक्षों की व्याख्या करने का निर्देश दिया जायेगा। शिक्षक के परिवीक्षण एवं मार्गदर्शन में निर्देशानुसार विद्यार्थी अध्ययन करेंगे। अध्ययन के पश्चात् शिक्षक प्रश्नों के माध्यम से अथवा अन्य किसी प्रभावी विधि से विद्यार्थियों का मूल्यांकन करेगा।

(ग) विधि के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियाँ—इस विधि से अन्य लाभ हैं—स्वाध्याय की आदत का निर्माण, अतिरिक्त गृह कार्य की आवश्यकता न होना, स्वानुशासन, शिक्षक-शिक्षार्थी मधुर सम्बन्ध, पिछड़े बालकों की प्रगति आदि।

इस विधि के दोष एवं परिसीमाएँ भी हैं—एक कालांश में स्वाध्याय एवं मूल्यांकन दोनों सम्पन्न न होने के कारण इस विधि में समय अधिक लगना, सन्दर्भ सामग्री को उपलब्ध कराने में व्यय अधिक होना, शिक्षक के निरन्तर मार्गदर्शन हेतु उपस्थित रहने से विद्यार्थियों की आत्मनिर्भरता में कमी होना तथा कुशाग्र विद्यार्थी अग्रगामी हो जाना। अतः इस विधि को प्रभावी बनाने हेतु शिक्षक को जो सावधानियाँ रखनी हैं उनमें इस विधि के पाठ की पूर्व योजना बनाने एवं सामग्री जुटाने में परिश्रम करना, शाला समय के अतिरिक्त भी समय देना—यदि कालांश में कार्य पूरा न हो या एक पाठ को दो दिन के कालांशों में पूरा करना, पिछड़े छात्रों पर विशेष ध्यान देना तथा कुशाग्रबुद्धि युक्त छात्रों को उन्नत एवं सर्वाधिक कार्य आवंटित करना प्रमुख हैं।

नागरिकशास्त्र शिक्षण की प्रमुख विकासात्मक विधियों के विवेचन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों को स्वक्रिया द्वारा ज्ञानार्जन करने तथा लोकतान्त्रिक व्यवस्था के अनुकूल अभिवृत्तियों, अभिरुचियों एवं कौशल के विकास करने में जो विधियाँ जितनी

सहायक होंगी, वे उतनी ही प्रभावी मानी जायेंगी। यह भी सत्य है कि वर्त्तमान शिक्षा-व्यवस्था में योग्य एवं प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव, विद्यार्थियों की कक्षा में बढ़ती हुई संख्या, शिक्षण-उपकरणों एवं स्थान की अनुपलब्धता, शैक्षिक प्रशासकों की परम्परागत मनोवृत्ति, शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम की प्रभावहीनता आदि कितने ही ऐसे कारण हैं जिनसे इन विकासमान विधियों का प्रयोग असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। किन्तु देश के लिये कुशल व योग्य नागरिकों के निर्माण हेतु नागरिकशास्त्र शिक्षण की इन विधियों का अपनाया जाना वाछनीय है। सीमित साधनों में ही प्रबुद्ध शिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह इन विधियों का यथाशक्ति प्रयोग कर विद्यार्थियों को लाभान्वित करे।

□□□

8 नागरिकशास्त्र शिक्षण : प्रविधियां

उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण की नवीन संकल्पना मे शिक्षण-उद्देश्य, शिक्षण-अधिगम स्थितियाँ तथा मूल्यांकन शिक्षण-प्रक्रिया के प्रमुख तत्त्व हैं एवं परस्पर अन्तर्निर्भर हैं। शिक्षण अधिगम स्थितियाँ ही शिक्षण-विधि कहलाती हैं, जिनका निर्माण शिक्षक द्वारा निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि हेतु किया जाता है तथा जिनकी सफलता एवं असफलता की जाँच मूल्यांकन द्वारा की जाती है। उद्देश्य गंतव्य है, जहाँ तक पहुँचने का मार्ग शिक्षण विधियाँ बनाती हैं। इस मार्ग में शिक्षण विधियों के अन्तर्गत उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुकूल उपयुक्त शिक्षण अधिगम स्थितियों के निर्माण में कुछ प्रविधियाँ भी प्रयुक्त होती हैं जो शिक्षण विधि के निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि मे सहायता करती हैं। इन प्रविधियों का शिक्षण प्रक्रिया में काफी महत्त्व है।

हिन्दी के कुछ लेखक प्रविधि को 'युक्ति', 'रीति' तथा व्यवहार शब्दों में व्यक्त करते हैं। 'प्रविधि' या 'युक्ति' शब्द प्रविधि की परिभाषा या अर्थ प्रकट करने में उपयुक्त हैं।

मोफेट के अनुसार 'समस्त प्रविधियाँ लोकतांत्रिक प्रक्रिया के अनुकूल हों तथा किसी प्रकरण अध्ययन हेतु निर्धारित उद्देश्यों से सम्बद्ध होनी चाहिए। प्रविधियों का प्रयोग शिक्षक के मार्गदर्शन में अधिगम की उपलब्धि हेतु होता है।

स्टोन्स व मोरिस ने शिक्षण युक्ति या प्रविधि उद्देश्य से सम्बद्ध शिक्षक को प्रभावित या प्रभावित करने वाला वह व्यवहार कहा है जो वह शिक्षण की व्यूहरचना विधि के विकास हेतु शिक्षण स्थिति मे प्रदर्शित करता है।......शिक्षण-व्यूहरचना पाठयोजना का सामान्यीकृत रूप होता है, जिसमें व्यवहार-परिवर्तन की संरचना शिक्षण के उद्देश्यों के रूप मे सम्मिलित होती है।

डा आर. ए शर्मा के अनुसार अधिगम परिस्थिति को उत्पन्न करने के लिए शिक्षक विधियों, युक्तियों तथा दृश्यश्रव्य सहायक सामग्री को प्रयुक्त करता है। युक्तियों का चयन अधिगम के उद्देश्यों पर आधारित होता है।........अनुदेशन (शिक्षण) में शिक्षण-युक्तियों का व्यापक रूप निहित रहता है। एक युक्ति को कई विधियों मे प्रयोग करते हैं। शिक्षण-युक्तियाँ, शिक्षण के स्वरूप को प्रस्तुत करती हैं।[1]

---

1. डा. आर. ए. शर्मा : शिक्षण तकनीकी (माडर्न पब्लिशर्स, मेरठ-पृ. 230-231)

उमेश चंद्र कुदेसिया का कथन है कि 'किसी निश्चित विषय-वस्तु का एक विधि से शिक्षण करते समय विधि तो एक ही प्रयोग में लाई जायेगी किन्तु उस विशेष विधि के अन्तर्गत अनेक रीतियां (प्रविधियां) अपनाई जा सकती हैं।........विभिन्न विधियों में प्रयोग की जाने वाली इन रीतियों का एक मात्र उद्देश्य विषय-वस्तु को रोचक तथा बोधगम्य बनाना ही है।[2]

मुनेश्वर प्रसाद के अनुसार 'विधियों के अन्तर्गत कुछ रीतियों तथा व्यवहारों (प्रविधियों) का उपयोग...... शिक्षण में किया जाता है। ये रीतियां तथा व्यवहार, ज्ञानार्जन में सहायक सिद्ध होते हैं। भिन्न-भिन्न रीतियां तथा व्यवहार भिन्न-भिन्न प्रयोजनों के लिये भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रयुक्त होते हैं।' [3]

गुरुशरन दास त्यागी ने यह मत प्रकट किया है कि 'विभिन्न रीतियां (प्रविधियां) विभिन्न उद्देश्यों के लिये भिन्न अवसरों पर प्रयोग में लाई जाती है। वस्तुतः इन सबका अभिप्राय ज्ञानार्जन को प्रभावशाली, ग्राह्य, बोधगम्य एवं रोचक बनाना है। रीतियों का प्रयोग प्रायः स्वतन्त्र रूप से नहीं होता, वरन् किसी न किसी पद्धति के साथ इनका प्रयोग किया जाता है।' [4]

1. प्रविधियाँ निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर अधिगम द्वारा विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने के लिये विधियों की सहायतार्थ प्रयुक्त होती हैं जैसे बेकारी की समस्या प्रकरण की समस्या विधि से शिक्षण करने में प्रयुक्त प्रश्न, उदाहरण, व्याख्या, स्पष्टीकरण, वर्गों में विभक्त कर कार्य का आवंटन आदि प्रयुक्त प्रविधियां पाठ के लिये निर्धारित उद्देश्यों-विद्यार्थियों को बेकारी समस्या का ज्ञान, इससे सम्बद्ध कारणों का अवबोध, इस ज्ञान का समस्या के निराकरण में उपयोग बेकारी समस्या के निराकरण के उपायों में अभिरुचि एवं अभिवृत्ति विकसित करना तथा विचार, तर्क एवं निर्णय करने के कौशल के विकास की उपलब्धि में उपयुक्त शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण कर प्रकरण की शिक्षण विधि-समस्या विधि के सहायक के रूप में कार्य करती हैं।

2. प्रविधियां ज्ञानार्जन को रोचक, बोधगम्य एवं प्रभावी बनाती हैं।

3. प्रविधियों का शिक्षण-प्रक्रिया में स्वतन्त्र अस्तित्व न होकर उन्हें किसी प्रकरण की शिक्षण विधि के अंग के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, जैसे राज्य के ऐतिहासिक विकास प्रकरण को व्याख्यान विधि से पढ़ाते समय पूछे जाने वाले प्रश्न अर्थात् प्रश्न प्रविधि व्याख्यान विधि का अंग बन उसकी सहायक है। किन्तु यदि ग्रामपंचायत के कार्य एवं अधिकार प्रकरण को यदि प्रश्न-विधि से पढ़ाया जायेगा तो उसमें प्रयुक्त प्रश्न प्रविधि के रूप में नहीं बल्कि एक विधि के ढांचे में पूछे जायेंगे तथा प्रश्न विधि से पढ़ाये जा रहे इस प्रकरण में प्रयुक्त कथन (विवरण) या उदाहरण या

---

2. उमेश चन्द्र कुदेसिया : नागरिक-शास्त्र शिक्षण-कला, पृ. 87
3. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन का शिक्षण, पृ. 145
4. गुरुशरन दास त्यागी : नागरिक-शास्त्र का शिक्षण, पृ. 106

व्याख्या की युक्तियां, प्रश्न-विधि की सहायक प्रविधियां हैं। इस प्रकार किसी पाठप्रकरण को पढ़ाने की मुख्य विधि के अंग के रूप में ही प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है।

4. किसी एक विधि की कोई निश्चित प्रविधि निर्धारित नहीं होती। एक ही प्रविधि अनेक विधियों में प्रयुक्त हो सकती है तथा एक विधि में अनेक प्रविधियों का प्रयोग किया जा सकता है। जैसे ग्रामपंचायत के कार्य एवं अधिकार प्रकरण में प्रश्न-विधि के अन्तर्गत अनेक प्रविधियों-कथन, व्याख्या, उदाहरण आदि-का प्रयोग कर सकते हैं।

5. उद्देश्यों के अनुसार विभिन्न शिक्षण अधिगम स्थितियों के निर्माण हेतु भिन्न-भिन्न प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है। जैसे समस्या-विधि में विद्यार्थियों का चिन्तन, तर्क एवं निर्णय कौशल के विकास के उद्देश्य के अनुकूल स्थितियों के निर्माण में प्रश्न प्रविधि उपयुक्त है तथा अवबोध के लिये स्पष्टीकरण, व्याख्या एवं विवरण प्रविधियों का प्रयोग करना उचित है।

शिक्षा की नवीन संकल्पना के अनुकूल अब लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं क्रिया द्वारा सीखने के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुकूल प्रश्न, नाट्यीकरण, कार्य-आवर्टन, अवलोकन निरीक्षित अध्ययन आदि क्रिया-शीलन प्रधान प्रविधियां प्रयुक्त की जाती हैं।

6. विधि की भांति प्रविधियों का प्रभावी उपयोग भी शिक्षक की योग्यता, कुशलता एवं सूझबूझ पर निर्भर है।

विधि एवं प्रविधि का अन्तर—प्रविधि के अर्थ एवं उसकी विशेषताओं के उपर्युक्त विवेचन से उसका विधि से अन्तर भी स्पष्ट हो जाता है। विधि के अन्तर्गत प्रयुक्त प्रश्न, उदाहरण, स्पष्टीकरण, कथन, वर्णन, तुलना, नाट्यीकरण आदि प्रविधियां या युक्तियां इस विधि के अंग के रूप में उसकी सहायता करती हैं। इन प्रविधियों का प्रयुक्त मुख्य विधि से कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है, ये तो उद्देश्यों के अनुकूल शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण में विधि की सहायक मात्र है। विधि तथा प्रविधि दोनों का चयन पाठ-प्रकरण विशेष के लिये निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर होता है तथा दोनों ही उद्देश्यों की उपलब्धि अर्थात् अधिगम द्वारा विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों की प्राप्ति में संलग्न रहती है। विधि पाठ्यवस्तु का विद्यार्थियों में अधिगम कराने हेतु शिक्षण की व्यूहरचना है जबकि प्रविधि विधि के विकास हेतु शिक्षण की युक्ति है।[5] डा. दीक्षित एवं बघेला के शब्दों में-'विधि अधिक व्यापक है जिसके आंचल में कई प्रविधियां या प्रक्रियाएं समाहित की जा सकती हैं। या यों कहें कि एक विधि को काम में लेते समय एक या एक से अधिक प्रविधियां काम में ली जा सकती हैं।'[6]

---

5. डा. आर. ए. शर्मा : शिक्षण-तकनीकी, पृ. 230
6. डा. उपेन्द्र नाथ दीक्षित एवं हेतसिंह बघेला : इतिहास-शिक्षण (राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर-पृ. 76)

जगदीश नारायण पुरोहित ने विधि तथा प्रविधि का अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा है कि'शिक्षण विधि शिक्षण के आयोजन के लिये एक व्यापक ढांचा निर्धारित करती है, जिसके अनुसार शिक्षण आयोजित होता है। परन्तु विधियों के अन्तर्गत विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करना होता है, जैसे प्रश्न पूछना, विवरण देना, वर्णन करना, तुलना करना आदि।........इन युक्तियों का प्रयोग विधि द्वारा निर्धारित ढांचे में किया जाता है। स्पष्ट है युक्तियां शिक्षण कार्य से सीधी सम्बन्धित होती है।' 7

उदाहरण के रूप में कक्षा 10 में नागरिकशास्त्र के पाठ-प्रकरण संयुक्त राष्ट्र संघ और विश्व-शांति का विचार-विमर्श विधि से अध्ययन करने में शिक्षक अनेक युक्तियों या प्रविधियों का प्रयोग करेगा। जैसे प्रकरण के विभिन्न पक्षों के अध्ययन हेतु कक्षा को वर्गों में विभक्त कर उन्हें कार्य आवंटित करना, पाठ-प्रेरणा या प्रकरण के चुनाव वर्ग विचारविमर्श के समय कक्षा के समक्ष वर्ग कार्य की समीक्षा करने में तथा मूल्यांकन के समय प्रश्नोत्तर का प्रयोग, निःशस्त्रीकरण, गुटनिर्पेक्षता, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव आदि शब्दों की व्याख्या, इजराइल-अरब, अफगानिस्तान-रूस, दक्षिणी अफ्रीका आदि के संघर्ष स्थलों का उदाहरण देकर राष्ट्र संघ द्वारा शांति के प्रयासों का विवरण देना, उन्हें मानचित्र द्वारा स्पष्ट करना, शिक्षा, व्यापार, व्यवसाय, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में राष्ट्र संघ द्वारा विश्व-शांति हेतु किये गये कार्यों का विवरण व तुलना आदि विभिन्न प्रविधियों....कार्य आवटन, प्रश्न, व्याख्या, मानचित्र, दृश्य-उपकरण का प्रयोग, विवरण, तुलना आदि प्रविधियों का प्रयोग शिक्षक द्वारा किया जायेगा।

इस प्रकरण की शिक्षण-प्रक्रिया में यह दृष्टव्य है कि मुख्य विचार-विमर्श विधि के व्यापक ढांचे या प्रतिकल्प के अन्तर्गत ये सभी प्रविधियां-पाठ्यवस्तु को बोधगम्य, रोचक एवं विचार-प्रेरक बनाने के लिये प्रयुक्त हुई हैं। इनका प्रयोजन प्रकरण के निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने के लिये उपयुक्त शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण करना है। इन प्रविधियों का चुनाव भी उद्देश्यों एवं विधि-विशेष के आधार पर किया गया है तथा विधि से पृथक इनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है।

प्रविधियों के प्रकार तथा नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रयुक्त प्रविधियां

विभिन्न शिक्षाविदों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षण-प्रविधियों का उल्लेख किया है जिससे विधि तथा प्रविधि में भ्रम उत्पन्न होने की आशंका रहती है। अतः इनका विधि से अन्तर को दृष्टि में रखते हुए उचित निर्धारण करना अपेक्षित है। प्रायः सभी लेखकों द्वारा उल्लिखित प्रविधियों की समेकित सूची निम्नांकित है—

---

7. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन (राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर-पृ. 202)

1. प्रश्न प्रविधि 2. कथन या विवरण प्रविधि 3. नाट्यीकरण एवं छद्माभिनय प्रविधि, 4. वर्णन प्रविधि, 5. व्याख्या प्रविधि, 6. तुलना प्रविधि, 7. स्पष्टीकरण प्रविधि, 8. कार्य-निर्धारण या आवर्टन प्रविधि, 9. परिवीक्षित अध्ययन प्रविधि, 10. समाजीकृत अभिव्यक्ति या विचार विमर्श प्रविधि, 11. अवलोकन या प्रेक्षण प्रविधि 12 अभ्यास प्रविधि, 13. श्रव्य-दृश्य प्रविधि, 14. परीक्षण या मूल्यांकन प्रविधि तथा 15 समन्वय प्रविधि ।

प्रथम सात प्रविधियां तो बहुधा शिक्षण-विधि के अंग स्वरूप प्रयुक्त होती हैं जिनका अधिकांश शिक्षाविदों ने भी समर्थन किया है । ये प्रविधियां शिक्षा-क्षेत्र में शिक्षक-प्रशिक्षण हेतु विकसित एक नवीन पद्धति—सूक्ष्म अध्यापन के आधार पर भी अध्यापन के मुख्य कौशल अथवा प्रविधियों में सम्मिलित है, जिनका अभ्यास शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के लिये अब आवश्यक माना जा रहा है । इन्ही प्रविधियों का नागरिक शिक्षण हेतु विवेचन किया जा रहा है ।

अन्य प्रविधियां जिनका उल्लेख उपर्युक्त सूची में किया गया है उन्हें प्रविधि की श्रेणी में रखना उपयुक्त नहीं है क्योंकि उनमें से परिवीक्षित अध्ययन, समाजीकृत अभिव्यक्ति या विचारविमर्श तथा अवलोकन या प्रेक्षण वस्तुत: विधियों के रूप में विकसित हो गई हैं और उनका, अन्य किसी विधि में सम्मिश्रण करना या उन्हें प्रविधि के रूप में प्रयुक्त करना किसी प्रकरण के अध्ययन में मुख्य प्रयुक्त विधि के साथ न्याय करना नहीं कहा जायेगा क्योंकि उपलब्ध कालांश-अवधि में इनका किसी अन्य विधि से प्रविधि के रूप में मिश्रण करना व्यावहारिक एवं संगत नहीं होगा ।

प्रविधियों के चयन का आधार

नागरिकशास्त्र के शिक्षण में उपरोक्त सात प्रमुख प्रविधियों का चयन सावधानी से किया जाना चाहिए ताकि शिक्षण-प्रक्रिया प्रभावी हो सके । इस चयन के निम्नांकित आधार हैं—

(1) अध्याप्य पाठ-प्रकरण की पाठ्य-सामग्री के आधार पर उपयुक्त प्रविधि का चयन करना । जैसे ग्राम पंचायत के प्रकरण की पाठ्यवस्तु के शिक्षण में स्थानीय ग्राम पंचायत पर प्रश्न पूछने, ग्राम की गतिविधियों से उदाहरण देने, गृहकर, चुंगी कर आदि शब्दों की व्याख्या या स्पष्टीकरण आदि की प्रविधियों का प्रयुक्त किया जा सकता है ।

(2) शिक्षण-विधि के आधार पर प्रविधि का चयन किया जाय । विधान सभा की विधि-निर्माण प्रक्रिया प्रकरण को परिवीक्षित अध्ययन शिक्षण-विधि को प्रभावी बनाने हेतु विद्यार्थियों द्वारा कक्षा में विधान सभा की भांति सत्ता पक्ष एवं विरोधी दलों में विभक्त हो विधिवत किसी विधेयक के पारित किये जाने को नाट्यीकरण या छद्माभिनय प्रविधि द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है । इस विधि से अध्ययन की हुई सामग्री का व्यावहारिक ज्ञान हो सकेगा ।

(3) निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर प्रविधि का चुनाव किया जाना वांछनीय है । जैसे भारत की जनसंख्या समस्या को विचार-विमर्श शिक्षण विधि के अन्तर्गत विचा-

धियों मे चिन्तन, तर्क एवं निर्णय शक्ति के विकास के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए विचार-प्रेरक, विश्लेषणात्मक एवं मूल्यांकनात्मक प्रश्नों के प्रयोग से प्रश्न प्रविधि, प्रभावी होती है। बढ़ती जनसंख्या के परिणामों के लिये उदाहरण प्रविधि विकसित एवं विकासशील देशों की समृद्धि एवं निर्धनता स्पष्ट करने के लिये तुलना प्रविधि एवं तथ्यों व आंकड़ों के समझाने में व्याख्या एवं स्पष्टीकरण प्रविधि उपयुक्त है।

(4) प्रविधि के चुनाव मे शिक्षक की अभिरुचि, योग्यता एवं कौशल का ध्यान रखना भी आवश्यक है। जैसे नाट्यीकरण प्रविधि का प्रभावी प्रयोग नाटक के प्रति अभिरुचि या अभिनय कला का व्यावहारिक ज्ञान रखने वाला अध्यापक ही कर सकता है। इसी प्रकार कथन, वर्णन एवं विवरण प्रविधियों को प्रभावी बनाने में शिक्षक का भाषा पर अधिकार होना, स्पष्ट एवं भावानुकूल आरोहावरोह से बोलने में दक्ष होना तथा रोचक व सजीव वर्णन करने में कुशल होना आवश्यक है।

प्रविधियों का अर्थ, विधि से भेद, उनके प्रकार तथा उन्हें चुनने के तथ्यों का ध्यान रखते हुए नागरिकशास्त्र-शिक्षण में उनके प्रयोग की प्रक्रिया का ज्ञान होना अपेक्षित है।

नागरिक शिक्षण की विभिन्न प्रविधियों का सोदाहरण विवेचन

प्रश्न प्रविधि—

(1) अर्थ एवं महत्त्व—प्रश्न प्रविधि नागरिकशास्त्र शिक्षण में सबसे अधिक प्रचलित प्रविधि है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि प्रयोजन के अनुकूल प्रश्नोत्तरों द्वारा विद्यार्थियों को सक्रिय रखते हुए प्रकरण का विकास किया जाय। बहुधा शिक्षक प्रश्नों का उचित प्रयोग नही कर पाते। पुरोहित का कथन है कि 'शिक्षकों द्वारा इसके अत्यधिक उपयोग किये जाने के कारण ही कभी-कभी यह कहा जाता है कि कुशल अध्यापक वह है जिसने प्रश्न पूछने की कला भली भांति अर्जित कर ली हो।'[8] यह कथन सत्य है।

(2) प्रयोजन—प्रश्न प्रविधि को प्रयुक्त करने के निम्नांकित मुख्य प्रयोजन हैं—

(i) पाठ-प्रेरणा हेतु, जैसे आर्थिक समस्यों के अन्तर्गत महंगाई की समस्या प्रकरण की प्रेरणा या इसके प्रति विद्यार्थियों की जिज्ञासा, उनके दैनिक जीवन में महंगाई के कारण उत्पन्न कष्टों पर प्रश्न कर, उत्पन्न की जा सकती है।

(ii) विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान की जांच हेतु जैसे विधान सभा या लोक सभा के चुनाव प्रकरण मे उनके पूर्व ज्ञान ग्राम पंचायत या नगर-पालिका चुनावों पर प्रश्न किये जा सकते हैं।

(iii) पाठ के विकास हेतु, जैसे राष्ट्रपति के अधिकार प्रकरण में राज्यों के राज्यपालो के अधिकारो अथवा व्यवस्थापिका कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं आपातकाल से सम्बन्धित प्रश्न कर पाठ्यवस्तु को विकसित किया जा सकता है।

(iv) पाठ की आवृत्ति हेतु, प्रत्येक इकाई के पश्चात् उससे पाठ्य-वस्तु पर प्रश्न पूछे जाते हैं, जैसे सरकार के अंग पाठ को तीन इकाइयों—व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व

8. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृ 202

न्यायपालिका में विभक्त कर प्रत्येक इकाई के शिक्षण के बाद उसकी आवृत्ति कुछ चुने हुए प्रश्नों से की जाय।

(v) पाठ के मूल्यांकन हेतु, पाठ के निर्धारित उद्देश्यों पर आधारित पाठ के अन्त में वस्तुनिष्ठ एवं लघूत्तरात्मक प्रश्न पूछे जाते हैं।

(3) **प्रश्नों के प्रकार**—निम्नांकित चार वर्गों मे विभक्त किये जा सकते हैं—

(i) **प्रस्तावनात्मक प्रश्न**—पाठ के आरम्भ मे प्रकरण के अध्ययन हेतु प्रेरणा देने वाले प्रश्न प्रस्तावनात्मक प्रश्न होते हैं। प्रयोजन के अन्तर्गत उद्धृत प्रकरण जैसे महगाई की समस्या के प्रति विद्यार्थियों की जिज्ञासा इन प्रश्नों से जागृत की जा सकती है। आप कन्ट्रोल की दुकान से राशन-कार्ड द्वारा क्या वस्तुएं खरीदते है? शक्कर का बाजार मे भाव अधिक क्यो हैं? अन्य कौनसी वस्तुए हैं जो महगी हैं? इस मंहगाई से हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है? महगाई के क्या कारण है? प्रस्तावनात्मक प्रश्न संख्या मे कम हो, किन्तु विचार-प्रेरक एवं पाठ-प्रेरणाप्रद हों।

(ii) **विकासात्मक प्रश्न**—प्रयोजन के अन्तर्गत ऐसे प्रश्नो के उदाहरण दिये गये हैं। ऐसे प्रश्न पाठ के विकास सोपान मे पाठ्यवस्तु को अग्रसर करने हेतु किये जाते हैं, जैसे राष्ट्रपति के अधिकार प्रकरण मे आपात-कालीन अधिकार के तथ्यो का विकास 1977 में घोषित आपातकाल पर प्रश्न किया जा सकता है और विद्यार्थियों से ही यह तथ्य विकसित कराया जाय कि बाह्य आक्रमण, आन्तरिक अशांति तथा वित्तीय संकट के समय राष्ट्रपति आपातकालीन अधिकारो का प्रयोग करता है।

(iii) **आवृत्यात्मक प्रश्न**—पाठ की प्रत्येक इकाई के बाद पठित अंश की आवृत्ति हेतु प्रश्न किये जाते हैं। जैसे सरकार के अंग प्रकरण की पहली इकाई व्यवस्थापिका पढ़ाने के बाद के आवृत्यात्मक प्रश्न होंगे—व्यवस्थापिका किसे कहते हैं? इसके क्या कार्य है? विधेयक किस प्रकार पारित किया जाता है? ससद या विधान सभा मे विरोधी दल की क्या भूमिका रहती है?

(iv) **मूल्यांकनात्मक प्रश्न**—प्रत्येक पाठ के अन्त मे तथा पारम्परिक मूल्यांकन हेतु प्रत्येक इकाई तथा अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक परीक्षा मे इस प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं। परिशिष्ट में दी गई पाठ-योजनाओं म पाठ के अन्त में पूछे जाने वाले मूल्यांकन प्रश्नों के नमूने देखिये।

(4) **प्रश्नों का निर्माण**—प्रश्न प्रविधि को प्रभावी बनाने में प्रश्नो का विधिवत् निर्माण महत्वपूर्ण है। प्रश्नों के निर्माण म निम्नांकित बिन्दु द्रष्टव्य हैं।

(i) भाषा-प्रश्नों की भाषा सरल, शुद्ध और स्पष्ट हो ताकि प्रत्येक विद्यार्थी उन्हें समझ सके। जैसे राष्ट्रपति के आपातकालीन अधिकार क्या है? इस प्रश्न में वर्तनी व व्याकरण विन्यास दोनों की अशुद्धियाँ हैं—इसे इस प्रकार शुद्ध रूप मे पूछा जाय—राष्ट्रपति के आपातकालीन अधिकार क्या है? इसी प्रकार अलंकारिक भाषा का जटिल प्रश्न है। अंकुश के समान शासन को निरंकुश स्वेच्छाचारी बनने से रोकने के लिए जागृत प्रबुद्ध

जनमत कृष्ण की भांति किस प्रकार सहायक हो सकता है ? स्पष्ट है प्रश्न समझना कि छात्रों के लिए कठिन होगा– इसे सरल सीधे ढंग से पूछा जाय –शासन को निरंकुश बनने से रोकने के लिये जनमत किस प्रकार सहायक हो सकता है ?

(ii) उपयुक्तता–विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुकूल प्रश्न उपयुक्त होने चाहिए। छोटी कक्षाओं में सरल, विवरणात्मक या तथ्य निरूपण सम्बंधी प्रश्न ठीक रहते है जबकि बड़ी कक्षाओं मे विचार-प्रेरक विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक प्रश्न उपयुक्त होते हैं।

(iii) तारतम्यता–प्रश्न क्रमबद्ध, पूर्वापर सम्बन्ध युक्त तथा एक निश्चित विकास-क्रम में पूछे जाने चाहिए। असबद्ध एवं अनर्गल प्रश्न पूछना निरर्थक है।

(iv) विचारोत्तेजकता–केवल तथ्यों को प्रकट करने वाले प्रश्न हमेशा नही पूछे जाने चाहिए जिससे कि छात्रों में रटने की प्रवृत्ति उत्पन्न न हो। विचार-प्रेरक प्रश्न पूछे जायें जिससे उनकी तर्क, चिन्तन एवं निर्णय शक्तियों का विकास हो सके। जैसे नागरिक के क्या अधिकार हैं इस प्रश्न के बजाय नागरिक को सम्पत्ति का अधिकार क्यों दिया गया है या नागरिक को विचार अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता के अधिकार को किस प्रकार प्रयोग करना चाहिए ?–प्रश्न पूछना उपयुक्त रहेगा। क्या की अपेक्षा क्यों, कैसे आदि के प्रश्न विचार प्रेरक होते हैं।

(v) विशिष्टता – प्रश्न ऐसे हों जिनका एक ही विशिष्ट उत्तर हो। एक ही प्रश्न के विभिन्न उत्तर वाले प्रश्न ठीक नही होते। जैसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के बिना कौन से विधेयक लोक सभा मे प्रस्तुत किये जा सकते है ?–इस प्रश्न के अनेक उत्तर होंगे। इसके बजाय यह विशिष्ट एक उत्तर वाला प्रश्न पूछा जाय कि राष्ट्रपति की स्वीकृति किस प्रकार के विधेयक को संसद मे प्रस्तुत करने के लिये आवश्यक है ? इसका उत्तर एक ही होगा – धन सम्बन्धी विधेयक।

(vi) उद्देश्य परकता–पाठ के लिये निर्धारित उद्देश्यों पर ही प्रश्न आधारित होने चाहिए।

(vii) वैविध्यपूर्णता- क्यो, क्या, कैसे, कहां आदि प्रकार मे से किसी एक प्रकार का ही प्रश्न पूछा जाय। प्रश्नो में विविधता रहे ताकि रोचकता एवं सार्थकता बनी रहे।

निम्नांकित प्रकार के प्रश्न पूछना वांछनीय नही है, इसका ध्यान शिक्षकों को रखना चाहिए—

(1) हां या "नहीं" के प्रश्न—जिन प्रश्नो का उत्तर हां या नहीं मे आता हो, वे विचार-प्रेरक नहीं कहे जा सकते। ऐसे प्रश्नों के उत्तर छात्र प्रायः बिना सोचे-समझे या अनुमान से दे देते है। जैसे—क्या राष्ट्रपति का प्रत्यक्ष चुनाव होता है ? या क्या आपात्-काल मे नागरिकों की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध होता है ? के उत्तर क्रमशः नहीं या हाँ में होंगे। इनके बजाय इन्हें विचारोत्तेजक बनाया जाय। जैसे राष्ट्रपति के निर्वाचन में कौन सी संस्थाएं भाग लेती है ? तथा आपातकाल में नागरिकों की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध क्यों लगाया जाता है ?

(2) सम्मिलित प्रश्न— एक ही प्रश्न मे दो प्रश्न सम्मिलित करके पूछना दोषपूर्ण है ? जैसे जिला परिषद् एवं नगर परिषद् के कार्य क्या है ? इसे पृथक दो प्रश्नों मे एक जिला परिषद पर तथा दूसरा नगर परिषद् पर पूछा जा सकता है। दूसरा उदाहरण ग्राम पंचायत के कार्य क्या है और वह उन्हे कैसे करती है ? सम्मिलित प्रश्न है—इसे 'क्या' और 'कैसे' मे विभक्त कर पूछा जाय।

(3) प्रतिध्वन्यात्मक प्रश्न—कुछ प्रश्न विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण के बाद ही तुरन्त पूछ लिये जाते है जो दोषपूर्ण हैं क्योंकि विद्यार्थी को उत्तर की प्रतिध्वनि या आभास पहले से ही हो जाता है और उनकी स्मृति या विचारणा का कोई उपयोग नही होता। जैसे यह कथन, सरकार के तीन अंग होते है—व्यवस्थापिका,, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका। तुरन्त ही यह प्रश्न पूछना कि सरकार के तीन अंग कौन से हैं ? दोषपूर्ण है।

(4) अपूर्ण प्रश्न—मानो कि नगरपालिका की आय का साधन-चुंगीकर है और प्रश्न पूछते है कि नगरपालिका कौन से कर लगाती है ? तो यह प्रश्न अस्पष्ट और अपूर्ण माना जायेगा—पूछना चाहिए कि नगर पालिका क्षेत्र मे बाहर से आने वाले सामान पर कौन सा कर लगाया जाता है ?

(5) पदलोपी प्रश्न—मूल्यांकन के समय पदलोपी प्रश्न पूछना ठीक रहता है किंतु पाठ के अन्य सोपानो मे पूर्ण वाक्य मे उत्तर वाले प्रश्न हां पूछना उपयोगी रहता है जिससे कि विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति का भी विकास हो सके। जैसे राष्ट्रसंघ की स्थापना सन........ मे हुई, वाक्य मे रिक्त स्थान की पूर्ति 24 अक्तूबर 1945' से करवाने की अपेक्षा सीधा प्रश्न राष्ट्रसंघ की स्थापना की तिथि क्या है ? पूछना ठीक होगा।

5. प्रश्न पूछने की विधि—प्रश्न निर्माण की भांति कक्षा में प्रश्न पूछने की विधि भी उसे प्रभावी बनाने मे महत्त्वपूर्ण है। इसके लिये निम्नांकित बिंदु ध्यातव्य है—

(1) प्रश्न पूरी कक्षा को संबोधित कर पूछा जाय ताकि प्रत्येक विद्यार्थी को स्वयं से पूछे जाने की सम्भावना के कारण उसे प्रश्न पर मानसिक रूप से विचार करने की प्रेरणा मिले। जैसे रमेश तुम बताओ कि अधिकार किसे कहते हैं ? प्रश्न मे किसी निश्चित छात्र की ओर संकेत है, अतः अन्य छात्र प्रश्न के प्रति उदासीन रहकर निष्क्रिय हो उसकी उपेक्षा करेंगे।

(2) प्रश्न पूछने के बाद तत्काल ही छात्रों को निर्दिष्ट कर उत्तर देने को न कहा जाय बल्कि कुछ समय उन्हें प्रश्न समझ कर सोचने-विचारने का अवसर दिया जाय।

(3) प्रश्नो का कक्षा मे वितरण विवेकपूर्ण हो। प्राय. शिक्षक कुछ कुशाग्र बुद्धि के छात्रों को ही उत्तर देने का अवसर देते है, जिनसे मंदबुद्धि एवं औसत छात्रो की उपेक्षा हो जाती है जो ठीक नहीं है। अध्यापक को प्रत्येक विद्यार्थी का विकास करना है, अतः कक्षा के सभी मानसिक स्तर के छात्रों को बारी-बारी से उत्तर देने हेतु प्रेरित किया जाय।

(4) शिक्षक द्वारा प्रश्न को दुहराना भी दोषपूर्ण है। विशेष परिस्थित में ही प्रश्न दुहराया जाय जबकि छात्र प्रश्न को सुनने या समझने मे असमर्थ हों। दुहराने से

व्यर्थ में समय नष्ट होता है तथा विद्यार्थी भी प्रश्न दुहराये जाने की संभावना में पहली बार में प्रश्न को अवधानपूर्वक नहीं सुनते। इसके लिये यह भी आवश्यक है कि शिक्षक प्रश्न स्पष्ट तथा कक्षाकक्ष के अनुकूल उच्च स्वर में पूछे।

(5) प्रश्न आत्मविश्वास से स्वाभाविक ढंग से पूछे जाने चाहिए। हड़बड़ी में घबड़ा कर प्रश्न पूछना हास्यास्पद हो जाता है।

(6) प्रश्न पूछने के पूर्व अनावश्यक भूमिका नहीं बांधी जाय। जैसे प्रश्न के पूर्व शिक्षक यह कहे कि मैं प्रश्न पूछूंगा कौन बतायेगा या जो बतलाने को तैयार हो वह हाथ उठाये या देखें किसको याद है– यह उचित विधि नहीं है।

6. विद्यार्थियों से उत्तर प्राप्त करने की विधि — प्रश्न प्रविधि में प्रश्न निर्माण व उन्हें पूछने के सही तरीकों में ही नहीं, बल्कि उनके उत्तर विद्यार्थियों से प्राप्त करने की विधि में भी शिक्षक को कुशल होना आवश्यक है। इसके लिये निम्नांकित सावधानियां जरूरी हैं।

(1) उत्तर सहानुभूति से प्राप्त किये जायं। गलत उत्तरों से झल्ला कर या क्रोध में आकर सम्बन्धित छात्र को डाटना-फटकारना नहीं चाहिए बल्कि अन्य छात्रों के सहयोग से उत्तर शुद्ध करा कर उससे पुनः शुद्ध बुलवाना भी चाहिए।

(2) अच्छे उत्तरों पर छात्रों की सराहना की जाय ताकि प्रोत्साहन मिलता रहे किन्तु सराहना भी संयमपूर्ण की जाय यह नहीं कि बार-बार बहुत ठीक, अति सुन्दर, शाबाश आदि कह कर कक्षा को मुशायरा का हास्यास्पद रूप दे दिया जाय।

(3) शिक्षक को विद्यार्थियों से भी प्रश्न आमंत्रित करने चाहिए तथा उन्हें परस्पर प्रश्न पूछने की अनुमति भी देनी चाहिए।[9] इससे पाठ्यवस्तु के सम्बन्ध में विद्यार्थियों की शंकाओं का कक्षा-सहयोग से समाधान सम्भव होता है।

(4) उत्तर देते समय छात्र को गलती के लिये बीच में नहीं टोकना चाहिए, उसे पूरी बात कहने का अवसर दिया जाय फिर कक्षा-सहयोग से उसकी त्रुटियों की ओर उसका ध्यान आकर्षित किया जाय और उन्हें शुद्ध कराया जाय।

(5) विद्यार्थियों को पूर्ण वाक्यों में उत्तर देने को प्रोत्साहित किया जाय ताकि उनकी भाषा एवं अभिव्यक्ति सम्बन्धी त्रुटियों का भी निराकरण किया जा सके।

इस प्रकार शिक्षक अपनी सूझ-बूझ से प्रश्न-प्रविधि का उपयोग पाठ्यक्रम की मुख्य शिक्षण-विधि को प्रभावी बनाने में कर सकता है।

2. कथन या विवरण प्रविधि

नागरिकशास्त्र शिक्षण में कथन प्रविधि का उपयोग भी बहुधा किया जाता है। कथन या व्याख्यान विधि एक स्वतंत्र विधि है इसे प्रविधि के रूप में प्रयुक्त करना ही

---

9. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृ. 208-209

(ii) प्रविधि-प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनुप्रयोग—जो तथ्य प्रश्न प्रविधि या अन्य किसी शिक्षण-उपकरण से विद्यार्थियों से जानना सम्भव न हो, उनके लिये प्रश्न पूछना निरर्थक है। ऐसी स्थिति में उन तथ्यों को शिक्षक कथन द्वारा समझाता है। कथन प्रविधि के प्रयोग में निम्नांकित बिन्दु ध्यान देने योग्य हैं—

(1) पाठ की प्रस्तावना या प्रेरणा के समय प्रविधि उपयुक्त नहीं, (2) पाठ के विकास के समय ही यह अधिक उपयुक्त होती है, (3) कथन विद्यार्थियों की आयु एवं मानसिक विकास के अनुकूल भाषा-शैली में होना चाहिए, (4) कथन के मध्य सहायक सामग्री (चित्र, मानचित्र, चार्ट आदि) का प्रयोग उसे रोचक एवं बोधगम्य बनाता है, (5) कथन आवश्यकतानुसार संक्षिप्त हों, लम्बे कथन नीरस एवं उबाऊ हो जाते हैं, (6) कथन के मध्य विद्यार्थियों को मानसिक रूप से सक्रिय रखने हेतु इसका सम्मिश्रण प्रश्न-प्रविधि से किया जा सकता है, (7) कथन की भाषा शुद्ध एवं उच्चारण ठीक हो (8) कथन को भावानुकूल आरोहावरोह एवं भाव-भंगिमा द्वारा स्वाभाविक बनाया जाय तथा (9) कथन प्रविधि का पाठ में बाहुल्य न हो, आवश्यकतानुकूल ही हो।

नागरिकशास्त्र शिक्षण में कथन रीति (प्रविधि) का व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है।[10] फिर भी इसका प्रयोग उपर्युक्त बिन्दुओं पर ध्यान रखते हुए जब अन्य प्रविधियाँ कारगर नहीं हो, तब ही करना चाहिए। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में भारत में राज्य के विकास को समझाने के लिये वैदिक कालीन आर्य जनों (कबीलों), रामायण एवं महाभारत काल के जन-पदों को जीत कर स्थापित चक्रवर्ती राजा, प्राचीन राज्य के रूप-राजतंत्र एवं गणतंत्र, मौर्य एवं गुप्तकाल के साम्राज्य, मध्यकाल की सामन्ती व्यवस्था में राज्य का स्वरूप, ब्रिटिश काल में संसदीय प्रणाली तथा स्वाधीनोत्तर भारत के लोक-तन्त्रात्मक गणराज्य इन विभिन्न स्वरूपों को कथन प्रविधि से अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। किन्तु कथन प्रविधि के मध्य में तत्कालीन मानचित्र राज्य के प्रकारों के चार्ट समय रेखा आदि शिक्षण-सहायक उपकरणों का प्रयोग तथा विचारप्रेरक प्रश्न भी किये जायँ।

(iii) प्रविधि के गुण दोष एवं प्रयोग में सावधानियाँ—

इस प्रविधि का सबसे बड़ा लाभ यह है कि अज्ञात तथ्यों एवं घटनाओं को मात्र इसी प्रविधि से विद्यार्थियों को बोधगम्य, रोचक एवं सरल बनाया जा सकता है। कथन प्रविधि में विद्यार्थियों की सक्रियता न होने के कारण कुछ लोग इसे अनुपयोगी मानते हैं किन्तु कथन-श्रवण के समय मानसिक रूप से वर्णित तथ्यों व घटनाओं के बिम्ब बनाने एवं रचनात्मक कल्पना करने में विद्यार्थी सक्रिय रहते हैं। पी. एन. अवस्थी के शब्दों में विद्यार्थी कक्षा में निश्चिन्त बैठे कोई वार्ता सुन रहे हैं तो इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनके मस्तिष्क भी निष्क्रिय हैं।[11]

---

10. उमेश चन्द्र कुदेशिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण कला पृ. 88
11. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण-विधि पृ. 72

3. नाट्यीकरण अथवा छद्माभिनय प्रविधि

1. अर्थ एवं महत्व–डा. दीक्षित एवं वर्मा के शब्दों में–'अभिनय का अर्थ अतीत या वर्तमान कीकिसी स्थिति को क्रिया और सजीव बनाना है।'[12] नाट्यीकरण प्रविधि का अर्थ अभिनय द्वारा किसी चरित्र या पात्र की भूमिका इस प्रकार करनी है कि उसके चारित्रिक गुण एवं उससे सम्बद्ध घटनाएँ सक्रियता से सजीव प्रतीत हो। नाट्यीकरण अतीत या वर्तमान के चरित्र या पात्रो का छद्माभिनय अथवा उनकी भूमिका प्रदा करना है। नाट्यीकरण का शैक्षणिक उपयोग आधुनिक काल की एक नवीन उद्भावना है, वैसे प्राचीन काल से ही इस प्रविधि का प्रयोग उपदेश या शिक्षा देने के उद्देश्य से होता रहा है। जैसे देश-प्रेम, वीरता, साहस, त्याग एव बलिदान जैसे नागरिक गुणों के अप्रत्यक्ष शिक्षण हेतु शिवाजी, महाराणा प्रताप, झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई, सरदार भगतसिंह, सुभाषचन्द्र बोस आदि अतीत के महापुरुषों के जीवन से सम्बद्ध घटनाओं का अभिनय करना। वर्तमान के पात्र एवं घटनाओं का नाट्यीकरण भी शैक्षणिक शक्यताओं एवं निहितार्थों से परिपूर्ण है। जैसे ग्राम-पंचायत, विधानसभा, लोकसभा, राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद की बैठक, न्यायालय आदि के कूट-अधिवेशन आयोजित कर किसी मुद्दे, मामले या अभियोग के सम्बद्ध चरित्रो एव पात्रों के अभिनय द्वारा नाट्यीकरण या छद्माभिनय प्रविधि को प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों को सम्बद्ध तथ्यों की जानकारी कराना है। नाट्यीकरण प्रविधि में शिक्षक के निर्देशन मे विद्यार्थी ही अभिनय-प्रक्रिया को सम्पन्न करते हैं।

इस प्रविधि के महत्त्व के विषय मे अर्नेस्ट हार्न का मत है कि 'इस प्रविधि के प्रयोग से छात्रों मे नेतृत्व, सहयोग, सृजनात्मक प्रयास के भाव तथा प्रेरणा-शक्ति का विकास किया जा सकता है।' विद्यार्थी शिक्षक के निर्देशन मे निर्धारित प्रकरण पर नाट्यीकरण प्रविधि का आयोजन, अभिनय, साज-सज्जा, व्यवस्था एव मूल्यांकन करने में इन सभी नागरिक गुणों का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं तथा वे चरित्र एवं पात्रों के सद्-गुणो से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। यह प्रविधि 'करके सीखने' के मनोवैज्ञानिक सिद्धात पर आधारित है। गुरु शरन दास त्यागी के शब्दो मे 'इस रीति (प्रविधि) के प्रयोग से छात्रों की सृजनात्मक शक्तियो का विकास किया जाता है। शिक्षण मे इसका प्रयोग आधुनिक युग की देन है। इसके प्रयोग से कठिन तथा दुरूह विषयों को सरल, मनोरजक एव बोधगम्य बनाया जा सकता है। इसमें छात्र क्रियाशील रहते है।'[13] विद्यार्थियों द्वारा अधिगम मे उनकी इन्द्रियों का विशेष हाथ रहता है साधारणतः शिक्षण में श्रवण, दृश्य एवं हाथ की क्रियायें ही प्रयुक्त होती है किन्तु नाट्यीकरण प्रविधि में विद्यार्थी की प्रायः इन्द्रियां क्रियाशील होकर अधिगम को शीघ्र, सरल, रोचक एव स्थायी होने में सहायता देती है। पी. एन. अवस्थी का मत है कि 'अभिनय बालकों को वास्तविक तथा सार्थक अनुभवों की प्राप्ति मे सहायक होता है। अभिनय बालकों मे प्रजातांत्रिक भावनाओं का विकास करता

---

12. डा. उपेन्द्र नाथ दीक्षित : इतिहास शिक्षण पृ 68
13. गुरु शरन दास त्यागी : नागरिकशास्त्र शिक्षण पृ. 112

है। समूह में रहकर कार्य करने की कुशलता अभिनय से प्राप्त होती है।'[14] वस्तुतः नाट्यीकरण प्रविधि का नागरिकशास्त्र शिक्षण में विशेष महत्व है क्योंकि इसके द्वारा विद्यार्थियों को सम्बद्ध कठिन एवं नीरस पाठ्यवस्तु का सरलता एवं रोचकता से ज्ञान ही नहीं होता बल्कि उनमें परस्पर सहयोग, जागरूकता, सहिष्णुता, विनम्रता, उत्तरदायित्व की भावना आदि नागरिक के वांछित अनेक गुणों का विकास भी होता है।

नाट्यीकरण या अभिनय प्रविधि को मुख्यत. दो प्रकार की स्थितियों में प्रयुक्त किया जा सकता है—

(1) पूर्ण साज-सज्जा के साथ किसी संपूर्ण नाटक या एकांकी का अभिनय।

(2) सामान्य कक्षा-कक्ष की स्थिति के अनुकूल बैठक-व्यवस्था में परिवर्तन कर विभिन्न पात्रों का कथोपकथन द्वारा अभिनय।

इसके अतिरिक्त मूकाभिनय, एकाभिनय, छायाभिनय, कठपुतली-प्रदर्शन आदि अभिनय की अनेक प्रविधियां हैं जिनका प्रयोग किया जा सकता है।

(ii) विधि-प्रक्रिया एवं नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनुप्रयोग—संक्षेप में नाट्यीकरण प्रविधि की प्रक्रिया इस प्रकार होनी चाहिए।

कक्षा में शिक्षक सर्वप्रथम विद्यार्थियों को पाठ-प्रकरण से सम्बन्धित उस अंश के प्रति, जिसका कि अभिनय करना है, प्रेरित करता है। जब विद्यार्थियों में किसी निश्चित अभिनय-प्रसंग के प्रति पर्याप्त रुचि, जिज्ञासा एवं कुतूहल जाग्रत हो जाय, तब शिक्षक को कक्षा-सहयोग से नाट्यीकरण की विस्तृत योजना बना लेनी चाहिए अर्थात् उद्देश्य-निर्धारण, कक्षा के कौनसे छात्र किस चरित्र अथवा पात्र का अभिनय करेंगे, कौन से छात्र अभिनय के रंगमंच की साज-सज्जा या अभिनेताओं की वेश-भूषा एवं अन्य आवश्यक उपकरणों की व्यवस्था करेंगे (यदि संपूर्ण नाटक अभिनीत करना है अन्यथा कक्षा में ही बैठक-व्यवस्था में सामान्य परिवर्तन करना है) अभिनेताओं को सम्बन्धित पात्रों की भूमिका समझाना तथा उनके कथोपकथन नोट कराना, समयावधि निश्चित करना (यदि कालांश की अवधि में समय हो तो उसी कालांश में करना अन्यथा अधिक समय की आवश्यकता हो तो मध्यान्तर के बाद का समय निर्धारित करना) तथा सम्बद्ध छात्रों को तैयारी करने के लिये निर्देश देना।

शिक्षक के निर्देशन में अभिनय का पूर्वाभ्यास करना तथा निर्धारित समय पर आवश्यक व्यवस्था कर नाट्यीकरण प्रविधि प्रस्तुत करना। अन्तिम सोपान में अभिनय के बाद शिक्षक कक्षा में विद्यार्थियों का मूल्यांकन कर यह पता लगायेगा कि नाट्यीकरण प्रविधि से शैक्षणिक लाभ किस सीमा तक हुआ है। ज्ञानार्जन अथवा अन्य व्यवहारगत वांछित परिवर्तनों की उपलब्धि में जो कमी रह गई हो, उसकी पूर्ति विचार-विमर्श द्वारा करना।

---

14. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण विधि पृ. 129

नागरिकशास्त्र शिक्षण में नाट्यीकरण प्रविधि के प्रयोग हेतु अनेक उपयुक्त प्रकरण चुने जा सकते हैं जैसे—ग्राम पंचायत की बैठक, विधानसभा में बजट विधेयक पर विचार-विमर्श, संसद में अनिवार्य सेवा अधिनियम पर चर्चा, सुरक्षा परिषद् की ईरान-इराक संघर्ष या अफगानिस्तान में रूसी सेना के हस्तक्षेप पर बैठक, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में भारत-पाकिस्तान के मध्य कश्मीर समस्या के मामले की सुनवाई आदि। छोटी कक्षाओं में नाट्यीकरण के उपयुक्त प्रसंग, महापुरुषों के जीवन-चरित्र से नागरिक सद्गुणों की शिक्षा लेने के लिये चुने जा सकते हैं। जैसे आत्मसम्मान, त्याग, बलिदान, वीरता, साहस व शौर्य के लिये महाराणा प्रताप की हल्दीघाटी युद्ध के बाद शक्तिसिंह से भेंट, शिवाजी का आगरा-दुर्ग से पलायन, झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई की जीवन-झांकियां, पन्ना धाय का पुत्र बलिदान, रानी पद्मिनी का जौहर आदि। धर्मसहिष्णुता की भावना विकसित करने हेतु, रानी कर्मावती व हुमायूँ, अकबर की फतेहपुर सीकरी में दीने इलाही के सिद्धांतों पर वार्ता, महात्मा गांधी का भारत के विभाजन के बाद नोवाखाली में सांप्रदायिक सद्भाव का प्रयास आदि।

उदाहरणार्थ, कक्षा 10 में विश्व-शांति में संयुक्त राष्ट्र संघ के योगदान को प्रदर्शित करने हेतु सुरक्षा परिषद में अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप पर विचार-विमर्श को नाट्यीकरण प्रविधि द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। इसके लिये उपर्युक्त प्रक्रियानुसार शिक्षक कक्षा-सहयोग से इसकी पूर्व योजना बना कर सुरक्षा परिषद के 15 सदस्यों की भूमिका निर्वाह हेतु 15 छात्रों को अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप पर पक्ष-विपक्ष के तर्क देने के लिये उनके कथोपकथन निर्धारित करेगा। नाट्यीकरण के पूर्व इस समस्या की भूमिका-स्वरूप शिक्षक विद्यार्थियों को संक्षिप्त ऐतिहासिक रूपरेखा प्रस्तुत करेगा—किस प्रकार 27 दिसम्बर, 1979 को रूसी सेना ने अफगानिस्तान में प्रवेश कर अफगानिस्तान के राष्ट्रपति अमीन को अपदस्थ कर एवं उसका वध करवा कर नये राष्ट्रपति बाबरक कर्माल को नियुक्त किया। रूसी हस्तक्षेप का दृष्टिकोण यह रहा कि अमरीका, पाकिस्तान व चीन रूस के विरुद्ध अफगानिस्तान में क्रांतिकारियों को प्रोत्साहित कर रहे हैं।

पश्चिमी देशों का दृष्टिकोण है कि दूसरे देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का किसी देश को अधिकार नहीं है तथा भारत की इस समस्या के प्रति यह नीति रही है कि पश्चिमी देश अफगानिस्तान में भड़काने वाली कार्यवाही बंद करें व रूसी सेनाएं वहां से हटाई जाय। इस पृष्ठभूमि को सुरक्षा परिषद के सदस्यों के विचार-विमर्श द्वारा रोचक ढंग से अभिनीत किया जाय तथा सुरक्षा परिषद् के इस प्रस्ताव को कि रूस अफगानिस्तान से अपनी सेनाएं तुरन्त हटाए, सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य रूस द्वारा निरस्त (वीटो) किया जाना प्रदर्शित किया जाय। नाट्यीकरण के बाद कक्षा में शिक्षक के मार्गदर्शन में विचार-विमर्श एवं मूल्यांकन द्वारा इस नाट्यीकरण प्रविधि से अर्जित विद्यार्थियों के ज्ञान की जांच की जाय।

इस प्रकार जो तथ्य सीधे कथन-विधि से व्यक्त किये जाते हैं, उन्हें इस प्रविधि द्वारा अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत किया जा सकेगा तथा विद्यार्थी इस प्रक्रिया में अनेक नागरिकोचित गुणों को ग्रहण भी करेंगे।

(iii) प्रविधियों के गुण-दोष एवं प्रयोग में सावधानियाँ—

यह प्रविधि विद्यार्थियों में अतीत एवं वर्तमान के चरित्र, पात्र एवं घटनाओं के वास्तविक, रोचक, सरल एवं प्रभावी अवबोध के लिये सर्वोत्तम है। केवल शब्दों या चित्रों द्वारा बहुत प्रत्यक्षतः इनका (घटनाओं, पात्रों एवं भावों का अनुभव) नहीं हो पाता। इन सबको वास्तविकता देने के लिये अभिनय श्रेष्ठ है।[15] नाट्यीकरण प्रविधि के दोष इसके गलत प्रयोग में निहित हैं। कक्षा के अनुकूल प्रयोग न करना पूर्व तैयारी के बिना इसका प्रयोग, अभिनय के लिये उपयुक्त विद्यार्थियों का चुनाव न किया जाना, शिक्षक द्वारा निर्देशन का अभाव, उचित पाठ-प्रकरण हेतु प्रयुक्त नहीं किया जाना आदि कुछ प्रमुख दोष हैं जिनके निराकरण के लिये शिक्षक को सावधानी रखनी चाहिए।

4. वर्णन प्रविधि

1. अर्थ एवं महत्व—पुरोहित के शब्दों में' वर्णन का प्रयोग शिक्षक किसी घटना, दृश्य एवं सिद्धांत का विस्तृत विवरण करने के लिए करता है। वर्णन करने का सामान्यतः यही प्रयोजन होता है कि किसी घटना, दृश्य अथवा सिद्धान्त का सम्पूर्ण चित्र शिक्षार्थी के मस्तिष्क में निर्मित हो सके।'[16] वर्णन का विवरण या कथन प्रविधि से अन्तर को स्पष्ट करते हुए पुरोहित का कथन है कि—'वर्णन व्यापक तथा विस्तृत होता है जबकि विवरण संक्षिप्त होता है। विवरण पाठ में से किसी घटना अथवा तथ्य को ज्यों का त्यों कहने के लिए किया जाता है जबकि वर्णन विषय-वस्तु का शिक्षार्थी के मस्तिष्क में सांगोपांग चित्र खींचने के लिए किया जाता है। विवरण तार्किक दृष्टि से संगत हो, इतना ही पर्याप्त होता है परन्तु वर्णन तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक दोनों दृष्टियों से उपयुक्त होता है।' वर्णन प्रविधि में कथन प्रविधि की भांति यथा तथ्य विवरण तो होता ही है किन्तु इसके साथ वर्णित वस्तु का आकर्षक एवं रोचक चित्र भी विद्यार्थियों के मस्तिष्क में निर्मित करना पड़ता है। इस प्रविधि के लिए वस्तुतः कल्पनाशील एवं सशक्त अभिव्यक्ति वाला शिक्षक चाहिए।

2. उपयोग—नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनेक प्रसंग ऐसे उपस्थित होते हैं जहाँ केवल कथन मात्र से काम नहीं चलता बल्कि किसी घटना, दृश्य अथवा सिद्धांत का तार्किक एवं रोचक वर्णन भी करना आवश्यक होता है। उदाहरणार्थ—जैसे'राष्ट्रीय भावात्मक एकता अथवा विभिन्नता में एकता प्रकरण को पढ़ाते समय देश के विभिन्न

15. दीक्षित एवं बघेला : इतिहास-शिक्षण, पृ. 68

16. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृ. 210-211

राज्यों की विभिन्न वेश-भूषा, भाषा, खान-पान, रहन-सहन, रीति-रीवाज, मान्यताएं, धर्म, आदि की विभिन्नता में राष्ट्रीय एकता के प्रसंग में कथन मात्र से विवरण प्रस्तुत करने से काम नहीं चलेगा वलिक विभिन्न राज्यों के निवासियों--कश्मीरी, राजस्थानी, मराठी, मद्रासी, बंगाली, गुजराती आदि- के आकर्षक एवं रोचक वर्णन द्वारा ही विद्यार्थियों में उनकी विभिन्नता में एकता का अवबोध हो सकेगा तथा राष्ट्रीय भावात्मक एकता की भावना का विकास हो सकेगा। एक अन्य उदाहरण लिया जाय, जैसे अतीत की घटना से सम्बद्ध प्रकरण व्यक्ति एवं समाज में आदि मानव का परिवार, कुल, कबीला तथा ग्राम के अन्तर्गत सामाजिक चेतना का विकास जैसे प्रसंग वर्णन प्रविधि द्वारा ही विद्यार्थियों को स्पष्ट होंगे।

3 सावधानियां—वर्णन प्रविधि के प्रयोग को प्रभावी बनाने हेतु, भाषा सरल, स्पष्ट व बोधगम्य हो, वर्णन शैली भावानुकूल आरोहावरोह युक्त स्वाभाविक हो, विषय वस्तु के सभी प्रमुख पक्षों का समग्र चित्रण किया जाये, वर्णन के साथ अन्य सहायक सामग्री (रेखाचित्र, मानचित्र आदि) का प्रयोग किया जाय, वर्णन तार्किक एवं क्रमबद्ध हो, तथा वर्णन के मध्य कुछ प्रश्न पूछ कर विद्यार्थियों को सक्रिय रखा जाय व उनका मूल्यांकन किया जाय।

5. व्याख्या प्रविधि—

1. अर्थ एवं महत्व—नागरिकशास्त्र शिक्षण में अनेक जटिल एवं दुरूह पद, शब्द परिभाषाएं, सूत्र, तथ्य, सिद्धान्त एवं घटनाएं ऐसी आती हैं जिनकी व्याख्या करना नितान्त आवश्यक एवं वांछनीय है अन्यथा विद्यार्थियों में उन्हें बिना सोचे-समझे रटने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। 'व्याख्या रीति (प्रविधि) का प्रमुख उद्देश्य शिक्षण करते समय सरल एवं सुगम बातों का कम समय तथा सतैर में और जटिल, दुरूह तथा विशिष्ट बातों, तथ्यों एवं घटनाओं को व्यापक रूप में छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करना है।........'इस रीति से शिक्षक के समय तथा परिश्रम की बचत हो जाती है।[17] 'इस युक्ति का प्रयोग विषय-वस्तु को भली भांति स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। व्याख्या द्वारा कठिन शब्दों, धारणाओं, वाक्यों, विचारों का विश्लेषण करके उनकी जटिलता और दुरूहता को सरलता में परिवर्तित कर दिया जाता है ताकि वे सभी विद्यार्थियों को ग्राह्य हो सके।'[18]

2. अनुप्रयोग—इस प्रविधि का अनुप्रयोग नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु में आये कठिन शब्द जैसे सार्वभौमिकता, गुटनिरपेक्ष नीति, व्यवस्थापिका, स्वायत्तशासी संस्थाएं, आदि, दुरूह सिद्धान्त जैसे दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त, पंचशील का सिद्धान्त आदि, कठिन पद जैसे वयस्क मताधिकार, आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली, निरंकुश राजतंत्र आदि, जटिल परिभाषाएं जैसे दल कुछ व्यक्तियों के लाभ के लिये अधिकार व्यक्तियों का पागल

---

17. उमेश चन्द्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण-कला, पृ. 106
18. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन, पृ. 211

पन है प्रजातंत्र शासन जनता का, जनता द्वारा तथा जनता के लिये है आदि, कुछ अन्तर्राष्ट्रीय घटनाएं जैसे ईरान ईराक संघर्ष, अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप, इजरायल, फिलिस्तीन संघर्ष आदि की व्याख्या करना आवश्यक होता है। शिक्षक को इनकी व्याख्या पाठ्यपुस्तक, सहायक पुस्तकों एवं स्रोत संदर्भ ग्रन्थों व पत्र पत्रिकाओं की सहायता से करना चाहिए।

3. सावधानियां—शिक्षक को सरल, शुद्ध एवं प्रामाणिक व्याख्या करने का प्रयास करना चाहिए ताकि विद्यार्थियों के मस्तिष्क में कोई शंका या भ्रम न रहे और उन्हें इनका सही अवबोध हो सके। व्याख्या हेतु शुद्ध रूप कथन, पर्याय, संधिविग्रह, विलोम व्युत्पत्ति आदि विधियों से व्याख्या प्रविधि को बोधगम्य एवं प्रभावी बनाना चाहिए। इसके लिये शिक्षक का भाषा पर अच्छा अधिकार होना आवश्यक है।

6. तुलना प्रविधि—

1. अर्थ एवं महत्व—पुरोहित के शब्दों में-'तुलना द्वारा दो विचारों, मतों, तथ्यों, सिद्धान्तों के साधर्म्य और वैधर्म्य सम्बन्धी बिन्दुओं को उभारा जाता है। स्पष्ट है कि दो पक्षों में तुलना तभी सम्भव है जबकि विद्यार्थियों को दोनों पक्षों का भली भांति ज्ञान हो। जब कक्षा में दोनों पक्षों के सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन किया जा चुका हो तो तुलना द्वारा उनमें समानता व असमानता ज्ञात की जाती है ताकि विषय-वस्तु अधिक स्पष्ट हो सके। तुलना द्वारा प्रत्येक विचार को उसके सही परिप्रेक्ष्य में समझने में सहायता मिलती है।'[19] अतः तुलना प्रविधि से विभिन्न तथ्यों, सिद्धान्तों, विचारों आदि में परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट होता है, पाठ रोचक बनता है तथा तुलना वाली वस्तुओं का सापेक्षिक महत्त्व प्रकट होता है।

2 प्रविधि का अनुप्रयोग—नागरिकशास्त्र शिक्षण में तुलना प्रविधि के उपयुक्त प्रयोग हेतु अनेक पक्ष उपस्थित होते हैं। जैसे पूँजीवादी तथा 'साम्यवादी विचारधाराएं', नागरिक के कर्तव्य एवं अधिकार, राज्य की उत्पत्ति के दैवी एवं विकासवादी सिद्धान्त, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली, मौलिक अधिकार एवं नीति निर्देश सिद्धान्त आदि। इनकी परस्पर तुलना द्वारा इनके आपसी सम्बन्ध एवं सापेक्षिक महत्व रोचक विधि से विद्यार्थियों को बोधगम्य होते हैं।

3. सावधानियां—इस प्रविधि में यह सावधानी रखना आवश्यक है कि जिन तथ्यों, विचारों, सिद्धान्तों, आदि की तुलना की जाय, उनसे विद्यार्थी पूर्व में अवगत हों तथा समानता एवं असमानता के बिन्दु विद्यार्थियों के सहयोग से ही निर्धारित किये जाय। तुलना करना एक उच्च स्तरीय मानसिक योग्यता है, अतः इस प्रविधि का प्रयोग उच्च कक्षाओं में किया जाना उपयोगी है। तुलना के बाद निष्कर्ष निकालना उपयुक्त रहता है।

---

19. उपर्युक्त

7. स्पष्टीकरण प्रविधि—

1 अर्थ एवं महत्व—कुदेसिया के शब्दों में-'इस रीति (प्रविधि) का मुख्य उद्देश्य किसी भी जटिल एवं कठिन शब्द को स्पष्ट करके सरल, सुगम तथा बोधगम्य बनाना है। नागरिकशास्त्र का शिक्षक तब तक सफल रूप से शिक्षण कार्य नहीं कर सकता है जब तक कि वह विषय-सामग्री के कठिन एवं दुरूह तथ्यों, घटनाओं, बातों आदि को स्पष्ट नहीं करता।.........स्पष्टीकरण रीति ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ने के सूत्र पर निर्भर है।'[20] यहां यह भ्रांति हो सकती है कि विवरण, वर्णन तथा स्पष्टीकरण प्रविधियां कहीं एक सी प्रक्रियाएं तो नहीं हैं। किन्तु ऐसी बात नहीं है, इनमें पर्याप्त अन्तर है। पुरोहित ने इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए कहा है कि 'क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण स्पष्टीकरण प्रविधि की प्रमुख विशेषता है। वर्णन में, जैसा स्पष्ट किया जा चुका है, रोचकता पर विशेष बल होता, है क्रमबद्धता पर कम। इसके विपरीत स्पष्टीकरण में तात्विक विवेचन पर विशेष बल होता है। विवरण और स्पष्टीकरण में भी अन्तर है विवरण संक्षिप्त होता है जबकि स्पष्टीकरण विस्तृत होता है। विवरण का प्रयोग तथ्यों को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने के लिये किया जाता है जबकि स्पष्टीकरण सांगोपांग होता है।'[21]

2. प्रविधि का अनुप्रयोग—नागरिकशास्त्र की अध्याय पाठ्यवस्तु में अनेक अंश ऐसे होते हैं जिनका विस्तार से क्रमबद्ध विवेचन अर्थात् स्पष्टीकरण करना वांछनीय है जैसे राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष विधि से होता है जिसमें संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य तथा राज्य की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य भाग लेते हैं। यह निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति से एकल संक्रमणीय मत द्वारा होता है तथा निर्वाचन में मतदान गुढ़ शलाका द्वारा होगा। राष्ट्रपति की इस निर्वाचन पद्धति के स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। इसे क्रमबद्ध विस्तृत रूप से इस प्रकार स्पष्ट करना चाहिए—

(1) विधानसभा के एक निर्वाचित सदस्य के मतों की संख्या =

$$\frac{\text{राज्य की जनसंख्या}}{\text{विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या}} \div 1000$$

उदाहरण—यदि माना जाये उत्तर प्रदेश की कुल जनसंख्या 52000000 है और निर्वाचित सदस्यों की संख्या 520 है तो प्रत्येक सदस्य के मतों की संख्या =

$$\frac{52000000}{520 \times 1000} = 100$$

(2) संसद के प्रत्येक सदस्य की मत संख्या =

$$\frac{\text{राज्यों द्वारा दिये जाने वाले मतों की कुल संख्या}}{\text{संसद के सदस्यों की कुल संख्या}}$$

---

20. उमेश चंद्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण कला, पृ. 103
21. पुरोहित शिक्षण के लिये आयोजन, पृ. 215

उदाहरण—यदि माना जाये राज्यों द्वारा दिये जाने वाले मतों की कुल संख्या 345251 हो और संसद-सदस्यों की कुल संख्या 699 हो तो सूत्र के अनुसार संसद के

प्रत्येक सदस्य की मतसंख्या $= \frac{345251}{699} = 494$

(3) उपरोक्त सूत्रानुसार विधानसभा एवं संसद के मतों की कुल संख्या के आधार पर विभिन्न प्रत्याशियों को मिले मतों की गणना एकल संक्रमणीयमत एवं गूढ़ शलाका मतदान द्वारा की जायेगी जो इस प्रकार है—

यदि माना जाय कि कुल दिये गये वैध मतों की संख्या 15,000 है और राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी क, ख, ग, और घ को प्रथम वरीयता के क्रमशः 5250, 4800, 2700 तथा 2250 मत मिले जो निर्वाचित घोषित होने हेतु न्यूनतम मत 7501 से कम हैं, अतः सबसे कम मत वाले प्रत्याशी "घ" को पराजित घोषित कर दिया जायेगा और उसे दिये गये 2250 मतों पर दिये गये द्वितीय वरीयता मत शेष तीन प्रत्याशियों को क्रमशः बाट कर उनके मतों में जोड़ दिये जायेंगे। जोड़ने पर जिस प्रत्याशी के मत 7501 से अधिक होंगे, उसे राष्ट्रपति पद के लिये विजयी घोषित किया जायेगा अन्यथा तृतीय वरीयता को देखा जायेगा।

राष्ट्रपति की निर्वाचन प्रक्रिया को उपरोक्त प्रकार से स्पष्टीकरण प्रविधि द्वारा समझाया जा सकता है। इसी प्रकार नागरिकशास्त्र पाठ्यवस्तु के अन्य जटिल एवं दुरुह अंशों को इस प्रविधि द्वारा समझाना उपयोगी रहेगा।

3. सावधानियाँ—इस प्रविधि के प्रयोग हेतु इन सावधानियों को ध्यान रखना चाहिए—भाषा सरल व स्पष्ट हो, सभी पक्षों का समग्र विवेचन हो, विवेचन विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुकूल हो, विवेचन क्रमबद्ध हो, तथा विस्तृत विवेचन होते हुए भी वह विशिष्टता लिये हुए हो अर्थात् विवेच्य तथ्य को स्पष्ट करे।

इन प्रविधियों के अतिरिक्त कुछ ऐसी विकासमान विधियां भी हैं जो अन्य विधियों के अन्तर्गत प्रविधियों के रूप में प्रयुक्त हो सकती हैं। ऐसी प्रविधियों का प्रयोग उनके विधि के रूप में प्रयोग में दिये गये विवरण के आधार पर किया जा सकता है। शिक्षण प्रविधियों का अभी शिक्षाविदों द्वारा अनुसंधान जारी रहा है। जिसके आधार पर यह आशा की जाती है कि और भी प्रभावी प्रविधियां विकसित हो सकती हैं। डा. आर. ए. शर्मा के शब्दों में—'शैक्षिक तकनीकी' 'अभी तक सीखने के अनुभवों' को ही दे सकी है। परन्तु यह शिक्षण के लिए समुचित युक्तियों (प्रविधियों) तथा विधियों के निर्धारण में प्रयत्नशील है। इस दिशा में कार्य निरन्तर किये जा रहे हैं।'[22]

---

22. डा. आर. ए. शर्मा : शिक्षण-तकनीकी (माडर्न पब्लिशर्स मेरठ), पृ. 230

□□□

नागरिकशास्त्र शिक्षण : सहायक उपकरण | 9

नागरिकशास्त्र शिक्षण की प्रक्रिया में निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि हेतु शिक्षण-विधि उन शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण करती है जिनसे अधिगम के पश्चात् उद्देश्यों के अनुकूल वांछित व्यवहारगत परिवर्तन विद्यार्थियों में होते हैं। शिक्षण प्रविधियाँ इन स्थितियों के निर्माण में शिक्षण विधि की सहायता कर प्रभावी भूमिका निभाती है। शिक्षण-विधि को प्रभावी बनाने मे शिक्षण-प्रविधियो की भांति एक और तत्व भी है जिसे शिक्षण सहायक सामग्री या उपकरण कहा जाता है। वैसे तो शिक्षण प्रविधियाँ भी शिक्षण विधि की सहायक होने के कारण शिक्षण सहायक उपकरणों का ही एक प्रकार है किन्तु प्रविधियाँ मौखिक सहायक उपकरण की कोटी मे आती हैं। कथन, विवरण, वर्णन, तुलना, व्याख्या, स्पष्टीकरण, नाट्यीकरण आदि प्रविधियाँ मौखिक शिक्षण सहायक उपकरण हैं। किन्तु कुछ भौतिक शिक्षण-सहायक उपकरण ऐसे हैं जो श्रव्य या दृश्य या श्रव्य-दृश्य तीनों रूपों मे इन शिक्षण-प्रविधियों की अपेक्षा शिक्षण विधि को अधिक प्रभावी बनाने मे सक्षम है।

शिक्षण सहायक उपकरणों की पृष्ठ भूमि एवं उनका अर्थ—एक प्राचीन कहावत है कि एक देखना सौ सुनने के बराबर है। शिक्षा-क्षेत्र में अब तक श्रव्य दृश्य शिक्षण-सहायक सामग्री का प्रयोग नहीं होता था, किन्तु इसका इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। डा. एस. एल. आहलूवालिया ने प्राचीन काल में गुहा मानव द्वारा निर्मित गुहा चित्रों से यह सिद्ध किया है कि इस प्रकार के उपकरण उस समय भी थे। धीरे-धीरे लेखन एवं चित्र-कला का विकास हुआ और मुद्रण-कला के आविष्कार से इन उपकरणों में विविधता एवं कलात्मकता का समावेश हुआ।

आधुनिक काल में रेडियो, फिल्म, टेलिविजन आदि के आविष्कारों से दृश्य के साथ श्रव्य तथा श्रव्य-दृश्य शिक्षण-सहायक सामग्री या उपकरणों में नये आयाम जुड़े। शिक्षण सहायक उपकरणों का क्रमशः विकास हुआ।

शिक्षण सहायक उपकरणों की परिभाषा एवं अर्थ कुछ विद्वानों ने इस प्रकार प्रकट किये हैं—

बाईडिंग के अनुसार वस्तुतः हर प्रकार का शिक्षण-उपकरण जिसके द्वारा विद्यार्थी अपने नेत्र से अधिगम करता है, वह दृश्य उपकरण है।

वेमले के अनुसार—दृश्य उपकरण शब्द का प्रयोग उन स्थलों तथा उपकरणों के लिये भी होता है जिनके द्वारा दृश्य सामग्री प्रदर्शित की जाती है जैसे—श्याम पट्ट बुलेटिन बोर्ड आदि। दृश्य उपकरणों की व्याख्या करने की तो आवश्यकता हो सकती है किन्तु उनके लिये अनुवादकों की आवश्यकता नहीं क्योंकि ये आकृति, रंग, स्थिति तथा गति की सर्वव्यापी भाषा में अपना मन्तव्य प्रकट करते हैं। ये उपकरण अधिगम के गतव्य का राजमार्ग प्रशस्त करते हैं।

भट्टाचार्य एवं दरजी के अनुसार—दृश्य उपकरण अवधान को स्थिर रखकर नवीन अनुभवों एवं काल्पनिक चित्रों का सृजन करते हैं। उचित विधि से प्रयुक्त दृश्य उपकरणों को पूरक अधिगम के रूप में मानना ठीक नहीं, बल्कि ये अधिगम के आधार हैं। ये अनुभव को उत्प्रेरित करते हैं तथा अधिगम को सहज सम्पन्न करते हैं। ये विद्यार्थियों की श्लाघा-भावना को सम्वर्धित एवं विस्तरित करते हैं। ये सुखद मनोरंजन के साथ जटिल तथ्यों को सरलीकृत रूप में प्रस्तुत करते हैं। ये कल्पना को उत्प्रेरित करते हैं तथा विद्यार्थियों की अवलोकन शक्ति का विकास करते हैं। दृश्य उपकरण स्वयं शिक्षण विधि के रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं बल्कि विधि के पूरक के रूप में इनका प्रयोग किया जाता है।

जगदीश नारायण पुरोहित का कथन है कि श्रव्य-दृश्य प्रसाधन शिक्षण की ऐसी परिस्थिति का निर्माण करने में सहायक होते हैं ताकि शिक्षार्थी एक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से अन्त: क्रिया कर सके। श्रव्य-दृश्य प्रसाधन शिक्षण परिस्थिति को उन्नत बना देते हैं ताकि शिक्षार्थी को अनुभव अर्जित करने में सुविधा हो जाती है।

शिक्षण सहायक उपकरणों के शैक्षणिक एवं मनोवैज्ञानिक आधार—शिक्षण प्रक्रिया के विश्लेषण से यह भली भांति प्रकट होता है कि शिक्षक शिक्षण उद्देश्यों को ध्यान में रखकर शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण करता है। इन स्थितियों और विद्यार्थी के मध्य अन्त: क्रिया होती है जिसके फलस्वरूप विद्यार्थी को अनुभवों की प्राप्ति होती है अर्थात् अधिगम होता है और उसके व्यवहार में वांछित परिवर्तन होते हैं। इन स्थितियों और विद्यार्थी के मध्य जितनी अधिक सजीव एवं प्रबल अन्त: क्रिया होगी, उतने ही अधिक अनुभव विद्यार्थियों को प्राप्त होंगे। शिक्षण अधिगम स्थितियाँ वे ही प्रभावी मानी जाती हैं जिनके प्रति अन्त: क्रिया करने में विद्यार्थी को अधिकाधिक ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करना होता है। श्रव्य-दृश्य उपकरण इस अन्त: क्रिया को प्रभावी बनाते हैं।

उदाहरणार्थ—नागरिकशास्त्र के नागरिक के गुण प्रकरण को व्याख्यान विधि से पढ़ाने में उपर्युक्त अन्त: क्रिया उतनी प्रभावी नहीं होती जितनी कि इस प्रकरण को किसी आदर्श नागरिक के दैनिक जीवन में प्रदर्शित गुणों को चित्र, चलचित्र या टेलीविजन के माध्यम से दिखाकर पढ़ाने में होगी। इसी प्रकार जनसंख्या की समस्या को कथन या प्रश्नोत्तर विधि से पढ़ाने की अपेक्षा यदि जनसंख्या की गुणात्मक वृद्धि के तथ्य चार्ट, ग्राफ या आलेख के द्वारा दिखलाये जायें तो इस समस्या को समझने के अनुकूल शिक्षण-अधिगम स्थितियाँ प्रस्तुत की जा सकती हैं जिनमें प्रभावी अन्त:क्रिया द्वारा वांछित उद्देश्यों की पूर्ति हो सकती है। शैक्षणिक दृष्टि से श्रव्य दृश्य उपकरणों का एक दृढ़ आधार है तथा उनके प्रयोग का औचित्य प्रकट होता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि अधिगम अर्जित करने में प्रत्यक्ष एवं मूर्त अनुभव अत्यधिक सहज एवं स्वाभाविक होते हैं। ज्यों-ज्यों हम प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर अथवा मूर्त से अमूर्त की ओर बढ़ते हैं तो विविक्ति की प्रक्रिया में वृद्धि होती जाती है और अधिगम अर्जित करने में विशेष प्रयास करने पड़ते हैं। प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं मनोवैज्ञानिक एडगर डेल ने निम्नांकित अनुभव शंकु द्वारा श्रव्य-दृश्य शिक्षण सहायक उपकरणों से प्राप्त अप्रत्यक्ष अनुभवों तथा को अप्रत्यक्ष जीवन अनुभवों अमूर्त प्रतीकों से प्राप्त अप्रत्यक्ष अनुभवों के बीच की स्थिति माना है।

उपर्युक्त अनुभव शंकु का आधार प्रत्यक्ष एवं प्रयोगशील अनुभव है। जैसे-जैसे आधार से शंकु के शीर्ष की ओर बढ़ते हैं विविक्ति की प्रक्रिया बढ़ती जाती है। एडगर डेल के मतानुसार 'श्रव्य-दृश्य उपकरण द्वारा प्राप्त अनुभव प्रत्यक्ष मूर्त अनुभवों तथा अमूर्त प्रतीकों से प्राप्त अप्रत्यक्ष अनुभवों का समुचित सामंजस्य प्रस्तुत करते हैं।' जगदीशनारायण पुरोहित ने इस अनुभव शंकु के आधार से शीर्ष की ओर बढ़ते हुए मूर्त से अमूर्त अनुभवों की शृंखला में क्रमशः प्रत्यक्ष प्रयोजनशील अनुभव, प्रतिस्थापित अनुभव नाट्य अनुभव, प्रदर्शन, भ्रमण, प्रदर्शनीय वस्तुएँ, चलचित्र, स्थिर चित्र एवं रेडियो प्रसारण, दृश्य प्रतीक तथा शब्द प्रतीक अन्तर्गत विभिन्न अनुभवों की विविक्ति की प्रक्रिया समझाई है। इससे यह स्पष्ट होता है कि श्रव्य दृश्य उपकरणों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभवों को अप्रत्यक्ष रूप से इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि वे अमूर्त प्रतीकों की भांति अस्पष्ट न होकर मूर्त अनुभवों का आभास देते हैं तथा अधिगम को सरल, रोचक एवं स्थायी बनाते हैं।

उदाहरण के रूप में नागरिकशास्त्र के पाठ-प्रकरण विधान-सभा या संसद की कार्य-प्रणाली को शिक्षण प्रक्रिया में क्रमशः विधान सभा या संसद की कार्य प्रणाली के प्रत्यक्ष अवलोकन, इस कार्य प्रणाली के नाट्यीकरण, श्रव्य-दृश्य उपकरण, चलचित्र या टेलीविजन द्वारा अवलोकन, दृश्य उपकरण (चित्र या स्लाइड) द्वारा अवलोकन श्रव्य उपकरण (रेडियो या टेपरिकार्डर) द्वारा श्रवण तथा केवल मौखिक रूप में उस कार्य प्रणाली के विवरण द्वारा जो अनुभव प्राप्त होंगे वे मूर्त से अमूर्त या प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर

प्रखर होते हैं। इनमें श्रव्य-दृश्य उपकरणों द्वारा प्रस्तुत अनुभवों एवं अधिगम-प्रक्रिया में उनकी उपयोगिता महत्वपूर्ण है। इन उपकरणों के ठोस शैक्षणिक एवं मनोवैज्ञानिक आधार हैं।

नागरिकशास्त्र शिक्षण में सहायक उपकरणों के प्रकार—नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रयुक्त मौखिक उपकरण उपर्युक्त वर्णित अनुभव-शंकु के शीर्ष पर स्थित हैं जो अमूर्त प्रतीकों द्वारा अप्रत्यक्ष अनुभव प्रस्तुत करते हैं।

हम इस शंकु के मध्य में स्थित अप्रत्यक्ष अनुभवों को प्रस्तुत करने वाले श्रव्य-दृश्य शिक्षण-उपकरणों को नागरिकशास्त्र शिक्षण में उपयोगिता की दृष्टि से निम्नांकित वर्गीकरण किया जा सकता है—

1. दृश्य उपकरण
    (क) प्रदर्शन पट्ट उपकरण
        (1) श्याम पट्ट,
        (2) लपेट फलक,
        (3) फ्लैनल-पट्ट,
        (4) विज्ञप्ति-पट्ट,
        (5) समाचार-पत्र।
    (ख) लेखा चित्रात्मक उपकरण
        (1) चित्र,
        (2) मानचित्र,
        (3) रेखाचित्र एवं आरेख,
        (4) समय रेखा,
        (5) लेखा चित्र।
    (ग) त्रिआयामीय उपकरण
        (1 प्रतिरूप,
        (2) कठपुतली।
    (घ) प्रक्षेपण उपकरण—स्लाइड्।
2. श्रव्य उपकरण
        (1) रेडियो,
        (2) टेप-रिकार्डर।
3. श्रव्य-दृश्य उपकरण
        (1) चित्रपट्ट तथा फिल्म
        (2) दूरदर्शन या टेलीविजन

सहायक उपकरणों के उद्देश्य—नागरिकशास्त्र के शिक्षण-सहायक उपकरणों के निम्नांकित प्रमुख उद्देश्य हैं—

1. अमूर्तकों को मूर्त से सम्बद्ध करना—श्रव्य-दृश्य उपकरण अमूर्त विचार, भाव, तथ्य, सिद्धान्त आदि को मूर्त से सम्बद्ध कर उसे बोधगम्य बनाते है। नागरिकशास्त्र मे अनेक अमूर्त विशेषताओं-जैसे नागरिक की कर्तव्य परायणता, सहयोग, सद्भावना सेवा आदि गुणो-को किसी आदर्श नागरिक के जीवन को चित्र, चलचित्र या टेलिविजन जैसे श्रव्य-दृश्य उपकरणों द्वारा प्रदर्शित कर ग्राह्य बनाया जाता है।

2. शिक्षण-विधियों को प्रभावी बनाना—कुदेसिया ने इसी उद्देश्य पर आधारित इन उपकरणों की परिभाषा देते हुए कहा है कि शिक्षण की विभिन्न विधियों को सफल तथा आकर्षक बनाने के लिए विभिन्न साधनो का प्रयोग किया जाता है, जिन्हे शिक्षा के क्षेत्र मे सहायक सामग्री कहते हैं। जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ प्रकरण को प्रश्नोत्तर कथन विधि से पढ़ाते समय राष्ट्र संघ का संगठनात्मक चार्ट के दृश्य-उपकरण से विषय वस्तु को बोधगम्य बनाकर विधि को प्रभावी बनाया जाता है।

3. विद्यार्थियों को स्वक्रिया द्वारा अधिगम के लिये प्रेरित करना—गुरसरनदास त्यागी ने इस उद्देश्य के संदर्भ में इन उपकरणो की परिभाषा यह दी है—चूंकि ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञानार्जन के मुख्य द्वार हैं। अतः इन द्वारो को सक्रिय रखने के लिये विभिन्न विधियों, रीतियों एवं सहायक साधनो को जुटाया जाता है जिनके द्वारा बालक स्वक्रिया करके सीख सके। शिक्षण-पद्धति को सफल एवं रोचक बनाने के लिए विभिन्न साधनों का प्रयोग किया जाता है, ये विभिन्न साधन ही शिक्षण की 'सहायक सामग्री' कहलाते है। नागरिकशास्त्र शिक्षण मे विभिन्न सहायक उपकरण—चित्र, चार्ट, मानचित्र आदि को उत्प्रेरित कर उन्हे देखने, सुनने, छूने का अवसर देते हैं।

4. बालकों की रुचि एवं अवधान केन्द्रित करना—पी० एन० अवस्थी के शब्दो मे—'किसी चित्र, चार्ट, पदार्थ, मॉडल आदि का उपयोग बालको का ध्यान विषय पर केन्द्रित करने मे सहायक होता है तथा साथ ही साथ बालकों को विचार विमर्श तथा आगे अध्ययन के लिए प्रेरित भी करता है। पूर्व में अर्जित अनुभवों से सम्बन्ध स्थापित कर तथा आगामी नये अनुभवों के लिये प्रेरित कर ये उपकरण रुचि एवं अवधान बनाये रखने मे सक्षम होते हैं।

5. विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुकूल अधिगम में सहायक होना—मनोवैज्ञानिको एवं शिक्षाविदों का मत है कि श्रव्य-दृश्य उपकरण विशेषतः छोटी आयु, मानसिक रूप से कम परिपक्व तथा मन्द बुद्धि के विद्यार्थियों के लिये प्रभावी होते हैं। भट्टाचार्य एवं दरजी के शब्दों में, 'दृश्य उपकरणो का मूल्य आयु के साथ-साथ परिवर्तित होता है।' इसका यह अर्थ भी है कि उनका मूल्य बौद्धिक विकास के अनुसार परिवर्तित होता है। श्रव्य-दृश्य उपकरणों का प्रयोग विशेषत. कम उपलब्धि वर्ग तथा मन्दबुद्धि वाले विद्यार्थियो की कक्षा में प्रभावी होता है।' श्रव्य-दृश्य सहायक सामग्री का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों की आयु एवं बुद्धि के अनुकूल उनकी अधिगम-प्रक्रिया को प्रभावी बनाना है।

शिक्षण में सहायक उपकरणों के विशिष्ट प्रयोजन—सहायक उपकरणों के प्रयोग के उपयुक्त अवसर भी प्रयोजन के अनुसार होते हैं। अवस्थी का मत है कि नागरिकशास्त्र

में सहायक सामग्री के उपयोग की विधि प्रयोजन के अनुसार होगी। यद्यपि शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाने हेतु सहायक उपकरणों के प्रयोग पर कोई प्रतिबंध लगाना अनुचित है तथापि पाठ के सोपानों की दृष्टि से इनके प्रयोग के विशिष्ट प्रयोजन निर्दिष्ट किये जा सकते हैं जो निम्नांकित हैं—

1. पाठ-प्रेरणा या प्रस्तावना के समय—पाठ प्रारंभ करने के पूर्व अध्याय-प्रकरण की ओर विद्यार्थियों की जिज्ञासा, रुचि एवं अवधान आकर्षित करने के लिये श्रव्य दृश्य सहायक उपकरण विशेष उपयोगी रहते हैं। जैसे, छोटी कक्षाओं में ग्राम पंचायत के चुनाव प्रकरण की पाठ-प्रेरणा चुनाव से सम्बन्धित किसी चित्र एवं पोस्टर पर चर्चा द्वारा दिया जाना अथवा बड़ी कक्षा में राष्ट्रपति के अधिकार प्रकरण तथा संसद में विधेयक पारित करने की प्रक्रिया प्रकरण को क्रमशः समाचार पत्र में प्रकाशित राष्ट्रपति के संसद में बजट पेश होने से पूर्व दिये गये भाषण तथा संसद में किसी विधेयक पर चर्चा के अंशों को पढ़ कर उन पर किये गये प्रश्नोत्तर से पाठ-प्रस्तावना उपयोगी रहती है।

2. पाठ के विकास के समय—किसी प्रकरण पर पाठ के विकास करते समय अनेक कठिन प्रत्यय, जटिल तथ्य, सिद्धान्त, परिभाषाएं, घटनाएं आदि ऐसी होती हैं जिन्हें श्रव्य-दृश्य उपकरणों के माध्यम से स्पष्ट करना प्रभावी रहता है। जैसे सर्वोच्च न्यायालय के गठन को संगठनात्मक चार्ट द्वारा, छठी पंचवर्षीय योजना पर व्यय किये जाने वाले धन के वितरण को तुलनात्मक चार्ट, तथा ग्राम पंचायतों के कार्य को विभिन्न चित्रों, व किसी सामाजिक कुरीति पर विचार विमर्श हेतु रेडियो से प्रसारित किसी वार्ता द्वारा और अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव के प्रत्यय को चलचित्र द्वारा विकसित किया जा सकता है।

3 आवृत्ति अथवा ज्ञानोपयोग के समय—पाठ की प्रत्येक अन्विति के बाद अध्ययन किये हुए तथ्यों की आवृत्ति अथवा ज्ञानोपयोग के समय श्रव्य-दृश्य उपकरणों का प्रयोग उपयोगी होता है। जैसे राज्यों के पुनर्गठन प्रकरण को पर्यवेक्षित अध्ययन विधि से अध्ययन करने के बाद पढ़े हुए तथ्यों के आधार पर विद्यार्थियों द्वारा संबंधित मानचित्र व समय रेखा तैयार कराना आवृत्ति एवं ज्ञानोपयोग की दृष्टि से उपयुक्त उपकरण है।

4 मूल्यांकन के समय पाठ की समाप्ति पर संपूर्ण पाठ्यवस्तु के आधार पर पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि की जांच श्रव्य उपकरणों द्वारा की जा सकती है। राष्ट्रपति की चुनाव पद्धति का उसके सूत्र का चार्ट द्वारा संक्षेप में मूल्यांकन हो सकता है, अथवा राज्यों के पुनर्गठन संबंधी तथ्यों की मानचित्र द्वारा आवृत्ति की जा सकती है।

सहायक उपकरणों के चुनाव एवं प्रयोग में सावधानियां

1 चुनाव में सावधानियां—शिक्षण सहायक उपकरणों का चुनाव पाठ प्रकरण, उसके उद्देश्य तथा विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुसार किया जाना चाहिए। पाठ्य-वस्तु को रोचक एवं बोधगम्य बनाने, उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होने तथा उपयोगी होने की दृष्टि से उपयुक्त उपकरणों का प्रयोग किया जाय। जैसे, किसी संस्था (ग्राम पंचायत, नगरपालिका, सरकार के अंग आदि) के संगठनात्मक विवेचन में संबद्ध पाठ में चार्टों का प्रयोग उपयुक्त रहता है, चित्रों या मानचित्रों का नहीं। किन्तु बेकारी या

जनसंख्या या साक्षरता की समस्या पाठ में ग्राफ का प्रयोग उपयोगी रहता है।

पाठ के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने के लिये सहायक उपकरणों द्वारा प्रभावी शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण किया जाता है, जिनमें विद्यार्थी प्रत.क्रिया द्वारा नवीन अनुभव प्राप्त करते हैं। इस दृष्टि से शिक्षणविधि में सहायक उपकरणों का चुनाव किया जाना चाहिए। जैसे, किसी पाठ का उद्देश्य यदि धर्मनिरपेक्षता या राष्ट्रीय भावात्मक एकता अथवा अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव की भावना का विकास करना है तो उसके लिये अनुकूल शिक्षण-अधिगम स्थितियों को प्रभावी बनाने के लिये इन भावनाओं को व्यवहारिक रूप में चित्रित करने वाले चित्र, चलचित्र, रेडियो-वार्ता आदि का प्रयोग उपयोगी रहता है।

विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता की दृष्टि से उनकी आयु के अनुसार उपकरणों का उपयोग प्रभावी होता है। छोटी कक्षाओं में चित्र, स्लाइड्स, मॉडल आदि अमूर्त विचारों को मूर्त बनाने में सहायक होते हैं जबकि बड़ी कक्षाओं में रेडियो-वार्ता, समाचार आदि से विद्यार्थियों की उच्च स्तरीय मानसिक प्रत.क्रिया द्वारा अधिगम सम्भव होता है। इसी प्रकार वैयक्तिक विभिन्नताओं की दृष्टि से मंद बुद्धि छात्रों को कुशाग्र बुद्धि छात्रों की अपेक्षा अमूर्त विचारों को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने वाले उपकरणों से समझाने की आवश्यकता है।

2. प्रयोग में सावधानियां—उपर्युक्त विधि से चुने गये उपकरणों का प्रभावी विधि से प्रयोग करना महत्वपूर्ण है। उपकरणों का यथास्थान तथा यथासमय ही प्रयोग किया जाय, अनावश्यक प्रदर्शन अनुपयोगी ही नहीं बल्कि हानिकारक भी होता है। प्रयुक्त उपकरण को विद्यार्थियों की स्वक्रिया द्वारा अधिगम करने हेतु विचार प्रेरक बनाया जाय। मंदबुद्धि छात्रों को सहायक उपकरणों से पाठ्य वस्तु को स्पष्ट करने का विशेष प्रयास किया जाय तथा कुशाग्र बुद्धि छात्रों को उनकी सहायता से उच्च मानसिक प्रतःक्रिया करने को प्रेरित किया जाय। सहायक उपकरण साधन के रूप में प्रयुक्त हों, साध्य के रूप में नहीं, अर्थात् शिक्षण-विधि के सहायक के रूप में ही उनका प्रयोग किया जाय। उपकरणों का अत्यधिक प्रयोग हास्यास्पद एवं निरर्थक होता है। अत. अत्यन्त आवश्यक थोड़े उपकरणों का ही पाठ में प्रयोग किया जाय तथा आवश्यकता न होने पर उन्हें विद्यार्थियों पर जबरदस्ती न थोपा जाय। प्रयोग के पूर्व छात्रों को उपकरणों को समझने की मुख्य बातें बतला दी जाय जैसे मानचित्र अध्ययन में पूर्व उसके संकेत चिन्ह बतलाये जायें। कुछ उपकरणों जैसे रेडियो, फिल्म एवं टेलीविजन के प्रयोग में प्रसारण-पूर्व क्रियायें तथा प्रसारण-पश्चात क्रियायें किया जाना प्रभावी पाठ-प्रेरणा देने तथा पाठ के विस्तार एवं मूल्यांकन करने हेतु आवश्यक है। शिक्षक के लिये यह आवश्यक है कि वह प्रयुक्त उपकरणों की प्रभावी उत्पादकता का मूल्यांकन करता रहे तथा उसके प्रयोग को प्रभावी बनाने रहने का प्रयास करे।

1. दृश्य-उपकरण में प्रदर्शन-पट्ट उपकरण एवं श्यामपट्ट प्रमुख हैं।

प्रदर्शन-पट्ट उपकरण

श्यामपट्ट शिक्षण का सर्वाधिक प्रचलित, सुलभ एवं महत्वपूर्ण उपकरण है। आज भी श्याम-पट्ट स्कूलों में सबसे अधिक उपयोगी दृश्य-उपकरण है। महत्वपूर्ण एवं

दरजी ने इसका महत्त्व इन शब्दों में प्रकट किया है कि श्याम-पट्ट शिक्षक का विश्वसनीय मित्र है। यद्यपि श्याम-पट्ट स्वय एक दृश्य-उपकरण नही है, तथापि इसे इस रूप मे प्रयुक्त किया जा सकता है तथा इसके उपभोग की सभावनाए अपरिमित हैं। श्याम-पट्ट के प्रयोग की प्रभावोत्पादकता शिक्षक के कौशल पर निर्भर है। विद्यालयो में यह उपकरण उपलब्ध होते हुए भी प्राय: शिक्षक इसके प्रति उदासीन होकर इसकी उपेक्षा करते देखे गये हैं।

प्रयोग के प्रयोजन—श्याम पट्ट के प्रयोग के मुख्य प्रयोजन निम्नांकित हैं—

1. पाठ-विवरण—पाठारभ के पूर्व इस पर दिनांक, कक्षा, अनुभाग कालाश एव अवधि लिखने तथा पाठ-प्रेरणा के पश्चात् पाठ-प्रकरण अंकित करने हेतु इसका प्रयोग होता है।

2. पाठ के विकास हेतु सामग्री—नागरिकशास्त्र शिक्षण मे पाठ के विकास के समय प्रमुख बिंदु, नवीन तथ्य, प्रत्यय, विचार, सिद्धान्त, परिभाषा को रेखा चित्र, आरेख, मानचित्र, चार्ट, आदि को उस पर अंकित कर विद्यार्थियों का ध्यान उनके प्रति आकर्षित किया जाता है।

3. सारांश, मूल्यांकन एवं गृहकार्य—पाठ की प्रत्येक अन्विति के पश्चात् कक्षा-सहयोग से श्याम पट्ट पर सारांश बिंदु सक्षेप में लिखे जाते हैं। पाठ के अन्त में पाठ्य वस्तु के आधार पर विद्यार्थियों के मूल्यांकन करने एवं गृह कार्य आवटित करने हेतु भी इसका प्रयोग किया जाता है।

4. व्यक्तिगत कार्य—श्याम-पट्ट का प्रयोग केवल शिक्षक द्वारा ही किया जाना अपेक्षित नही है, विद्यार्थियों को भी इस पर शिक्षक के मार्ग दर्शन मे व्यक्तिगत कार्य करने का अवसर दिया जाना वाछनीय है। श्याम-पट्ट सदुपयोग हेतु शिक्षक को कुछ बिंदु ध्यान में रखने चाहिए। इसके प्रयोग से निर्दिष्ट उद्देश्य की पूर्ति होनी चाहिए। इस पर अंकित लेख स्पष्ट, शुद्ध एवं सुपाठ्य होना चाहिए। शिक्षक को इस पर तीव्र गति से किंतु स्पष्ट लिखने या किसी वस्तु को अंकित करने का अभ्यास करना चाहिए ताकि समय नष्ट न हो। इसका प्रयोग सही विधि से किया जाय अर्थात् इस पर लिखते समय बोलते भी जाना या पीछे कक्षा का ध्यान रखना उचित नही है। इस पर अंकित सामग्री अधिक बोझिल तथा अत्यधिक मात्रा मे न हो जिसमे कि विद्यार्थियों की रुचि इसमे बनी रहे। श्याम पट्ट का प्रयोग किसी निश्चित उद्देश्य के लिये किया जाय तथा यह पूर्व-नियोजित हो। इसे किसी अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी उपकरण का पूरक न माना जाय। श्याम पट्ट कार्य को रोचक बनाने के लिये रगदार चोक का प्रयोग विशेषत: आरेखों मे करना उपयोगी रहता है।

लपेट-फलक—जिस सामग्री का कक्षा-कालाश की अवधि में श्याम पट्ट पर अंकित किया जाना सभव न हो या जो अधिक जटिल हो जैसे कोई उद्धरण, स्रोत-सदर्भ, संगठनात्मक चार्ट उसे लपेट-फलक पर पूर्व में अंकित सामग्री को कक्षा मे यथास्थान या यथावश्यकता प्रदर्शित कर उसका उपयोग किया जाय। इसका प्रयोजन एवं ध्यातव्य बिंदु भी प्रायः श्याम-पट्ट के लिये निर्दिष्ट उपर्युक्त बिंदुओं के समान हैं।

(3) फलेनल बोर्ड—किसी लकड़ी के चौखटे पर (श्याम पट्ट के लगभग एक चौथाई

आकार के) फ्लैनल या खादी का कपड़ा कीलो की सहायता से मेढ दिया जाता है। यह उपकरण फ्लैनल या खादी बोर्ड कहलाता है। इस पर आवश्यकतानुसार यथास्थान जिस वस्तु को प्रदर्शित करना होता है, उसे पृथक रूप से कार्ड बोर्ड के टुकड़ों पर चिपकाये हुए चित्रित कागजो तथा कार्ड बोर्ड के पीछे सैंड पेपर चिपकाये हुए रखते हैं। फ्लैनल बोर्ड पर इन प्रदर्शनीय वस्तुओं को यथास्थान अस्थायी रूप से रखकर प्रदर्शित किया जा सकता है तथा इनकी स्थिति में परिवर्तन करना भी सभव होता है। यह उपकरण किसी ऐसी विषय-वस्तु के लिये प्रयुक्त होता है जिसका क्रमश. विकास स्पष्ट किया जाना अभिप्रेत है। जैसे राज्यों के पुनर्गठन सबधी प्रकरण में राज्यो की पुनर्गठन से पूर्व एव पश्चात् की स्थितिया फ्लैनल बोर्ड पर बतलाना रोचक एव बोधगम्य होता है। सगठनात्मक चार्ट के विभिन्न अंगो को फ्लैनल-बोर्ड द्वारा क्रमशः विकसित करना भी उपयोगी है।

(4) विज्ञप्ति पट्ट—भट्टाचार्य एवं दरबी ने विज्ञप्ति-पट्ट के शैक्षणिक महत्व को प्रकट करते हुए कहा है कि विज्ञप्ति-पट्टों का उपभोग विज्ञप्तियो, प्रदर्शनो एव अखबार की कतरनों को प्रदर्शित करने के उपयुक्त स्थलो के रूप मे किया जाता है। विद्यार्थियो द्वारा निर्मित उच्च कोटि के कार्य को बुलेटिन बोर्ड पर प्रदर्शित किया जाना चाहिए ताकि अच्छा कार्य करने वालों को प्रोत्साहन एव अन्य विद्यार्थियो को प्रेरणा मिल सके। बुलेटिन बोर्ड के उपयोग की प्रभावोत्पादकता शिक्षक की जागरुकता एवं सूझबूझ पर निर्भर होती है। बुलेटिन बोर्ड का नागरिकशास्त्र-शिक्षण में भी एक उपयोगी उपकरण के रूप मे प्रयोग किया जा सकता है। बुलेटिन बोर्ड लकडी के चौखटे मे एक खुले हुए या पारदर्शी ढक्कन के बक्से के रूप में हो सकता है जिसके पैदे पर हरा खादी का कपडा मेढ दिया जाता है तथा ढक्कन मे कांच या तार की जाली लगादी जाती है। सुरक्षा की दृष्टि से ढक्कन में ताला भी लगाया जा सकता है। प्रदर्शनीय वस्तु को हरे कपड़े पर स्टोर पिनो या सैंड पेपर द्वारा लगा दिया जाता है।

प्रयोग के प्रयोजन—नागरिकशास्त्र शिक्षण मे बुलेटिन बोर्ड के प्रयोग के प्रयोजन हो सकते हैं—नागरिकशास्त्र-परिषद् या अध्ययन मण्डल की विज्ञप्तियां या महत्वपूर्ण सूचनाऐं, नागरिकशास्त्र प्रयोगशाला या कक्ष मे विद्यार्थियो द्वारा निर्मित प्रदर्शनीय वस्तुए, शिक्षण मे प्रयुक्त विचार विमर्श, समस्या, परिवीक्षित अध्ययन आदि विधियों मे किया गया वर्ग-कार्य या तैयार किया गया प्रतिवेदन, विधान-सभा या संसद की कार्यवाही अथवा प्रमुख राजनीतिज्ञो के भाषण के अंशों की समाचार पत्रों की कतरने नागरिकशास्त्र से संबंधित पुस्तकालय मे नवागत पुस्तक के आवरण-पृष्ठ किसी अन्तर्राष्ट्रीय भ्रमण, क्षेत्रीय यात्रा या समारोह का कार्यक्रम आदि कुछ ऐसी वस्तुएं हैं जिनका बुलेटिन बोर्ड पर प्रदर्शन नागरिकशास्त्र शिक्षण मे उपयोगी रहेगा।

बुलेटिन बोर्ड को नागरिकशास्त्र का एक उपयोगी शिक्षण उपकरण बनाने हेतु निम्न बिन्दु ध्यातव्य हैं। शिक्षक के मार्गदर्शन मे चुने हुए विद्यार्थी ही बुलेटिन बोर्ड की यथा समय साज सज्जा एवं प्रदर्शन योग्य सामग्री की व्यवस्था करें, प्रदर्शित सामग्री पर कक्षा मे विचार-विमर्श भी किया जाय ताकि सभी विद्यार्थी उससे लाभान्वित हों, प्रदर्शित सामग्री में यथासमय परिवर्तन द्वारा विविधता एवं समसामयिकता या नवीनता लाई जाए, इसे सर्व सुलभ बनाने के लिये कक्षा के बाहर दीवार पर लगाया जाय, तथा बुलेटिन बोर्ड को

अधिकाधिक उपयोगी बनाने के लिये इस उपकरण का मूल्यांकन किया जाय।

(5) समाचार-पत्र—समाचार पत्र तथा पत्रिकाओं का प्रयोग नागरिकशास्त्र शिक्षण में दृश्य-उपकरण के रूप में किया जाना वाञ्छनीय है। लोकतंत्र में समाचार-पत्रों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। नेसियाह का मत है कि 'देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् साक्षरता एवं राजनैतिक चेतना की वृद्धि के साथ अधिकाधिक लोग समाचार-पत्र को पढ़ने के अभ्यस्थ हो गये हैं, अतः विद्यालयों का यह कर्त्तव्य है कि वे विवेकपूर्ण विधि से समाचार-पत्र पढ़ने का विद्यार्थियों को प्रशिक्षण दें। आधुनिक राज्य में लोकतंत्र के अभ्यास हेतु अच्छे समाचार-पत्र एक अपरिहार्य उपकरण हैं। गुरुसरनदास त्यागी का कथन है कि समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ लोगों को राजनैतिक सामाजिक एवं आर्थिक दशाओं के विषय में महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्रदान करती हैं। ये जनमत के निर्माण में बहुत ही सहायक हैं। इनके द्वारा नागरिकता की शिक्षा प्रदान करने में बड़ी सहायता मिलती है।

प्रयोग का प्रायोजन—नागरिकशास्त्र शिक्षण में समाचार-पत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग पाठ्यवस्तु के संवर्धन तथा अनेक सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के विकास एवं देश की सामयिक समस्याओं से अवगत होने तथा समस्याओं के समाधान खोजने में किया जाना चाहिए। समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं में प्रकाशित समसामयिक समाचार, लेख, भाषण, परिचर्चा आदि का प्रयोग विभिन्न विकासमान शिक्षण-विधियों जैसे विचार-विमर्श, समस्या, परिवीक्षित अध्ययन आदि विधियों में किया जाना चाहिए। पाठ के आरम्भ में पाठ प्रेरणा देने के लिये, पाठ के मध्य में पाठ्य वस्तु के विकास के लिये तथा पाठ के अन्त में मूल्यांकन या ज्ञानोपयोग के लिये समाचार-पत्रों से सम्बन्धित अंशों का वाचन एवं उन पर विचार-विमर्श करना चाहिए।

समाचार-पत्रों के प्रयोग में यह सावधानी रखनी चाहिए कि उन्हें समीक्षात्मक रूप से पढ़ा जाय तथा पूर्वाग्रहों, पक्षपात गुटबन्दी पार्टीबाजी, संकीर्ण निष्ठाओं से प्रभावित न होकर निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ विधि से सत्यान्वेषण किया जाय। उदाहरणार्थ इन दिनों केन्द्र द्वारा राज्यपालों को पदच्युत राज्य के मुख्य न्यायालयों के न्यायाधीशों का स्थानान्तरण संविधान में संशोधन आवश्यक सेवा अधिनियम लागू संसदात्मक बनाम राष्ट्रपति शासन प्रणाली आदि संवैधानिक विवाद के विषयों पर समाचार-पत्रों में काफी चर्चा की जा रही है जिसमें पक्ष विपक्ष के विरोधी मत पढ़ने को मिलते हैं। निष्पक्ष रूप से इन विवादों में अपनी राय कायम कर नागरिकशास्त्र शिक्षण में उसका उपयोग करना है।

(ख) लेखा चित्रात्मक उपकरण

(1) चित्र—नागरिकशास्त्र-शिक्षण में यदि वास्तविक पदार्थ या उसके प्रतिरूप को प्रस्तुत करना सम्भव न हो तो चित्र द्वारा विषय वस्तु स्पष्ट की जानी चाहिए। चित्रों का वास्तविकता के अति निकट होने के कारण, उनके द्वारा अर्जित ज्ञान स्थायी होता है। चित्रों द्वारा छात्रों के ज्ञान में स्पष्टता तथा क्रम बद्धता उत्पन्न की जाती है। नागरिकशास्त्र के शिक्षण में वर्तमान घटनाओं, समस्याओं, आर्थिक तथा सामाजिक दशाओं को व्यक्तियों तथा

घटनाओं के चित्रों द्वारा सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है। चित्र मानसिक क्रिया के लिए आवश्यक दृष्टक कल्पना निर्माण कर देते है।

चित्र पाठ-प्रेरणा देने मे करना चाहिए, जैसे छोटी कक्षाओं मे नागरिक सुविधाएँ देने वाली संस्थाओं-नगर पालिका, विद्युत गृह, जल-प्रदाय सदन, डाक घर आदि के चित्र दिखलाकर उनकी कार्य प्रणाली समझाना, अमूर्त तथ्यों को मूर्त बनाने हेतु, जैसे कार्यरत महापुरुषों एवं आदर्श नागरिकों के चित्रों द्वारा उनके गुण स्पष्ट करना तथा मूल्यांकन एवं ज्ञानोपयोग के लिये चित्रों का प्रयोग उपयुक्त रहता है।

चित्रो का आकार एवं उनका कक्षा मे प्रस्तुतीकरण विद्यार्थियो की बोधगम्यता की दृष्टि से उपयुक्त होना चाहिए। छोटे आकार के चित्र हों तो उनके संग्रह को प्रत्येक छात्र को दिखलाना चाहिए या उन्हें एपीडायस्कोप यन्त्र से प्रक्षेपित कर दिखलाना चाहिए। चित्र का अध्ययन करने के बाद प्रश्नोत्तर द्वारा पाठ्य वस्तु का विकास करना चाहिए। छात्रों को चित्र के विश्लेषण एवं व्याख्या द्वारा मानसिक स्वक्रिया से अधिगम के लिये प्रेरित करना चाहिए। चित्र स्पष्ट, कलात्मक एवं अर्थपूर्ण होने चाहिए। चित्रो का प्रामाणिक होना आवश्यक है, विशेषकर ऐतिहासिक चित्रो का। चित्रो का प्रदर्शन कक्षा में अनावश्यक नही होना चाहिए ताकि छात्रों का ध्यान बटकर विकसित न हो। चित्र का उद्देश्य पूरा होने पर उसे तुरन्त हटा देना चाहिए। चित्रों के अत्यधिक प्रयोग से कक्षा को प्रदर्शनी कक्ष नही बना देना चाहिए। केवल अत्यावश्यक चित्र ही यथासमय प्रदर्शित किये जाय।

(2) मानचित्र—मानचित्र भूमण्डल अथवा उसके किसी अंश की निश्चित माप के अनुरूप बनाई गई प्रतिकृति है। इतिहास की घटनाएँ अथवा मानव के कार्यकलाप इसी भूमण्डल के किसी भाग में होते हैं। भूगोल इतिहास का रंगमंच प्रस्तुत करता है। यद्यपि इतिहास-शिक्षण में मानचित्र का अधिक प्रयोग होता है, तथापि नागरिक शास्त्र शिक्षण मे भी इसका प्रयोग कम महत्त्वपूर्ण नही है, क्योंकि नागरिकशास्त्र नागरिक के विभिन्न एवं राजनैतिक संस्थाओं से सम्बद्ध एवं अनेक सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक समस्याओं से अवगत कराता है। इन्हें समझने के लिये विभिन्न संस्थाओं एवं घटनाओं के स्थलों को मानचित्र मे प्रदर्शित करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव नागरिक जीवन एवं संस्थाओं पर पड़ता है जिसे मानचित्र की सहायता से ही स्पष्ट किया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव एवं विश्वशान्ति जैसे प्रकरणों मे मानचित्र की अपेक्षा ग्लोब (भूमण्डल कृति) पर विभिन्न देशो को दर्शाना विश्व-एकता की भावना मे सहायक हो सकता है। मानचित्र का प्रयोग उनकी संग्रह-पुस्तिका एटलस से भी करना सुविधाजनक रहता है।

नागरिकशास्त्र के अनेक ऐसे प्रकरण है जिनकी पाठ्यवस्तु को मानचित्र से स्पष्ट करना उपयुक्त रहता है, जैसे—भारत के राज्य केन्द्र शासित प्रदेश, राजस्थान मे पंचायत व्यवस्था, राज्य के विधान-सभा निर्वाचन क्षेत्र, संयुक्त राष्ट्र संघ तथा विश्वशान्ति अन्तर्राष्ट्रीय समस्या-राज्यो का तुलनात्मक अध्ययन आदि। मानचित्रो का प्रयोग पाठ के प्रारम्भ, मध्य तथा अन्त मे यथावश्यकता प्रयुक्त कर सकते हैं, किन्तु इनका प्रयोजन केवल भूगोल मे

नागरिकशास्त्र का समन्वय करना तथा भौगोलिक परिस्थितियों के नागरिक जीवन में निहितार्थ समझने हेतु होना चाहिए।

अन्य प्रदर्शनीय सहायक सामग्री के समान ही मानचित्र का आधार, प्रदर्शन-स्थल व प्रदर्शन-विधि विद्यार्थियो की सुविधा रुचि एव आवश्यकता के अनुकूल होनी चाहिए। मानचित्र-अध्ययन कर स्वक्रिया द्वारा विद्यार्थियो को पाठ्यवस्तु के विकास में सहयोग देने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। पाठ के निर्धारित उद्देश्यो की पूर्ति हेतु यथासमय तथा यथावश्यकता मानचित्र-अध्ययन किया जाना वाछनीय है। मानचित्र-अध्ययन में सहायक सकेत चिह्न दिये जाने चाहिए। वेसने के शब्दो में मानचित्र एक बुनियादी भाषा एव दुभाषिया दोनों है। वह केवल सूचना ही नहीं देता बल्कि इसे अभिनीत करता है और उसकी व्याख्या भी करता है।

(3) रेखाचित्र या आरेख—विलिच एवं शूलर ने चार्ट का व्यापक अर्थ बतलाते हुए कहा है कि चार्ट वह ग्रामीण तथा चित्रात्मक माध्यम है, जिसके द्वारा प्रमुख तथ्यों एव विचारो के पारस्परिक सम्बन्धो को क्रमबद्ध एवं तार्किक रूप से दृश्य रूप मे प्रदर्शित किया जाता है। कुदेसिया के शब्दो मे रेखाचित्र या खाका (आरेख) से किसी बात को सक्षिप्त रूप मे दर्शाया जाता है। रेखाचित्र मे रेखाओ तथा प्रतीकों द्वारा विभिन्न बातो के पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट किये जाते हैं। इसके द्वारा विषयवस्तु की विस्तृत व्याख्या को रोचक आकर्षक तथा बोधगम्य बनाया जा सकता है। गुरुसरनदास त्यागी का भी यही मत है कि चार्ट वास्तविकता का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं, बल्कि तथ्यो को लाक्षणिक रूप मे प्रस्तुत करते हैं—नागरिकशास्त्र का शिक्षक इनका उपयोग क्रियात्मक सम्बन्धो को स्पष्ट करने के लिए कर सकता है। इन परिभाषाओ से स्पष्ट होता है कि रेखाचित्र (चार्ट) या आरेख व्यापक अर्थ मे शिक्षक द्वारा प्रयुक्त उन सभी उपकरणो को कहते है जिसमें चार्ट, आरेख, ग्राफ आदि के माध्यम से कठिन या जटिल तथ्यो, उनके पारस्परिक सम्बन्धो सख्याओ के सगठन या विभाजन, विकास की प्रक्रियाओ तथा वर्गीकरण को प्रतीको के आधार पर सरल रूप मे समझाया जाता है।

सामान्यत: रेखाचित्रो को निम्नाकित रूपो मे वर्गीकृत कर सकते हैं।

(1) तालिका चार्ट—इस प्रकार के रेखाचित्र या चार्ट किसी सूचना को तालिकाओ मे भरित कर प्रदर्शित किया जाता है जैसे नागरिकशास्त्र के केन्द्र शासित क्षेत्र प्रकरण मे विभिन्न क्षेत्रो की विधान सभाओ मे सदस्य सख्या तथा 1981 की जनसंख्या को निम्नाकित तालिका चार्ट से प्रदर्शित है—

क्षेत्र	सदस्य संख्या	जनसंख्या
1. दिल्ली	56	2, 773, 864
2. गोवा, दमन, दीप	30	535, 857
3. पाण्डिचेरी	30	299, 794
4. मिजोरम	30	235, 786

इन तालिका का अध्ययन कर विद्यार्थी इन क्षेत्रों की जनसंख्या एवं विधान सभा सदस्यों का अनुपात, परस्पर तुलना, राज्यों से इनका अन्तर आदि अनेक तथ्य समझ सकते हैं।

(2) वर्गीकरण रेखाचित्र या चार्ट—इनके द्वारा किसी प्रमुख विचार के विभिन्न रूप या पक्ष स्पष्ट किये जा सकते हैं। जैसे नागरिकशास्त्र के आधुनिक राज्य प्रकरण में राज्य के विभिन्न रूप निम्नांकित वर्गीकरण द्वारा सरलता से स्पष्ट किये जा सकते हैं—
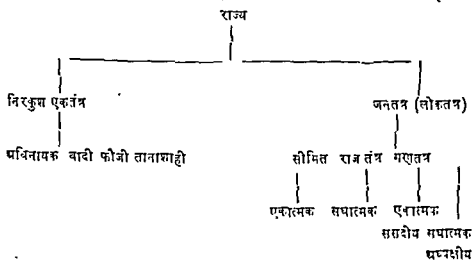
(3) संगठनात्मक रेखाचित्र या चार्ट—इनके द्वारा किसी संस्था या सरकार के अंग-प्रत्यंगों को दृश्य रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। जैसे नागरिकशास्त्र के राजस्थान राज्य की कार्य पालिका प्रकरण में कार्यपालिका के विभिन्न अंगों को निम्नांकित चार्ट द्वारा स्पष्ट किया गया है।

चित्र
राज्यपाल

चित्र
मुख्यमंत्री

चित्र
मंत्री गण
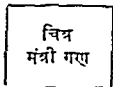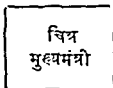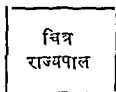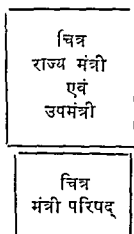
(4) धारा चार्ट—इनके माध्यम से विभिन्न संस्थाओं एवं पदाधिकारियों के अंतः सम्बन्धों को प्रकट किया जा सकता है। जैसे नागरिकशास्त्र के संसद के सघटक एवं विधेयक प्रक्रिया प्रकरण में निम्नांकित धारा-चार्ट द्वारा संसद के तीन सघटकों-लोक सभा, राज्य सभा एवं राष्ट्रपति के मध्य प्रस्तुत विधेयक को पारित करने की प्रक्रिया सरलता से समझाई जा सकती है—
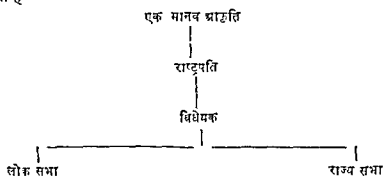
(5) आरेख—ये भी रेखाचित्र या चार्ट का ही चित्रात्मक रूप है। दिये हुए तथ्यों या आंकड़ों के आधार पर विभिन्न ज्यामितीय आकृतियों (वर्गाकार या वृत्ताकार) के माध्यम से दो या दो से अधिक वस्तुओं का तुलनात्मक चित्रण किया जा सकता है। जैसे नागरिकशास्त्र में धार्मिक सहिष्णुता प्रकरण के संदर्भ में किसी नगर के विभिन्न धर्मावलम्बियों की संख्या या परस्पर तुलना करनी है तो निम्नांकित आरेख सहायक होंगे—

यदि नगर में हिन्दु, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, जैन तथा पारसी धर्मावलम्बियों की संख्या क्रमश 64, 49, 36, 25, 16 व 9 हजार है तो उसे वर्गाकार आकृतियों में प्रदर्शित किया जा सकता है।

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख जैन, पारसी

समय रेखा—समय रेखा अथवा चार्ट ऐतिहासिक घटनाओं को किसी रेखा पर एक निश्चित पैमाने के अनुसार समय-अंतरालों में प्रदर्शित करने का उपकरण है। नागरिक-

शास्त्र में ऐतिहासिक विकास-क्रम से संबन्धित ऐसे प्रकरण हैं जिन्हें समय-रेखा से ठीक समझाया जा सकता है, जैसे राज्य का ऐतिहासिक विकास, संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा विश्व-शांति के प्रयास, भारत का संवैधानिक विकास, भारत में निर्धनता की समस्या का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य आदि। इन प्रकरणों में विभिन्न तथ्यों को काल-क्रम से समय-रेखा पर प्रदर्शित कर विभिन्न घटनाओं का कार्य-कारण सम्बन्ध समझाया जा सकता है। समय-रेखा समय-ज्ञान विकसित करने का एक प्रमुख उपकरण है। इसके द्वारा घटनाओं का पूर्वापर सम्बन्ध स्थापित होकर पाठ्यवस्तु को उचित परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है। भारत के संवैधानिक विकास प्रकरण में निम्नांकित समय रेखा प्रयुक्त हो सकती है —

समय-रेखा (पैमाना 1" = 100 वर्ष)

रेखा-चित्र—(ग्राफ) वह दृश्य-उपादान है, जिसके द्वारा हम उन संख्यात्मक स्थितियों का दृश्य रूप बालकों के सामने रखते हैं, जो शब्दों अथवा मानचित्रों द्वारा भली भांति अभिव्यक्त नहीं हो सकते। पी. एन. अवस्थी के शब्दों में—"बहुधा तुलना करने, प्रवृत्तियां दर्शाने, विकास अथवा संबंध प्रदर्शित करने के लिये ग्राफ का व्यापक उपयोग किया जाता है। विषय के स्पष्टीकरण की यह एक उत्तम विधि है। ग्राफ न्यूनाधिक परिमाण-बोधक तथ्य का यथार्थ प्रतिनिधि माना जाता है। सर्वोत्तम रूप से प्रस्तुत सांख्यिकी तथ्य भी कभी-कभी भ्रामक होते हैं, परन्तु ग्राफ के द्वारा प्रदर्शित वस्तु स्पष्ट तथा रोचक होती है। रेखा चित्र (ग्राफ) समकोण पर स्थित क्षैतिज तथा लम्बान्तर रेखाओं पर दो वस्तुओं को एक निश्चित पैमाने के अनुसार प्रदर्शित कर तथा उनके मध्य विभिन्न निर्देशांक बिंदुओं को रेखाओं से मिला कर रेखिक ग्राफ बनाये जाते हैं तथा उन बिन्दुओं से क्षैतिज रेखा पर स्तम्भ खींच कर स्तम्भाकार ग्राफ बनाये जाते हैं। दिये गये आंकड़ों के आधार पर किसी वृत्त के केन्द्र पर त्रिज्याएं खींच कर तथा वृत्त को विभाजित कर वृत्ताकार ग्राफ बनाये जाते हैं।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में रेखीय, स्तम्भाकार एवं वृत्ताकार रेखाचित्रों का प्रयोग जटिल सांख्यिकी आंकड़ों या तथ्यों, उनके पारस्पर संबंधों या उनके आधार पर प्रवृत्तियों को सरल रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है।

(ग) त्रिआयामीय उपकरण

(1) प्रतिरूप—पूर्व वर्णित "अनुभव शंकु" द्वारा यह स्पष्ट किया जा चुका है कि विद्यार्थी की अधिगम प्रक्रिया प्रत्यक्ष वस्तुओं के स्पर्श से हुए अनुभवों से अत्यन्त प्रभावी एवं तीव्र होती है किन्तु प्रत्यक्ष वस्तुओं के अभाव में उनके प्रतिरूप अन्य उपकरणों की अपेक्षा अधिगम में अधिक सहायक होते हैं। "मॉडल को वास्तविक वस्तुओं का अनुकरणात्मक त्रिआयामीय प्रतिरूप माना जा सकता है।" मॉडलों को देख कर तथा स्पर्श कर विद्यार्थी उनके तीनों आयामों (लम्बाई, चौड़ाई व मोटाई) का अनुभव कर सकते हैं। मॉडल किसी निश्चित पैमाने के अनुसार वास्तविक वस्तु का छोटे आकार का प्रतिरूप होता है जिसके तीनों आयाम समानुपाती होते हैं। विशेषकर छोटी कक्षा के विद्यार्थियों के लिये

उपकरण उपयोगी होते हैं क्योंकि उनकी मानसिक परिपक्वता का स्तर निम्न कोटि का होता है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण मे पाठ्यवस्तु से संबंधित अनेक ऐसे मॉडल तैयार कर उनका प्रयोग किया जा सकता है। जैसे– मतदान-पेटी, संसद-भवन, विद्युत-गृह, जलदाय संयत्र गदे पानी की निकास-प्रणाली, यातायात नियत्रण व्यवस्था आदि के मॉडलो द्वारा नागरिक जीवन की अन्यत्र उपयोगी बाते समझाई जा सकती हैं। मॉडलो के प्रयोग को विद्यार्थियों की स्वक्रिया द्वारा सीखने की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने हेतु विचार-प्रेरक बनाना चाहिए।

(2) कठपुतली-प्रदर्शन—कठपुतलिया मानव के छोटे आकार के प्रतिरूप हैं, जिन्हें उचित वेश-भूषा में सुसज्जित कर उनके प्रदर्शन द्वारा अनेक शिक्षाप्रद प्रसग, घटनाएँ व चारित्रिक विशेषताएँ रोचकता के साथ अभिनीत की जा सकती हैं। आधुनिक युग मे कठपुतलियो के शिक्षण-उपकरण की तरह प्रयोग मे रुचि प्रदर्शित की जा रही है। विदेशों मे इसका प्रयोग विद्यालयो मे बड़े पैमाने पर हो रहा है तथा भारत में भी इसकी शैक्षणिक सभावनाओ के प्रति शिक्षाविदो का ध्यान आकर्षित हो रहा। कठपुतली प्रदर्शन के अतिरिक्त कठपुतली-निर्माण भी एक शिक्षाप्रद हस्तोद्योग रूचिकार्य के रूप में लोकप्रिय होता जा रहा है। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने माध्यमिक कक्षाओ के पाठ्यक्रम मे इसे एक वैकल्पिक उद्योग के रूप में मान्यता दी है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण मे विशेषकर छोटी कक्षाओ के लिए इनका प्रयोग उपयोगी रहेगा। अनेक उपयुक्त प्रकरण हैं–जैसे नागरिक गुणो को ऐतिहासिक महापुरुषो की जीवन झाकियों से कठपुतली प्रदर्शन के माध्यम से रोचक विधि से प्रस्तुत किया जा सकता है। मतदान-केन्द्र की प्रक्रिया, सुरक्षा परिषद की बैठक, भारत की प्रमुख समस्याओ का नाट्यीकृत स्वरूप आदि प्रकरणो की पाठ्यवस्तु को कठपुतली प्रदर्शन द्वारा पूर्णतः या अंशतः विकसित किया जा सकता है अथवा पठित प्रकरण के सकलन या सवर्धन या आवृति हेतु इस उपकरण का प्रयोग किया जा सकता है। इसके उचित प्रयोग हेतु शिक्षक का इस कला मे प्रशिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है।

घ—प्रक्षेपण उपकरण

स्लाइडें प्रक्षेपण उपकरण मैजिक लैटर्न एपिडायसकोप तथा प्रोजेक्टर प्रक्षेपण-यंत्रों द्वारा परदे पर बड़े आकार मे प्रक्षेपित कर विद्यार्थियो को दिखलाये जाते है। स्लाइडें कांच की आयताकार पट्टियों पर बनाये गये चित्र या आकृतियाँ हैं जिन्हे प्रक्षेपित कर पाठ-प्रकरण के अनुकूल प्रयुक्त किया जा सकता है। इन्हे चित्रों की भाँति नागरिकशास्त्र शिक्षण मे उपयोग मे लाया जाता है। छोटे चित्र भी इन यत्रो द्वारा प्रक्षेपित कर बड़े आकार मे दिखाये जा सकते हैं।

2. श्रव्य उपकरण

1. रेडियो-श्रव्य शिक्षण उपकरणो में रेडियो प्रसारणों का प्रमुख महत्व है।

यूनेस्को ने रेडियो के शैक्षणिक महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए यह कहा है कि विद्यालय प्रसारण सेवा सुचयनित एवं आलोचनात्मक श्रवण का प्रशिक्षण देती है तथा यह समाज को विद्यालय के संबंध में तथा विद्यालय को समुदाय के सम्बन्ध में अवगत कराने का प्रयास करता है। शैक्षणिक रेडियो कार्यक्रम विद्यार्थियों के लिए उपयोगी हो सकते हैं जैसे विद्यालय प्रसारण समाचार, प्रमुख व्यक्तियों की वार्तायें, परिचर्चायें, प्रेरणास्पद रेडियो-नाटक प्रश्नन बच्चों का कार्यक्रम आदि शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी कार्यक्रमों में से उन कार्यक्रमों का श्रवण हेतु चयन किया जाना आवश्यक है जो नागरिकशास्त्र की विषय वस्तु के संवर्धन में सहायक हो। *नागरिकशास्त्र शिक्षक को प्रसारणीय रेडियो कार्यक्रम की जानकारी आकाशवाणी* सारंग आदि पत्रिकाओं से करनी चाहिए तथा उनमें नागरिकशास्त्र-शिक्षण में उपयोगी प्रसारणों को विद्यार्थियों द्वारा सुनने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए तथा स्वयं को भी देश विदेश की सामयिक समस्याओं से अवगत होने के लिए तथा उनमें विद्यार्थियों को भी लाभान्वित करने हेतु सुचयनित कार्यक्रम सुनना चाहिए। नागरिकशास्त्र शिक्षण में विशेषकर विद्यालय प्रसारण कार्यक्रम से सम्बन्धित प्रसारणों का तो प्रयोग किया जाना नितांत आवश्यक है।

विद्यालय प्रसारण—आकाशवाणी के प्रायः सभी केन्द्रों से ये कार्यक्रम विद्यालय समय में प्रसारित किये जाते हैं जिसकी वर्ष भर की अग्रिम सूचना विद्यालयों को उपलब्ध कराई जाती है। जिन विद्यालयों के पास रेडियो है वे यह सूचना नि:शुल्क अपने सम्बन्धित आकाशवाणी केन्द्र से मंगा सकते हैं। राजस्थान में जयपुर के आकाशवाणी केन्द्र से ये कार्यक्रम प्रतिदिन दस मिनिट का दो बार (दो पारी वाले स्कूलों के कारण) प्रसारित होता है। इस कार्यक्रम को कुशल अध्यापकों द्वारा तैयार कराया जाता है तथा यह तीन श्रेणियों में विभक्त रहता है। प्राथमिक कक्षाओं, उच्च प्राथमिक कक्षाओं तथा माध्यमिक व उच्च माध्यमिक कक्षाओं के लिए। प्रत्येक श्रेणी के कार्यक्रम में कुछ पाठ नागरिकशास्त्र से भी सम्बन्धित होते हैं। इन पाठों को शिक्षक के मार्गदर्शन में विद्यार्थियों द्वारा सुना जाना चाहिए।

विद्यालय प्रसारण के प्रयोग की विधि—विद्यालय प्रसारण के प्रयोग हेतु निर्देशों के लिए निर्देश राजस्थान में शिक्षा विभाग के शैक्षिक तकनीकी प्रकोष्ठ जयपुर द्वारा उन सभी विद्यालयों को प्रेषित किये जाते हैं जो इनका उपयोग करना चाहते हैं प्रयोग की विधि के निम्नांकित तीन सोपान हैं —

1. प्रसारण-पूर्व क्रियाकलाप—आकाशवाणी केन्द्र से प्राप्त कार्यक्रम के अनुसार निश्चित दिनांक एवं समय से 10 मिनिट पूर्व प्रसारणीय कार्यक्रम के प्रति शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को उत्प्रेरित किया जाना चाहिए तथा विद्यार्थियों को कार्यक्रम श्रवण के समय निर्दिष्ट प्रमुख बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देने को कहा जाय।

2. प्रसारण के समय—प्रसारण प्रारम्भ होते ही सभी विद्यार्थी शिक्षक के निर्देशानुसार पूर्ण शांति एवं मनोयोग से श्रवण करेंगे। यदि कुछ बिन्दु नोट करने योग्य हों तो उन्हें वे नोट करेंगे किन्तु इससे उनके श्रवण में बाधा नहीं पहुँचनी चाहिए।

(3) प्रसारण पश्चात् क्रियाकलाप—प्रसारण समाप्त होते ही रेडियो बन्द कर शिक्षक विद्यार्थियों की शंकाओं का समाधान करेगा, उनका मूल्यांकन करेगा तथा प्रसारण प्रकरण से सम्बन्धित अतिरिक्त आवश्यक जानकारी देकर उसका संवर्धन भी करेगा।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में रेडियो के प्रभावी प्रयोग के लिए निम्नांकित बातों का ध्यान रखा जाय—

(1) प्रसारण के पूर्व रेडियो को कक्षा में उपयुक्त स्थान पर रखा जाय तथा उसकी ध्वनि नियन्त्रित की जाय ताकि सभी छात्र ठीक से सुन सकें।

(2) खराब रेडियो की मरम्मत कराई जाय तथा उसके प्रयोग के प्रति उपेक्षा न दिखाई जाय,

(3) प्रसारण को सोद्देश्य बनाने के लिये उचित विधि अपनाई जाय,

(4) विद्यालय प्रसारण के अतिरिक्त अन्य चयनित कार्यक्रमों को शाला-समय के अतिरिक्त सुनाने की व्यवस्था की जाय या इसे विद्यार्थी अपने घर पर या पड़ौस में सुने,

(5) रेडियो के प्रयोग की विधि को मूल्यांकन के आधार पर निरन्तर प्रभावी बनाने का प्रयास किया जाय तथा

(6) सरक्षणीय रेडियो प्रसारणों को (यदि टेपरेकार्डर हो तो) टेप कर बाद में भी प्रयोग में लाया जाय।

टेपरिकार्डर

प्राय: देखा जाता है कि रेडियो प्रसारण के समय कुछ विद्यार्थी अनुपस्थित रहते हैं या पूरा ध्यान नहीं दे पाते हैं या कुछ कार्यक्रम विद्यालय समय के पूर्व या बाद में प्रसारित होते हैं। इन कार्यक्रमों को टेप रेकार्डर द्वारा टेप कर पुनः छात्रों को सुनाया जा सकता है या आवश्यकता के अनुसार उनकी यथासमय आवृत्ति की जा सकती है। इस दृष्टि से टेप रिकार्डर एक प्रभावी उपकरण है, जिसका प्रयोग नागरिकशास्त्र शिक्षण में किया जाना उपयोगी है। प्राय विद्यालय इतने साधन-सम्पन्न नहीं होते कि इतना मंहगा यंत्र वे खरीद सकें। ऐसी स्थिति में विद्यालय संगम के केन्द्रीय स्कूल में तो एक टेप रेकार्ड विभाग द्वारा आवश्यक उपलब्ध कराया जाय जिसका उपयोग सभी सम्बन्धित शालाएँ बारी-बारी से कर सकें।

श्रव्य-दृश्य उपकरण

(1) फ़िल्म स्ट्रिप तथा चलचित्र—अर्थ श्रव्य-दृश्य उपकरणों में सर्वाधिक शैक्षणिक महत्व चल फिल्में तथा टेलीविजन का है। स्लाइडों की भांति ये भी प्रक्षेप्य उपकरण हैं। स्लाइडें केवल दृश्य उपकरण हैं जबकि फिल्म एवं टेलीविजन श्रव्य तथा दृश्य दोनों हैं। फिल्म स्ट्रिप मूक तथा सवाक दोनों होती हैं तथा फिल्म की अपेक्षा बहुत ही कम लम्बाई की होती हैं जो 10 से 30 मिनिट के अन्तर्गत दिखलाई जा सकती है। इन दोनों को छोटे 16 एम एम प्रोजेक्टर द्वारा विद्यालय के कक्ष में परदे पर प्रक्षेपित कर दिखलाया जा सकता है। इनका प्रयोग केवल वे ही विद्यालय कर सकते हैं जिनमें बिजली तथा प्रोजेक्टर उपलब्ध हो। फ़िल्म-स्ट्रिपें तथा फ़िल्में शिक्षा विभाग के श्रव्य-दृश्य शिक्षा केन्द्र से वहाँ के फ़िल्म

संग्रहालय का सदस्य बनने पर विद्यालयों को उपलब्ध हो सकती हैं। केन्द्रीय शिक्षा विभाग ने विद्यालय-पाठ्यक्रम पर आधारित विभिन्न विषयों से सम्बन्धित फिल्म-स्ट्रिपें एवं फिल्मों का निर्माण किया है। नागरिकशास्त्र शिक्षण के लिये उपयोगी उपकरण राज्य दृश्य श्रव्य शिक्षा केन्द्र से प्राप्त हो सकते हैं।

प्रयोजन एवं महत्त्व

शिक्षा में चल चित्रों का उपयोग प्रथम महायुद्ध के बाद से होने लगा। श्रव्य तथा दृश्य दोनों प्रकार का माध्यम होने के कारण फिल्में विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन की स्थितियों से प्राप्त अनुभवों द्वारा अधिक प्रभावी अधिगम करने में सहायक होती हैं। विलियम ऐलन ने अपने अनुसंधान एवं प्रयोग के निष्कर्ष बतलाते हुए कहा है कि अधिकांश शिक्षण-स्थितियों में फिल्म प्रदर्शन के अन्तर्गत विद्यार्थियों की अन्तःक्रिया के फलस्वरूप फिल्म से अधिगम में अत्यधिक वृद्धि होती है।

दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि फिल्में शिक्षण का एक सशक्त उपकरण है। इसका प्रयोग इन मुख्य प्रयोजनों के लिये किया जाता है।

(1) अधिगम (सीखने) की स्थितियों को वास्तविकता प्रदान करना,

(2) अधिगम अपेक्षाकृत अधिक स्थायी बनाना,

(3) मनोरंजन के साथ ज्ञानार्जन,

(4) शिक्षण में समय की बचत,

(5) विद्यार्थियों की वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुकूल स्थितियों का प्रस्तुतिकरण,

(6) पाठ-प्रकरण का संवर्धन तथा

(7) आदर्श नागरिकों में उपयुक्त गुणों, अभिरुचियों, अभिवृत्तियों एवं कौशल का अप्रत्यक्ष विधि से प्रशिक्षण देना।

फिल्म स्ट्रिपें तथा फिल्मों के प्रयोग की विधि—

इनके प्रभावी प्रयोग हेतु फिल्म प्रदर्शन को निम्नांकित तीन सोपानों में विभक्त करना चाहिए।

(1) प्रदर्शन—पूर्व के क्रियाकलाप फिल्म स्ट्रिपें प्रदर्शन के लगभग 10 मिनिट पूर्व कक्षा में शिक्षक सम्बन्धित फिल्म प्रकरण के प्रति विद्यार्थियों की रुचि, जिज्ञासा एवं अवधान आकर्षित करने के लिये उन्हें उत्प्रेरित करेगा। दैनिक जीवन या पढ़ाये गये पाठ के पूर्व ज्ञान से इस प्रकरण को सम्बद्ध कर पेश किया जा सकता है। उदाहरणार्थ-नागरिकशास्त्र शिक्षण के उपयुक्त केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा निर्मित कुछ चल चित्र हैं जैसे श्रम दान, भूदान यात्रा, भविष्य हमारा है, रास्ता कैसे पार करें, महान् परीक्षण व मानव अधिकार, "नागरा-नागर" आदि हैं। इन फिल्मों का उपयोग नागरिकशास्त्र से सम्बन्धित पाठ-प्रकरणों की पाठ्यवस्तु को संवर्धित करने में किया जा सकता है। इनके प्रदर्शन के पूर्व विद्यार्थियों को उक्त विधि से उत्प्रेरित किया जाये।

(2) प्रदर्शन के समय क्रियाकलाप—शिक्षक द्वारा निर्दिष्ट फिल्म के मुख्य स्थलों पर विशेष ध्यान देते हुए विद्यार्थी शांतिपूर्वक फिल्म देखेंगे व सुनेंगे तथा मध्य में आवश्यक संक्षिप्त वार्ता नोट भी करेंगे। इस प्रकार फिल्म दर्शन सोद्देश्य बन जायेगा।

(3) प्रदर्शन पश्चात् के क्रियाकलाप—इस सोपान में फिल्म-प्रदर्शन के बाद शिक्षक प्रश्नोत्तर विधि से विद्यार्थियों का मूल्यांकन करेगा तथा उनकी शंकाओं का समाधान करते हुए पठित पाठ्यवस्तु से उसे सम्बन्धित कर उसका संवर्धन करेगा।

फिल्म स्ट्रिप तथा फिल्मों के प्रयोग में कुछ सावधानियाँ रखनी जरूरी हैं जैसे—उपयुक्त फिल्मों का चुनाव फिल्मों का उचित प्रदर्शन, तीनों सोपानों की पूर्व योजना का निर्माण, प्रदर्शन कक्ष में विद्युत एवं अन्धकारयुक्त बनाने की व्यवस्था तथा फिल्मों के प्रयोग को मात्र मनोरंजन साधन होने की अपेक्षा उन्हें अधिकाधिक सोद्देश्य एवं शिक्षाप्रद बनाने का प्रयास करना।

2. दूरदर्शन या टेलीविजन

दूरदर्शन केन्द्र से प्रसारित नागरिकशास्त्र शिक्षण के सन्दर्भ में शैक्षणिक दूरदर्शन कार्यक्रम जिसे शिक्षण-उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार रेडियो द्वारा समाचार, विद्यालय प्रसारण सामग्री, वार्ताएं, परिचर्चा, नाटक आदि सुने जा सकते हैं इसी प्रकार टेलीविजन द्वारा उन्हें सुनने के अतिरिक्त देखा भी जा सकता है। टेलीविजन श्रव्य-दृश्य शिक्षण उपकरणों में सबसे सशक्त एवं प्रभावी उपकरण है क्योंकि इसके द्वारा समसामयिक जीवन स्थितियाँ एवं पूर्व नियोजित सोद्देश्य विधि से निर्मित तत्काल देखी जा सकती है जिससे विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया अत्यन्त तीव्र, स्थायी तथा रोचक बन जाती है। प्रचलित कहावत कि एक चित्र दस हजार शब्दों के बराबर है, दूरदर्शन का महत्त्व दर्शाती है।

अमरीका के शिक्षा आयुक्त एल. जी डेरिक के शब्दों में दूरदर्शन नाट्यीकृत अतीत तथा वर्तमान के रोमांचकारी अनुभवों दोनों को प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त हिरण्मय रे के मतानुसार भारतीय विद्यालयों में साधनों की कमी (योग्य प्रशिक्षित अध्यापकों, प्रयोगशालाओं व शिक्षण-उपकरणों तथा स्थान की कमी) तथा ज्ञान के प्रसारण के इस युग में सार्वजनिक शिक्षा की महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति में निश्चय ही दूरदर्शन एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य कि लगभग 85 प्रतिशत ज्ञानार्जन श्रव्य एवं दृश्य इन्द्रियों के माध्यम से होता है, दूरदर्शन की उपयोगिता को प्रकट करता है।

भारत में भी अब प्रमुख दूरदर्शन केन्द्रों से विद्यालयों के लिये शैक्षणिक कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। इस सशक्त शैक्षिक उपकरण को देशव्यापी बनाने के लिये इन कार्यक्रमों को अब कृत्रिम उपग्रह द्वारा प्रक्षेपित करने की योजना बनाई गई है।

भारत के छः राज्यों राजस्थान, आन्ध्रप्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्यप्रदेश तथा उड़ीसा में 1 अगस्त 1975 से 31 जुलाई 1976 तक संचार उपग्रह साइट के माध्यम से इस दिशा में प्रयोग किये गये, वे अत्यन्त उत्साहवर्धक रहे।

राजस्थान में यह प्रयोग राज्य के तीन जिलों (जयपुर, कोटा एवं सवाई माधोपुर) में शिक्षा विभाग के शैक्षणिक तकनीकी प्रकोष्ठ, जयपुर द्वारा संचालित किया गया।

दूरदर्शन द्वारा प्राथमिक विद्यालयों तथा उच्च शिक्षा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माध्यम से शैक्षणिक कार्यक्रम नियमित प्रसारित किये जाते हैं।

शैक्षणिक दूरदर्शन कार्यक्रमों में अनेक प्रकरण ऐसे हैं जिनका प्रयोग नागरिकशास्त्र शिक्षण में प्रभावी रूप से किया जा सकता है। जैसे—महात्मागांधी, यातायात, रामलीला, पांच पुतलियाँ, एकता में बल, चाचा नेहरू, गुरु नानक, हम सब एक हैं—नाटक, होली की कहानी, हाथ-पंचशील कथा, दांतों की सफाई, कृष्ण सुदामा, बाल नागरिक, शरीर की सफाई, स्वाधीनता संग्राम की कहानी, सम्बन्धी आदि। ये सभी कार्यक्रम उपग्रह प्रयोग के अन्तर्गत प्राथमिक विद्यालयों में केन्द्र सरकार द्वारा वितरित टी. वी. ग्रहण-यंत्रों से प्रसारित हो चुके हैं। प्रत्येक विद्यालय में एक अध्यापक को टी. वी. संचालक अध्यापक का प्रशिक्षण उक्त तकनीकी केन्द्र द्वारा दिया गया है।

टेलीविजन के प्रयोग की विधि के भी फिल्मों के प्रयोग की भांति तीन सोपान हैं—

(1) प्रसारण-पूर्व क्रियाकलाप,

(2) प्रसारण समय के क्रियाकलापों का आयोजन भी फिल्मों के सम्बन्ध में पूर्व उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार किया जाना चाहिए।

टी. वी. शिक्षण-उपकरण को प्रभावी बनाने में प्रमुख भूमिका प्रयोक्ता-अध्यापक की है। अतः इस शिक्षण द्वारा अपने कार्य में रुचि व अपने दायित्व का निर्वाह करते रहना आवश्यक है। नागरिकशास्त्र-शिक्षक को भी प्रयोक्ता-अध्यापक की भांति टी. वी. की तकनीक प्रयोग एवं उक्त सोपानों से अवगत होना चाहिए।

शिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह विद्यालय में उपलब्ध साधनों एवं उपकरणों के आधार पर अपनी शिक्षण विधि को निरन्तर प्रभावी बनाता रहे तथा आधुनिक उपकरणों को उपलब्ध करने एवं स्थानीय साधनों से निर्मित करने का प्रयास करता रहे। शिक्षण-उपकरणों का प्रयोग सोद्देश्य किया जाय तथा उन्हें बासी न बनाया जाय।

10 | नागरिकशास्त्र शिक्षण : पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलाप

नागरिकशास्त्र की शिक्षण-सहायक प्रविधियों एवं शिक्षण-प्रविधियों एवं शिक्षण-सहायक उपकरणों की भांति पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप भी शिक्षण-विधि को प्रभावी बनाने में अपनी विधायक भूमिका निभाते हैं। विद्यार्थियों द्वारा अधिगम हेतु जीवन से सम्बन्धित वास्तविक स्थितियाँ प्रस्तुत करने में ये क्रियाकलाप सबसे अधिक सशक्त माध्यम हैं। पाठ्यक्रम की आधुनिक संकल्पना के अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण इन्हीं जीवन स्थितियों में करणीय क्रियाकलापों द्वारा प्राप्त अनुभवों के रूप में होना चाहिए। कोठारी शिक्षा आयोग ने इस तथ्य को इस प्रकार स्पष्ट किया है, कि 'हम स्कूल-पाठ्यचर्या को इन अध्ययन-अनुभवों की समष्टि समझते है। इस दृष्टि से पाठ्चर्या और 'पाठ्यर्येतर कार्यों में अन्तर नहीं रह जाता।'[1] यद्यपि अब इस नवीन विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रमों का निर्माण होने लगा है किन्तु विद्यालयों में फिर भी वही परम्परागत दृष्टि से इन क्रियाकलापों की उपेक्षा की जा रही है।

पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों की कुछ शिक्षाविदों द्वारा दी गई परिभाषाएं निम्नांकित हैं—

पी. एन अवस्थी–'वे समस्त क्रियाएं जो छात्र की अनुभव वृद्धि में सहायक होती हैं, पाठ्यक्रमीय क्रियाएं कही जानी चाहिए।'[2]

माध्यमिक शिक्षा आयोग–'हम चाहते हैं कि बालकों के समग्र व्यक्तित्व के विकास हेतु विद्यालय में विविध उन्नत प्रकार के क्रियाकलापों का प्रावधान किया जाना चाहिए।.........ज्ञान तथा अधिगम निस्सन्देह महत्त्वपूर्ण हैं किन्तु इनकी उपलब्धि रोचक क्रियाकलापों के उपादान के रूप में होनी चाहिए क्योंकि ऐसी स्थिति में ही ये विद्यार्थियों के मस्तिष्क एवं व्यक्तित्व के अभिन्न अंग बन कर व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं।'[3]

---

1. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ 230
2. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण-विधि, पृ. 164
3. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, अं. संस्करण, पृ. 217

एन. सी. ई. आर. टी. द्वारा प्रकाशित दस-वर्षीय स्कूल-पाठ्यक्रम के क्रियाकलापों की इन शब्दों में व्याख्या की गई है–'शिक्षक को यह याद रखना चाहिए कि बालक तथ्यात्मक ज्ञान के प्रदर्शन को मात्र विनम्रता के साथ सुनकर नहीं सीखता, बल्कि वह कार्य करके तथा खोज करके अपेक्षाकृत अधिक सीखता है। ऐसी क्रियाकलापपूर्ण प्रक्रिया में जो खोज को प्रेरित करे, बालक को रुचि तथा आनन्द मिलता है और इसका अधिगम स्वतः स्फूर्त हो जाता है।.........अधिगम अनुभवों का नियोजन बालकों के लिये क्रियाकलापों एवं कार्यक्रमों के रूप में किया जाना चाहिए।'[4]

डा. एम. एन. झा शब्दों के में--पाठ्यक्रम में वे समस्त अनुभव सम्मिलित होते हैं जो विद्यार्थी विद्यालय तथा विद्यालय के निकटवर्ती वातावरण में हो रही अनेक क्रियाकलापों के माध्यम से प्राप्त करते हैं।.........संक्षेप में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप पाठ्यक्रमीय कार्यक्रमों से उत्पन्न होते हैं तथा पाठ्यक्रम को समन्वित करने हेतु उसी में वापस आ जाते हैं।

डी. एन. गैड एवं आर. पी. शर्मा का मत है कि, 'इन क्रियाओं (पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों) को शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक एवं महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।

वस्तुतः ये क्रियाकलाप शिक्षक द्वारा आयोजित शिक्षण अधिगम स्थितियों को अधिकाधिक जीवनपयोगी, रोचक एवं प्रभावी बनाते हैं जिनके द्वारा विद्यार्थियों को प्राप्त अधिगम अनुभव उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने में सहायक होते हैं।

परम्परागत संकल्पना

परम्परागत संकल्पना में इन क्रियाकलापों को पाठ्यक्रमेत्तर माना जाता था, पाठ्यक्रम-सहगामी नहीं। डा. एम. एन. झा. के शब्दों में–'इतर पाठ्यक्रमेतर का प्रयोग यह प्रकट करता रहा कि सम्भवतः ये क्रियाकलाप पाठ्यक्रम के अतिरिक्त हैं। इससे यह धारणा बनना स्वाभाविक था कि ऐसे क्रियाकलापों को सम्पन्न करने हेतु अतिरिक्त अध्यापकों की नियुक्ति होनी चाहिए अन्यथा इस कार्य-भार का वितरण वर्तमान अध्यापकों में ही किया जाता है।' इस धारणा के अनुसार ये पाठ्यक्रमेतर क्रियाकलाप पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं थे और न उन्हें शाला-समय में सम्पन्न करने का कोई प्रावधान था।

इसके विपरीत गैड व शर्मा के शब्दों में–'स्कूल का सारा उद्देश्य केवल पाठ्यक्रम आधारित विषयों को होप डाला होता था, और सामाजिक कार्यों में हस्तक्षेप करना तथा उन्हें प रित करना व्यर्थ तथा समय की बर्बादी समझा जाता था। विद्यालयों के प्रधानाचार्य पाठ्यक्रम में उनके समावेश को बुरा समझते थे समय-विभाजन-चक्र में उन्हें शामिल नहीं करते थे, क्योंकि ऐसे कार्य स्कूल के समुचित संचालन में बाधक समझे जाते थे।' पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों को पाठ्यक्रमेतर मानते हुए भी उनकी उपेक्षा करने की दृष्टि से

4. दस वर्षीय स्कूल पाठ्यक्रम, एन. सी. ई. आर. टी., पृ.

देखा जाता था। यह धारणा कदाचित ब्रिटिश काल में अंग्रेजों की नीति-भारतीयों को क्लर्क के रूप में तैयार करना तथा विद्यालयों की सफलता परीक्षा-परिणामों से आंकने के कारण रही है। प्राचीन काल में शिक्षा केन्द्रों के पाठ्यक्रमों में इन क्रियाकलापों को विशेष महत्त्व दिया जाता था। बौद्धिक विषयों के पूरक के रूप में वाद-विवाद, शास्त्रार्थ, शिल्पकला, चित्रकला, व्याख्यान, युद्ध कौशल आदि अनेक क्रिया कलाप पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग थे। कालान्तर में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलापों का शिक्षा में महत्त्व घटता गया।

आधुनिक संकल्पना

आधुनिक काल में शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्रों में अनुसंधान एवं नवीन प्रयोगों के आधार पर शिक्षा-प्रक्रिया में इन कार्य-कलापों का महत्त्व पुनः स्वीकार किया जाने लगा और धीरे-धीरे इनको अब पाठ्यक्रम का एक अभिन्न अंग माना जाने लगा। उद्देश्य निष्ठ शिक्षण नवीन धारणा के अनुसार प्रत्येक विषय-शिक्षण के उद्देश्य ज्ञानात्मक, ज्ञानोपयोग, अवबोधात्मक, अभिरुच्यात्मक, एवं कौशल सम्बन्धी उद्देश्य-विद्यार्थियों में अधिगम के फलस्वरूप उनके वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के रूप में निर्धारित किया जाना आवश्यक है। शिक्षण-विधियां इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण में सहायक होती हैं तथा शिक्षण-प्रविधियां, शिक्षक-सहायक उपकरण तथा पाठ्यक्रम सहगामी क्रिया कलाप शिक्षण-विधियों को प्रभावी बनाने के लिये प्रयुक्त होते है। अब पाठ्यक्रम की क्रियाकलापपूर्ण पाठ्यक्रम तथा विद्यालयों की क्रिया कलापपूर्ण विद्यालय के रूप में कल्पना की जाने लगी है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इस नवीन धारणा को स्पष्ट करते हुए कहा है कि 'सर्वोत्कृष्ट आधुनिक शैक्षणिक विचारधारा के अनुसार इस संदर्भ में पाठ्यक्रम का अर्थ मात्र परम्परागत विधि से पढ़ाये जाने वाले अकादमिक विषय नहीं हैं बल्कि इसके अन्तर्गत वे समग्र अनुभव भी सम्मिलित हैं जो विद्यार्थियों को विद्यालय, कक्षा-कक्ष, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, खेल के मैदानों में तथा विद्यार्थी व अध्यापक के मध्य अनेक अनौपचारिक सम्पर्कों द्वारा होने वाले विभिन्न सहगामी क्रियाकलापों से प्राप्त होते हैं। भावी माध्यमिक विद्यालयों को क्रिया कलापपूर्ण विद्यालय में परिणत किया जाना चाहिए।'[5]

माध्यमिक विद्यालयों की भांति प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों एवं उनके पाठ्यक्रमों के विषय में भी यह नवीन धारणा ग्राह्य होनी चाहिए। कोठारी शिक्षा आयोग ने इसी आधुनिक संकल्पना पर बल दिया है। वस्तुतः पाठ्यक्रम अध्ययन-अनुभवों की समष्टि है और इस दृष्टि से पाठ्यक्रम और पाठ्यक्रमेतर क्रियाकलापों में कोई अन्तर नहीं रह जाता। अब परम्परागत विधायें पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बन चुके हैं। नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम का निर्माण भी क्रियाकलापों के रूप में किये जाने का प्रयास हो

5. उपर्युक्त पृ. 90 व 217

रहा है। इस दिशा में कुछ राज्यों (विशेषकर राजस्थान) के शिक्षा-विभागों एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्डों द्वारा नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों का उल्लेख इकाई-क्रम में किया गया है किन्तु विद्यालयों में इन क्रियाकलापों के प्रभावी संचालन की दिशा में अभी कुछ किया जाना शेष है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलापों का प्रयोजन, उपयोगिता एवं महत्त्व—

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रिया-कलापों का महत्त्व उनकी उपयोगिता पर निर्भर है तथा यह उपयोगिता शिक्षण उद्देश्यों की उपलब्धि पर अवलम्बित है। प्रयोजन अथवा मूल एवं उद्देश्य, उपयोगिता एवं महत्त्व परस्पर अन्तर्निर्भर हैं।

1. लोकतान्त्रिक नागरिकता का प्रशिक्षण—लोकतान्त्रिक व्यवस्था के अनुकूल योग्य एवं कुशल नागरिकता का प्रशिक्षण देना नागरिकशास्त्र का प्रमुख उद्देश्य एवं उपादेयता है किन्तु यह प्रशिक्षण कक्षा में मौखिक एवं सैद्धांतिक रूप से दिया जाना सम्भव नहीं है। अमरीकी विद्यालय-प्रशासक-परिषद् का यह मत है कि नागरिकता एक जीवन पद्धति है, यह एक इकाई या विषय के रूप में पढ़ाई जाने योग्य वस्तु नहीं है। प्रमुख प्रश्न केवल यही नहीं है कि एक अच्छा नागरिक क्या जानता है। बल्कि यह है कि एक अच्छा नागरिक क्या करता है तथा उसे ऐसा करने के लिये क्या जानना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भी शिक्षा का उद्देश्य कुशल नागरिक-जीवन का प्रशिक्षण बतलाते हुए कहा है कि कोई भी 'शिक्षा' शिक्षा कहलाने योग्य नहीं मानी जा सकती जो किसी व्यक्ति में उसके अपने साथियों के साथ शिष्टता एवं कुशलता के साथ रहने के लिये आवश्यक गुणों का विकास नहीं करती।

इस दृष्टि से विद्यालय में आयोजित प्रायः सहयोग, सद्भावना, सहनशीलता, सहन शक्ति, नेतृत्व, आत्मविश्वास, अनुशासन, आदि अनेक अच्छे नागरिक गुणों का विकास होता है। किन्तु नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों में विद्यार्थी-परिषद् या संसद, समाज-सेवा, वाद-विवाद, विचार-विमर्श, स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का अध्ययन, राष्ट्रीय पर्वों व उत्सवों का आयोजन आदि विशेष उल्लेखनीय हैं जो लोकतान्त्रिक-नागरिकता के प्रशिक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

2. मानसिक शक्तियों का विकास—लोकतान्त्रिक व्यवस्था में नागरिक को निष्पक्ष, वस्तुनिष्ठ एवं आलोचनात्मक विधि से समस्याओं पर विचारने, तर्क प्रस्तुत करने तथा निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। उसे दूसरों के विचारों को धैर्य से सुनना-समझना तथा अपने विचारों को स्पष्टता से अभिव्यक्त करना चाहिए। इन मानसिक शक्तियों एवं कुशलताओं के विकास में नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप उल्लेखनीय हैं, उनमें वाद-विवाद, विचार-विमर्श की विभिन्न बाधाएं, समस्या-समाधान की

प्रक्रियाएं, राजनैतिक संस्थाओं की बैठकों के छद्माभिनय, प्रयोजनाएं आदि प्रमुख है।

3. राष्ट्रीय भावात्मक एकता की भावना एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास—नागरिकशास्त्र-शिक्षण में राष्ट्रीय भावात्मक एकता की भावना के विकास में शैक्षिक यात्राएं, भ्रमण, स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय संस्थाओं का अवलोकन राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन, समाज-सेवा, देश की समस्याओं पर विचार-विमर्श या वाद-विवाद आदि पाठ्य क्रम सहयोगी क्रियाकलाप विशेष सहायक होते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के विकास हेतु प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय दिवसों का आयोजन, अन्य देशों के विद्यार्थियों से पत्र मित्रता सुरक्षा-परिषद् अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय आदि संस्थाओं की बैठकों का छद्माभिनय, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर विचार-विमर्श एवं प्रयोजनाओं से सम्बद्ध क्रियाकलाप उपयोगी सिद्ध होते हैं।

4. समाजोपयोगी अभिरुचियों का विकास—विद्यार्थियों में विशेष समाजोपयोगी अभिरुचियों—जैसे लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति, धर्म निरपेक्षता, समाजवाद, समाज-सेवा राष्ट्रीय एकता, अन्तर्राष्ट्रीय सदभाव आदि से सम्बन्धित कार्यों में अभिरुचि का विकास करने में उपयुक्त पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप सहायक होते हैं। देश की आवश्यकताओं के अनुकूल इन कार्यों में अभिरुचि विकसित किया जाना वांछनीय है।

5 विद्यालय, समुदाय तथा जीवन के प्रति उचित अभिवृत्तियों का निर्माण—ये क्रियाकलाप विद्यालय, समाज व जीवन के प्रति उचित अभिवृत्तियों के निर्माण में योगदान करते है। जैसे—विद्यालय-स्वशासन की गतिविधियां, पास पड़ौस के नागरिक जीवन एवं संस्थाओं का अवलोकन, सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं पर विचार-विमर्श आदि क्रिया कलाप इस दृष्टि से उपयोगी है।

6 व्यक्तित्व का विकास—पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलाप चारित्रिक गुणों व लोकतांत्रिक नागरिकता की विशेषताओं के विकास एवं संवेगों के सतुलन, मूल-प्रवृत्तियों के परिष्कार, शारीरिक विकास तथा नैतिक विकास में प्रभावी भूमिका निभाते है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों के चयन की कसौटी—

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलापों के उपयुक्त चयन का विशेष महत्व है। इस सम्बन्ध में निम्नांकित विचार बिन्दु ध्यान देने योग्य है—

1. पाठ्यक्रम से सुसंगतता—जो भी क्रियाकलाप चुना जाय उसकी नागरिकशास्त्र की पाठ्य वस्तु से सुसंगतता होनी चाहिए अन्यथा क्रिया कलाप में समय, शक्ति एवं अन्य साधनों का अपव्यय होता है। पाठ्यक्रम सहगामी क्रिया कलापों का अभिप्राय ही यह है कि वे पाठ्यक्रम में से उद्भूत होकर पुनः पाठ्यक्रम में ही विलीन हो जाते हैं। अर्थात् पाठ-प्रकरण से उत्प्रेरित होकर विद्यार्थी किसी क्रिया कलाप में प्रवृत्त हो एवं प्राप्त अनुभव से सम्बन्धित प्रकरण या पाठ्य-वस्तु का संवर्धन करें। उदाहरणार्थ, ग्राम-पंचायत प्रकरण के प्रति जिज्ञासु एवं आकर्षित होकर विद्यार्थी स्थानीय ग्राम पंचायत की बैठक का अवलोकन करेंगे तथा अवलोकन के पश्चात् प्राप्त जानकारी उस प्रकरण से सम्बद्ध तथ्यों को रोचक, ज्ञानवर्धक एवं जीवनोपयोगी बनायेगी।

2 उद्देश्यों की उपलब्धि में सहायक—जो क्रियाकलाप चुना जाय वह पाठ-प्रकरण के लिये निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि में सहायक हो। क्रियाकलापों द्वारा ऐसी शिक्षण-अधिगम स्थितियों का निर्माण होना चाहिए जिनसे प्राप्त अनुभवों से विद्यार्थियों में ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल सम्बन्धी वांछित व्यवहारगत परिवर्तन हों। उदाहरणार्थ संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् प्रकरण किसी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या पर छद्माभिनय या नाट्यीकरण क्रियाकलाप निर्धारित उद्देश्यों सुरक्षा परिषद् की कार्य प्रणाली का ज्ञान, वीटो के अधिकार का अवबोध, अन्य समस्याओं इस ज्ञान का उपयोग, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं की जानकारी की अभिरुचि, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव की अभिवृत्ति एवं चिन्तन, तर्क एवं निर्णय करने के कौशल का विकास-की उपलब्धि होनी चाहिए।

3. स्थानीय संसाधनों से अनुकूलता—विद्यालय या स्थानीय समुदाय में जो संसाधन उपलब्ध हो सकें उन्हीं के अनुकूल क्रियाकलाप चुने जायें। जैसे किसी सुदूर ग्रामीण अंचल के एक विद्यालय में यदि संसद की कार्य प्रणाली प्रकरण से सम्बद्ध संसद का अवलोकन करने हेतु शैक्षिक यात्रा किया जाना आवश्यक है तो उसके खर्चे हेतु विद्यालय एवं अभिभावकों से प्राप्त होने वाली धन राशि का अनुमान लगा कर यह क्रियाकलाप किया जाना उचित है। यदि धन राशि पर्याप्त नहीं है तो अन्य विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

4. विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुकूल—जो भी क्रियाकलाप चुना जाय वह कक्षा के विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के स्तर एवं उनकी शारीरिक क्षमता के अनुकूल हो। जैसे प्राथमिक कक्षाओं में वाद-विवाद या विचार विमर्श के क्रियाकलाप उनकी मानसिक परिपक्वता के अनुकूल नहीं है जबकि उच्च प्राथमिक या उससे उच्च कक्षाओं में वे लाभदायक होंगे। इसी प्रकार लम्बी शैक्षिक यात्राएं प्राथमिक कक्षा के विद्यार्थियों की शारीरिक क्षमता के अनुकूल नहीं है। इन कक्षाओं में स्थानीय निकटवर्ती स्थान का भ्रमण क्रियाकलाप ही उपयोगी हो सकता है।

5 वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान—प्रायः कक्षा में मन्दबुद्धि औसत तथा कुशाग्र बुद्धि स्तर के विद्यार्थी होते हैं। क्रियाकलापों के चयन में इन वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान भी रखा जाना चाहिए। उदाहरणार्थ, विचार-विमर्श, वाद-विवाद, नाट्यीकरण आदि क्रियाकलापों में कुछ कुशाग्र बुद्धि के छात्र ही मुख्य भूमिका निभाते हैं। जबकि मन्द बुद्धि के छात्र उनमें सम्मिलित नहीं हो पाते। अतः इन क्रियाकलापों में विद्यार्थियों को वर्गों में विभक्त कर (प्रत्येक वर्ग में तीनों स्तर के विद्यार्थी हों) प्रत्येक वर्ग के विद्यार्थियों को मुख्य भूमिका निभाने का अवसर बारी-बारी से देना चाहिए अथवा प्रायोजना, सर्वेक्षण, पर्व-समारोह आदि क्रियाकलापों को आयोजित कर प्रत्येक स्तर के विद्यार्थियों को उनके स्तरानुकूल कार्य आवंटित किया जाय।

शिक्षास्तरोनुकूल क्रियाकलाप—पाठ्यक्रम में विषय वस्तु के निर्धारण के साथ शिक्षा स्तर के अनुकूल पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलापों का उल्लेख भी किया जाता है। कुछ राज्यों के शिक्षा विभागों एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्डों द्वारा इस प्रकार के पाठ्य-

क्रम का निर्माण किया गया है। राजस्थान राज्य भी इस दिशा में अग्रणी राज्यों की श्रेणी में आता है।

(क) प्राथमिक स्तरोनुकूल क्रियाकलाप[6]— विद्यालय, कक्षा तथा घर के वातावरण में बड़ों के प्रति अच्छी आदतों का निर्माण विद्यालय में भोजन करने, खेलने, कक्षा या सभा में बैठने, सफाई करने शरीर को स्वच्छ रखने आदि स्थितियों में क्रियाशील रहकर शिष्टाचार का विकास, स्थानीय पंचायत या नगरपालिका की बैठकों का अवलोकन, पर्व-उत्सवों में भाग लेना, शारीरिक क्षमता के अनुसार समाज-सेवा के कार्य करना तथा सामाजिक समस्याओं को नाट्यीकरण या अन्य रोचक क्रियाकलापों से समझाना, भ्रमण आदि मुख्य हैं।

(ख) उच्च प्राथमिक स्तरोनुकूल क्रियाकलाप[7]—सामाजिक सेवाओं एवं सुविधाओं (विद्यालय, अस्पताल, जल व विद्युत प्रदाय संयंत्र, व्यापार-व्यवसाय, यातायात एवं संचार के साधनों आदि) का अवलोकन सामुदायिक विकास योजना-स्थलों का भ्रमण, बालचर दल में सेवा कार्य, सामाजिक समस्याओं एवं स्थानीय राजनैतिक संस्थाओं (पंचायत, पंचायत-समिति, जिला परिषद् तथा नगर पालिका) को उपयुक्त क्रियाकलापों द्वारा ज्ञानार्जन, विद्यालय संसद एवं राष्ट्र संघ की संस्थाओं की बैठकों का छद्माभिनय आदि।

(ग) माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तरोनुकूल क्रियाकलाप[8]—विवरणिका में दिये हुए पाठ्यक्रम के अनुकूल माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान ने माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक कक्षाओं के लिये निम्नांकित क्रियाकलाप निर्धारित किये हैं—

1. विद्यार्थी-संस्थाओं (परिषद् या संसद) के चुनाव देश में प्रचलित चुनाव पद्धति के अनुसार इस प्रकार कराना जिसमें कि चुनाव के पश्चात् दल-वैमनस्य या वैयक्तिक-संघर्ष उत्पन्न न हो,

2. सुरक्षा परिषद् व राष्ट्र संघ साधारण सभा की बैठकों का छद्माभिनय, जिसमें राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का विचार-विमर्श,

3. संसद की पद्धति के अनुसार विद्यार्थी-संसद के छद्माभिनय का आयोजन,

4. प्राकृतिक प्रकोप (अनावृष्टि, अतिवृष्टि, अकाल, दुर्घटना आदि) के समय विद्यार्थियों की राहत कार्य समितियों द्वारा कार्य किया जाना,

---

6. शिक्षा क्रम (कक्षा 1 से 5 तक) शिक्षा विभाग, राजस्थान
7. शिक्षा क्रम (कक्षा 6 से 8 तक) शिक्षा विभाग, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर 1972 पृ. 93—97
8. सैकण्ड्री स्कूल एवं हायर सैकण्ड्री स्कूल परीक्षा—1982 की विवरणिका (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर)

5. समाज-सेवा शिविर का आयोजन किया जाय,

6. संसद, विधान-सभा, नगर-परिषद आदि की बैठकों के अवलोकन हेतु शैक्षिक-यात्राएं,

7. वाद-विवाद तथा विचार-विमर्श,

8. राष्ट्रीय पर्व-त्योहारों एवं देश व विश्व के महापुरुषों की जयन्तियों का आयोजन,

9. अनुशासन, विद्यालय एवं जनता की संपत्ति की सुरक्षा, व्यक्तिगत स्वच्छता तथा विद्यालय-सफाई के लिये सफाई समितियों के कार्य,

10. नागरिक सुरक्षा-उपायों का प्रशिक्षण।

उपर्युक्त क्रियाकलाप पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ्यवस्तु एवं निर्धारित उद्देश्य के अनुरूप निर्दिष्ट किये गये हैं। स्थानीय परिस्थितियों एवं साधनों के अनुरूप और भी क्रियाकलाप किये जा सकते हैं अथवा इनमें संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्धन किये जा सकते हैं। *विद्यालय केलेण्डर अग्रिम प्रकाशित कर सभी शालाओं में वितरित किया* जा सकता है। इस पंचांग में कुछ महत्वपूर्ण राष्ट्रीय पर्व-त्योहार और जयन्तियों को अनिवार्यतः मनाये जाने का निर्देश दिया जाता है। नागरिकशास्त्र शिक्षण में इन क्रियाकलापों का आयोजन उपयोगी रहता है। राजस्थान में इस दिशा में किये जा रहे प्रयास अनुकरणीय हैं। नागरिकशास्त्र शिक्षक का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि इन सुझावों के अनुसार प्रत्येक कक्षा की पाठ्यवस्तु से सम्बन्धित क्रियाकलापों की योजना इकाई-वार अग्रिम बनाकर उसे क्रियान्वित करे।

पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलापों के संगठन के सिद्धांत

(क) नियोजन—उपर्युक्त कसौटी के अनुसार क्रियाकलापों का चयन कर उनकी योजना बना लेनी चाहिए। योजना में विस्तार से इन बिन्दुओं का समावेश किया जाय —(1) क्रियाकलाप का नाम, कक्षा एवं उसके क्रियान्वयन की अवधि एवं तिथि,

(2) क्रियाकलाप के क्रियान्वयन हेतु स्थान एवं संसाधनों का निर्धारण,

(3) विद्यार्थियों का यथोचित विभाजन एवं उनके द्वारा करणीय कार्य का आवंटन,

(4) क्रियान्वयन के विभिन्न सोपान तथा

(5) क्रियान्वयन के पश्चात् प्रतिवेदन या प्रायोगिक कार्य का निर्माण।

(ख) क्रियान्वयन—सुनियोजित क्रियाकलाप का योजनानुसार क्रियान्वयन किया जाय, जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी सक्रिय हो अपना योगदान करे। शिक्षक आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करे तथा उनकी कठिनाइयों एवं शंकाओं का निराकरण भी करे। क्रियान्वयन के समय योजनानुसार विधि से कार्य किया जाय तथा अनुशासन एवं निर्धारित समयावधि का ध्यान रखा जाय। शिक्षक यह प्रयास करे कि क्रियाकलाप पाठ्यवस्तु से सम्बद्ध बना रहे, अनावश्यक विषयान्तर में समय नष्ट न हो

तथा निर्धारित उद्देश्यों के अनुकूल वह विद्यार्थियों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने में समर्थ हो।

(ग) पुनरावर्तन तथा मूल्यांकन—क्रियाकलाप क्रियान्वयन के पश्चात् वर्णित प्रतिवेदनों एवं प्रायोगिक कार्य (जैसे नक्शा, चार्ट चित्र आदि) का कक्षा में विचार-विमर्श किया जाय जिसमें किये गये कार्य की कमियों एवं उपलब्धियों पर खुले मस्तिष्क से विचार किया जाय ताकि कमियों के कारणों का पता लग सके और उनका भावी कार्यक्रम मे ध्यान रखा जा सके। शिक्षक प्रश्नों द्वारा निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति का मूल्यांकन करे।

क्रियाकलापों के संगठन की उपर्युक्त प्रक्रिया एवं सिद्धांत में विकासमान विधिया (विशेषकर प्रायोजना, विचार विमर्श तथा नाट्यीकरण विधियों) के संदर्भ मे दिये गये उदाहरणों से स्पष्ट हो जाते हैं।

सहगामी क्रियाकलापों का विवेचन—शिक्षक को अन्य विवेचनीय क्रियाकलापों पर ध्यान देना चाहिए—

(1) विद्यार्थी-परिषद् या संसद—विद्यालयों मे लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं जीवन-पद्धति से अवगत कराने एवं उसका प्रशिक्षण देने हेतु सबसे महत्वपूर्ण क्रियाकलाप विद्यालय परिषद् या संसद है। विद्यालयों में दोनों में से कोई एक पद्धति प्रचलित है तथा कुछ राज्यों में शिक्षा विभाग द्वारा इनके गठन के नियम निर्धारित है। परिषद् मे निर्वाचित कक्षा-प्रतिनिधि होते हैं तथा वे अपना अध्यक्ष, उपाध्यक्ष सचिव एवं संयुक्त सचिव चुनते है। शेष प्रतिनिधि छात्र विद्यालय के विभिन्न क्रियाकलापों जैसे सफाई, मनोरंजन, खेल, सामाजिक कार्यक्रम आदि) हेतु गठित समितियों के संयोजक बनाये जाते हैं। एक या दो शिक्षक इस परिषद् के परामर्शदाता का कार्य करते हैं जो संस्था-प्रधान द्वारा नामांकित होते है।

विद्यार्थी संसद का भी निर्वाचन एवं गठन इसी भांति होता है किन्तु उसके उत्तरदायित्वधारी प्रधानमंत्री एवं मंत्री होते हैं। मंत्रीगण विद्यालय की विभिन्न गतिविधियों का कार्य भार संभालते हैं। परिषद् की अपेक्षा संसद की पद्धति देश की संसदात्मक शासन-प्रणाली के अनुरूप है, अतः यह अधिक उपयोगी है। इसकी बैठकों मे कुछ छात्र विरोधी दल की भूमिका कर विद्यालय से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार-विमर्श कर संसद या विधानसभा या स्वायत्तशासी संस्था के रूप मे विद्यार्थियों को लोकतांत्रिक पद्धति का प्रशिक्षण देते हैं।

पी. एन. अवस्थी के शब्दों मे—'स्वशासन का ज्ञान तथा अनुभव आधुनिक जनतंत्रीय युग मे प्रत्येक नागरिक के लिये आवश्यक है।—छात्रों की प्रत्येक गतिविधियों के लिये समितियों की स्थापना प्रजातांत्रिक प्रणाली के आधार पर करने से बालकों को अपने हितों की स्वयं व्यवस्था करने की अच्छी व्यावहारिक शिक्षा मिलती है।'[9] यदि सुनियोजित विधि से यह क्रियाकलाप संचालित किया जाये तो इससे नागरिकशास्त्र

---

9. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र शिक्षण विधि पृ. 172

शिक्षण के ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल सम्बन्धी उद्देश्यों की उपलब्धि होती है।

(2) राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पर्वों, उत्सवों एवं महापुरुषों की जयन्तियों का आयोजन—नागरिकशास्त्र-शिक्षण के पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों के रूप में अनेक सुचयनित पर्व, उत्सव एवं जयन्तियां आयोजित की जा सकती हैं। जैसे राष्ट्रीय पर्वों में स्वतन्त्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, बाल-दिवस, (14 नवम्बर), शिक्षक दिवस (5 सितम्बर), शहीद-दिवस (30 जनवरी), राजस्थान दिवस (30 मार्च), आदि प्रमुख हैं। इन के आयोजन से राष्ट्रीय एकता एवं देश-प्रेम की भावना विकसित होती है। राष्ट्रीय उत्सवों एवं जयन्तियों में जन्माष्टमी, मकर-संक्रान्ति, बारा वफात, शरद-पूर्णिमा, क्रिसमसडे, बसन्त पंचमी, रामनवमी, महावीर जयन्ती, तिलक जयन्ती, हिन्दी दिवस (14 सितम्बर) कालिदास दिवस, गुरु नानक जयन्ती, तुलसी जयन्ती, गांधी जयन्ती, बुद्ध जयन्ती, नेहरू जयन्ती, (14 दिसम्बर), रवीन्द्र जयन्ती, (7 मई), आदि प्रमुख हैं।

इनके आयोजन से विद्यार्थियों को विभिन्न धर्मों की जानकारी तथा उनमें धार्मिक सहिष्णुता की भावना विकसित होती है एवं जयन्तियों के आयोजन से राष्ट्र के महापुरुषों के जीवन से सद्गुणों को ग्रहण करने की प्रेरणा मिलती है। इसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय दिवसों में संयुक्त राष्ट्र संघ स्थापना दिवस, मानव-अधिकार दिवस, स्काउटिंग आंदोलन के प्रवर्तक बेडेन पॉवेल का जन्म दिन प्रमुख है जिसके आयोजन से अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव, विश्व-शांति एवं मानव मात्र की सेवा की भावना विकसित होती है।

(3) राजनैतिक व्यवस्थापिका एवं स्वायत्तशासी संस्थाओं की बैठकों का छद्माभिनय या नाट्यीकरण—शिक्षण-प्रविधियों के अन्तर्गत छद्माभिनय या नाट्यीकरण की प्रविधि की सोदाहरण विस्तार से चर्चा की गई है। यही प्रविधि पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलाप का रूप ग्रहण कर लेती है यदि इसे स्वतन्त्र एवं कुछ विस्तृत रूप से पाठ्यवस्तु के संवर्धन हेतु प्रयुक्त किया जाय। प्रविधि किसी शिक्षण-विधि के अंतर्गत उसे प्रभावी बनाने हेतु गौण रूप में प्रयुक्त होती है जबकि क्रियाकलाप गठित पाठ्यवस्तु सवर्धन एवं समर्थन हेतु प्रयोग में लाये जाते हैं। इन दोनों की प्रक्रिया में कोई अन्तर नहीं है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में संसद, विधान सभा, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला-परिषद् आदि राजनैतिक एवं स्वायत्तशासी संस्थाओं की बैठकों का छद्माभिनय या नाट्यीकरण क्रियाकलाप इन संस्थाओं की कार्य प्रणाली, अधिकार एवं कर्तव्यों को रोचक विधि से स्पष्ट करते हैं। साथ ही ये विचार विमर्श प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियों की विचारण, तर्क एवं निर्णय शक्तियों का विकास कर उन्हें देश की सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं से परिचित कराते हैं।

(4) वाद-विवाद तथा विचार-विमर्श—विचार-विमर्श की पद्धतियां क्रियाकलापों के रूप में नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु के संवर्धन हेतु प्रयुक्त की जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त पत्र-वाचन विधि भी क्रियाकलाप का एक रूप हो सकती है जिसमें एक

विद्यार्थी निर्धारित विषय या समस्या पर एक निबंध तैयार कर कक्षा मे उसका वाचन करेगा तथा वाचन के पश्चात विद्यार्थियो की शंकाओं का समाधान करेगा। इन सभी क्रियाकलापों में शिक्षक की भूमिका पृष्ठ भूमि में रह कर विद्यार्थियों के मार्गदर्शन की होगी।

वाद-विवाद भी नागरिकशास्त्र शिक्षण में एक प्रभावी क्रियाकलाप होता है। नागरिकशास्त्र परिषद् या अध्ययन मण्डलो द्वारा सम्बन्धित विवादास्पद समस्याओं या विषयो पर वाद-विवाद आयोजित किये जाने चाहिए। जैसे संसदीय प्रणाली की अपेक्षा अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली हितकर है, सुरक्षा परिषद् में वीटो का अधिकार समाप्त किया जाये, अहिंसा से विश्व शान्ति स्थापित हो सकती है, अनुसूचित एवं जन-जातियो की सरक्षण नीति उचित है आदि अनेक विवादास्पद विषय वाद-विवाद के लिये चुने जा सकते है। शिक्षक या किसी गणमान्य अतिथि की अध्यक्षता मे निर्धारित विषय पर पूर्व योजनानुसार पक्ष एव विपक्ष के वक्ताओ को 5–5 मिनट तक बोलने का अवसर दिया जाय तथा अन्त मे सदन के बहुमत से विषय के पक्ष या विपक्ष में निर्णय घोषित किया जाय। शिक्षक-निर्णायक वक्ताओं का मूल्याकन विषय-वस्तु, भाषा शैली एवं अभिव्यक्ति के आधार पर करेंगे तथा श्रेष्ठ तीन वक्ताओं का निर्णय करेंगे जिससे श्रोताओ एव वक्ताओ को प्रोत्साहन व प्रेरणा मिल सके।

(5) शैक्षणिक एवं पर्यटन, अवलोकन अथवा भ्रमण—अवलोकन, पर्यटन अथवा भ्रमण क्रियाकलापों में नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु से सम्बन्धित किसी संस्था, स्थान, कार्य-प्रणाली, जीवन-शैली आदि का सोद्देश्य अवलोकन किया जाता है। इसके विभिन्न रूप इन क्रियाकलापों के आयोजन-स्तर पर निर्भर है। अवलोकन मात्र भ्रमण बहुधा छोटी कक्षाओं के लिये छोटे पैमाने पर आयोजित होते हैं, जैसे स्थानीय ग्राम पचायत, नगरपालिका, यातायात-व्यवस्था, जल एवं विद्युत घर, शिक्षा संस्थाएं, उद्योग-धन्धे कल-कारखाने आदि का भ्रमण द्वारा अवलोकन करना।

शैक्षिक यात्राएं प्राय बड़ी कक्षाओं के लिये उपलब्ध साधनों के अन्तर्गत की जाती हैं। जैसे दिल्ली जाकर संसद की कार्यवाही का अवलोकन, दक्षिण भारत की यात्रा कर वहां के जन-जीवन का अध्ययन तथा भाखरा-नांगल, बांध या इस्पात कारखानो आदि का विलोकन। इसी प्रकार अवलोकन क्रियाकलाप का एक रूप स्थानीय ग्राम या नगर का सर्वेक्षण भी हो सकता है जिसका उद्देश्य किसी सामाजिक एवं आर्थिक समस्या से सम्बद्ध तथ्यों एव आकड़ों को एकत्रित कर समस्या का समाधान खोजने का प्रयास करना होता है। इसके लिये उपयुक्त समस्याएं निर्धनता, निरक्षरता, पिछड़ी जाति, महिला शिक्षा, जनसख्या आदि विषयो मे सम्बन्धित हो सकती है। इन सभी क्रिया-कलापो के नियोजन, क्रियान्वयन एवं मूल्याकन की विधि पूर्वचर्चित बिन्दुओं पर आधारित है।

(6) समाज सेवा क्रियाकलाप—ये क्रियाकलाप नागरिकशास्त्र-शिक्षण में महत्व-पूर्ण स्थान रखते हैं। इनके द्वारा वांछित समाजोपयोगी नागरिक गुणों का विकास होता है। इन क्रियाकलापों में नागरिकशास्त्र के संदर्भ में प्रमुख समस्याओं, विकास-कार्यों तथा नागरिक गुणों से सम्बन्धित समाज सेवा कार्य सम्मिलित किये जा सकते हैं। जैसे स्थानीय समाज की सुविधा के लिये सड़क बनाने, सफाई करने, खेल का मैदान बनाने आदि कार्यों में श्रमदान किया जा सकता है। स्थानीय ग्राम या मोहल्ले के निरक्षरों को साक्षर बनाने हेतु, प्रौढ़ शिक्षा-केन्द्र संचालित करना, स्काउटिंग, गर्ल गाईडिंग द्वारा सेवा कार्य करना, सामुदायिक विकास-खण्डों द्वारा संचालित विकास कार्यों में योगदान करना, रेड-क्रास का सदस्य बनकर पीड़ितों एवं रोगियों को प्राथमिक-सहायता देना, खेल-प्रति-योगिता एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा स्थानीय जनता का स्वस्थ मनोरंजन तथा देश पर बाह्य आक्रमण से उत्पन्न संकट के समय नागरिक सुरक्षा उपायों में सह-योग देना।

उपर्युक्त सभी समाज-सेवा क्रियाकलापों का नियोजन क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन विधिवत् किया जाना चाहिए जिससे अधिकाधिक विद्यार्थियों में समाजोपयोगी अभि-रुचियां, अभिवृत्तियां एवं कौशल का विकास हो सके।

(7) नागरिकशास्त्र-परिषद् अथवा अध्ययन मण्डल—यदि विद्यालयों में नागरिक-शास्त्र के सभी शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की एक परिषद् या अध्ययन-मण्डल का गठन किया जाय तो उपर्युक्त सभी क्रियाकलापों का सत्र भर का नियोजन, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन प्रभावी रूप से हो सकता है। इस परिषद में शिक्षक परामर्शदाताओं के रूप में कार्य करेंगे तथा विद्यार्थी सदस्य बनकर अपने पदाधिकारी—अध्यक्ष उपाध्यक्ष, सचिव आदि निर्वाचित कर लेंगे। इस परिषद् की सदस्यता का कुछ शुल्क भी विद्यार्थियों की सहमति से निर्धारित किया जा सकता है। इस शुल्क से तथा विद्यालय छात्र कोष तथा जन-सहयोग से प्राप्त धन राशि का उपयोग इस परिषद् या अध्ययन मण्डल के तत्वा-वधान में आयोजित क्रियाकलापों को अधिक प्रभावी एवं रोचक बनाने में किया जा सकता है।

सत्र के प्रारम्भ में इस परिषद् या मण्डल की सत्रीय योजना तथा कार्यक्रम (विभिन्न क्रियाकलापों का उनकी आयोजनीय तिथियों एवं कार्य प्रभारी व्यक्तियों का कार्यक्रम में उल्लेख हो) सभी की सूचनार्थ सूचना-पट्ट पर प्रदर्शित किया जाय। कार्यक्रम के अनुसार परिषद् द्वारा क्रियाकलापों का क्रियान्वयन किया जाय। इन कार्यक्रमों में अभिभावकों व स्थानीय समाज के प्रतिष्ठित लोगों को भी आमंत्रित किया जा सकता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण में विभिन्न क्रियाकलाप पाठ्यवस्तु का सबलन एवं संवर्धन ही नहीं करते बल्कि उन शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं जो साधारणतया कक्षा-शिक्षण में सम्भव नहीं हो पाता। एन. सी. ई. आर. टी. के दस वर्षीय स्कूल पाठ्यक्रम में कहा गया है 'कि विद्यालय के समग्र कार्यक्रम में पाठ्यक्रम-सहगामी क्रिया-कलापों को पर्याप्त महत्व दिये बिना समस्त शिक्षण—उद्देश्यों की उपलब्धि

नहीं हो सकती। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों का उपयोग कक्षा में योग्यताओं, कुशलताओं तथा सामाजिक एवं व्यक्तिगत विशेषताओं तथा वांछित अभिवृत्तियों, अभिरुचियों एवं आदर्शों के पोषण के उपयुक्त अच्छा आधार प्रस्तुत करने में और विद्यार्थियों को अपनी शक्यताओं को विकसित करने में किया जा सकता है।'[10] 'इन क्रियाकलापों के महत्त्व को देखते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इनके संचालन हेतु आवश्यक धन-राशि में मितव्ययता न कर उसे उपलब्ध कराने का सुझाव दिया है तथा इन क्रियाकलापों में लगाये गये समय को शिक्षक के कार्य-भार में सम्मिलित कर उसे राहत देने की अभिशंसा की है।'[11]

□□□

---

10. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम, अ'. संस्करण, पृ. 38
11. माध्यमिक शिक्षा आयोग, पृ. 128

नागरिकशास्त्र-शिक्षक | 11

शिक्षण-प्रक्रिया में पाठ्यक्रम, उद्देश्य, शिक्षण-विधि, शिक्षण-प्रविधि, शिक्षण-सहायक उपकरण एवं पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप मुख्य घटक हैं जिनकी सहायता से शिक्षक एवं शिक्षार्थी अन्तः प्रक्रिया द्वारा शिक्षण-स्थितियों का निर्माण करते हैं जो विद्यार्थियों को अधिगम हेतु अनुभव प्रदान करते हैं। इस प्रक्रिया में सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षक की होती है क्योंकि वही इन सब घटकों का कुशल सूत्रधार होता है। योग्य शिक्षक ही देश के भावी नागरिकों का निर्माण करते हैं। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षक के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा है कि 'योग्य शिक्षक पर ही विद्यालय की प्रतिष्ठा एवं समाज के जीवन पर उसका प्रभाव निर्भर करता है।'[1] कोठारी शिक्षा आयोग के शब्दों में—'इसमें कोई सन्देह नहीं कि शिक्षा के स्तर और राष्ट्रीय विकास में उसके योगदान को जितनी भी बातें प्रभावित करती हैं उनमें शिक्षक की गुणता, क्षमता और चरित्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।'[2]

नागरिकशास्त्र-शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक का महत्व

नागरिकशास्त्र का शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में होता रहा है तथा विषय को सच्चरित्र एवं समाजोपयोगी नागरिक तैयार करने के कारण प्रमुख महत्व दिया जाता रहा। इस विषय का शिक्षण एवं प्रशिक्षण उच्च कोटि के विद्वान- धर्मनिष्ठ एवं नीतिकुशल शिक्षकों द्वारा किया जाता था। धर्म शास्त्र एवं नीति-ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं। वैसे तो शिक्षक का ही महत्व समाज में सर्वोच्च माना जाता था किन्तु नागरिकता की शिक्षा देने वाले शिक्षकों को अपेक्षाकृत उच्च कोटि में सम्मिलित किया जाता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस विषय के शिक्षण हेतु शिक्षकों में उत्कृष्ट योग्यता एवं क्षमता अपेक्षित थी। कालान्तर में राजनैतिक परिस्थितियों के कारण नागरिकशास्त्र एवं नागरिकता की शिक्षा की अवनति होती गई। वर्तमान काल में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था एवं जीवन-दर्शन के उदय के साथ नागरिकशास्त्र के शिक्षण की पुनः प्रतिष्ठा हुई तथा इस विषय के शिक्षक की विशिष्ट योग्यताओं एवं क्षमताओं की आवश्यकता भी अनुभव की जाने लगी।

---

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, पं. संस्करण, पृ. 155
2. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 52

नही हो सकती। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापो का उपयोग कक्षा मे योग्यताओं, कुशलताओ तथा सामाजिक एव व्यक्तिगत विशेषताओ तथा वांछित अभिवृत्तियों, अभिरुचियो एवं आदर्शों के पोषण के उपयुक्त अच्छा आधार प्रस्तुत करने मे और विद्यार्थियो को अपनी शक्यताओ को विकसित करने मे किया जा सकता है।'[10] 'इन क्रियाकलापों के महत्त्व को देखते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इनके संचालन हेतु आवश्यक धन-राशि मे मितव्ययता न कर उसे उपलब्ध कराने का सुझाव दिया है तथा इन क्रियाकलापों में लगाये गये समय को शिक्षक के कार्य-भार में सम्मिलित कर उसे राहत देने की अभिशंसा की है।'[11]

□□□

10. दस वर्षीय स्कूली पाठ्यक्रम, अं. संस्करण, पृ. 38
11. माध्यमिक शिक्षा आयोग, पृ. 128

नागरिकशास्त्र-शिक्षक | 11

शिक्षण-प्रक्रिया में पाठ्यक्रम, उद्देश्य, शिक्षण-विधि, शिक्षण-प्रविधि, शिक्षण-सहायक उपकरण एवं पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाकलाप मुख्य घटक है जिनकी सहायता से शिक्षक एवं शिक्षार्थी अंतः प्रक्रिया द्वारा शिक्षण-स्थितियों का निर्माण करते हैं जो विद्यार्थियों को अधिगम हेतु अनुभव प्रदान करते हैं। इस प्रक्रिया में सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षक की होती है क्योंकि वही इन सब घटकों का कुशल सूत्रधार होता है। योग्य शिक्षक ही देश के भावी नागरिकों का निर्माण करते हैं। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षक के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा है कि 'योग्य शिक्षक पर ही विद्यालय की प्रतिष्ठा एवं समाज के जीवन पर उसका प्रभाव निर्भर करता है।'[1] कोठारी शिक्षा आयोग के शब्दों में—'इसमें कोई सन्देह नहीं कि शिक्षा के स्तर और राष्ट्रीय विकास में उसके योगदान की जितनी भी बातें प्रभावित करती हैं उनमें शिक्षक की गुणता, क्षमता और चरित्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।'[2]

नागरिकशास्त्र-शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक का महत्व

नागरिकशास्त्र का शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में होता रहा है तथा विषय को सच्चरित्र एवं समाजोपयोगी नागरिक तैयार करने के कारण प्रमुख महत्व दिया जाता रहा। इस विषय का शिक्षण एवं प्रशिक्षण उच्च कोटि के विद्वान- धर्मनिष्ठ एवं नीतिकुशल शिक्षकों द्वारा किया जाता था। धर्म शास्त्र एवं नीति-ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं। वैसे तो शिक्षक का ही महत्व समाज में सर्वोच्च माना जाता था किन्तु नागरिकता की शिक्षा देने वाले शिक्षकों को अपेक्षाकृत उच्च कोटि में सम्मिलित किया जाता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस विषय के शिक्षण हेतु शिक्षकों में उत्कृष्ट योग्यता एवं क्षमता अपेक्षित थी। कालान्तर में राजनैतिक परिस्थितियों के कारण नागरिकशास्त्र एवं नागरिकता की शिक्षा की अवनति होती गई। वर्तमान काल में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था एवं जीवन-दर्शन के उदय के साथ नागरिकशास्त्र के शिक्षण की पुनः प्रतिष्ठा हुई तथा इस विषय के शिक्षक को विशिष्ट योग्यताओं एवं क्षमताओं की आवश्यकता भी अनुभव की जाने लगी।

---

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, ग्रं. संस्करण, पृ. 155
2. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 52

वर्तमान शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों को दोषपूर्ण माना गया है। वर्तमान शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम के दोषों को विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1949), माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) तथा कोठारी शिक्षा आयोग (1966) ने प्रकट किया था किन्तु दोषों के निराकरण की दिशा में केवल शिक्षक-प्रशिक्षण शब्द को शिक्षक-शिक्षा मे परिवर्तित करने के अतिरिक्त कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया। 10+2 शिक्षा योजना के संदर्भ में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित 'शिक्षक-शिक्षा पाठ्यक्रम की रूपरेखा' पुस्तिका मे शिक्षक प्रशिक्षण की एक नवीन योजना प्रस्तुत की गई है।[3] यहां केवल इतना जान लेना आवश्यक है कि इस नवीन योजना के अनुसार प्रशिक्षित शिक्षक नागरिकशास्त्र शिक्षण को प्रभावी बनाने मे सक्षम हो सकते हैं।

नागरिकशास्त्र-शिक्षक मे शिक्षक के सामान्य गुण अथवा योग्यता एवं क्षमता संबंधी विशेषताओं के अतिरिक्त नागरिकशास्त्र की विषय-वस्तु एवं उसके शिक्षण-उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य मे कुछ विशिष्ट बातों की अपेक्षा होती है। नागरिकशास्त्र का प्रमुख लक्ष्य योग्य नागरिक तैयार करना है अतः एल. वी. हेरोलिकर के शब्दों में—केवल एक योग्य नागरिक-शिक्षक ही अपने छात्रों में नागरिक-चेतना प्रेरित कर सकता है।[4] कहा भी है कि शिक्षक राष्ट्र निर्माता है अर्थात् विशेषतः नागरिकशास्त्र शिक्षक पर ही देश के भावी नागरिकों के निर्माण का दायित्व है। यह दायित्व इस विषय के कक्षा-कक्ष मे शिक्षक द्वारा प्रभावी शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण द्वारा ही संपन्न हो सकता है। कोठारी शिक्षा आयोग का यह कथन है कि 'भारत का योग्य निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है।'[5]

(क) सामान्य गुण—कुछ सामान्य गुण ऐसे हैं जो प्रत्येक विषय के शिक्षक में होने चाहिए। नागरिकशास्त्र शिक्षक मे भी इन गुणों का होना वाछनीय है।

1. उत्तम स्वास्थ्य—'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है' की कहावत के अनुसार उत्तम स्वास्थ्य वाला शिक्षक ही परिश्रम, लगन तथा रुचि से शिक्षण-कार्य द्वारा विद्यार्थियों को प्रभावित कर सकता है। स्वस्थ शरीर के साथ ही शिक्षक का स्वर भी आवश्यकतानुकूल उच्च एवं स्वाभाविक गति एवं भावभंगिमायुक्त होना चाहिए ताकि वह अपने विचारों एवं भावों का सम्प्रेषण विद्यार्थियों मे कर सके। स्वस्थ शरीर पर सादा किन्तु स्वच्छ शिक्षकोचित वेश-भूषा उसे प्रभावी बनाती है। अतः उचित आहार, व्यायाम व विश्राम से शरीर को स्वस्थ बनाना, उचित वेश-भूषा से उसे प्रभावी बनाना तथा अभ्यास द्वारा अपने स्तर को शिक्षण के उपयुक्त करना प्रत्येक शिक्षक की प्राथमिक विशेषता होनी चाहिए।

2. प्रभावी भाषा शैली—शिक्षण का माध्यम भाषा होती है। अतः भाषा पर अधिकार होना तथा अभिव्यक्ति शैली उपयुक्त होनी चाहिए। भाषा संबंधी त्रुटियों के

---

3. शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम की रूपरेखा, प्र. संस्करण,
4. एल. वी. हेरोलिकर : दी टीचींग आफ सीविक्स, प्र. संस्करण
5. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 1

निराकरण एवं अपनी अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने का प्रयास शिक्षक को निरन्तर करते रहना चाहिए।

3. चरित्र संबंधी गुण— सच्चरित्र अध्यापक ही अपने गुणों से विद्यार्थियों को सद्गुणों को ग्रहण करने की प्रेरणा दे सकते है तथा उन्हें अच्छे नागरिक बना सकते हैं। चरित्र संबंधी गुणों मे सत्य निष्ठा, अच्छे आचार विचार, ईमानदारी, निष्पक्षता, सहयोग, सेवा, नेतृत्व आदि मुख्य हैं। शिक्षक मे संवेगात्मक संतुलन भी होना चाहिए। विद्यार्थियों के प्रति धैर्य, स्नेह, सौम्यता एवं सतुलित मस्तिष्क से व्यवहार करने की क्षमता होनी चाहिए। स्मरण, चिंतन, तर्क एवं निर्णय शक्तियों का विकसित होना भी आवश्यक है।

4. शैक्षिक एवं प्रशिक्षण संबंधी योग्यता—शिक्षण की शैक्षिक एवं प्रशिक्षण संबंधी योग्यता शिक्षा-स्तर के अनुकूल निर्धारित होनी चाहिए। प्राथमिक स्तर के शिक्षक के लिए अपने विषय में हायर सैकण्डरी तथा एस टी. सी., उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के लिये अपने विषय मे स्नातक तथा सी. एड. एवं उच्च माध्यमिक स्तर के लिये अधिस्नातक तथा बी. एड. की योग्यताएँ निर्धारित है। शैक्षिक योग्यता विषय-वस्तु की दृष्टि से तथा प्रशिक्षण योग्यता विद्यार्थियों को उपयुक्त शिक्षण-विधि से पढाने की दृष्टि से आवश्यक है।

(ख) विशिष्ट गुण—नागरिकशास्त्र-शिक्षक के लिये उपर्युक्त सामान्य गुणों के अतिरिक्त निम्नांकित विशिष्ट गुण भी होना वांछनीय हैं—

1. विषयगत गुण—शिक्षक मे नागरिकशास्त्र शिक्षण के लिये पूर्वोल्लिखित शैक्षिक योग्यता (संबंधित शिक्षा-स्तर के लिये निर्धारित) होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त जिस कक्षा को पढ़ाना है उसके पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ्यवस्तु का उसे अच्छा ज्ञान होना चाहिए। प्रायः यह देखा जाता है कि ऐसे शिक्षक नागरिकशास्त्र पढाते है जबकि यह विषय उसकी शैक्षणिक योग्यता के पाठ्यक्रम मे नही रहा। माध्यमिक कक्षाओं तक सामाजिक ज्ञान विषय के अन्तर्गत नागरिकशास्त्र विषय सम्मिलित है जिसे ऐसे शिक्षक पढ़ाते है जिन्होने हायर सैकण्डरी अथवा स्नातक स्तर पर यह विषय नही पढ़ा। ऐसे शिक्षकों को विषयगत ज्ञान देने तथा उनकी विषयगत कमियों की पूर्ति के लिये सेवारत-प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा जो राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् अथवा राज्यों में राज्य शिक्षा संस्थानों के तत्वावधान मे क्रमशः प्रशिक्षण महाविद्यालयों एवं प्रशिक्षण विद्यालयो के प्रस्तार सेवा विभाग द्वारा आयोजित किये जाते हैं, प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। राज्यो के माध्यमिक शिक्षा बोर्डों द्वारा भी ऐसे सेवारत कार्यक्रम ग्रीष्मावकाश शिविरों या कार्यशालाओं के रूप मे आयोजित किये जाते हैं। इस प्रकार नागरिकशास्त्र-शिक्षक को अपनी विषयगत योग्यता को निर्धारित स्तर के अनुकूल करने तथा परिवर्तित पाठ्यक्रमों के अनुरूप उसके स्तरोन्नयन करने का प्रयास करना चाहिए ताकि वे विषय की दृष्टि से विद्यार्थियों के प्रति न्याय कर सकें।

2. प्रशिक्षण संबंधी योग्यता—शिक्षक शिक्षा-स्तरानुकूल प्रशिक्षित होना चाहिए। किन्तु नागरिकशास्त्र-शिक्षण की उद्देश्यनिष्ठ-शिक्षण की नवीन संकल्पना के अनुरूप उद्देश्यो को वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के रूप मे निर्धारित करने, कक्षा में अधिगम एवं

अनुभवों की प्राप्ति हेतु शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण में उपयुक्त शिक्षण विधियों, प्रविधियों, शिक्षण सहायक उपकरणों एवं पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाकलापों के आयोजन करने तथा नवीन विधि के अनुसार मूल्यांकन करने का शिक्षण एवं प्रशिक्षण तथा अभ्यास प्रायः नहीं हो पाता। यह देखने में आता है कि प्रशिक्षण विद्यालयों एवं महाविद्यालय वही परम्परागत ढंग से अस्पष्ट उद्देश्य निर्धारित कर उनकी उपलब्धि की चिंता किये बिना प्रश्नोत्तर या व्याख्यान विधियों द्वारा शिक्षण अभ्यास किया जाता है। सामुदायिक संसाधनों एवं सामुदायिक क्रिया कलापों से सबद्ध कर विकासमान विधियों को प्रयुक्त नहीं किया जाता तथा मूल्यांकन की नवीन प्रविधियों को प्रयुक्त नहीं किया जाता तथा मूल्यांकन की नवीन प्रविधियों का प्रशिक्षणार्थियों को अभ्यास नहीं कराया जाता। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रम में सैद्धान्तिक विषयों शिक्षा मनोविज्ञान, शिक्षण-विधियों, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधारों तथा शिक्षा की सामाजिक समस्याओं-का अध्यापनाभ्यास में कोई समन्वय नहीं होता। इसका परिणाम यह होता है कि प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण समाप्त कर विद्यालयों में वही परंपरागत विधि से शिक्षण-कार्य करने लगते हैं तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम व्यावहारिक न होने से निरर्थक हो जाता है।

अतः शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में नवीन परिस्थितियों के अनुसार सुधार की आवश्यकता है। एन. सी. ई. आर. टी. द्वारा प्रस्तावित प्रशिक्षण योजना के अनुसार शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। नागरिकशास्त्र-शिक्षक के उपयुक्त प्रशिक्षण की योजना को व्यवहार में लाया जाना चाहिए।

3 व्यावसायिक गुण—केवल शैक्षिक एवं प्रशिक्षण संबंधी योग्यताएं रखने से ही किसी व्यवसाय में कार्य-कुशलता नहीं आती। अपने व्यावसायिक कार्य के प्रति उचित अभिवृत्ति एवं निष्ठा की भी आवश्यकता है। प्रायः देखा जाता है कि शिक्षण व्यवसाय में अधिकांश शिक्षक ऐसे हैं जिन्होंने स्वेच्छा से इस व्यवसाय को नहीं अपनाया बल्कि अन्य लाभदायी नौकरी न मिलने के कारण उदरपूर्ति हेतु विवशता से अथवा दैवयोग से शिक्षक बनना स्वीकार किया है अथवा कुछ ऐसे शिक्षक भी हैं जो अन्य लाभदायक नौकरी या व्यवसाय मिलने तक शिक्षक बने रहना चाहते हैं। ऐसे शिक्षकों में शिक्षा के प्रति कोई लगाव या निष्ठा नहीं हो सकती। अतः शिक्षक के लिये यह आवश्यक होना चाहिए कि वह चाहे स्वेच्छा से अथवा अनिच्छा से शिक्षण व्यवसाय में आया हो, उसे जब तक शिक्षक बने रहना है, अपने व्यवसाय के प्रति पूर्ण निष्ठा रख कर कार्य करना है ताकि भावी नागरिकों के निर्माण में वह अपनी प्रमुख भूमिका दायित्व के साथ निभा सके। पी. एन. अवस्थी के शब्दों में 'शिक्षक का शिक्षण के प्रति जो दृष्टिकोण होगा वैसा ही बालकों पर उसका प्रभाव पड़ेगा। शिक्षक में शिक्षण की लगन, तत्परता तथा ईमानदारी बालकों की सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करेगी।'[6] व्यवसाय के प्रति निष्ठा का एक दूसरा पक्ष है—अपनी व्यावसायिक अभिवृद्धि में निरन्तर प्रयत्नशील रहना। वैज्ञानिक एवं तकनीकी युग में ज्ञान का विस्फोट हो रहा है, सामाजिक मान्यताएं बदल रही हैं तथा नवीन अनुसंधानों

6. पी. एन. अवस्थी : नागरिकशास्त्र-शिक्षण-विधि, पृ. 193

के फलस्वरूप विषय-वस्तु एवं शिक्षण-विधियों में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। अतः बदलती स्थितियों के अनुसार शिक्षक को अपनी व्यावसायिक क्षमता एवं ज्ञान को अद्युनातन रखना है।

व्यावसायिक अभिवृद्धि के अनेक साधन हैं। जैसे—सेवारत प्रशिक्षण से लाभ उठाना, विषयगत पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन करना, स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास करते रहना, शिक्षण के नवीन प्रयोग, प्रायोजनाओं व अनुसंधान-कार्यों में रुचि लेना आदि। नागरिकशास्त्र-शिक्षक को इन व्यावसायिक गुणों को अपनाना चाहिए।

(4) समाजोपयोगी गुण—नागरिकशास्त्र-शिक्षण का यह विशेष दायित्व है कि वह समाजोपयोगी अच्छे नागरिकों का निर्माण करे। नागरिकशास्त्र शिक्षक स्वयं एक अच्छा नागरिक होकर ही विद्यार्थियों में नागरिकता की चेतना जाग्रत कर सकता है। होरलीकर के शब्दों में—"संक्षेप में वह (शिक्षक) एक पेरिक्लिन युग के एथेंस नगर के नागरिक की भांति आदर्श नागरिक होना चाहिए। मात्र एक नागरिक शिक्षक ही अपने छात्रों में नागरिक जागरुकता का भाव उत्पन्न कर सकता है।"[7] वाइनिंग का भी यही मत है कि शिक्षक (विद्यार्थियों में) आदर्श नगर नागरिकता जागृत कर सकता है। इसके लिये शिक्षक में चारित्रिक गुणों के अतिरिक्त सामाजिक सक्रियता के गुण भी होना वाञ्छनीय है। नागरिकशास्त्र, का शिक्षक विद्यालय एवं समुदाय (समाज) को जोड़ने वाली कडी के समान है।

वेसले के शब्दों में—विद्यालय अथवा समुदाय दोनों । सामाजिक अध्ययन का अध्यापक समुदाय को विद्यालय से, वर्तमान को अतीत से सरकार को विद्यालय से, नागरिक को अध्यापक से तथा समाज को शिक्षा से जोड़ने वाली एक कड़ी के समान है। दो गुप्तस्थित किन्तु अभिकर्ताओं के मध्य व्याख्याता एवं संयोजक होने के लिये शिक्षक को बुद्धिमानी का एक श्रेष्ठ नमूना, व्यवहार में कूटनीतिज्ञ की भांति किन्तु असीम साहस में सिंह के समान होना चाहिए। सामाजिक ज्ञान का अंग होने के कारण नागरिकशास्त्र के लिये भी यह कथन चरितार्थ होता है। वस्तुतः नागरिकशास्त्र-शिक्षक ही विद्यार्थियों को सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं एवं समस्याओं से अवगत कराता है तथा समाज को विद्यालय की गतिविधियों से परिचित कराता है। वह सही अर्थों में सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं व लोकतान्त्रिक जीवन-पद्धति का संरक्षक एवं सामाजिक परिवर्तन का अभिकर्ता है। इसके लिये नागरिकशास्त्र-शिक्षक को स्थानीय क्षेत्रीय, देशी एवं विदेशी सभी प्रकार की गतिविधियों, सामयिक समस्याओं एवं नवीन परिवर्तनों से स्वयं भी अवगत बना रहना चाहिए। उसे विवादास्पद समस्याओं के विचार-विमर्श के समय निष्पक्ष, वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए।

उपर्युक्त विशिष्ट गुणों एवं दृष्टिकोण के विकास एवं प्रशिक्षण हेतु 10+2 शिक्षा योजना के अन्तर्गत राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने विभिन्न स्तरों के

---

7. हार्लीकर एल. बी. द टीचींग ऑफ सीविक्स सं. संस्करण, पृ.

लिये प्रशिक्षण-कार्यक्रम प्रस्तावित किया है जिसे स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल संशोधित रूप में अपनाया जा सकता है।

नागरिकशास्त्र शिक्षक के प्रशिक्षण का प्रस्तावित कार्यक्रम

शिक्षा के विभिन्न स्तरोनुकूल

कार्यक्रम निम्नांकित है—

1—पूर्व प्राथमिक स्तर[9] महत्त्वभार सहित क्षेत्र 10% पाठ्यक्रम

(चार सेमेस्टर अर्थात् कक्षा 10 के बाद दो वर्ष एवं 72 केन्द्रित घंटों का)

अ—शिक्षा सिद्धान्त 20 प्रतिशत
1—शिक्षक व शिक्षा-विकसित भारतीय समाज में
2—बाल-विकास
3—उपलब्ध सुविधा एवं आवश्यकता के अनुसार विशिष्ट पाठ्यक्रम
4—कार्य-स्थितियाँ

निम्नांकित से सम्बद्ध

ब—समाज में कार्य 20 प्रतिशत
1—बाल्यावस्था पूर्व का ज्ञान,
2—शिक्षण विधियाँ तथा
3—शिक्षण सहायक उपकरण

स—शिक्षण-विधि एवं अध्यापनाभ्यास सम्बद्ध प्रायोगिक कार्य सहित 60 प्रतिशत

4—आधारभूत प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह
5—विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह
1 बाल विकास 10 प्रतिशत
6—विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह
2. क्रियाशीलन विधि 10 प्रतिशत
7—विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह 3, कला, संगीत व कार्यानुभव 20 प्रतिशत
8—सम्बद्ध प्रायोगिक कार्य 10 प्रतिशत

2—प्राथमिक स्तर[9] पाठ्यक्रम महत्त्व-भार सहित क्षेत्र

---

8. शिक्षक प्रशिक्षण प्रस्तावित कार्यक्रम सं. संस्करण, पृ. 25
9. उपर्युक्त, पृ. 25

	(वही पूर्वोल्लिखत 4 सेमेस्टर या 2 वर्ष का कक्षा 10 के बाद 72 केन्द्रित घंटों का)
अ—शिक्षा सिद्धान्त 20 प्रतिशत	1—विकसित भारतीय समाज में शिक्षक व शिक्षा
	2—बाल मनोविज्ञान
	3—प्राथमिक शिक्षा के सिद्धान्त तथा समस्याएं
ब—समुदाय में कार्य 20 प्रतिशत	4—कार्य-स्थितियाँ-निम्नांकित से सम्बद्ध 1. क्रिया अनुसंधान 2. परिवर्तनशील समाज में विद्यालय एवं शिक्षक की भूमिका का अवरोध
स—विषय-वस्तु शिक्षण विधि तथा सम्बद्ध प्रायोगिक कार्य सहित अध्यापनाभ्यास 66 प्रतिशत	5—आधारभूत प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह ।
	6—विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह भाषा 10 प्रतिशत
	7— " समूह 2 : गणित 10 प्रतिशत
	8— " समूह 3 : पर्यावरण अध्ययन 1
	9— " " 4 : अध्ययन 2
	10— " " 5 : कार्यानुभव कला 10 प्रतिशत
	11— " " 6 : शारीरिक शिक्षा 5 प्रतिशत
	12—सम्बद्ध प्रायोगिक कार्य 10 प्रतिशत

3—माध्यमिक स्तर[10] क्षेत्र महत्त्व भार प्रस्तावित पाठ्यक्रम

अ—शिक्षा-सिद्धान्त 20 प्रतिशत	1—विकासशील भारतीय समाज में शिक्षक व शिक्षा
	2—शिक्षा-मनोविज्ञान ।
	3—आवश्यकता एवं उपलब्ध साधनों के अनुकूल विशिष्ट कार्यक्रम ।
ब—समुदाय में क्रिया कार्य 20%	4—निम्नांकित से संबद्ध कार्य-स्थितियां 1—नवीन पाठ्यक्रम के संदर्भ में स्वीकृत अधिगम सिद्धान्तों के आधार पर अपने विशेषीकरण-विषय (नागरिकशास्त्र) के शिक्षण की क्षमता प्राप्त करना,

10. उपर्युक्त, पृ. 28

2—निर्देशन व परामर्श के कौशल का विकास करना,

3—बालक के व्यक्तित्व के विकास में घर, बड़े साथियों तथा समुदाय की भूमिका समझना तथा परस्पर लाभ हेतु स्वस्थ घर-स्कूल संबंध विकसित करना,

4—विकासशील समाज में विद्यालय की भूमिका समझना,

5—शोधपूर्ण प्रायोजनाएं व क्रियासंधान।

स—पाठ्यवस्तु, शिक्षण 60% विधि तथा संबद्ध प्रायोगिक कार्य सहित अध्यापनाभ्यास

5—आधारभूत प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह।

6—विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह 1–जीव विज्ञान, भौतिक विज्ञान/सामाजिक विज्ञान/भाषा/गणित—20%

7— „ समूह 2–कार्यानुभव–10%

8— „ समूह 3–शारीरिक शिक्षा, खेल कूद आदि–10%

9—संबद्ध प्रायोगिक कार्य (10%)

4. उच्च माध्यमिक स्तर[11]

इस स्तर का प्रशिक्षण कार्यक्रम भी माध्यमिक स्तर के अनुरूप है। अन्तर केवल इतना है कि "अ" क्षेत्र का महत्व-भार : 30% तथा 50% है, "अ" के अंतर्गत किशोरावस्था का मनोविज्ञान का अतिरिक्त विषय जोड़ा गया है तथा स के अंतर्गत क्र. सं. 6, 7 व 8 के स्थान पर विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम समूह है 1 तथा 2 विशिष्ट विषय (20%) है।

प्रस्तावित शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की विशेषताएं[12]—उपर्युक्त कार्यक्रम को समझने के लिये इसकी निम्नांकित विशेषताएं ध्यान देने योग्य हैं—

(1) सैद्धान्तिक विषय अ, ब तथा स वर्गों में विभक्त किये गये हैं। आधारभूत पाठ्यक्रम-विकासशील भारतीय समाज में शिक्षक तथा शिक्षा का उद्देश्य शिक्षक को राष्ट्र तथा समाज के प्रति अपने दायित्वों का अवबोध कराना है। समूहों का उद्देश्य यह है कि आधारभूत शिक्षण-विधियां तथा प्रविधियां तथा विशेष अध्यापन-विषय (जैसे नागरिक शास्त्र) के संदर्भ में स्तरों के अनुकूल शिक्षण-विधियां तथा प्रविधियां क्रमशः आधारभूत समूह एवं विशिष्ट समूहों के रूप में निर्धारित किये गये हैं।

---

11. उपर्युक्त, पृ. 30-31

12. शिक्षक प्रशिक्षण प्रस्तावित पाठ्यक्रम, पं. सं., पृ. 16

(2) ब के अन्तर्गत समाज में कार्य का उद्देश्य यह है कि प्रशिक्षणार्थी को पाठ्य-पुस्तकों में वर्णित तथ्यों का वास्तविक अवबोध कराने हेतु उसे जटिल सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का समाधान विभिन्न कार्य-स्थितियों मे खोजना पड़े। इससे प्रशिक्षणार्थी में सामाजिक समस्याओं के प्रति वाछित अभिवृत्तियो तथा कौशल का विकास हो सकेगा।

(3) स के अंतर्गत आधारभूत शिक्षण-कौशल तथा विशेष विषय (जैसे नागरिक-शास्त्र) के विशिष्ट शिक्षण-कौशल का अभ्यास कराया जाना प्रस्तावित है। विशिष्ट में पूर्व चर्चित सभी प्रमुख शिक्षण-विधियों एवं प्रविधियो का विशेष विषय की पाठ्यवस्तु के सदर्भ में अभ्यास किया जाना चाहिए। अध्यापनाभ्यास के अन्तर्गत अध्यापना अभ्यासपूर्व शिक्षक, अणु शिक्षण द्वारा किया जाना (जिसमे विभिन्न शिक्षण कौशलों का अभ्यास है) प्रस्तावित है, अध्यापनाभ्यास के लिये ब्लॉक-अध्यापनाभ्यास प्रस्तावित है, तथा अध्यापनाभ्यास पश्चात् शिक्षण में प्रत्येक 5 पाठो के बाद विचार-विमर्श के बाद पुनर्बलन का प्रावधान किया गया है।

(4) संबद्ध प्रायोगिक कार्य में सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम से संबद्ध कार्य प्रस्तावित है जैसे जांच-पत्रों का निर्माण व मूल्यांकन, विद्यार्थियों के व्यक्ति-वृत्त बनाना, शिक्षण सहायक उपकरणों का निर्माण करना आदि।

(5) इस प्रशिक्षण योजना में सेमेस्टर तथा क्रेडिट प्रणाली प्रस्तावित है।

इस प्रशिक्षण-कार्यक्रम में नागरिकशास्त्र-शिक्षण के प्रभावी प्रशिक्षण के तत्व अतर्निहित है क्योकि इसमे समस्त सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक पाठ्यक्रम को समाज या समुदाय के जीवन तथा कार्य-स्थितियों से समन्वित किया गया है। इस कार्यक्रम में अणु-शिक्षण पद्धति द्वारा शिक्षण-विधियों के प्रयोग पर बल दिया गया है साथ ही कार्य-स्थितियों के माध्यम से शिक्षण प्रक्रिया को सामुदायिक जीवन से सबद्ध कर अनुभव अर्जित करने एवं अधिगम को तीव्र एव स्थायी बनाने का प्रयास किया गया है। किंतु जब तक इस नवीन प्रस्तावित प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अपनाया नहीं जाता तब तक वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रमो में ही इसके आधार पर संशोधन किया जाना चाहिए तथा इस योजना के 'स'

(6) बिंदु के समूह 1 में नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु एव अध्यापनाभ्यास का विस्तृत कार्यक्रम विकसित कर उसे क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

नागरिकशास्त्र-शिक्षक की कठिनाइयां तथा उनका निराकरण

यदि हम नागरिकशास्त्र-शिक्षक से अपेक्षाओं पर ही बल देते रहे और उसकी कठिनाइयों का समाधान न करें तो यह अनुचित होगा। सक्षेप में उसकी निम्नांकित कठिनाइयां प्रमुख हैं जिनका समाधान खोजा जाना चाहिए।

1. कार्य-भार—प्रायः अधिकांश शालाओं में शिक्षक निर्धारित कालाशों से अधिक कालाशों मे शिक्षण करने तथा प्रशासनिक कार्य करने के लिये विवश किये जाते हैं। लोकतात्रिक विकेन्द्रिकरण के अतर्गत जिला परिषद् की प्राथमिक शालाओं के शिक्षक तो शिक्षण के अतिरिक्त अन्य कार्यों में अधिक व्यस्त कर दिये जाते हैं। एस. एन. मुखर्जी के शब्दों में—"ये जिला परिषदें राजनीतिज्ञों के शिकार-स्थल बन गये हैं

जहा वे प्राथमिक शाला-शिक्षको का पूरा-पूरा शोषण करते हैं। शिक्षकों को इस प्रकार के सैकड़ों कार्य करने पड़ते हैं जिनका उनके मुख्य कार्य-शिक्षण-से जरासा भी संबंध नहीं होता।'[13] यदि शिक्षकों से यह अपेक्षा की जाय कि प्रभावी शिक्षण-कार्य करें तो यह नितान्त आवश्यक है कि उन्हें निर्धारित कार्यभार ही सौंपा जाय जो शिक्षण से ही सबंधित हो।

2. प्रयोग एवं प्रायोजनाओं के प्रति अधिकारियों की अपेक्षा—नागरिकशास्त्र शिक्षक से भी यह आशा की जाती है कि वे विकासमान विधियों का प्रयोग करें व प्रयोजनाओं को क्रियान्वित करें किंतु प्रायः देखने में आता है कि शिक्षाधिकारी उत्साही एव लगनशील अध्यापकों की इन प्रवृत्तियों को उपेक्षा एवं शकालु दृष्टि से देखते हैं तथा परीक्षा-परिणाम उचित न निकलने पर प्राय. शिक्षकों को ही दंडित किया जाता है कि जबकि शिक्षक परीक्षा परिणाम के लिये आंशिक रूप से ही दोषी हो सकता है।[14] इस प्रकार की मनोवृत्ति अधिकारियों को त्यागनी चाहिए तथा प्रयोगशील अध्यापकों को पुरस्कृत कर प्रोत्साहित करना चाहिए।

3. शिक्षण सहायक उपकरणों का अभाव—शाला मे न्यूनतम शिक्षण-सहायक उपकरणों का उपलब्ध न होना भी शिक्षकों के प्रभावी शिक्षण मे बाधा उत्पन्न करता है। कम से कम न्यूनतम उपकरण तो उन्हें उपलब्ध कराये ही जाने चाहिए।[15] इन उपकरणों के रख-रखाव हेतु यदि पृथक कक्ष नागरिकशास्त्र-शिक्षण हेतु उपलब्ध न हो सके तो अलमारी या बाक्स आदि की व्यवस्था की जाय ताकि समय पर उनका उपयोग किया जा सके।

4. व्यावसायिक अभिवृद्धि के अवसरों का अभाव—अपने विषयगत ज्ञान एवं शिक्षण-विधियों एवं प्रविधियों को अद्यतन बनाये रखने हेतु प्रायः शिक्षकों को अवसर प्रदान नहीं किये जाते या उन्हें अवसर आने पर सेवारत प्रशिक्षण हेतु प्रतिनियुक्त नही किया जाता। अतः प्रसार सेवा विभागों, राज्य शिक्षा संस्थान या माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा नागरिकशास्त्र-शिक्षण से संबद्ध सेवारत प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाय और इस विषयके शिक्षकों को इनमे अवश्य प्रतिनियुक्त किया जाय।[16] इसके अतिरिक्त शाला पुस्तकालय मे इस विषय से सम्बन्धित साहित्य एव पत्र-पत्रिकाएँ भी उपलब्ध कराई जाय।

5. नागरिक अधिकारों का दमन—नागरिकशास्त्र शिक्षकों पर सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक समस्याओं पर विचार-विमर्श करते समय प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि यह किसी राजनैतिक दल अथवा पूर्वाग्रहों के प्रति निष्ठा रख कर विद्यार्थियों में अपने मत का प्रचार करता है। नागरिकशास्त्र-शिक्षक के एक नागरिक होने के नाते तथा अपने विषय से संबंधित होने के कारण राजनैतिक एवं विवादास्पद समस्याओं एवं प्रश्नो

13. 'नया शिक्षक', अप्रैल-जून 1980, शिक्षा विभाग, पृ. 16
14. नया शिक्षक, पूर्वोक्त, पृ. 12
15. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 69
16. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 69

पर कक्षा में विचार-विमर्श करने का अधिकार होना चाहिए। यदि वह ऐसा नही करता है तो वह विद्यार्थियों को वर्तमान प्रचार भरे विश्व में एक अकुशल एव अनभिज्ञ नागरिक ही बना पायेगा। के. एस. याजनिक ने उचित ही कहा है कि—'राजनीति पर विचार-विमर्श हो सकता है तथा होना चाहिए किन्तु केवल बौद्धिक स्तर पर ही।'[17] शिक्षक को ऐसे विचार-विमर्श के समय पूर्णतया लोकतान्त्रिक निष्पक्ष एवं ईमानदारी से अपने विचार प्रकट करना चाहिए। शिक्षक को अकादमिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। कोठारी शिक्षा आयोग ने तो शिक्षकों के नागरिक अधिकारों का हनन न कर उन्हें निर्वाचन के समय प्रत्याशी के रूप में भाग लेने का अधिकार दिये जाने की अनुशंसा की है-'अध्यापकों की नागरिक स्वतन्त्रता को हम बहुत महत्त्व देते हैं। हम समझते हैं कि अध्यापकों का सामाजिक और जनजीवन में भाग लेना वृत्तिक और समग्र रूप से शिक्षा सेवा के हित मे होगा। चुनाव मे भाग लेने के लिए उन पर कोई वैधानिक प्रतिबन्ध नही होना चाहिए।'[18]

शिक्षक द्वारा स्वमूल्यांकन की प्रविधि

उपर्युक्त सभी कठिनाइयों का विवेकपूर्ण समाधान खोजने एवं अपने शिक्षण को प्रभावी बनाने का प्रयास नागरिकशास्त्र-शिक्षक को निरन्तर करते रहना चाहिए। वैसे तो शिक्षाधिकारियों द्वारा उसके कार्य का परिवीक्षण एव मूल्याकन किया ही जाता है किन्तु उसे अपने कार्य का स्वमूल्याकन कर उसे सतत प्रभावी बनाने का प्रयास करते रहना चाहिए। इस सम्बन्ध में जगदीश नारायण पुरोहित ने स्वमूल्याकन हेतु निम्नांकित पड़ताल-सूची प्रस्तावित की है जो उपयोगी है।[19]

(स्वमूल्याकन हेतु शिक्षक प्रत्येक प्रश्न को पढकर ईमानदारी से जैसे भी स्थिति हो-उत्तम, सामान्य या असंतोपजनक-उसके आगे यथा स्थान का चिह्न लगायेगा। प्रत्येक प्रश्न के 2 अक है। उत्तम, सामान्य एवं असतोपजनक स्थिति होने पर क्रमशः 2, 1 व 0 अक दिये जाते हैं। अंत मे सभी अकों का योग यदि 2 0 से कम है तो कार्य असतोषप्रद माना जायेगा। 20 व 30 के मध्य योग सामान्य स्थिति तथा 30 से ऊपर 40 तक योग में संतोषप्रद स्थिति मानी जायेगी, 40 से ऊपर योग पर ही शिक्षण को प्रभावी माना जाना चाहिए अन्यथा सम्बन्धित क्षेत्रो मे सुधार अपेक्षित है। यह मूल्याकन माह मे एक बार तो होना ही चाहिए।

क्षेत्र	उत्तम	सामान्य	असन्तोषप्रद
. शिक्षण के लिये पूर्व तैयारी .			
(अ) क्या संपूर्ण ईकाई की योजना बनाली गई थी ?			
(ब) क्या दैनिक पाठ की योजना बनाई गई थी ?			

17. याज्ञिक के. एस. : टीचींग ऑफ सोशल स्टडीज अं. संस्करण पृ. 34
18. कोठारी शिक्षा आयोग पृ. 71
19. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन पृ. 334-336

(स) क्या पाठ के लिये आवश्यक सहायक
सामग्री जुटाई गई ?
(द) क्या पाठ-योजना में उद्देश्यों,
अध्यापनाध्यापन संस्थितियों तथा
मूल्यांकन प्रविधियों के मध्य
अनुकूलता थी ?
(य) क्या पाठ-योजना वैयक्तिक
आवश्यकताओं की दृष्टि से
अभिस्थापित थी ?

2. कक्षा-व्यवस्था
(अ) क्या शिक्षण प्रारम्भ करने से पूर्व खिड़कियाँ
व रोशनदान खोल दिये गये थे ?
(ब) क्या श्याम-पट्ट साफ कर लिया गया था ?
(स) क्या शिक्षण-सामग्री को प्रदर्शित करने के
लिए उचित व्यवस्था करली गई थी ?
(द) क्या शिक्षार्थियों को उनकी ऊँचाई के क्रम में
व्यवस्थित रूप से बिठा दिया गया था ?
(य) क्या उपस्कर इस प्रकार
से व्यवस्थित कर लिये गये थे कि प्रत्येक
शिक्षार्थी तक शिक्षक को पहुँचाने में
बाधा उपस्थित न हो ?

3. अध्यापन-अध्यापन संस्थितियाँ
(अ) क्या विद्यार्थी नवीन ज्ञान अर्जित करने की
दृष्टि से अभिप्रेरित हो सके ?
(ब) क्या उद्देश्यानुरूप शिक्षक-शिक्षार्थी क्रियाओं
का आयोजन हो सका ?
(स) क्या शिक्षार्थियों का पाठ के विकास मे सक्रिय सहयोग
प्राप्त किया गया ?
(द) क्या अर्जित ज्ञान के प्रबलीकरण
के लिये आवृत्ति तथा श्याम-पट्ट साराश दिया गया ?
(य) क्या सहायक शिक्षण सामग्री का उपयोग
किया जा सका ?

4. कक्षा की संवेगात्मक स्थिति—
(अ) क्या शिक्षक को प्रत्येक शिक्षार्थी
का नाम याद है ?
(ब) क्या शिक्षक का प्रत्येक शिक्षार्थी के

प्रति व्यवहार सहानुभूति एव मित्रता
पूर्ण रहा ?

(स) क्या शिक्षक प्रत्येक शिक्षार्थी की वैयक्तिक
आवश्यकताओ के प्रति सजग रहा ?

(द) क्या शिक्षार्थियों मे परस्पर सहयोग तथा
प्रतिस्पर्धा की भावना विद्यमान थी ?

(य) क्या शिक्षार्थियों मे आत्म नियन्त्रण एवं
उत्तरदायित्व की भावना थी ?

5. अभिव्यक्ति

(अ) क्या शिक्षक शिक्षार्थियों के स्तरानुसार
शब्दो का प्रयोग कर रहा था ?

(ब) क्या शिक्षक के प्रश्न विशिष्ट एवं स्पष्ट थे ?

(स) क्या शिक्षक का कथन उचित आरोहावरोह के
अनुसार हुआ ?

(द) क्या शिक्षक का उच्चारण शुद्ध है ?

(य) क्या शिक्षक की वाणी प्रत्येक शिक्षार्थी को
सुनाई दे रही थी ?

उपर्युक्त स्वमूल्यांकन केवल शिक्षण-विधि का है, पाठ्यवस्तु के मूल्यांकन के लिये अध्यापन-बिन्दुओं तथा पाठ्य-वस्तु के तथ्यों का सत्यापन नागरिकशास्त्र की प्रामाणिक पुस्तकों से किया जाना चाहिए।

नागरिकशास्त्र-शिक्षक से जो अपेक्षाएं वर्तमान लोकतन्त्रीय व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में की गई है, वे निश्चय ही कठिन अवश्य हैं। किन्तु नागरिकशास्त्र-शिक्षक पर विशेषतः लागू होने वाले कथन कि शिक्षक राष्ट्र निर्माता है—की सच्ची भावना से यदि शिक्षक अपना कार्य करने का प्रयास करे तो नागरिकशास्त्र विषय के विद्यालय-पाठ्यक्रम मे रखे जाने का औचित्य सिद्ध हो सकता है तथा शिक्षक भी राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अपना अभूतपूर्व योगदान कर सकेगा। उसके मार्ग की कठिनाईयों का निराकरण भी स्वतः हो जायेगा यदि उसमें अपने विषय एवं व्यवसाय के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा है।

□□□

12 | नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक

पाठ्य-पुस्तक शिक्षक के कार्य के पूरक के रूप में एक उपयोगी उपकरण है। ग्राम धारणा यह है कि नागरिकशास्त्र की प्रचलित पाठ्य-पुस्तकें सन्तोषजनक नहीं है। आज से लगभग 30 वर्ष पूर्व पाठ्य पुस्तकों के सम्बन्ध में जो अभिमत माध्यमिक शिक्षा आयोग ने व्यक्त किया था वह आज भी न्यूनाधिक रूप से नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों के विषय में वैसा ही है। आयोग ने मत प्रकट किया है कि 'हम विद्यालयीय पुस्तकों के उत्पादन के वर्तमान स्तर से अत्यधिक असंतुष्टि हैं तथा इनके आमूल-चूल सुधार को महत्वपूर्ण मानते है।'[1] अतः नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तकों की विशेषताओं, उनके निर्माण के सिद्धात तथा उनके मूल्याकन के मापदण्ड का विवेचन जरूरी है।

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठय-पुस्तकों का प्रयोजन एवं महत्व—

नागरिकशास्त्र की शिक्षण-प्रक्रिया में पाठ्य पुस्तक के निम्नांकित मुख्य प्रयोजन हैं—

(1) अन्तः क्रिया द्वारा अधिगम—शिक्षण-प्रक्रिया मे पाठ्य-पुस्तक एक महत्त्वपूर्ण उपकरण हैं क्योकि इसके माध्यम से कक्षा में शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य तथा परस्पर शिक्षार्थियो मे अन्तः प्रक्रियाएं होती है जिनके फलस्वरूप विद्यार्थियों में अधिगम होता है। जैसे नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक के ग्राम पंचायत पाठ में विद्यार्थी पंचायत, निर्वाचन, सहकरण, पचायत के अधिकार, कर्त्तव्य आदि तथ्यों को पढकर उनके विषय मे शिक्षक तथा सहपाठियों से विचार-विमर्श कर या पंचायत का अवलोकन कर उन्हें समझने की चेष्टा करेगा।

(2) स्व-अधिगम—पाठ्यपुस्तक को कक्षा मे या घर पर पढ कर विद्यार्थी बिना शिक्षक की सहायता के स्व-अधिगम के लिए भी प्रयुक्त करते हैं। शिक्षक द्वारा निर्देशित पाठ्य पुस्तक के अंशों को पढ़कर विचारपूर्वक प्रत्येक प्रेरक प्रश्नों के उत्तर लिखने से उन अंशों को छोड़ देने की अपेक्षा स्वयं के प्रयास से अधिगम करने का अवसर मिलता है।

---

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट, अं सं. पृ. 96

(3) पुनरावृत्ति—कक्षा में शिक्षक द्वारा पढ़ाये पाठ को घर पर या कक्षा मे पढ कर पाठ की पुनरावृत्ति की जाती है ताकि पढे हुए तथ्य पूर्व पाठ से सम्बद्ध हो सकें तथा आगामी पाठ के लिये पूर्व ज्ञान के रूप मे याद रखे जा सकें।

(4) पुनर्लेखन—शिक्षक द्वारा पढ़ाये गये तथ्यो को पाठ्य-पुस्तक से पढकर उन तथ्यो को गहनता से समझने के लिये भी विद्यार्थी उसका प्रयोग करते है। जैसे विचार-विमर्श पद्धति मे पढ़ाये गये पाठ-प्रकरण नागरिक के कर्त्तव्य के तथ्यों को विद्यार्थी पाठ्य पुस्तक से पढकर उन्हें भली-भांति हृदयगम कर सकेंगे।

(5) आगामी पाठ की अग्रिम तैयारी—कक्षा मे पढाये जाने वाले पाठ को विद्यार्थियो द्वारा अग्रिम रूप से पढ कर आने से अध्याय-प्रकरण को सरलता से समझा जा सकता है।

(6) संवर्धन—शिक्षक द्वारा पढाये गये पाठ-प्रकरण से सम्बन्धित तथ्यो को अन्य किसी पाठ्य पुस्तक (जो पुस्तकालय से उपलब्ध हो सके) के पठन द्वारा उनको अतिरिक्त ज्ञान प्राप्त होता है। इससे पाठ-प्रकरण का सवर्धन होता है।

(7) शिक्षक का मार्गदर्शन—नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक मे पाठ्यक्रम के अनुकूल सुचयनित सामग्री का सम्बन्धित कक्षा के विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुरूप संगठन एवं प्रस्तुतीकरण किया जाता है तथा अभ्यास-प्रश्नों, सदर्भ ग्रन्थों, शिक्षण सहायक उपकरणों व विधियो का भी उल्लेख होता है। अत पाठ्य-पुस्तक अध्याय-पाठ्य-पुस्तक के परिसीमन तथा क्षेत्र की दृष्टि मे शिक्षक का मार्गदर्शन करने मे सहायक होती है।

(8) परिवीक्षित अध्ययन—शिक्षक के मार्गदर्शन मे विद्यार्थी व्यक्तिश, अथवा वर्गों में विभक्त होकर निर्धारित प्रकरण या उसके अंश का पाठ्य-पुस्तक से अध्ययन करते हैं तथा आवश्यक प्रायोगिक कार्य भी (जैसे नक्शे, चार्ट, रेखाचित्र आदि) करते है।

पाठ्य-पुस्तक के उपर्युक्त प्रयोजनों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्य-पुस्तक एक प्रभावी उपकरण के रूप मे प्रयुक्त हो सकती है। भारत जैसे विकासशील देश मे अधिक खर्चीले शिक्षण सहायक उपकरणो के अभाव मे केवल पाठ्य-पुस्तक ही एक ऐसा उपकरण है जिसका उपयोग किया जा सकता है।

राष्ट्रीय विद्यालय पाठ्य-पुस्तक मण्डल के सचिव आर. एच. दवे का मत है कि 'औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र मे पाठ्य-पुस्तक का स्थान सर्वोच्च महत्व का बन गया है।.........घर पर जो अधिगम होता है वह अधिकतर पाठ्य-पुस्तको की सहायता से होता है विशेषतः हमारे जैसे देश में जहा अन्य शिक्षण-उपकरण दुर्लभ हैं।' इस मण्डल के अध्यक्ष एस. बी. सी. आइया का कथन है कि 'भावी अनेक वर्षों तक शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में पाठ्य-पुस्तक एक आवश्यक उपयोगी सहायक-उपकरण के रूप में प्रयुक्त होती रहेगी।'

वेसले तथा रोस्की ने पाठ्य पुस्तक का महत्व प्रकट करते हुए कहा है कि 'पाठ्य पुस्तक स्तर का द्योतक है तथा उसका निर्धारक भी। इसके द्वारा यह विदित होता है।

कि शिक्षक को क्या जानना चाहिए तथा विद्यार्थियों को क्या सीखना है। इसके शिक्षण अधिगम उपकरण शिक्षण-विधियों को अत्यधिक प्रभावित करते है तथा ज्ञान के स्तरोन्नयन को प्रकट करते हैं। इस प्रकार यह कभी शिक्षण-शोभायात्रा की अनुगामी बनाती है या कभी उसकी पुरोगामी बनती है किन्तु यह सदैव एक महत्वपूर्ण घटक सिद्ध होती है।

नागरिकशास्त्र की शिक्षण-प्रक्रिया मे भी पाठ्य-पुस्तक का महत्वपूर्ण स्थान बना रहेगा जब तक कि अन्य आवश्यक एव प्रभावी शिक्षण-उपकरण शिक्षक को उपलब्ध नहीं कराये जाते। किन्तु नागरिकशास्त्र की वही पाठ्य-पुस्तक शिक्षक के लिये महत्व की मानी जायेगी जो सुशिक्षित एव सुयोग्य विषय विशेषज्ञद्वारा लिखी गई हो और जिसके निर्माण में मुद्रण स्तर, चित्र, एव सामान्य साज-सज्जा के प्रति समुचित सावधानी बरती गई हो।[2]

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में पाठ्य-पुस्तक के उपयोग के सम्बन्ध में विभिन्न मत—

अन्य विषयो की भाति नागरिकशास्त्र-शिक्षण मे भी पाठ्य-पुस्तक के उपयोग के सम्बन्ध में निम्नांकित दो विरोधी मत हैं—

1. अधिकांश शिक्षाविदो का मत है कि पाठ्य-पुस्तक शिक्षण-प्रक्रिया मे एक उपकरण के रूप मे प्रयुक्त होनी चाहिए किन्तु कुछ लोग पाठ्य-पुस्तक को ही शिक्षण का आधार मानते हैं।

2. दूसरा मत यह है कि पाठ्यपुस्तकों का शिक्षण-प्रक्रिया से पूर्णतः बहिष्कार किया जाना चाहिए। इस मत के अनुसार तर्क यह दिया जाता है कि पाठ्य पुस्तको से छात्रो में रटने की दुष्प्रवृत्ति उत्पन्न होती है तथा पाठ्य-पुस्तको के अन्धानुकरण करने से शिक्षकों की स्थिति गौण एव महत्वहीन हो जाती है।

उपर्युक्त दोनो मत आत्यन्तिक हैं। वस्तुतः इन दोनो मतों का मध्यम मार्ग अपनाना ही उचित है। पाठ्य-पुस्तको का उपकरण के रूप में सदुपयोग करने से ये शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों को लाभान्वित करती है किन्तु दुरुपयोग अर्थात् उन पर अत्यधिक निर्भरता से ये हानिकर सिद्ध होती है। नागरिकशास्त्र-शिक्षण में भी उपर्युक्त वर्णित प्रयोजनो के लिये ही पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग किया जाना चाहिए। ये अधिगम हेतु साधन है साध्य नहीं। वे शिक्षण प्रक्रिया की अच्छी सेवक (सहायक) किन्तु खराब स्वामी भी हैं। सदुपयोग एव दुरुपयोग से बन सकती हैं।

नागरिकशास्त्र शिक्षण में सहायक पुस्तकों के प्रकार एवं उनकी रचना के सिद्धांत—

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में सहायक उपकरण के रूप में प्रयुक्त होने योग्य पुस्तकों को मुख्यतः अग्रांकित चार प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है।

---

2. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 256–258

1. पाठ्य-पुस्तक
2. शिक्षण-सामग्री पुस्तिका,
3. अभ्यास पुस्तक और
4. सह पाठ्य-पुस्तक

1. पाठ्य-पुस्तक तथा उसकी रचना के सिद्धांत—पाठ्य-पुस्तक शिक्षण का एक उपकरण है जो शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सुगम बनाती है। पाठ्य-पुस्तक की निम्नांकित विशेषताएं उसे अन्य पुस्तकों से भिन्न दर्शाती है।

(i) पाठ्य-पुस्तकें प्राय: किसी निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर लिखी जाती है जिसका उल्लेख उनमें होता है,

(ii) पाठ्य-पुस्तकों में पाठ्य-वस्तु का सावधानी से चयन किया जाता है, उसका संक्षिप्तिकरण किया जाता है तथा उसे तर्क सगत विधि से संगठित किया जाता है,

(iii) पाठ्य-पुस्तकों मे पाठ्य-वस्तु का उन विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के अनुकूल प्रस्तुतीकरण किया जाता है जिनके लिये उन्हे लिखा जाता है।

पाठ्य-पुस्तक की रचना के सिद्धांत

पाठ्य-पुस्तक की रचना या निर्माण के सिद्धान्त केवल मार्गदर्शक बिन्दु होते हैं जिनका ध्यान पाठ्यपुस्तक के लिये निम्नांकित सिद्धान्त (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एव प्रशिक्षण परिषद् के सुझावों के आधार पर) ध्यातव्य हैं।

1. राष्ट्रीय आकांक्षाओं एव लक्ष्यों का अनुचिन्तन—राष्ट्रीय आंकाक्षाएं एवं लक्ष्य ही शिक्षा के उद्देश्य होते हैं इनका अनुचिंतन पाठ्य-पुस्तक के चयन, संगठन एवं प्रस्तुतीकरण से प्रतिबिम्बित होना चाहिए। नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक के लिये तो यह आवश्यक है क्योंकि इस विषय का प्रमुख लक्ष्य प्रभुसत्ता सम्पन्न लोकतान्त्रिक समाजवादी धर्म निरपेक्ष भारतीय गणतंत्र के लिये कुशल नागरिक तैयार करना है। कोठारी शिक्षा आयोग ने कहा है कि 'हमारी राय मे, शिक्षा में परिवर्तन करने, उसे लोगों के जीवन, आवश्यकताओं और आकाक्षाओं से सम्बन्धित करने का प्रयत्न करने और इस प्रकार उसे हमारे राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूपान्तर का शक्तिशाली साधन बनाने से बढ़कर या इससे भी जरूरी कोई भी सुधार इस समय नही है। ऐसा तब ही किया जा सकता है जबकि शिक्षा अपना सम्बन्ध उत्पादिता से जोड़े, सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण को मजबूत करे, सरकार के एक प्रकार के रूप मे लोकतंत्र को समेकित करे तथा उसे एक जीवन-शैली के रूप में अपनाने में देश की मदद करें, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में गति लाये, और सामाजिक नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देकर चरित्र का निर्माण का प्रयत्न करें।[3]

---

3. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ, 7

नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक राष्ट्रीय भावनात्मक एकता, धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र, समाजवाद, सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों तथा आधुनिकीकरण के प्रति विद्यार्थियों में अनुकूल अभिरुचियों, अभिवृत्तियों एवं कुशलताओं के विकास में सहायक होनी चाहिए। पाठ्यवस्तु का चयन, संगठन एवं प्रस्तुतीकरण इस भांति किया जाना चाहिए कि हमारे देश की इन आकांक्षाओं एवं लक्ष्यों की पूर्ति हो सके। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं का इस प्रकार विवेचन किया जाय कि स्थानीय ग्राम, नगर, प्रदेश, भाषा, धर्म, जाति आदि के प्रति संकीर्ण निष्ठाएं राष्ट्र के प्रति विस्तृत एवं उदार निष्ठा में विकसित हो सकें। विद्यार्थियों में अनेकता में एकता की भावना जागृत हो। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय भावना के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना अर्थात् विश्व-एकता की उदार मानववादी भावना का विकास हो, इसकी निष्ठा भी पाठ्य-पुस्तक-लेखन में की जाय। संयुक्त राष्ट्र संघ की विभिन्न संस्थाओं द्वारा विश्व-शांति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में किये गये कार्यों एवं उसमें भारत के योगदान के विवेचन से इस भावना का विकास सम्भव है।

2. नागरिकशास्त्र-शिक्षण के उद्देश्यों का प्रतिबिम्ब—नागरिकशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक से उद्देश्यों की उपलब्धि में सहायता मिलनी चाहिए। शिक्षण-प्रक्रिया में पाठ्य-पुस्तक का एक उपकरण के रूप में प्रयोग प्रभावी शिक्षण-अधिगम स्थितियों के निर्माण में सहायक हो जिससे विद्यार्थियों को जीवन से सम्बद्ध वास्तविक अनुभवों के आधार पर अधिगम हो सके और उनमें वांछित व्यवहारगत परिवर्तन हो सकें। पाठ्यवस्तु का इस प्रकार चयन, संगठन एवं प्रस्तुतीकरण हो कि विभिन्न जीवन-स्थितियों के क्रियाकलापों में सक्रिय भाग लेकर एक कुशल नागरिक के लिये वांछित ज्ञान अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचियों, अभिवृत्तियों एवं कौशल को विकसित करने का अवसर मिले। पाठ्य-पुस्तक की भाषा-शैली इस प्रकार की हो कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में अपना चिन्तन तर्क, निर्णय एवं विचार अभिव्यक्ति की शक्ति को विकसित कर सफल नागरिक जीवन जीने की क्षमता पैदा हो।

3. शिक्षार्थी के मनोविज्ञान का ध्यान—पाठ्य-पुस्तक को "मुद्रित सहायक अध्यापक" भी कहा जाता है। इस कथन का औचित्य यह है कि शिक्षक का शिक्षण तब ही सफल माना जा सकता है जब उससे विद्यार्थियों में अधिगम हो सके। पाठ्य-वस्तु के चयन की दृष्टि से अधिगम हेतु कुछ मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त हैं, जैसे विद्यार्थियों को उत्प्रेरित करने पर ही प्रभावी अधिगम होता है, नवीन तथ्य पूर्व ज्ञान अथवा जीवन-अनुभवों से सम्बद्ध कर शीघ्र सीखे जा सकते हैं। विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुरूप पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण से अधिगम सरल एवं बोधगम्य बनता है, वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान रखते हुए मन्द बुद्धि, औसत तथा कुशाग्र बुद्धि विद्यार्थियों पर समुचित ध्यान रखने से सभी विद्यार्थियों को पाठ्य-वस्तु समझ में आ सकती है, साथ ही भाषा-शैली भी विद्यार्थियों के अवबोध स्तर के अनुकूल हो। नागरिक-

शास्त्र की पाठ्य पुस्तक में पाठ्य वस्तु का चयन इन सिद्धान्तों के अनुकूल होना चाहिए।

पाठ्य-वस्तु में पाठ्य वस्तु के सगठन की दृष्टि से नागरिकशास्त्र की पाठ्य वस्तु कक्षा-विशेष के विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता के अनुरूप विभिन्न इकाइयो मे विभक्त कर उसे क्रमबद्ध एव सुसगत रूप से सगठित किया जाना चाहिए। प्रत्येक इकाई की पाठ्य-वस्तु मे किसी एक विचार या सकल्पना या समस्या की आद्योपान्त एकता बनी रहे, इस बात का ध्यान भी रखा जाय। जैसे नागरिकशास्त्र की भारतीय प्रशासन एवं समस्याएं विषय की पाठ्यपुस्तक में पाठ्यवस्तु की सघीय सरकार की व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका सम्बन्धी इकाइयो के बाद ही राज्य सरकार के इन अंगों की इकाइया क्रमबद्ध रूप से तथा प्रथमतः भी एकरूपता लिए हुए संगठित की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त नागरिकशास्त्र की पाठ्यवस्तु की प्राथमिक, उच्च-प्राथमिक एव माध्यमिक स्तरों के पाठ्यक्रमो मे तीन वृत्तों के अन्तर्गत आवृत्ति की जाती है अर्थात् पाठ्यवस्तु का संगठन सकेन्द्रीय विधि से किया जाता है। पाठ्यवस्तु मे इस सगठन विधि को अपनाया जाना चाहिए ताकि पूर्व तथा पश्चात् के स्तरो की पाठ्य-वस्तु से उचित समायोजन हो सके।

पाठ्य पुस्तकों मे पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से कहानी–कथन, यात्रा–वृतान्त, वार्तालाप, वर्णन-विवरण मे से प्राथमिक कक्षाओ मे प्रथम तीन विधियो का अपनाया जाना उपयुक्त है जबकि उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक कक्षाओं में अन्तिम तीन विधिया उपयुक्त रहती है। प्रस्तुतीकरण में शिक्षण-सहायक उपकरणों का प्रयोग सम्पादन का प्रभावी माध्यम होता है। नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तक मे अमूर्त, जटिल एवं अतीत से सम्बन्धित तथ्यो, संकल्पनाओ, आकडो, संगठनो आदि का उच्च प्राथमिक कक्षाओ की पाठ्यपुस्तकों मे प्रचुर उपयोग किया जाना चाहिए इनके प्रयोग से लेखन मे मितव्ययिता आती है इनके पठन की एकरसता दूर होती है तथा विद्यार्थियो मे विषय के प्रति रुचि एवं जिज्ञासा जागृत होती है। पाठ्यपुस्तक मे इन उपकरणो के आकार, रंग तथा स्थिति का निर्धारण विद्यार्थियो की मानसिक परिपक्वता के आधार पर किया जाना चाहिए। इन उपकरणो की पाठ्यवस्तु से सुसगतता तथा शुद्धता का भी पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए।

4. पाठ्यपुस्तक के व्यवहृतता तथा पठनीयता पक्षों का ध्यान—पाठ्यपुस्तकों के कुछ भौतिक पक्ष शिक्षार्थी की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण होते है। जैसे उसकी व्यवहृतता तथा पठनीयता। व्यवहृतता की दृष्टि से पाठ्यपुस्तक का आकार परिमाण आवरण-पृष्ठ प्रयुक्त कागज का स्तर तथा जिल्द कक्षा-स्तर के अनुकूल हो ताकि वे सत्र-पर्यंत उसका प्रयोग सुविधा से कर सके। प्रारम्भिक कक्षाओं में प्रायः विद्यार्थी अपनी पाठ्यपुस्तक को शीघ्र खराब कर देते हैं या फाड डालते हैं। अतः इन कक्षाओं मे व्यवहृतता की दृष्टि से इन पक्षो पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। इन कक्षाओं के लिये पाठ्यपुस्तक

की वाह्य साज-सज्जा भी आकर्षक होनी चाहिए ताकि विद्यार्थियों में उसे पढ़ने की रुचि जागृत हो सके।

पठनीयता की दृष्टि से छापे का आकार, छापे की स्पष्टता स्तम्भों की लम्बाई व चौड़ाई, हाशिया पंक्तियों के मध्य अन्तराल तथा सहायक उपकरणों की सुस्पष्ट अनुकृतियां विशेष उल्लेखनीय हैं। कक्षा के अनुरूप इन बातों का ध्यान रखने से पुस्तक पठनीय होती है। प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक, उच्च माध्यमिक कक्षाओं हेतु प्रयुक्त छापे का आकार क्रमशः 16 पाइन्ट, 14 पाइन्ट तथा 12 पाइन्ट हो, पुस्तक का आकार क्रमशः $7\frac{1}{2}'' \times 9\frac{1}{2}''$, $6\frac{1}{2}'' \times 8''$ तथा $6\frac{1}{2}'' \times 9\frac{1}{2}''$ हो तथा पुस्तक का परिमाण क्रमशः 64 से 96 पृष्ठ तक, 112 से 144 पृष्ठ व 128 से 208 पृष्ठ तक हो।

5. निर्धारित पाठ्यक्रम से अनुरूपता तथा विद्यालय स्तर पर विषय के समग्र पाठ्यक्रमीय योजना सुसंबद्धता—राज्यों के शिक्षा विभागों द्वारा उच्च प्राथमिक स्तर तक तथा माध्यमिक शिक्षा बोर्डों द्वारा माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के निर्धारित पाठ्यक्रमों में प्रायः पाठ्यवस्तु तथा उद्देश्यों दोनों का उल्लेख किया जाता है। नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तकों का प्रणयन सम्बन्धित कक्षा की पाठ्यवस्तु एवं उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए तथा पाठ्यवस्तु का चयन, संगठन एवं प्रस्तुतीकरण इस प्रकार होना चाहिए कि पूर्ववर्ती एवं अनुवर्ती स्तर के पाठ्यक्रमों से प्रस्तुत पाठ्यवस्तु का उचित सामंजस्य हो सके। प्रत्येक पाठ-प्रकरण का क्षेत्र एवं गहनता इस सिद्धांतों के अनुसार निर्धारित की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त तथ्यों की शुद्धता व उनके अद्युनातन स्वरूप पर भी ध्यान देना चाहिए।

6. शिक्षक की आवश्यकताओं की पूर्ति—यद्यपि नागरिकशास्त्र-शिक्षक अन्य सदर्भ ग्रन्थों की सहायता से शिक्षण की तैयारी करता है किन्तु पाठ्यपुस्तक पाठ्यवस्तु के क्षेत्र, शिक्षण-विधि, शिक्षण-सहायक उपकरण अभ्यास-प्रश्नों तथा अध्याय-तथ्यों के अवबोध एवं चिंतन की दृष्टि से उसका पर्याप्त मार्गदर्शन कराती है। पाठ्यपुस्तक में शिक्षक की आवश्यकताओं की पूर्ति का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।[4]

7. समाज एवं राज्य के संसाधनों का ध्यान—संसाधनों की दृष्टि से विभिन्न स्थानीय समुदाय तथा राज्य भिन्नता लिए हुए होते हैं। देश में अधिकांश अभिभावकों की निर्धनता एवं साधनहीनता देखते हुए यह आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों का मूल्य ऐसा होना चाहिए जिसके भार को प्रत्येक अभिभावक वहन करने में समर्थ हो। अतः मूल्य को दृष्टिगत रखते हुए भी पाठ्यपुस्तक का निर्माण किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त पाठ्यपुस्तक में ऐसी शिक्षण विधियों के सुझाव दिये जाने चाहिए जो प्रत्येक विद्यालयों में उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप हों। नागरिकशास्त्र-शिक्षण के सर्वोत्तम उपकरण या क्रियाकलाप जैसे फिल्म, टेलिवीजन, नाट्यीकरण, शैक्षिक यात्राएं आदि अभी कुछ साधन सम्पन्न विद्यालयों में ही उपलब्ध हैं। अतः पाठ्यपुस्तक में औसत स्तर के विद्यालयों के संसाधन का ध्यान रखते हुए शिक्षण-विधि, उपकरण एवं क्रियाकलापों का सुझाव दिया जाना चाहिए।

---

4. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 78–79

(2) शिक्षण-सामग्री-पुस्तिका—पाठ्यपुस्तिक के अतिरिक्त विशेषतः शिक्षक के लिये उपयोगी सहायक पठन सामग्री विभिन्न कक्षाओं के पाठ्यक्रम पर आधारित इकाइयों पर तैयार की हुई शिक्षण सामग्री हो सकती है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के तत्वावधान में 1966–67 से विभिन्न शिक्षक महाविद्यालयों में सम्बद्ध प्रसार सेवा विभागों द्वारा नागरिकशास्त्र-शिक्षकों के सहयोग से शिक्षण सामग्रियां तैयार कराई जा रही हैं। एम. बी. बुच के शब्दों में 'विद्यालय सुधार के कार्यक्रम का एक उपेक्षित पक्ष विद्यालय-शिक्षकों की पाठ्यवस्तु पृष्ठ भूमि का संवर्द्धन है। इस दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रियाकलाप शिक्षकों का शिक्षण-सामग्री विकसित करने में सक्रिय भाग लेना है।[5] यह शिक्षण-सामग्री नागरिकशास्त्र-शिक्षक के केवल विषय-ज्ञान का ही संवर्धन नहीं करती बल्कि इकाईगत उद्देश्यों, विकासमान विधियों शिक्षण उपकरणों, मूल्यांकन प्रविधियों एवं क्रियाकलापों से उसे अवगत कर उसके शिक्षण को प्रभावी बनाती है। इस शिक्षण-सामग्री का निर्माण स्वयं शिक्षक को उसके विद्यालय तथा स्थानीय समुदाय में उपलब्ध संसाधनों के आधार पर करना चाहिए। प्रत्येक इकाई हेतु शिक्षण-सामग्री का निर्माण निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जाना चाहिए—

1. इकाई की प्रस्तावना,
2. इकाई के प्रमुख विचार एवं अवबोध,
3. शिक्षण-उद्देश्य,
4. पाठ्य वस्तु,
5. विद्यार्थी-क्रियाकलाप,
6. मूल्यांकन, तथा
7. शिक्षक के लिये मार्गदर्शक बिन्दु।

नागरिकशास्त्र की विभिन्न इकाइयों जैसे नागरिक के अधिकार एवं कर्त्तव्य, संयुक्त राष्ट्र संघ, मंत्रिमण्डल शासन प्रणाली आदि की शिक्षण-सामग्री उपर्युक्त बिन्दुओं के अन्तर्गत तैयार की जा सकती है। इनका औचित्य इन शब्दों से प्रकट होता है कि अनेक पाठ्य पुस्तकें तथा शिक्षण-प्रविधियां पुरानी पड़ गई हैं। शिक्षण-इकाइयों को विकसित कर प्रसार सेवा विभागों ने शिक्षक को नवीन शिक्षण-सामग्रियां प्रदान करने का प्रयास किया है जो उसे अपने ज्ञान एवं शिक्षण-विधि के सुधार हेतु दिशा एवं मार्गदर्शन प्रदान करती है।'[6] इन शिक्षण-सामग्री पुस्तिकाओं का निरंतर संशोधन, परिवर्तन किया जाना चाहिए जिनसे वे अधिकाधिक उपयोगी बनी रहें।

(3) अभ्यास-पुस्तक—नागरिकशास्त्र-शिक्षण में अभ्यास-पुस्तकें विद्यार्थियों के कौशल के विकास में सहायक होती हैं तथा प्रायोगिक कार्य करने के अवसर प्रदान करती

---

5. इम्प्रूवींग इंस्ट्रक्शन इन सोविक्स (एन. इ. सी. आर. टी.) पे. वी. 1969 म, संस्करण
6. उपरोक्त पृ. viii.

है। इनके माध्यम से पाठ्यक्रम मे सम्बन्धित प्रकरणों के तथ्यों, संकल्पनायें, सिद्धान्तों, नियम, संस्थागत सगठनो एव कार्य, नागरिक के संस्थाओं से सम्बन्ध आदि के स्पष्टीकरण हेतु रेखाचित्र, मानचित्र, आरेख, समय-रेखा, ग्राफ, सारणी, अवलोकन या साक्षात्कार प्रश्नावली आदि के निर्माण एव उनकी आवश्यक पूर्तियो सम्बन्धी अभ्यास-कार्य कराया जा सकता है। अभ्यास पुस्तकों मे प्रत्येक कार्य का एक उदाहरण प्रस्तुत कर अभ्यास हेतु उसी कार्य को भिन्न स्थितियों मे करने का निर्देश दिया जाता है। उदाहरण के लिए भारत के सवैधानिक विकास की समय रेखा, भारतीय गणतन्त्र के राज्यो एव केन्द्र शासित प्रदेशो का मानचित्र, संघीय सरकार के विभिन्न अंग एवं उनके सबन्धो की संगठनात्मक सारिणी या तालिका भारत की निरक्षता या जनसंख्या समस्या के आकडो सबंधी ग्राफ का निर्माण, भ्रमण, अवलोकन या शैक्षिक यात्रा के समय किसी संस्था के अवलोकन या संस्था के किसी पदाधिकारी से साक्षात्कार के समय आवश्यक तथ्यों के संग्रह हेतु प्रश्नावली या पडताल-सूची की पूर्ति आदि विभिन्न प्रकार के अभ्यास कार्य ऐसी पुस्तिकाओं के माध्यम से कराये जा सकते हैं। अभी ऐसी अभ्यास-पुस्तिकाओं का नागरिकशास्त्र शिक्षण मे अभाव है जिसकी पूर्ति करना वाञ्छनीय है। इन अभ्यास-पुस्तको का प्रयोग विभिन्न विकासमान विधियो— जैसे परिवीक्षित अध्ययन, अवलोकन विधि विचार-विमर्श विधि, आदि अथवा गृह कार्य के अंतर्गत किया जा सकता है।

4. सह पाठ्य पुस्तक— नागरिकशास्त्र शिक्षण का उद्देश्य भावी नागरिकों में वांछनीय समाजोपयोगी गुणो का विकास करना है। कर्तव्य पालन, सेवा, सहयोग, त्याग, बलिदान, सदभावना, धर्म निरपेक्षता, समाजवादी भावना, लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति, वीरता, साहस, अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना आदि अनेक ऐसे नागरिकता के गुण हैं जो समाज, राष्ट्र एवं विश्व का नागरिक होने के नाते विद्यार्थियो मे अपेक्षित हैं। इन अभिवृत्तियों एव गुणों का विकास सह पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से अत्यन्त रोचक, सरल एवं प्रभावी विधि से किया जा सकता है। इस प्रकार की पुस्तकों मे विभिन्न क्षेत्रो के महापुरुषो की जीवनियां व कथायें, राष्ट्रीय सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित एकांकी, नाटक उपन्यास लेख आदि देश के विभिन्न राज्यो एवं विश्व के विभिन्न देशो के जन-जीवन एवं संस्थाओं से परिचित कराने हेतु यात्रा-संस्मरण, सामयिक समस्याओं की समीक्षा देश विदेश के भाषण संग्रह या भेंट वार्ता, परिचर्चाएं सर्वेक्षण आदि प्रमुख हैं। इनका पठन पाठ्य पुस्तक या कक्षा शिक्षण के पूरक के रूप में शिक्षक के निर्देशानुसार किया जा सकता है। इनसे विद्यार्थियों मे ज्ञान का संवर्धन होता है।

उपलब्ध प्रकाशित पुस्तकों या पत्र—पत्रिकाओं में से शिक्षक को ऐसी सह पाठ्य-सामग्री का चयन करना चाहिए जो विभिन्न स्तरों के विद्यार्थियों के द्रुतपाठ हेतु उपयुक्त हों। पाठ्यक्रम से सम्बद्ध प्रत्येक कक्षा तथा इकाई के अनुरूप यदि ऐसी सह पाठ्य पुस्तकों का लेखन व प्रकाशन एक ग्रन्थमाला के रूप में किया जाय तो नागरिकशास्त्र

शिक्षण को अत्यन्त प्रभावी बनाया जा सकता है। ऐसी पुस्तकों का अभी छोटी कक्षाओं के लिए नितान्त अभाव है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक के मूल्यांकन का मापदण्ड—राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने पाठ्य पुस्तकों के सतत मूल्याकन के महत्त्व को प्रकट करते हुए कहा है कि "पाठ्य पुस्तकों को शिक्षण का उपयोगी माध्यम बनाने के लिए उनका व्यवस्थित एवं सतत *मूल्यांकन अत्यन्त आवश्यक है।"* इस मूल्याकन के तीन उद्देश्य है—1. पाठ्य पुस्तकों का चयन 2. पाठ्य-पुस्तकों का सुधार 3 पाठ्य पुस्तकों का अनुसधान।

विद्यालय स्तर पर नागरिकशास्त्र शिक्षक का कार्य प्रथम दो उद्देश्यों अर्थात् पाठ्य पुस्तको के चयन तथा उनके सुधार हेतु सुझाव देने तक सीमित है। यदि एक से अधिक पुस्तकें किसी कक्षा के नागरिकशास्त्र के लिये सुझाई गई है तो उनमें से एक का चयन शिक्षक को करना होता है। यदि शिक्षा विभाग या माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण कर किसी कक्षा के लिये एक ही पुस्तक निर्धारित है तो चयन का प्रश्न ही नही उठता। ऐसी स्थिति मे शिक्षक चाहे तो उस पुस्तक की कमियों को प्रकट कर सुधार हेतु सुझाव दे सकता है। किन्तु यह देखा गया है कि वैकल्पिक पुस्तको में से किसी एक पुस्तक के चयन की कोई सुनिश्चित एव निष्पक्ष पद्धति नही अपनाई जाती। फलत दोषपूर्ण पाठ्य पुस्तकों का चयन कर लिया जाता है। मुनेश्वर प्रसाद ने इसके दो कारण बतलाये हैं—एक तो यह कि शिक्षक किसी पुस्तक को भली-भांति जाचने की कला नही जानते। दूसरा यह कि बहुधा प्रकाशकों के प्रभाव में आकर अपेक्षाकृत निम्न स्तर की पुस्तक चुन लेते हैं। दूसरी स्थिति का निराकरण तो तभी होगा जबकि प्रकाशको तथा शिक्षकों—दोनों मे ही व्यावसायिक नैतिकता, सही रूप मे विकसित हो।[7] पहली स्थिति का निराकरण शिक्षको द्वारा पाठ्य—पुस्तकों के चयन या मूल्याकन हेतु एक वस्तु-निष्ठ एव निष्पक्ष मापदण्ड निर्मित कर उपलब्ध करने से हो सकता है। राष्ट्रीय अनुसधान एव प्रशिक्षण परिषद् ने इस प्रकार का मापदण्ड तैयार किया है जिसे सक्षिप्त रूप में नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक के संदर्भ मे यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।[8]

पक्ष तथा उप पक्ष	मापदण्ड
1. पाठ्य पुस्तक की योजना (Planing)	
1. शिक्षण—उद्देश्य (Instruction of objectives)	विद्यार्थियो की मानसिक

परिपक्वता के स्तर के अनुकूल हो, राष्ट्रीय लक्ष्यो के अनुरूप हो तथा व्यापक हो जिनमे सभी वाछित व्यवहारगत परिवर्तन निहित हों।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक में लोकतन्त्र समाजवाद, धर्म निरपेक्षता आधुनि-

7. मुनेश्वर प्रसाद : समाज अध्ययन का शिक्षण पृ. 182
8. उपरोक्त पृ. 36–45

कीकरण, उत्पादकता तथा सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यांकन व सभी राष्ट्रीय लक्ष्य परिलक्षित हों तथा कुशल नागरिक की तैयारी हेतु वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के रूप में उद्देश्य स्पष्ट हो।

2. विषय के प्रति उपागम—प्राथमिक स्तर के लिये नागरिकशास्त्र के प्रति सामाजिक अध्ययन विषय के अंग के रूप में समन्वित उपागम का दृष्टिकोण अपनाया गया हो। 10+2 योजना के अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन पर्यावरण अध्ययन के रूप में होगा।

उच्च प्राथमिक स्तर पर नागरिकशास्त्र अन्य विषयों से समन्वित होता हुआ भी अपना पृथक अस्तित्व रखेगा किंतु माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर वह पूर्ण पृथक विषय के रूप में रहेगा।

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तरों पर नागरिकशास्त्र के तथ्य सरल, स्थानीय एवं प्रादेशिक नागरिक जीवन के अध्ययन के रूप में तथा उच्च कक्षाओं में समाजशास्त्रीय उपागम के आधार पर विवेचनात्मक रूप में होंगे।

3. संगठनात्मक प्रतिमान—नागरिकशास्त्र की विषय वस्तु का संगठन संकेन्द्रीय विधि के अनुसार क्रमशः सरल से जटिलता एवं गहनता लिये हुये होगा।

4. पुस्तक का परिमाण—संबन्धित कक्षा द्वारा पुस्तक का अध्ययन सत्र पर्यन्त करना सम्भव हो।

2. पाठ्य वस्तु का चयन—1. पाठ्य वस्तु की शुद्धता—पाठ्य वस्तु के तथ्य, घटनाएं, संकल्पनाएं, नियम, सिद्धान्त, उदाहरण, तिथियाँ, व्यक्ति, संस्थाओं का संगठन एवं कार्य प्रणाली आदि का शुद्ध उल्लेख हो।

2. पाठ्य वस्तु की उपयुक्तता—मुख्य विचार एवं संकल्पनाओं को पर्याप्त उदाहरणों एवं साक्ष्यों से स्पष्ट किया गया हो तथा कुशाग्र बुद्धि विद्यार्थियों के लिये भी उन्नत पाठ्य वस्तु का प्रावधान किया गया हो।

3. अद्यतन पाठ्य वस्तु—अनुसंधान, धारणाओं, विवादास्पद समस्याओं, विचारधाराओं की दृष्टि से तथ्य अनुसंधान हो।

4. पाठ्य वस्तु की समाविष्टता—पाठ्य वस्तु पाठ्यक्रम के सभी प्रकरणों को समाविष्ट करती हों विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता के अनुकूल हो तथा असंबद्ध अंश न हो।

5. विद्यालय के विषयगत समग्र पाठ्यक्रम से समायोजन—पाठ्य वस्तु का पूर्वगामी एवं पुरोगामी कक्षाओं के नागरिकशास्त्र पाठ्यक्रमों से प्रस्तुत पाठ्य वस्तु का उचित समायोजन हो।

6. सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य का ग्रहण—प्राथमिक स्तर पर विवादास्पद प्रश्न एवं समस्याओं को सम्मिलित न किया जाय, उच्च प्राथमिक स्तर पर उनका केवल उल्लेख मात्र हो किंतु माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक कक्षाओं में उनका उचित ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में निष्पक्ष एवं तर्कसम्मत विवेचन राष्ट्रीय एकता के दृष्टिकोण से किया जाय।

7. वांछित प्रभिवृत्तियों का विकास—लोकतंत्रीय व्यवस्था के अनुकूल समाजवादी धर्मनिरपेक्ष तथा समाजोपयोगी प्रभिवृत्तियों के विकास मे पाठ्य वस्तु सहायक हो ।

3. पाठ्य वस्तु का संगठन एवं प्रस्तुतीकरण (i) तर्कसम्मत संगठन—पाठ्य वस्तु का संगठन उपयुक्त शीर्षक एवं उपशीर्षकों के अन्तर्गत तर्कसम्मत क्रम में विभिन्न अध्यायों एवं अनुच्छेदों में विभक्त किया जाना चाहिए। प्रत्येक अध्याय की प्रस्तावना, मुख्य पाठ्य व अन्त में निष्कर्ष होने चाहिए।

(ii) प्रस्तुतीकरण की विधा एवं स्वरूप—विद्यार्थियों के आयु वर्ग के अनुकूल पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण की विधा जैसे(कहानी, वार्तालाप, यात्रा वृतात वर्णन विचार विमर्श आदि) होनी चाहिए तथा प्रस्तुतीकरण का स्वरूप कक्षा के अनुकूल इकाइयों अथवा अध्यायों के रूप में होना चाहिए।

3. अधिगम के सिद्धान्तों से अनुरूपता—पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण में विद्यार्थियों की उत्प्रेरणा, रुचि, पूर्वज्ञान, जीवन अनुभवों के उदाहरणों तथा सरल से जटिल की ओर के अधिगम सिद्धान्तों का ध्यान रखा जाना चाहिए ।

4. भाषा की उपयुक्तता एव शुद्धता—कक्षा के अनुकूल शब्दावली वाक्य विन्यास व शैली होनी चाहिए तथा व्याकरण की दृष्टि से भी भाषा शुद्ध होनी चाहिए।

5. शिक्षण हेतु मार्ग दर्शन—पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण से शिक्षक को शिक्षण की उपयुक्त विधि का सकेत मिलना चाहिए।

4. शिक्षण उपकरण —पाठ्य पुस्तक मे दिये गये उपकरणों (मानचित्र सारिणी, तालिका, ग्राफ चित्र आदि) के निम्न पक्षों पर ध्यान दिया जाये।

(1) पाठ्य वस्तु से समंबद्ध हों ,

(2) छात्रों के आयु वर्ग के अनुकूल हों,

(3) शुद्ध व पर्याप्त हों,

(4) उनमें विविधता हो,

(5) वे स्वयं स्पष्ट हों, तथा

(6) पुस्तक में उनकी स्थिति यथास्थान हो ।

5. अभ्यास प्रश्नों की रचना—प्रत्येक अध्याय इकाई तथा पुस्तक के अन्त में अभ्यास प्रश्न हो जिनमे निम्नांकित पक्ष प्रकट हो—1. सभी प्रमुख तथ्यों को समाहित किये हो, 2. सभी निर्धारित उद्देश्यों के मूल्यांकन हेतु हो। 3. उनमे वांछित कार्य की पूर्ति हो, जैसे पुनरावलोकन आवृति तथा मूल्यांकन। 4. उनके प्रकार निबंधात्मक, लघुत्तरात्मक व वस्तु निष्ठ विधिवत निर्मित हो गृह कार्य मे आवश्यक क्रियाकलाप भी हों तथा 5. उनकी स्थिति प्रत्येक अध्याय इकाई तथा सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु के अन्त में हो ।

6. पुस्तक की भौतिक या बाह्य विशेषताएं—पाठ्य पुस्तक की भौतिक विशेषताएं निम्नांकित पक्षों में विभक्त कर परखी जाय–1. पुस्तक का बाह्य स्वरूप आकर्षक हो (मुख पृष्ठ का कागज उसकी डिजाइन व जिल्द) 2: व्यवहृतता की दृष्टि से वह टिकाऊ हो

(कागज, जिल्द, आकार आदि)। 3. पठनीयता की दृष्टि से टाइप आयु-वर्ग के अनुकूल हो। कालम, पंक्तियों का अन्तर हाशिया, पंक्तियों की लम्बाई व प्रति पृष्ठ संख्या उपयुक्त हो, 4 पुस्तक का मूल्य अभिभावकों की सामर्थ्य-अनुसार हो।

7. शिक्षकों के लिए मार्ग दर्शक बिन्दु— शिक्षण विधि उपकरण, अभ्यास, प्रश्न, गृह कार्य, संदर्भ ग्रंथ आदि का सकेत शिक्षक के मार्ग दर्शन हेतु दिया गया हो।

उपर्युक्त मूल्यांकन मापदण्ड नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तक में वांछित विशेषताओं के आधार पर निर्धारित किया गया है। अनेक पाठ्य पुस्तकों में किसी एक पुस्तक के चुनाव हेतु उपर्युक्त मापदण्ड के 7 पक्षों का एक निर्धारण प्राप्तांक माप बनाया जाय जिसमें प्रत्येक पक्ष के समक्ष प्रत्येक पाठ्य पुस्तक का मूल्यांकन अ ब स द क पाच निर्धारण अक्षरों से किया जाय जिनके क्रमश प्राप्तांक 4, 3, 2, 1 व 0 होंगे। सभी पक्षों के निर्धारण के अनुसार उनके प्राप्तांको का प्रयोग कर लिया जाय। जिस पुस्तक का सर्वाधिक योग हो वही श्रेष्ठ पुस्तक मानी जानी चाहिए। मूल्यांकन को और भी वस्तुनिष्ठ बनाने हेतु प्रत्येक पक्ष की उसके उप-पक्षो के आधार पर पृथक निर्धारण प्राप्तांक मापन बनाया जाय तथा सभी पक्षों को मापन के योगांकों का जोड पुस्तक का समग्र प्राप्तांक माना जाय इस प्रकार पाठ्य पुस्तकों के चयन एव उनके सुधार हेतु इस मूल्यांकन-मापदण्ड का प्रयोग किया जाय। शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों में इसका प्रयोग पाठ्य पुस्तकों पर अनुसंधान कार्य के लिए किया जा सकता है।

वर्तमान में प्रचलित नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तकों की समीक्षा—अनेक राज्यों के माध्यमिक शिक्षा मण्डलों द्वारा माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक कक्षाओं हेतु तथा राज्य पाठ्य पुस्तक मण्डलों द्वारा कक्षा एक से 8 तक की पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण कर उन्हें स्वय निर्मित कराकर विद्यालयों के लिये निर्धारित किया गया है जैसा कि राजस्थान राज्य में है। कुछ राज्यों मे उनका राष्ट्रीयकरण न कर विभिन्न कक्षाओं एवं विषयों हेतु वैकल्पिक पुस्तकें अभिस्तावित की हैं जिनमें से शिक्षक कोई एक चुनकर विद्यार्थियों के लिये निर्धारित करते हैं। प्रथम व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षकों को चुनाव का कोई अवसर नहीं मिलता किन्तु यदि निर्धारित पुस्तकों मे कमियां या असंगतियां हों तो उनका मूल्यांकन कर उनके सुधार हेतु सम्बधित अधिकारियों को सुझाव अवश्य भेजे जाने चाहिए।

राजस्थान राज्य पाठ्य पुस्तक मण्डल द्वारा कक्षा 6 के लिये निर्धारित सामाजिक ज्ञान जिसमें नागरिक ज्ञान विषय सम्मिलित है की पाठ्य पुस्तक कक्षा परिचय राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा कक्षा 9 व 10 के लिये निर्धारित नागरिकशास्त्र परिचय भाग। पुस्तक की संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत की गई है।

कक्षा 6 की सामाजिक ज्ञान की पुस्तक की समीक्षा—प्रस्तुत पुस्तक की समीक्षा पूर्व निर्धारित मापदण्ड के 7 बिन्दुओं के आधार पर इस प्रकार है (1) पुस्तक की योजना शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित उद्देश्यों एव पाठ्यक्रम के अनुसार बनाई गई है तथा सकेन्द्रिय प्रणाली के आधार पर पूर्ववर्ती एव आगामी कक्षाओं के नागरिकशास्त्र पाठ्यक्रमों

---

9. नागरिकशास्त्र परिचय भाग।

में इसका समायोजन किया गया है। इस दृष्टि से कुछ कमियां भी है। इस पुस्तक के अध्यायों में से अंतिम पाच अध्याय ही नागरिकशास्त्र मे सम्बन्धित हैं, शेष इतिहास के हैं। अन्तिम दो अध्याय छोटा परिवार, सुख का आधार तथा छोटा बडा परिवार निर्धारित पाठ्यक्रम से अतिरिक्त हैं तथा परिवार-नियोजन से सम्बन्धित हैं तथा पाठ्यक्रम में निर्धारित सामाजिक समस्याओ मे सती प्रथा तथा दहेज प्रथा का वर्णन पुस्तको में नही किया गया और न उपलब्ध सामाजिक सुविधाओं का ही कोई उल्लेख किया गया है।

(2) चयन की दृष्टि से पाठ्य वस्तु के कुछ तथ्यो को अधुनातन बनाये जाने की अपेक्षा है, जैसे कि पंचायत के चुनावो की अवधि, राजस्थान में विकास खण्ड-आदि प्रकरण। पाठ्यक्रम के अनुसार वांछित प्रकरणों को सम्मिलित करने एव असम्बद्ध अंशों को हटाये जाने की आवश्यकता है।

(3) पाठ्य वस्तु के संगठन एवं प्रस्तुतीकरण की दृष्टि मे कुछ प्रकरणों का तर्क-सम्मत संगठन नही किया गया जैसे सामाजिक समस्याओं के बाद परिवार के दो प्रकरण देना जबकि पूर्व मे परिवार का एक प्रकरण पहले से ही है। भाषा शैली भी कहीं-कहीं कक्षागत आयु-वर्ग के अनुकूल नही है, जैसे लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण, कर, आन्दोलन, विकास, योजनाएं, सहवरण आदि सकल्पनाओं को स्पष्ट किया गया तथा फौजदारी व दीवानी न्याय, वयस्क मताधिकार, सामजस्य, दिवालिया, नाकारा, निर्वाचन मण्डल आदि कठिन शब्दों का अर्थ स्पष्ट न होने से तथ्य दुरूह बन गये हैं।

(4) शिक्षण उपकरणो की दृष्टि से केवल कुछ चित्र दिये गये हैं जो आकर्षक एवं स्वयं स्पष्ट नही है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को स्पष्ट करने हेतु जिला परिषद्, पंचायत समिति व पंचायत क्षेत्र, राजस्थान या उनके किसी जिले का मानचित्र दिया जाना चाहिए।

(5) अध्यायों के अन्त में अभ्यास प्रश्न प्रायः ज्ञानात्मक उद्देश्यों का ही मूल्यांकन करते है। ज्ञानोपयोग, अभिवृत्ति, अभिरुचि एव कौशल सम्बन्धी प्रश्न भी दिये जाने चाहिए।

(6) पुस्तक का बाह्य स्वरूप आकर्षक नही है व कागज तथा जिल्द सामान्य है।

(7) शिक्षकों के मार्गदर्शन हेतु उपयुक्त बिन्दु नहीं दिये गये है।

कक्षा 9 व 10 की नागरिकशास्त्र परिचय भाग एक पुस्तक की समीक्षा—मूल्यांकन के मापदण्ड के आधार पर समीक्षा बिन्दु इस प्रकार है—

(1) पुस्तक योजना मे निर्धारित उद्देश्य परिलक्षित नही होते एव पाठ्यक्रम[10] की दृष्टि से कुछ निर्धारित अंशो–जैसे आधुनिक समाज में नागरिकशास्त्र का

---

10. पाठ्यक्रम-विवरणिका (कक्षा 9 व 10 हेतु) राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड पृ. 74—78

महत्त्व सरकार व राज्य का भेद, कल्याणकारी राज्य, सरकार के अंगों का सापेक्षिक सम्बन्ध व शक्तियों का पृथक्करण आदि—को सम्मिलित नहीं किया गया न उनका विवेचन ठीक से किया गया है।

(2) पाठ्य-वस्तु के चयन की दृष्टि से पुस्तक में तथ्य, घटनाओं व संकल्पनाओं को सामयिक राजनैतिक विवादास्पद समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट नहीं किया गया। पाठ्य वस्तु को अधुनातन बनाने के लिये यथास्थान सामयिक विवादग्रस्त प्रश्नों एवं समस्याओं का उल्लेख किया जाना चाहिए जैसे संसदात्मक व अध्यक्षीय शासन प्रणाली, व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका तथा कार्यपालिका व न्यायपालिका का परस्पर संघर्ष, निर्वाचन प्रणाली में अनियमितताएं आदि।

(3) संगठन एवं प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से पाठ्यवस्तु का संगठन तर्क सम्मत नहीं है न अधिगम सिद्धान्तों का ध्यान प्रस्तुतीकरण में रखा गया, जैसे विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान, प्रकरण के लिये उत्प्रेरण जीवन-अनुभवों के उदाहरण, पूर्वगामी कक्षाओं की पाठ्यवस्तु से उचित समायोजन आदि।

(4) शिक्षण सहायक उपकरणों के केवल सामान्य तालिकाएं या चार्ट दिये हैं जो उपयुक्त नहीं हैं जैसे पृष्ठ 58, 152 तथा 161 पर दिये गये चित्र या चार्ट क्रमश प्रजातंत्र व अधिनायकवादी राज्य (बैनगाडियों के चित्र के रूप मे), नगरपालिका के कार्य तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की विशिष्ट समितियां, छोटी कक्षाओं के उपयुक्त हैं, माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों के लिये वे विचार प्रेरक नहीं कहे जा सकते। इनके अतिरिक्त यथावश्यकता मानचित्र व ग्राफ दिये जाने चाहिये थे।

(5) अभ्यास-प्रश्न प्रत्येक अध्याय के अंत में दिये गये हैं किन्तु वे केवल ज्ञानात्मक उद्देश्यों की उपलब्धि की जाच करते हैं—अन्य उद्देश्यों की नहीं। छात्रों हेतु क्रियाएं के अन्तर्गत केवल कुछ दिवस मनाने या विचार-गोष्ठी आयोजित करने के सुझाव दिये गये हैं। कक्षास्तर के अनुरूप शैक्षिक यात्रा, भ्रमण, अवलोकन, सर्वेक्षण, नाट्यीकरण, विचार विमर्श की नवीनतम प्रविधियां आदि के क्रियाकलाप सुझाये जाने चाहिये थे जो कक्षा स्तर के अनुकूल रहते हैं।

(6) पुस्तक का वाह्य स्वरूप कागज, जिल्द व छपाई आकर्षक, स्पष्ट व टिकाऊ नहीं है।

(7) शिक्षकों के मार्गदर्शन हेतु उपयोगी बिन्दुओं का भी पाठ्य पुस्तक में कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

नागरिकशास्त्र की पाठ्य पुस्तकों के स्तरोन्नयन हेतु सुझाव

नागरिकशास्त्र-शिक्षण की पाठ्यपुस्तकों की विशेषताएं उनकी रचना हेतु ध्यातव्य बिन्दु, उनके मूल्यांकन के लिये मापदण्ड तथा प्रचलित कुछ पाठ्य पुस्तकों की समीक्षा द्वारा पाठ्य पुस्तकों को उपयोगी बनाने के सुझाव पुस्तक की रचना की दृष्टि से तो लेखकों एवं समीक्षकों के लिये अपरिहार्य एवं मान्य कहे जा सकते हैं, किन्तु पुस्तक की रचना पर उसके प्रकाशक व मुद्रक के दृष्टिकोण एवं मनोवृत्ति का प्रभाव अधिक पड़ता है।

नागरिकशास्त्र जैसे विषय की पाठ्यपुस्तक, जिससे विद्यार्थियों को कुशल नागरिक बनाना चाहते हैं यदि अनुभवहीन, अकुशल एवं व्यवसायी मनोवृत्ति के लेखकों द्वारा लिखी जाय, स्वार्थी प्रकाशकों द्वारा अपने आर्थिक लाभ की दृष्टि से प्रकाशित की जाय तथा शिक्षा-विभाग एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा किन्हीं अनुचित साधनों के कारण अभिस्तावित की जाय, तो नागरिकशास्त्र विषय एवं उसके विद्यार्थियों के प्रति अन्याय ही होगा। इस स्थिति के निराकरण हेतु कुछ लोग यह सुझाव देते हैं कि पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीयकरण किया जाय।

उमेशचन्द्र कुदेसिया का यह मत है कि 'नागरिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तकों की रचना राष्ट्रीय स्तर पर ही हो। पाठ्यपुस्तकों के लेखन का कार्य सरकार के नियंत्रण में हो।'[11] माध्यमिक शिक्षा आयोग ने पाठ्य पुस्तकों के प्रचलित उत्पादन स्तर पर असंतोष व्यक्त करते हुए इसमें तुरन्त सुधार किया जाना आवश्यक ठहराया है।[12] इस स्थिति का निराकरण पाठ्यपुस्तकों से होगा, ऐसी धारणा भी निर्मूल है।

मुनेश्वर प्रसाद का मत है कि 'राष्ट्रीयकरण के प्रभाव प्रतिकूल पड़े हैं। पाठ्य-पुस्तकों की गुणात्मक उन्नति के विचार से यह प्रथा सामान्यतः अत्यन्त हानिकार सिद्ध हुई है। उत्पादन के क्षेत्र में एकाधिकार के जो दोष हैं, पाठ्यपुस्तकों के सरकारी उत्पादन में वे सभी परिलक्षित हो गए हैं। अतः उच्च स्तर की पाठ्य पुस्तकों के निर्माण हेतु हर राज्य में एक उच्च शक्ति सम्पन्न पाठ्य पुस्तक समिति स्थापित की जाय जो पुस्तक के कागज, चित्र, छपाई, आकार आदि के मापदण्ड निर्धारित कर पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई व प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में से कुछ उत्कृष्ट पुस्तकें प्रत्येक कक्षा व विषय के लिये निर्धारित करें तथा विद्यालयों के शिक्षक किसी एक पुस्तक को चुन कर अभिस्तावित करें। इस प्रकार प्रतियोगिता के आधार पर अच्छे स्तर की अनेक वैकल्पिक नागरिकशास्त्र की पुस्तकें उपलब्ध हो सकेंगी। शिक्षकों का भी यह दायित्व है कि वे निष्पक्ष होकर पुस्तकों का चयन करें व उनके सुधार हेतु निरंतर सुझाव देते रहें।

नागरिकशास्त्र शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह पुस्तकों के चयन हेतु वस्तुनिष्ठ मापदण्ड का प्रयोग करे तथा किसी भी अनुचित साधनों से प्रभावित न हो। शिक्षक को स्वयं भी शिक्षण-सामग्री का निर्माण करना चाहिए। उसे सम्बन्धित कक्षा के पाठ्यक्रम, समस्त उपलब्ध सदर्भ ग्रंथों एवं उपलब्ध संसाधनों के आधार पर इस शिक्षण सामग्री का इकाईवार निर्माण करते रहना चाहिए और उसमें निरंतर संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्धन करते रहना चाहिए। इससे पाठ्यवस्तु सम्बन्धी ज्ञान एवं शिक्षण विधियां व प्रविधियों में सतत विकास होता रहेगा तथा ये सदैव अधुनातन बने रहेंगे।

COC

---

11. उमेशचन्द्र कुदेसिया : नागरिकशास्त्र शिक्षण-कला, पृ. 41–42
12. माध्यमिक शिक्षा आयोग, पृ. 96

13 | नागरिकशास्त्र : मूल्यांकन

शिक्षण-प्रक्रिया मे मूल्यांकन का एक विशिष्ट स्थान है। परम्परागत परीक्षा के रूप में प्रारम्भ में ही इसका शिक्षण-प्रक्रिया पर एकाधिकार बना रहा है। विद्यार्थियो की सफलता, शिक्षकों के शिक्षण स्तर तथा अभिभावकों एव जनसाधारण को विद्यार्थियों की प्रगति का एक मात्र मापदण्ड परीक्षा ही रही है।

मूल्यांकन अब शिक्षण-प्रक्रिया का अभिन्न अंग बनकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गया है। इसके महत्त्व को माध्यमिक शिक्षा आयोग ने प्रकट करते हुए कहा है कि 'शाला-कार्य का इस प्रकार का मापन विद्यार्थी, अध्यापक, अभिभावक एवं जनसाधारण सभी सम्बद्ध व्यक्तियों के हित मे आवश्यक है। इस उद्देश्य के लिये परीक्षाएं ही सामान्यतः अपनाये जाने वाला साधन है।'[1] परम्परागत परीक्षाओं पर अतिशय निर्भरता तथा केवल ज्ञानात्मक उद्देश्य की उपलब्धि की जांच करने की दृष्टि से परीक्षा की एकाग्रता के कारण शिक्षण-प्रक्रिया मे परीक्षा का प्रमुत्व हो गया है तथा अन्य सभी शैक्षणिक घटक गौण हो गये। माध्यमिक शिक्षा आयोग को भी यह कहना पड़ा है कि 'हम आश्वस्त हो गये हैं कि हमारी शिक्षा-पद्धति परीक्षा से अत्यधिक आक्रांत है।'[2] परीक्षा की इस परम्परागत भ्रामक एव हानिकर धारणा के स्थान पर अब मूल्यांकन की नवीन संकल्पना विकसित हो रही है।

मूल्यांकन की परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पनाएं एवं उनका अन्तर

मूल्यांकन की परम्परागत संकल्पना—शैक्षिणिक स्तर के मापन हेतु परम्परागत प्रणाली से अर्धवार्षिक तथा परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। कहीं-कहीं सत्र मे मासिक परखें भी होती हैं। ये परीक्षाएं तथा परखें निबन्धात्मक प्रकार की होती हैं तथा इसके द्वारा विद्यार्थियों के तथ्यात्मक ज्ञान की जांच की जाती है। इस परम्परागत प्रणाली के अनेक दोष हैं—

(1) परीक्षा शिक्षा का साधन न बन कर साध्य बन गई है,

---

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट
2. उपर्युक्त,

(2) विद्यार्थी सत्र भर अध्ययन न कर केवल परीक्षा के पूर्व तथ्यों को दिन-रात रटने में लग जाते है, जिसका उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है,

(3) इससे विद्यार्थियो की स्मरण-शक्ति की ही केवल जांच होती है, अन्य व्यवहार-गत की नही,

(4) परीक्षा मे निबन्धात्मक प्रश्न होते हैं अतः निर्धारित पूरे पाठ्यक्रमानुसार प्रश्न नही पूछे जाते,

(5) परीक्षा में प्रश्नों के अधिक विकल्प होते है—आठ या दस प्रश्नो मे से पाच प्रश्न कर विद्यार्थी परीक्षा मे उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण होते है। परीक्षा उनके ज्ञान का सम्पूर्ण आकलन नही कर पाती केवल कुछ पूछे गये प्रश्नों द्वारा जाच किये जाने से परीक्षा में आकस्मिकता का अवांछनीय तत्व आ जाता है,

(6) परम्परागत परीक्षा-प्रणाली का शिक्षणप्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। शिक्षक परीक्षा के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण प्रकरण ही पढाते हैं,

(7) मूल्यांकन में आत्मपरकता का अंश काफी मात्रा मे आ जाता है। परीक्षा में विद्यार्थियो के उत्तरों के मूल्यांकन मे परीक्षक की मनोदशा का प्रभाव रहता है। एक ही परीक्षक द्वारा भिन्न स्थितियों मे एक ही उत्तर पर भिन्न-भिन्न अंक प्रदान किये जा सकते हैं तथा एक ही उत्तर पर भिन्न परीक्षकों द्वारा प्रदत्त अंको में भी पर्याप्त अन्तर रहता है। यद्यपि निबंधात्मक परम्परागत परीक्षा-प्रणाली के भी कुछ लाभ है, जैसे निबंधात्मक प्रश्नों द्वारा विद्यार्थियों की भाषा शैली एवं अभिव्यक्ति का मूल्यांकन सभव होना तथा इस प्रणाली के प्रश्नों का निर्माण एवं उनका मूल्यांकन तथा इस प्रणाली के प्रश्नों का निर्माण एवं उनका मूल्यांकन सरल होना हैं, किन्तु समग्र रूप मे यह प्रणाली विद्यार्थी, शिक्षकों अभिभावकों सभी की दृष्टि से अनुपयुक्त है।

अतः शिक्षाविदों ने इस परीक्षा-प्रणाली में सुधार के प्रयास किये है। अब उद्देश्य-निष्ठ-शिक्षण के आधार पर परम्परागत परीक्षा-प्रणाली के स्थान पर नवीन मूल्यांकन पद्धति अपनाने पर बल दिया जा रहा है।

(ख) मूल्यांकन की आधुनिक संकल्पना—चौथे अध्याय में उद्देश्यो के विवेचन के समय डा. बी. एस. ब्लूम द्वारा शिक्षणप्रक्रिया मे शिक्षण-उद्देश्य, शिक्षण-अधिगम स्थितियां तथा मूल्यांकन के अंतः सम्बन्धों को प्रदर्शित करने वाले त्रिभुज की उद्भावना से ज्ञात होती है। शिक्षणप्रक्रिया के इन तीन मुख्य घटको का परस्पर त्रिकोणीय अन्तर्निर्भरता है। वे एक दूसरे को प्रभावित भी करते है तथा स्वयं भी दूसरे घटकों से प्रभावित होते है। मूल्यांकन निर्धारित उद्देश्यो एवं शिक्षण-अधिगम स्थितियो मे प्रभावित हो, उनके अनुकूल ही आयोजित किया जायेगा तथा मूल्यांकन परिणामो से उद्देश्यों एवं शिक्षण-विधि की अनुपयुक्तता तथा उनमे परिवर्तन की आवश्यकता भी परिलक्षित होगी। इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षण प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर-प्रत्येक पाठ प्रत्येक इकाई एवं संभावित शिक्षण के बाद सतत चलने वाली प्रक्रिया है।

कोठारी शिक्षा आयोग का मत है कि 'यह सर्वमान्य है कि मूल्यांकन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो शिक्षा का एक अभिन्न अंग है। इससे छात्र की अध्ययन की आदतों पर तथा अध्यापक की शिक्षण पद्धति पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। मूल्यांकन की प्रविधियां वांछित दिशाओं में छात्र के विकास में प्रमाण संग्रहीत करने का साधन है। अतएव ये प्रविधियां प्रामाणिक, विश्वसनीय, वस्तुपरक एवं व्यावहारिक हों।[3] इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षणप्रक्रिया का अभिन्न अंग एवं सतत प्रक्रिया होने के साथ-साथ इसका उद्देश्य विद्यार्थियों के ज्ञान के अतिरिक्त अन्य सभी वांछित व्यावहारिक परिवर्तनों के मापन हेतु साक्ष्य एकत्र करना है तथा शिक्षण की शिक्षणपद्धति में सुधार करना भी है। मूल्यांकन की प्रविधियां का प्रामाणिक, विश्वसनीय, वस्तुपरक तथा व्यावहारिक होना आवश्यक है।

मूल्यांकन की आधुनिक संकल्पना को कुछ शिक्षाविदों ने इस प्रकार अभिमत किया है—

ई. वी. वेस्ले—'मूल्यांकन एक व्यापक संकल्पना है जो वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों की गुणवत्ता, मूल्य एवं प्रभावोत्पादकता के आकलन के समस्त साधनों का बोध कराती है। यह वस्तुपरक साक्ष्य एवं आत्मपरक सर्वेक्षण का समेकित रूप है।'

लीज जेम्स एम—'मूल्यांकन विद्यार्थी की शाला, कक्षा तथा स्वयं उसके द्वारा निर्धारित शैक्षणिक उद्देश्यों की उपलब्धि की प्रगति की जांच है। मूल्यांकन का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थी के ज्ञानार्जन में मार्गदर्शन करना तथा उसे अग्रसर करना है। इस प्रकार मूल्यांकन ऋणात्मक प्रक्रिया के स्थान पर एक धनात्मक प्रक्रिया है।'

जगदीश नारायण पुरोहित—'मूल्यांकन की विद्यार्थियों के व्यवहारगत-परिवर्तन विषयक तथ्यों या संकलन करने तथा परिवर्तन के स्तर, प्रकृति तथा दिशा के संबंध में निर्णय करने की प्रक्रिया है।'[4]

एम. पी. मापेट—'मूल्यांकन एक सतत या अनवरत प्रक्रिया है तथा इसका सम्बन्ध विद्यार्थियों की अकादमिक उपलब्धियों से भी अधिक अन्य पक्षों से है। यह व्यक्ति के वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के विकास को महत्त्व देता है।'

उपर्युक्त मूल्यांकन की व्याख्या से मूल्यांकन की परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पनाओं की विशेषताएं परिलक्षित होती हैं।

मूल्यांकन की परम्परागत एवं आधुनिक संकल्पनाओं का अन्तर[5]

यह अन्तर अग्रलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट हो सकता है—

---

3. कोठारी शिक्षा आयोग, पृ. 272
4. पुरोहित जगदीश नारायण . शिक्षण के लिये आयोजन (राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर). पृ 266
5 उपर्युक्त, पृ 261-265

(1) समय की दृष्टि से परम्परागत परीक्षाएं एवं परखें--निश्चित अवधि के पश्चात् ही आयोजित होती हैं किन्तु मूल्याकन एक अनवरत प्रक्रिया है क्योंकि वह शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग है।

(2) उद्देश्यों की दृष्टि से --परपरागत परीक्षाएं केवल ज्ञानात्मक उद्देश्यो पर ही बल देती है, जबकि मूल्याकन का क्षेत्र व्यापक है जिसके अन्तर्गत ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिवृत्ति, अभिरुचि एव कौशल सम्बन्धी सभी निर्धारित उद्देश्यो के अनुकूल वांछित व्यवहारगत परिवर्तनो का मूल्य निर्धारित किया जाता है।

(3) विधियों की दृष्टि से—पुरातन परीक्षा-प्रणाली में प्रायः तीन विधिया प्रयुक्त होती हैं—

(1) लिखित परीक्षा,

(2) मौखिक परीक्षा,

(3) प्रायोगिक परीक्षा।

मूल्याकन मे इन अनेक विधियो एव प्रविधियो का प्रयोग किया जाता है ।

(4) उपयोग की दृष्टि से—परीक्षाओ का प्रयोजन मात्र विद्यार्थियो की कक्षोन्नति तथा वर्गीकरण होता है, किन्तु मूल्याकन द्वारा सचित साक्ष्यों की व्याख्या कर उसका उपयोग विद्यार्थियों की कमजोरी का निदान कर उपचारात्मक शिक्षण अपना कर उन्हे दूर करने तथा उनका मार्गदर्शन करने के लिये भी किया जाता है। मूल्याकन द्वारा शिक्षक को अपनी शिक्षण-विधि को प्रभावी बनाने तथा उद्देश्यों मे परिवर्तन करने मे भी सहायता मिलती है।

मूल्यांकन की विशेषताएं

मूल्याकन की संकल्पना की प्रमुख विशेषताएं है—

(1) शिक्षण-प्रक्रिया का अभिन्न अंग—शिक्षण-उद्देश्य एवं शिक्षण-अधिगम स्थितियो से अंतः सम्बन्धित हो शिक्षण-प्रक्रिया को प्रभावी बनाता है।

(2) अनवरत प्रक्रिया—मूल्यांकन का क्षेत्र व्यापक होने व शिक्षण-प्रक्रिया का अंग होने के कारण यह शिक्षण के साथ अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक पाठ्-प्रकरण, इकाई तथा सावधिक शिक्षण के उपरान्त मूल्याकन करना आवश्यक हैं।

(3) व्यापकता—केवल ज्ञानात्मक ही नही बल्कि अवबोध, ज्ञानोपयोग, अभिरुचि, अभिवृत्ति एवं कौशल सम्बन्धी समस्त उद्देश्यों की वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों के रूप में होने वाली उपलब्धियो की परख करने के कारण मूल्याकन का क्षेत्र व्यापक है।

(4) उद्देश्य केन्द्रित—मूल्याकन निर्धारित उद्देश्यो की उपलब्धि की सीमा ज्ञात करने के लिये किया जाता है, अतः ये उद्देश्य केन्द्रित है।

(5) विद्यार्थी केन्द्रित—उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहारगत विशिष्ट परिवर्तनो के रूप में निर्धारित किये जाते है, जिनकी उपलब्धि की जांच मूल्यांकन से की जाती है। अतः मूल्याकन अन्ततः विद्यार्थी केन्द्रित है।

(6) मापन एवं मूल्य निर्धारण प्रक्रिया—मापन द्वारा विद्यार्थियो की ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक उपलब्धि की मात्रा अथवा स्तर, संख्या अथवा अंकों में निर्धारित किया

जाता है तथा भावात्मक (जैसे अभिरुचि एवं अभिवृत्ति) पक्ष का गुणात्मक मूल्य-निर्धारण किया जाता है। मूल्यांकन, मापन तथा मूल्य निर्धारण दोनों करता है जबकि परम्परागत परीक्षा केवल मापन ही करती है।

(7) विश्लेषणात्मक संश्लेषणात्मक—मूल्यांकन में पहले निर्धारित उद्देश्यों का विश्लेषण कर उन्हें विशिष्टियों में विभाजित किया जाता है। विशिष्टियों के अनुकूल परिस्थितियों का जांच-उपकरणों से चुनाव कर उनकी जाँच की जाती है। जांच के बाद एकत्रित आदत्तों की व्याख्या तथा सारांशीकरण (संश्लेषण) किया जाता है। अतः मूल्यांकन विश्लेषणात्मक संश्लेषणात्मक प्रक्रिया है।

(8) निदानात्मक—मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थियों के दुर्बल पक्षों का ज्ञान अर्थात् निदान होता है जिसके आधार पर उन्हें दूर करने के लिये उपचारात्मक शिक्षण आयोजित किया जाता है।

नवीन संकल्पना के अनुसार मूल्यांकन शिक्षण-प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग तथा सतत प्रक्रिया होने के कारण नागरिकशास्त्र शिक्षण में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नागरिकशास्त्र विषय की प्रकृति एवं इसके शिक्षण-उद्देश्यों के भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्ष प्रमुख होने के कारण इस विषय के लिये मूल्यांकन का महत्व और भी अधिक हो जाता है। नागरिकशास्त्र केवल नागरिक के कर्त्तव्य एवं अधिकार तथा उसके सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओं से सम्बन्धों का ज्ञान ही प्रदान नहीं करता बल्कि वह लोकतांत्रिक व्यवस्था में कुशलता से जीवनयापन करने वाले ऐसे नागरिकों को तैयार करना चाहता है जिनकी अभिरुचियां, अभिवृत्तियां, कुशलताएं तथा व्यक्तित्व के गुण राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में विकसित हो सकें और वे एक अच्छे समाज, राष्ट्र एवं विश्व के निर्माण में अपना योगदान दे सकें।

इस प्रकार के नागरिक केवल नागरिकशास्त्र के तथ्यों, सिद्धांतों एवं नियमों के ज्ञान के आधार पर ही निर्मित नहीं हो सकते बल्कि इनके व्यवहार में उपयोग, एवं तदनुकूल व्यवहार के भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों के विकास द्वारा ही संभव हो सकते हैं। इसके लिए नागरिकशास्त्र के निर्धारित उद्देश्यों की उपलब्धि हेतु शिक्षण अधिगम स्थितियों के निर्माण के लिये प्रयुक्त शिक्षण-विधि की सफलता का मूल्यांकन द्वारा ही मापन एवं मूल्य-निर्धारण किया जा सकता है। मूल्यांकन की परम्परागत परीक्षा पद्धति से नागरिकशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यों की उपलब्धियों का आकलन नहीं किया जा सकता, मूल्यांकन की आधुनिक संकल्पना द्वारा ही, जिसमें पूर्वोल्लिखित विशेषताएं, नागरिकशास्त्र की शिक्षण-प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा सकता है।

मूल्यांकन के उपकरण एवं प्रविधियां

(क) भावात्मक पक्ष का मूल्यांकन

नागरिकशास्त्र-शिक्षण में विद्यार्थियों के भावात्मक पक्ष के वांछित व्यवहारगत परिवर्तनों सम्बन्धी उद्देश्यों का मूल्यांकन महत्वपूर्ण है। इसके लिये निम्नांकित प्रविधियां एवं उपकरण उपयुक्त रहते हैं।

(1) पड़ताल सूची—विद्यार्थियों की अभिरुचियां व अभिवृत्तियों का मापन अंकों मे नहीं किया जा सकता किन्तु उनका मूल्य निर्धारण किया जा सकता है । इसके लिये प्रयुक्त प्रविधियों में पड़ताल सूची एक सरल प्रविधि है, जिसके द्वारा नागरिकशास्त्र के लिये निर्धारित अभिरुच्यात्मक एवं अभिवृत्यात्मक व्यवहारगत परिवर्तनों के मूल्य निर्धारण करना सम्भव होता है । पड़ताल-सूची में कुछ चुने हुये वाक्य निर्मित किये जाते है जिनमें विद्यार्थियो के व्यवहार सम्बन्धी कथन होते है जिनके समक्ष निर्धारित स्थान पर शिक्षक विद्यार्थियों में उनकी उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति को दर्शाने के लिये क्रमशः ✓ या × का चिन्ह लगाता है । इस प्रकार की पडताल सूचियां साइक्लोस्टाइल टाइप प्रतियां कर किसी पाठ या इकाई या किसी निश्चित अवधि के शिक्षण के उपरान्त काम में ली जा सकती है । इनके आधार पर प्रत्येक विद्यार्थी के व्यवहार के विषय में कोई निश्चित राय बनाई जा सकती है । पड़ताल सूची का एक नमूना संयुक्त राष्ट्र संघ की इकाई पर निम्नांकित है

कक्षा 10 विषय—नागरिकशास्त्र

दिनांक—

शिक्षार्थी क्रमांक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
विशिष्टीकरण										
(1) कक्षा मे इस इकाई से सम्बद्ध पाठो में रुचि एवं उत्साह से भाग लेता है ।										
(2) निर्धारित गृह कार्य को सावधानी से करता है ।										
(3) पाठों में प्रयुक्त विचार-विमर्श विधि मे सक्रियता से भाग लेता है ।										
(4) सुरक्षा परिषद् के छद्माभिनय में अपनी भूमिका ठीक निभाई है ।										
(5) पाठ-प्रकरणो से सम्बन्धित सामग्री पत्र-पत्रिकाओ एव										

संदर्भ ग्रंथों से एकत्र करने में रुचि लेता है।

(6) विश्व-शांति एवं अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव की अभिवृत्ति अपने विचारों से प्रकट करता है।

(7) संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों में भारत के योगदान का महत्व स्पष्ट कर सकता है।

(8) सम्बन्धित चार्ट व मानचित्र को कुशलता से बना लेता है।

(9) विश्व की समस्याओं पर अपने विचार निष्पक्षता से प्रकट करता है।

(10) मानव कल्याण के कार्यों में रुचि लेता है आदि।

(2) स्तर-माप—स्तर माप, पड़ताल सूची का उन्नत स्वरूप है जिसमें किसी विशेषता या वांछित व्यवहारगत परिवर्तन की उपस्थिति या अनुपस्थिति के स्थान पर उसके गुणात्मक स्तर का 0, 1, 2, 3, 4, आदि अंकों से उल्लेख किया जाता है। प्रत्येक व्यवहार के प्रत्येक स्तर के लिये एक वाक्य निर्धारित कर लिया जाता है जो क्रमिक रूप से लिख लिये जाते हैं और प्रत्येक विद्यार्थी के व्यवहार का निरीक्षण कर शिक्षक या पर्यवेक्षक उन वाक्यों में किसी एक पर सही (✓) का चिन्ह लगा देता है। इसका एक नमूना निम्नांकित है।

व्यवहारगत परिवर्तन-विद्यालय सम्पत्ति

0	1	2	3	4
विद्यार्थी सम्पत्ति को नष्ट करता है तथा अन्य शिक्षार्थियों को इस कार्य में प्रोत्साहित करता है।	सम्पत्ति को नष्ट करने में सहयोग देता है।	स्वयं नष्ट नहीं करता परन्तु अन्य शिक्षार्थियों को ऐसा करने से नहीं रोकता है।	स्वयं भी नष्ट नहीं करता तथा अन्य शिक्षार्थियों को भी रोकता है।	कभी भी विद्यालय सम्पत्ति नष्ट नहीं करता और इसके रख-रखाव में योग देता है।

(3) घटना-वृत्त प्रपत्र—यह प्रविधि भी व्यवहार को अंकित करने का सरल ढंग है। घटना-वृत्त प्रपत्र में किसी विशेष घटना के घटित होते समय विद्यार्थी के व्यवहार का यथार्थ संक्षिप्त वर्णन एक या एक से अधिक शिक्षकों द्वारा लिखा जाता है तथा

इसके सम्बन्ध में अपना अभिमत भी अंकित किया जाता है । पूरे सत्र में विद्यार्थी के ऐसे घटना-वृत अनवरत रूप से पर्याप्त संख्या मे लिखे जाने चाहिए ताकि इनके आधार पर विद्यार्थी के व्यवहार के विषय में समग्र मूल्यांकन किया जा सके। नागरिकशास्त्र के संदर्भ में विद्यालय समुदाय में किये गये किसी क्रियाकलाप, यात्रा, भ्रमण, अवलोकन, विचार-विमर्श आदि के समय घटित किसी विशेष घटना का, जिसमें विद्यार्थी के समाजोपयोगी या समाज विरोधी व्यवहार की अभिव्यक्ति हो, यथातथ्य किन्तु संक्षिप्त विवरण व तत्संबन्धी अभिमत अंकित किया जाना चाहिए। इस प्रपत्र का नमूना निम्न हैं—

घटना-वृत प्रपत्र

विद्यार्थी का नाम····· ·· ·····कक्षा···········दिनांक·····················

घटना का स्थान··· ············

घटना का वर्णन—

↑ ↑ ↑

शिक्षक का अभिमत—

(4) संचित अभिलेख—मूल्यांकन एक अनवरत प्रक्रिया होने के कारण विद्यार्थी के सभी पक्षों के विकास का संकलन उसके विद्यालय में रहने की अवधि में आरम्भ से अंत तक किया जाना चाहिए। जिससे उसके विकास की दिशा और गति प्रकट हो सके। इस संकलन हेतु संचित अभिलेख प्रपत्र का प्रयोग किया जाता है। राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने प्रत्येक विद्यालय में सतत समग्र मूल्यांकन हेतु ऐसे प्रपत्रों की पूर्ति करना अनिवार्य कर दिया है। विस्तार में इस प्रपत्र का अवलोकन किसी भी विद्यालय में किया जा सकता है। यहां इसका संक्षिप्त नमूना प्रस्तुत है।

संचित अभिलेख

(क) परिचयात्मक सूचना—इसमें शिक्षार्थी का नाम, पिता का नाम, जन्म तिथि, स्कॉलर रजिस्टर संख्या तथा विद्यालय में प्रवेश एवं छोड़ने की तिथियां होती हैं।

(ख) पारिवारिक पृष्ठ भूमि—परिवार की मासिक आय, शैक्षणिक व व्यावसायिक पृष्ठ भूमि, परिवार जनों की शिक्षा व व्यवसाय की सूचना।

(ग) उपस्थिति—विद्यालय अवधि के सभी सत्रों व कक्षाओं की कार्य-दिवस संख्या, उपस्थिति, प्रतिशत व स्तर।

(घ) शारीरिक स्वास्थ्य—प्रत्येक कक्षा व सत्र की शारीरिक जांच-सम्बन्धी तथ्य।

(च) बुद्धि एवं अन्य मनोवैज्ञानिक परीक्षण—इन परीक्षणों के प्रकार, दिनांक, प्राप्तांक-मानक-प्राप्तांक एवं श्रेणी।

(छ) शैक्षिक उपलब्धि—प्रत्येक सत्र व कक्षा में विभिन्न शैक्षिक विषयों में उपलब्धियां।

(ज) वैयक्तिक गुण—प्रत्येक सत्र व कक्षा में कुछ वैयक्तिक गुणों–जैसे परिश्रम, साहस, पहल, आत्म-विश्वास, उत्तरदायित्व की भावना, सहयोग, अनुशासन आदि का मूल्यांकन है।

(झ) रुचियां व अभिवृत्तियां—प्रत्येक सत्र व कक्षा में साहित्यिक, कलात्मक, संगीत वैज्ञानिक व समाज सेवा की रुचियां तथा अध्ययन, अध्यापक, विद्यालय-कार्यक्रमों तथा विद्यालय सम्पत्ति के प्रति अभिवृत्तियों का आकलन।

(ट) सह-शैक्षणिक क्रियाकलाप—प्रत्येक कक्षा व सत्र में विभिन्न क्रियाकलापों का मूल्यांकन।

(ठ) विशेष विवरण—कोई विशेष उल्लेखनीय बात जिस सत्र व कक्षा में हो।

हस्ताक्षर-प्रधानात्मक

(5) अवलोकन या पर्यवेक्षण—अभिरुचियों, अभिवृत्तियों तथा चारित्रिक गुणों के मूल्यांकन हेतु अवलोकन उपयुक्त प्रविधि है, क्योंकि साक्षात्कार प्रविधि एवं लिखित परीक्षा से यह सम्भव नहीं होता। छोटी कक्षाओं के लिये भी यह प्रविधि प्रभावी है। अवलोकन के समय उन्हीं तथ्यों, घटनाओं व स्थितियों पर ध्यान केन्द्रित रहना चाहिए जो सम्बन्धित अभिरुचि व अभिवृत्ति के लिये अभिष्ट हों। अवलोकन के साथ ही संक्षेप में अभिलेखन करना चाहिए तथा शिक्षार्थियों को इस बात का भान होना चहिए कि शिक्षक उनका मूल्यांकन कर रहा है, ताकि उनका व्यवहार स्वाभाविक बना रहे। यदि एक से अधिक शिक्षक अवलोकन करें तो मूल्यांकन विश्वसनीय बन जाता है।

(6) साक्षात्कार—व्यक्तित्व के मूल्यांकन हेतु साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण विधि है। इसमें शिक्षक-शिक्षार्थी का सीधा सम्पर्क होता है जिससे यदि किसी प्रश्न को विद्यार्थी न समझ सके तो शिक्षक मौखिक पूरक प्रश्नों द्वारा वांछित उत्तर प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त वार्ता करते समय विद्यार्थी की भाव भंगिमाओं व स्वर से उसकी भावना एवं विचारों को समझने में सहायता मिलती है। इस प्रविधि में प्रश्नों के गठन में परिवर्तन करने व व्यक्तित्व से सम्बन्धित गोपनीय बातों को जानने की सुविधा रहती है। साक्षात्कार प्रविधि दो प्रकार की होती है—

(1) नियन्त्रित तथा

(2) अनियन्त्रित।

नियन्त्रित साक्षात्कार में उद्देश्यों के अनुकूल प्रश्नावली या पड़ताल सूची बना कर साक्षात्कार के समय उनका प्रयोग करना है। इस प्रविधि में ध्यान रखने योग्य बातें हैं—

(i) साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार किये जा रहे व्यक्ति का विश्वास प्राप्त करना चाहिए,

(ii) साक्षात्कर्ता का दृष्टिकोण वस्तुनिष्ठ रहे, तथा

(iii) इन प्रविधियों में हर विद्यार्थी के साक्षात्कार में समय अधिक लगता है, अतः

विद्यार्थियों की कम संख्या होने की स्थिति में यह उपयोगी रहती है। व्यक्तित्व के गहराई से अध्ययन करने हेतु यह प्रविधि उत्तम है।

(7) समाजमिति—यह प्रविधि विद्यार्थियों के परस्पर अंतः सम्बन्धों की स्थिति ज्ञात करने हेतु उपयुक्त है। इसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि कक्षा में पूरे समूह द्वारा कोई विद्यार्थी किस सीमा तक स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है तथा कौन से विद्यार्थी एकाकी हैं। यह प्रविधि कक्षा की सामाजिक ऋतु जानने व उनमें सुधार करने के उद्देश्य से प्रयुक्त की जाती है। कक्षा में विद्यार्थियों के स्वस्थ सम्बन्ध ही उन्हें समाज के अच्छे नागरिक बनाने में सहायक होते हैं। नमूने के तौर पर शिक्षक निम्नांकित प्रश्नों द्वारा प्रत्येक विद्यार्थी के अन्य विद्यार्थियों से सम्बन्ध ज्ञात कर उन्हें एक समाज आलेख द्वारा व्यक्त कर सकता है।

प्रश्न	पहला नाम	दूसरा नाम	तीसरा नाम
(1) अपनी कक्षा के कौन से तीन विद्यार्थियों के साथ आप कक्षा में साथ बैठना चाहेंगे ?			
(2) अपनी कक्षा के कौन से तीन विद्यार्थियों के साथ आप समाज सेवा के कार्य करना चाहेंगे ?			
(3) अपनी कक्षा के ऐसे तीन विद्यार्थियों के नाम बताइये जिनके साथ आप कम से कम रहना चाहेंगे।			

(ख) मौखिक परीक्षा

यह परम्परागत परीक्षा प्रणाली की मौखिक विधि है। छोटी कक्षा में जहां विद्यार्थियों की भाषागत योग्यता अविकसित होती है, यह विधि उपयुक्त रहती है। इस विधि का प्रयोग मौखिक प्रश्नोत्तरों को वस्तुनिष्ठ बना कर करना उपयुक्त रहता है। नागरिकशास्त्र में कक्षा 1 से 3 तीन तक के विद्यार्थियों में शिष्टाचार एवं अन्य सामान्य नागरिक ज्ञान की मौखिक जाच पड़ताल-सूची या स्तर-मान की सहायता से की जानी चाहिए।

(ग) प्रायोगिक परीक्षाएं

इनका प्रयोग बहुधा कौशल की जांच हेतु किया जाता है। नागरिकशास्त्र में मानचित्र, रेखाचित्र, ग्राफ आदि उपकरणों के निर्माण एवं उनके अध्ययन का कौशल, विचार-विमर्श के समय चिन्तन, तर्क तथा निर्णय करने के कौशल आदि की जांच सम्बन्धित प्रायोगिक कार्य दे कर की जा सकती है।

(घ) लिखित परीक्षा

इनमें विद्यार्थियों को लिखित रूप में प्रश्नों के उत्तर देने होते है। ये प्रश्न शिक्षक द्वारा बनाये जाते हैं जो निम्नांकित प्रकार के होते हैं—

(1) निबन्धात्मक प्रश्न —यद्यपि निबंधात्मक प्रश्न परम्परागत परीक्षा प्रणाली की विधि है, किन्तु इन्हें वस्तुपरक बना कर इनके दोषों का निराकरण किया जाना चाहिए तथा इनकी उत्तर-सीमा लगभग 100 शब्दों तक निर्धारित की जानी चाहिए। नवीन मूल्यांकन प्रणाली में उन्हें बहिष्कृत करना अनुचित है क्योंकि उनका प्रयोजन विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति व भाषा-शैली की जाच करना है, जो महत्त्वपूर्ण है। प्रश्न-पत्र मे कुछ निबधात्मक प्रश्न अवश्य रहने चाहिए किन्तु अधिकांश प्रश्न वस्तुनिष्ठ एवं लघुत्तरात्मक होने चाहिए ताकि सम्पूर्ण पाठ्यक्रम एव सभी निर्धारित उद्देश्यो की जाच हो सके तथा प्रश्न वस्तुनिष्ठ भी बन सकें।

निबधात्मक प्रश्नों के परम्परागत एव सशोधित वस्तुनिष्ठ रूप के कुछ नमूने निम्नांकित हैं—

परम्परागत निबंधात्मक प्रश्न	वस्तुनिष्ठ निबंधात्मक प्रश्न
(1) राज्य के दैवी उत्पत्ति सिद्धांत का वर्णन कीजिए।	(1) राज्य की उत्पत्ति के दैवी सिद्धांत का निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत विवेचन कीजिए— (क) दैवी सिद्धांत की मान्यताएं, (ख) इन मान्यताओं की आलोचनाएं, (ग) मान्यताओं का औचित्य
(2) संयुक्त राष्ट्र संघ की असफलता का विवरण दीजिए।	(2) संयुक्त राष्ट्र संघ की असफलता के क्या कारण हैं ? संघ को और अधिक प्रभावी व शक्तिशाली बनाने के लिए आप अपने सुझाव दीजिए।

उपर्युक्त उदाहरणों मे स्पष्ट होता है कि निबधात्मक प्रश्नों के आंतरिक विभाजन से उत्तर देने हेतु अभीष्ट पक्ष उजागर होते हैं, विद्यार्थियों द्वारा रटे हुए तथ्यों को यथावत् प्रस्तुत करने को प्रोत्साहन नहीं मिलता बल्कि इन्हें ज्ञात तथ्यों को समायोजित कर तर्क सहित उत्तर देने की प्रेरणा मिलती है तथा इनके उत्तरों को भी उत्तर-तालिका एवं अंक योजना के अनुसार वस्तुनिष्ठता से जांचा जा सकता है।

(2) लघुत्तरात्मक प्रश्न—लघुत्तरात्मक प्रश्न भी निबंधात्मक प्रश्नों के दोषों के निराकरण एवं निर्धारित अधिकाधिक पाठ्यक्रम एवं उद्देश्यों को समाप्त करने के लिए प्रयुक्त किये जाते है। इनके उत्तर संक्षिप्त (लगभग 5 पंक्तियों या 50 शब्दों तक) दिये जाते है। प्रत्येक प्रश्न किसी निश्चित उद्देश्य पर आधारित होना चाहिए। इनकी जाच भी निर्धारित उत्तर-तालिका एव अंक योजना के अनुसार होनी चाहिए। ये प्रश्न विद्यार्थियों

की अभिव्यक्ति की जाँच के साथ वस्तुनिष्ठता की दृष्टि से भी उपयुक्त रहते हैं। इन्हें प्रश्न-पत्र में एक पृथक खण्ड में दिया जाना चाहिए। ऐसे प्रश्नों के कुछ नमूने निम्नांकित हैं—

(1) लोकसभा का अध्यक्ष किस स्थिति में अपना मत दे सकता है ?

(2) नीति-निर्देशक तत्व और मौलिक अधिकारों के दो प्रमुख भेद लिखिये।

(3) राज्यपाल की वित्त सम्बन्धी दो शक्तियों का वर्णन करें।

(3) वस्तुनिष्ठ परखें—वस्तु निष्ठ परखें या प्रश्न निबंधात्मक व लघुत्तरात्मक प्रश्नों के दोषों को दूर करने तथा सम्पूर्ण पाठ्यक्रम एवं निर्धारित उद्देश्यों को समाहित करने हेतु प्रयुक्त किये जाते है। इनके द्वारा निबंधात्मक प्रश्नों मे अविश्वसनीयता तथा अवैधता के दोषों का निराकरण हो जाता है। इनके उत्तर देने में समय कम लगता है तथा तथा इनका अंकन भी सुगम है। अतः वस्तुनिष्ठ परखों का प्रचलन आजकल अधिक हो रहा है।

(क) वस्तुनिष्ठ परखों के रूप—वस्तुनिष्ठ परखों को मुख्यतः दो रूपों मे विभक्त किया जा सकता है—

(1) मानांकित परखें,

(2) शिक्षक-निर्मित परखें

शिक्षक निर्मित परखों का प्रयोजन निदान करना, उपलब्धि का मापन, कक्षा के विद्यार्थियों की परस्पर तुलना, शिक्षण विधि को प्रभावी बनाना आदि होता है। मानांकित परखों का प्रयोजन किसी विद्यालय के विद्यार्थियों की जिले, राज्य या देश के अन्य विद्यार्थियों से तुलना करने तथा किसी व्यवसाय या उच्च पाठ्यक्रम के लिये चुनाव करने के लिये होता है। विद्यालयों मे शिक्षक-निर्मित परखों का ही प्रयोग किया जाता है।

शिक्षक-निर्मित परखों का उपयोग शिक्षार्थियों की उपलब्धियों का सत्र में अनेक बार मूल्यांकन करने हेतु किया जाता है। प्रत्येक पाठ इकाई आवधिक जाच तथा अर्धवार्षिक मूल्यांकन में सामान्यतः शिक्षक इनका प्रयोग करता है।

(ख) शिक्षक-निर्मित वस्तुनिष्ठ परखों के प्रकार—वस्तुनिष्ठ प्रश्न मुख्य रूप से निम्नांकित प्रकार के होते हैं—

वस्तुनिष्ठ प्रकार की परखें या प्रश्न

पहचान परखें — प्रत्यास्मरण परखें

सामान्य प्रत्यास्मरण परखें — पूर्ति सम्बन्धी परखें

द्विविकल्पी परखें — बहुविकल्पी परखें — तुल्य पद परखें — वर्गीकरण परखें — पुनर्व्यवस्थीकरण परखें

↑ सत्या सत्य परखें — ↑ हां/नही परखें — ↑ सही/गलत परखें

पहचान परखें

इस प्रकार के प्रश्नों में दो या दो से अधिक उत्तरों में से सही उत्तर को पहचान कर चिह्नित करने का निर्देश दिया जाता है अथवा पहचान कर अव्यवस्थित तथ्यों को व्यवस्थित रूप मे उनके युग्म (जोड़े) बनाने, वर्गीकरण तथा पुनर्व्यवस्थीकरण करने के निर्देश दिये जाते हैं। इनका उपर्युक्त वर्गीकरण के अनुसार सोदाहरण विवेचन इस प्रकार है।

(1) सत्यासत्य परखें—ये पहचान करने हेतु द्विविकल्पी परखें हैं जिनमें कुछ सत्य तथा असत्य तथ्य वाक्यों के रूप मे दिये जाते हैं तथा विद्यार्थियों को उन्हें पहचान कर उनके समक्ष कोष्ठक में दिये गये सत्य या असत्य किसी एक शब्द को रेखांकित करना होता है या सही शब्द पर ✓ का चिह्न लगाना होता है। उदाहरणार्थ—

(क) भारतीय संघ में चार केन्द्र शासित प्रदेश हैं। (सत्य/असत्य)

(ख) धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार मौलिक अधिकार है। (सत्य/असत्य)

(ग) भारत की शासन प्रणाली अध्यक्षात्मक है। (सत्य/असत्य)

(2) हाँ/नहीं परखें—यदि उपर्युक्त कथनों के समक्ष सत्य/असत्य स्थान पर हाँ/नहीं के द्वारा उत्तर व्यक्त किया जाय तो ये परखें हाँ/नहीं प्रकार की बन जाती हैं किन्तु इन वाक्यों को प्रश्नवाचक बनाना आवश्यक है। तात्विक दृष्टि से दोनों में अन्तर नहीं है। उदाहरणार्थ—

(क) क्या अधिकार समाज में ही सम्भव है? (हां/नहीं)

(ख) क्या महिला प्रतिनिधि निर्वाचित होने पर पंचायत के सदस्य के रूप में किसी महिला का महवरण होता है? (हां/नहीं)

(ग) क्या भारत में वयस्क मताधिकार की आयु 21 वर्ष है? (हां नहीं)

(3) सही/गलत परखें—इन परखों में सत्य/असत्य परखों की भांति दिये गये कथनों को देख कर उनके सही या गलत को पहचाना जाता है, किन्तु कथनों का किसी नियम या सिद्धांत से सम्बन्धित होना उचित रहता है, केवल तथ्यों तक ही उनका सीमित रहना विचार-प्रेरक नहीं होता जैसे—

(क) गीर्नर का कथन है—'राज्य कुटुम्बों तथा ग्रामों का एक समुदाय है जिसका लक्ष्य पूर्ण तथा आत्म निर्भर बनना है। (सही/गलत)

(ख) संघात्मक व्यवस्था में सम्पूर्ण शक्तियां केन्द्रित रहती हैं। (सही/गलत)

(ग) अधिकार एवं कर्त्तव्य अन्योन्याश्रित हैं। (सही/गलत)

(4) बहुविकल्पी परखें—यह प्रकार वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का सर्वाधिक प्रचलित प्रकार है। दो से अधिक विकल्प होने के कारण ऐसे प्रश्नों के विद्यार्थियों द्वारा अनुमान से उत्तर दिये जाने की सम्भावना कम हो जाती है। प्रायः 4 या 5 विकल्प देना उचित रहता है, जिससे यह सम्भावना और भी कम हो जाय। बहुविकल्पी प्रश्न के दो भाग होते हैं—

पहले भाग को कथन या वाक्यांश तथा
दूसरे भाग को विकल्प अथवा विकर्प कहते हैं।

विद्यार्थियों को इन विकल्पों में से किसी एक सही विकल्प के क्रमाक्षर को प्रश्न के समक्ष दिये गये कोष्ठक में लिखना होता है। इसके निर्माण में यह सावधानी रखनी चाहिए कि कथन व विकर्पों में भाषा की दृष्टि से उचित समायोजन हो तथा विकर्पों या विकल्पों का चयन इस प्रकार हो कि वे लगभग सही होने का आभास देकर विद्यार्थियों के ध्यान को विकपित करें किंतु उनमें से एक विकर्प ही पूर्णतः सही हो। इनके उदाहरण निम्नांकित हैं—

(i) निम्नांकित में से किस परिस्थिति में राष्ट्रपति अध्यादेश जारी कर सकता है?

(क) लोक सभा के भंग होने पर,
(ख) प्रधानमंत्री की इच्छा पर,
(ग) संसद का अधिवेशन न होने पर,
(घ) मंत्रि परिषद् के निवेदन पर,
(च) स्वेच्छा से कभी भी। ( )

(ii) राज्य एक आवश्यक बुराई है, यह मान्यता किस विचारधारा की है, वह है—

(क) व्यक्तिवाद, (ख) समाजवाद,
(ग) साम्यवाद, (घ) अराजकतावाद,
(च) आदर्शवाद। ( )

(iii) संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य है—

(क) अंतर्राष्ट्रीयता का प्रसार करना,
(ख) दो राष्ट्रों के झगड़ों को निपटाना,
(ग) विश्व में शांति स्थापित करना,
(घ) मानवता की सेवा करना,
(च) विश्व की एक सरकार बनाना। ( )

(5) तुल्य पद या मिलान पद या युगलीकरण परखें—इस प्रकार के प्रश्नों में दो स्तम्भ होते हैं। प्रथम स्तम्भ में कुछ शब्द, पद या वाक्यांश होते हैं, जिनका सम्बन्ध दूसरे स्तम्भ में अव्यवस्थित रूप से दिये गये शब्द, पद या वाक्यांशों से पहचान कर दूसरे स्तम्भ के क्रमाक्षरों को पहले स्तम्भ के पूर्व में दिये गये खाली कोष्ठकों में व्यवस्थित रूप से लिखने का निर्देश दिया जाता है। दूसरे स्तम्भ में शब्द, पद या वाक्यांशों की संख्या पहले स्तम्भ की संख्या से कुछ अधिक रखना उचित रहता है। इन प्रश्नों से विद्यार्थियों को अनुमान की अपेक्षा तर्क एवं चिंतन के आधार पर दो बातों का सम्बन्ध ज्ञात करना होता है। पहले स्तम्भ में कम से कम 5 तथा अधिकतम 15 तक बातें दी जानी चाहिए। इस प्रकार के प्रश्नों का एक उदाहरण अधोंकित है—

केन्द्रशासित प्रदेश	राजधानी
(1) अण्डमान निकोबार	1) चण्डीगढ़
(2) लक्षद्वीप	(2) आइजल
(3) गोआ, दमन, दीव	(3) शिलाग
(4) मिजोरम	(4) पोर्टब्लेयर
(5) अरुणाचल प्रदेश	(5) पजिम

(6) वर्गीकरण परखें—इन प्रश्नों मे कुछ शब्द, तथ्य आदि एक समूह के रूप में दिये जाते हैं, जिनमें एक को छोड़कर शेष सभी किसी एक वर्ग के होने के नाते एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इस समूह में से असम्बद्ध शब्द या तथ्य को, पहचान कर उसे × से चिह्नित करना होता है। जैसे—

समूह (क)—मुख्य मत्री, राज्यपाल, विधानसभा अध्यक्ष, शिक्षा सचिव (×), वित्तमंत्री।

समूह (ख)—ग्राम पंचायत, न्याय पंचायत, विधान परिषद् (×) पंचायत समिति, जिला परिषद्, नगर पालिका।

समूह (ग)—सुरक्षा परिषद्, संरक्षण परिषद्, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, विधान परिषद्।

(7) पुनर्व्यवस्थीकरण परखें—इस प्रकार की परखों मे कुछ परस्पर सम्बन्धित बातें अव्यवस्थित रूप से लिखी रहती हैं, जिन्हें पहचान कर उनके समक्ष दिये गये कोष्ठको मे उनके क्रमाक्षर व्यवस्थित रूप से लिखने होते हैं। जैसे—

(क) मुख्य सचिव	(च)
(ख) शिक्षा मत्री	( )
(ग) शिक्षा राज्य मंत्री	( )
(घ) मुख्यमंत्री	( )
(च) राज्यपाल	( )
(छ) विधान सभा-अध्यक्ष	( )

प्रत्यास्मरण परखें

प्रत्यास्मरण परखो के अन्तर्गत विद्यार्थियों की स्मरण शक्ति की जाच होती है। ये निम्नांकित दो प्रकार की होती हैं—

(1) सामान्य प्रत्यास्मरण परखें—इस प्रकार के सीधे प्रश्नों में एक शब्द या वाक्यांश में उत्तर दिया जाता है। अति लघुत्तरात्मक प्रश्न इसी श्रेणी के होते है। जैसे—

(i) संघीय लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष की नियुक्ति किसके द्वारा की जाती है ?
(ii) विकास खण्ड स्तर का प्रमुख अधिकारी कौन होता है ?
(iii) राष्ट्रपति किस व्यक्ति को प्रधानमंत्री बना सकता है ?

(iv) ऐसा कौनसा मौलिक अधिकार है जिसके अभाव में अन्य सभी मौलिक अधिकार महत्त्वहीन है ?

(2) पूर्ति सम्बन्धी परखें—इस प्रकार की परखों में कुछ वाक्य दिये जाते हैं जिनमें प्रत्येक वाक्य मे एक या दो रिक्त स्थानों की पूर्ति करनी पड़ती है। इनमे स्मरण शक्ति के आधार पर पूर्ति करनी होती है। जैसे—

(i) भारत में मतदाता की कम से कम आयु..............वर्ष निर्धारित की गई है।

(ii) राष्ट्रपति.... .. ..स्थिति में नागरिकों के............अधिकारों को समाप्त कर सकता है।

इकाई जांच पत्र के निर्माण की विधि एवं उसके विभिन्न सोपान[6]

उपर्युक्त वर्णित विभिन्न परखों का उपयोग शिक्षण-प्रक्रिया मे विभिन्न अवसरों पर किया जाता है, जैसे प्रत्येक पाठ, इकाई, सावधिक अर्धवार्षिक एव वार्षिक जाच-कार्य हेतु। प्रत्येक पाठ के अन्त में केवल 5—6 मिनट की अवधि में केवल लघुत्तरात्मक, अतिलघुत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ परखो द्वारा जांच कर ली जाती है, उसके लिये कोई विशेष आयोजन नही करना पड़ता। किन्तु शेष अवसरों पर प्रश्नपत्र का निर्माण किया जाता है जिसमें विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। इकाई जाचपत्र के निर्माण की विधि के विभिन्न सोपानों से यह प्रक्रिया भली-भांति स्पष्ट हो सकेगी।

इकाई-जांच हेतु प्रश्नपत्र के निर्माण के निम्नांकित सोपान हैं—

(1) अभिकल्प बनाना,

(2) आधार-पत्रक या रूपरेखा बनाना,

(3) इकाई परख बनाना,

(4) उत्तर-तालिका एवं अंक योजना बनाना, तथा

(5) प्रश्नवार विश्लेषणपत्रक तैयार करना।

उपर्युक्त सोपानों के अनुसार हम नमूने के रूप में कक्षा 9 के लिये संघीय कार्यपालिका की इकाई हेतु एक इकाई-जांच पत्र का विवेचन करेंगे। इसका स्वरूप निम्नांकित है—

(इसकी इकाई योजना अन्तिम अध्याय में देखिये)

1. अभिकल्प बनाना

इकाई जाच पत्र के अभिकल्प द्वारा निम्नांकित पक्षो की दृष्टि से सामान्य नीति निश्चित की जाती है—

(1) उद्देश्यो की दृष्टि से अंक प्रभार,

(2) विषय वस्तु की दृष्टि से अंक प्रभार,

---

6. माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं के प्रतीक प्रश्न पत्र (नागरिकशास्त्र) राज. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर, पृ. 1 से 14 तक, (अंग्रेजी संस्करण)

(3) प्रश्नों के प्रकार की दृष्टि से अंक प्रभार,

(4) विकल्पों की योजना,

(5) खण्डों की योजना।

(1) उद्देश्यों की दृष्टि से अंक-प्रभार तालिका—

क्रम सं.	उद्देश्य	अंक	प्रतिशत
(i)	ज्ञान	10	40
(ii)	अवबोध	8	32
(iii)	ज्ञानापयोग	5	20
(iv)	कौशल	2	8
	योग—	25	100

(2) विषय-वस्तु की दृष्टि से अंक प्रभार-तालिका

क्रम सं.	प्रकरण या उप इकाई	अंक	प्रतिशत
(i)	राष्ट्रपति-निर्वाचन तथा अवधि	4	16
(ii)	राष्ट्रपति-शक्तियां तथा कार्य	7	28
(iii)	उपराष्ट्रपति	2	8
(iv)	प्रधानमंत्री	5	20
(v)	मंत्रिमण्डल	7	28
	योग—	25	100

(3) प्रश्नों के प्रकार की दृष्टि से अंक प्रभार-तालिका

क्रम सं.	प्रश्न का प्रकार	अंक	प्रश्न सं.	प्रतिशत
1.	निबंधात्मक प्रश्न	4	1	16
2.	लघुत्तरात्मक	9	6	36
3.	अति लघुत्तरात्मक	2	2	8
4.	वस्तुनिष्ठ	10	9	40
	योग—	25	18	100

(4) विकल्पों की योजना—सम्पूर्ण प्रश्नपत्र या सम्पूर्ण खण्ड मे विकल्प देना उचित नही है, क्योकि इससे सम्पूर्ण पाठ्य वस्तु एवं उद्देश्यों का मूल्यांकन नहीं हो पाता। अतः किसी प्रश्न में आतरिक विकल्प दे दिया जाय तो कोई हानि नहीं होगी, यदि विकल्प के दोनों प्रश्न समान कठिनाई-स्तर के हो तथा एक ही प्रकार की पाठ्य-वस्तु पर आधारित हों। प्रस्तुत इकाई—जांच-पत्र में विकल्प की योजना केवल निबन्धात्मक प्रश्न मे आतरिक रूप से दी गई है।

(5) खण्डों की योजना—विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को प्रकार के क्रम में रख कर उन्हें एक प्रकार के प्रश्नों को किसी एक खंड के अन्तर्गत अंकित करते हैं। खंडों से निर्देश देने एवं उनके उत्तर का अंकन करने में सुविधा रहती है। प्रस्तुत जांच-पत्र में क, ख, ग तथा घ चार खण्ड रखे गये हैं।

2. आधार-पत्रक या रूपरेखा बनाना[7]

इकाई जांच-पत्र का अभिकल्प निश्चित करने के बाद दूसरा सोपान इस अभिकल्प के आधार पर आधार-पत्रक या रूपरेखा बनाना होता है। आधार-पत्रक उस त्रिआयामीय या त्रिआयामीय चार्ट का नाम है जिसमें अभिकल्प के अनुसार उद्देश्य, विषय-वस्तु तथा प्रश्नो के प्रकार की दृष्टि से उनका अंक प्रभार व संख्या दर्शाई जाती है।

अभिकल्प निश्चित करने के पश्चात् परख अथवा प्रश्न-पत्र बनाने की दिशा में दूसरा मुख्य पद रूपरेखा बनाना है। स्पष्ट है कि रूपरेखा उस त्रिविमीतीय चार्ट का नाम है जिसमें अभिकल्प के अनुसार उद्देश्य, विषय-वस्तु, प्रश्नो के प्रकार एवं विकल्प को ध्यान मे रखकर प्रश्न-पत्र की सम्पूर्ण रूपरेखा बनाई जाती है। अतः इस स्तर पर अभिकल्प और रूपरेखा मे अन्तर ज्ञात करना उपयुक्त होगा—

अभिकल्प	रूपरेखा
1. यह प्रश्न-पत्र निर्माण करने के लिए स्वीकृति नीति का सूचक होता है।	1. यह प्रश्न-पत्र निर्माण करने के लिए कार्यपरक योजना है।
2. यह प्रश्न-पत्र निर्माण करने के लिए निम्नांकित विभिन्न आयामों की दृष्टि से दिशा प्रदान करता है—	2. यह प्रत्येक प्रश्न की दृष्टि से निम्नांकित सूचनाएं प्रदान करती है—
(अ) उद्देश्यों की दृष्टि से अंक प्रभार,	(अ) जाचा जाने वाला उद्देश्य,
(ब) विषय-वस्तु की दृष्टि से अंक प्रभार,	(ब) विषय-वस्तु जिस पर प्रश्न आधारित है,
(स) विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की दृष्टि से अंक प्रभार,	(स) प्रश्न का उत्तर, और
(द) विकल्प योजना, और	(द) प्रत्येक प्रश्न का अंक प्रभार।
(द) खंडो की योजना।	
3. यह विषयाध्यापकों की समिति द्वारा निश्चित किया जाता है।	3. इसका निर्माण परीक्षक स्वयं करता है और वह अपनी रूपरेखा अभिकल्प के अनुसार बनाता है।

7. नागरिकशास्त्र में इकाई जांच (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर, पृष्ठ 42 (प्र. संस्करण)

4. अभिकल्प प्रतिवर्ष बदलने की आवश्यकता नही होती। अतः यह आने वाले कुछ वर्षो तक काम मे लिया जा सकता है।

4. यह प्रत्येक बार बनाना होता है और एक अभिकल्प के आधार पर अनेक रूपरेखाएं बनाई जा सकती हैं।

इस प्रकरण में दिये गये अभिकल्प के आधार पर इकाई-प्रश्न-पत्र की रूपरेखा बनाई जा सकती है। एक रूपरेखा निम्नानुसार हो सकती है—

प्रश्न-पत्र की रूपरेखा

उद्देश्य	ज्ञान				अवबोध				ज्ञानोपयोग				कौशल				अंकों का योग	प्रश्नों का योग
प्रकार / प्रकरण	नि.	ल.	अ.ल.	व.	नि.	ल.	अ.ल.	व.	नि.	ल.	अ.ल.	व.	नि.	ल.	अ.ल.	व.		
पहला					1(1)						2(1)		1(1)				4	3
दूसरा					1(1)		2(1)		1(1)				1(1)				5	4
तीसरा	4(1)				1(1)				1(1)				1(1)				7	4
चौथा+	4(1)		2(1)			2(1)											4	2
पांचवां				1(1)		2(1)									2(1)		5	3
अंकों का योग				10				8					5	2			25	—
प्रश्नों का योग				6				5					4	1			—	16

रूपरेखा में काम मे लिए गए संकेतो का स्पष्टीकरण

1. कोष्ठक के अन्दर का अंक प्रश्न संख्या तथा बाहर का अंक कुल अंको का सूचक है।
2. नि० = निबन्धात्मक प्रश्न
   ल० = लघुत्तरात्मक प्रश्न
   अ०ल० = अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न
   व० = वस्तुनिष्ठ प्रश्न
3. +यह चिह्न आन्तरिक एकान्तर विकल्प का सूचक है इसलिए इसके अंक योग में सम्मिलित नही किए गए है।

उक्त रूपरेखा में उद्देश्यो के खण्डो तथा प्रकरणो के खण्डो का योग अभिकरण मे निर्धारित अंक-प्रभार के अनुसार है। प्रश्नो के प्रकार का योग भी अभिकल्प के अनुसार है। इस प्रकार रूपरेखा अभिकल्प का क्रियात्मक पक्ष है।

3. इकाई-परख

उपर्युक्त आधार-पत्रक की सहायता से इकाई-परख बनाना तीसरा सोपान है। यह अग्रांकित है—

इकाई-परख

प्रकरण—संघीय कार्यपालिका

समय—30 मिनिट　　　　कक्षा 9　　　　पूर्णांक 25

निर्देश—

(1) सभी प्रश्न करना अनिवार्य हैं।

(2) प्रश्न सख्या 1 से 9 तक प्रत्येक प्रश्न में 5 विकल्प दिये गये हैं, जिनमें एक सही है। सही विकल्प का क्रमाक्षर दिये गये कोष्ठक में अंकित करें।

(3) प्रश्न सख्या 10 व 11 के उत्तर एक शब्द या वाक्यांश में दें, प्रश्न सख्या 12 से 16 के उत्तर 40 शब्दों के अन्तर्गत दें तथा प्रश्न सं. 17 का उत्तर 150 शब्दों से अधिक न हो।

(4) प्रश्न सं. 1 से 11 तक प्रत्येक प्रश्न एक अंक का है तथा अन्य प्रश्नों के अंक उनके समक्ष लिखे हुए है।

1. भारत का प्रधानमन्त्री निम्नांकित के प्रति उत्तरदायी है—
(अ) लोकसभा अध्यक्ष, (ब) भारत के राष्ट्रपति, (स) लोकसभा के सदस्य,
(द) राज्यसभा के सदस्य, (इ) दोनो सदनों के सदस्य। ( )

2. भारत मे शासन-नीति निर्धारित करने का दायित्व जिस पर है, वह है—
(अ) भारत का राष्ट्रपति, (ब) लोकसभा अध्यक्ष, (स) योजना आयोग,
(द) केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल, (इ) राष्ट्रीय विकास परिषद्। ( )

3. राष्ट्रपति के अप्रत्यक्ष निर्वाचन का औचित्य यह है कि—
(अ) भारत में संसदात्मक शासन प्रणाली है,
(ब) प्रत्यक्ष निर्वाचन खर्चीला है,
(स) आपात स्थिति में राष्ट्रपति काफी शक्तिशाली होता है,
(द) इससे राष्ट्रपति को निर्दलीय होने में सहायता मिलती है,
(इ) भारत की शासन-पद्धति संघीय है। ( )

4. निम्नलिखित में से कौनसा तथ्य यह पूर्णतः सिद्ध करता है कि राष्ट्रपति राज्य का केवल संवैधानिक अध्यक्ष है—
(अ) वह अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता है,
(ब) उसे प्रधानमन्त्री की सलाह पर कार्य करना पडता है,
(स) वह अपने मन्त्रिमण्डल का चुनाव नहीं करता,
(द) उस पर महाभियोग लगाया जा सकता है,
(इ) उसे अनेक औपचारिक समारोहों मे भाग लेना पड़ता है। ( )

5. निम्नलिखित मे से कौनसा कारण ऐसा है जो यह प्रदर्शित करता है कि राष्ट्रपति राजनैतिक दृष्टि से नाम मात्र का अध्यक्ष नहीं है—
(अ) वह सेना का सर्वोच्च सेनापति है, (ब) वह भारत का प्रथम नागरिक है,

(स) वह अध्यादेश निकालता है, (द) वह आपात स्थिति घोषित करता है,
(इ) वह विधेयकों को विचारार्थ संसद को वापस भेज सकता है। ( )

6. उपराष्ट्रपति का पद राष्ट्रपति के पद से निम्नांकित बात में विशेषतः भिन्न है—
(अ) कार्यावधि, (ब) योग्यता, (स) निर्वाचन की पद्धति,
(द) कार्यकाल का निश्चय, (इ) पद से हटाने की विधि। ( )

7. मन्त्रिमण्डल की एकता स्थापित करने में सर्वाधिक महत्त्व का तथ्य है—
(अ) इसके निर्णयों की गोपनीयता बनाये रखना,
(ब) इसकी सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना,
(स) विधायिका सभा की अनिवार्य सदस्यता,
(द) राजनैतिक दलों से संबद्धता,
(इ) सरकार के विभिन्न विभागों की अन्तर्निर्भरता। ( )

8. राष्ट्रपति द्वारा अपने अधिकारों के प्रयोग पर बल देने की दशा में प्रधानमन्त्री को निम्नांकित कार्यवाही करने को विवश होना पड़ता है—
(अ) लोकसभा में अविश्वास प्रस्ताव पेश करना,
(ब) सर्वोच्च न्यायालय से सलाह लेना,
(स) महाभियोग लगाने का निर्णय लेना,
(द) मन्त्रिमण्डल का त्याग-पत्र,
(इ) राष्ट्रपति के निर्वाचित मण्डल को सूचित करना। ( )

9. अपने मन्त्रिमण्डल के किसी सदस्य के प्रति अविश्वास उत्पन्न होने की दशा में प्रधानमन्त्री के लिये निम्नांकित कार्यवाही करना ही सर्वाधिक उचित होता है—
(अ) अपने मन्त्रिमण्डल का पुनर्गठन, (ब) मन्त्रिमण्डल का त्याग-पत्र देना,
(स) अपने मन्त्रिमण्डल के प्रति विश्वास प्राप्त करना,
(द) संसद में विश्वास प्रस्ताव पास करना,
(इ) सम्बन्धित मन्त्री से त्याग-पत्र मांगना। ( )

10. उपराष्ट्रपति को पदेन रूप से कौन से राजनैतिक पद का कार्य करना पड़ता है?

11. आम चुनाव के पश्चात् राष्ट्रपति मन्त्रिमण्डल बनाने हेतु किसको आमन्त्रित करता है?

खण्ड (ब)

12. भारत के राष्ट्रपति के निर्वाचन हेतु निर्वाचन-मण्डल को स्पष्ट कीजिए।

13. भारत के राष्ट्रपति की किन्हीं दो विधायक शक्तियों का उल्लेख कीजिए?

14. केन्द्र के मन्त्रिमण्डल के निर्माण की विधि बतलाइए।

15. कल्पना कीजिए—बार-बार दुर्घटनाएँ होने के कारण सम्बन्धित मन्त्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया गया जिसके कारण समस्त मन्त्रिमण्डल को त्याग-पत्र देना पड़ा। इसका कारण समझाइए।

16. राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति की निर्वाचन-प्रक्रिया को एक चार्ट द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

खण्ड (स)

17. राष्ट्रपति के संकटकालीन अधिकारों को लेकर बड़ी तीखी आलोचना की जाती है। क्या आप भी इससे सहमत है ? 'हाँ', तो क्यों, और 'नही' तो क्यो ?

अथवा

राष्ट्रपति के शासन एवं वित्त सम्बन्धी अधिकार कौन से हैं ? संक्षेप मे लिखिए।

4. उत्तर-तालिका एवं अंक-योजना

इकाई जांच हेतु प्रश्न-पत्र के निर्माण का चौथा सोपान प्रश्न-पत्र की उत्तर-तालिका एवं अंक-योजना बनाना है जिसके आधार पर उत्तरो का अंकन सरलता एवं समानता से किया जा सकता है। प्रस्तुत इकाई परख की यह तालिका एवं योजना निम्नांकित रूप से बनाई जायगी[8]—

खण्ड (क)

प्रश्न सं.	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
उत्तर	स	द	अ	ब	ब	इ	इ	ब	स	इ	राज्यसभा का मध्यक्ष	बहुसख्यक दल का नेता
अंक	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1

खण्ड (ख) तथा (ग)

प्रश्न सं.	अपेक्षित उत्तर–सकेत	अंक योग
12.	राष्ट्रपति का निर्वाचन मण्डल	
	(1) लोकसभा व राज्यसभा के निर्वाचित सदस्य	1
	(2) विभिन्न राज्यों की विधायिका सभाओं के निर्वाचित सदस्य	1
13.	निम्नांकित में से कोई दो—	
	(1) संसद के किसी भी सदन का अधिवेशन बुलाना, सत्रावसान करना तथा स्थगित करना।	
	(2) दोनों सदनों मे पारित विधेयक पर स्वीकृति देना।	प्रत्येक 1 अंक
	(3) अध्यादेश जारी करना।	
	(4) राज्यसभा के कुछ सदस्य मनोनीत करना।	
14.	मन्त्रिमण्डल निर्माण की विधि के दो सोपान—	
	(1) बहुसंख्यक दल के नेता को सरकार बनाने का आमन्त्रण देना।	1
	(2) प्रधानमन्त्री की सलाह पर मन्त्रियो की नियुक्ति करना।	1
15.	सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त को समझाना।	2
16.	(1) निर्वाचन के चार्ट में राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया।	2
	(2) निर्वाचन के चार्ट में उपराष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया।	

8. उपर्युक्त, पृ. 48-49.

17. प्रथम विकल्प—

1– आलोचना व उससे सहमति या असहमति ।	2
2– उपर्युक्त औचित्य के तर्क ।	2
द्वितीय विकल्प—	
1– शासन सम्बन्धी अधिकार ।	2
2– वित्त सम्बन्धी अधिकार ।	2

5. प्रश्नवार विश्लेषण-पत्रक

इकाई परख प्रश्न-पत्र निर्माण में पाँचवा व अन्तिम सोपान प्रश्नवार विश्लेषण-पत्रक बनाना है जो निम्न प्रारूप मे तैयार किया जा सकता है—

प्रश्न सं.	उद्देश्य	विशिष्टीकरण	प्रकरण	प्रश्न-प्रकार	अंक	समय	कठिनाई का स्तर
1	2	3	4	5	6	7	8

उपर्युक्त प्रारूप मे प्रश्नवार सूचना अंकित कर लेने से उनके उद्देश्यो के विशिष्टीकरण, समय तथा कठिनाई स्तर का ज्ञान हो जाता है । सामान्यतः प्रश्नपत्र मे प्रश्नों का कठिनाई स्तर सरल, औसत तथा कठिन क्रमशः 15, 70 और 15 के लगभग होता है ।

जिस प्रकार इकाई-परख का निर्माण इकाई-शिक्षण के बाद किया जाता है, उसी प्रकार शिक्षण-अवधि के विभिन्न अवसरों—जैसे आवधिक, अर्धवार्षिक तथा वार्षिक शिक्षण-कार्य—की समाप्ति पर उनकी परखें या प्रश्नपत्र बनाकर प्रयुक्त किये जाते है । उद्देश्य निष्ठ शिक्षण के अन्य दो घटको—उद्देश्य एवं शिक्षण—अधिगम स्थितियों (शिक्षण-विधि) को प्रभावी बनाने हेतु मूल्यांकन की इस वैज्ञानिक एव वस्तुनिष्ट प्रविधि को प्रयुक्त किया जाना अत्यन्त आवश्यक है । उद्देश्याधारित एवं विषयवस्तु आधारित विभिन्न प्रकार के प्रश्नो का निर्माण करना भी एक विशेष कौशल का कार्य है, जो अभ्यास पर निर्भर करता है ।

□□□

नागरिकशास्त्र शिक्षण : वार्षिक, इकाई तथा पाठ योजना | 14

जीवन मे योजनाबद्ध कार्य करने का विशेष महत्त्व होता है। 'किसी भी कार्य को करने से पूर्व की अग्रिम तैयारी को योजना कहते है। इसके अन्तर्गत करणीय कार्य के विभिन्न पक्षों पर पूर्व चिन्तन किया जाता है, ताकि यह कार्य कुशलतापूर्वक एवं प्रभावशाली ढंग से पूरा किया जा सके। ....योजनाबद्ध कार्य करना आधुनिक होने का सूचक है।'[1] इस प्रकार योजनाबद्ध कार्य आधुनिक युग के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है। अब तक इस पुस्तक मे नागरिकशास्त्र शिक्षण के जिन पक्षों का विवेचन किया गया है, उनके सफल क्रियान्वयन हेतु शिक्षण-योजना की आवश्यकता होती है। प्रस्तुत अध्याय मे इस योजना के विभिन्न आयामो की सोदाहरण चर्चा करेंगे।

नागरिकशास्त्र शिक्षण की योजना का अर्थ, महत्त्व एवं उसके प्रकार

नागरिकशास्त्र शिक्षण की योजना का अर्थ है निर्धारित पाठ्यक्रम एव उद्देश्यों के आधार पर शिक्षक द्वारा सम्बन्धित कक्षा के विद्यार्थियो मे वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने हेतु अधिगम-सिद्धान्तो के अनुकूल पूर्व चिन्तन कर योजना बनाना। इस प्रक्रिया में शिक्षण-प्रक्रिया के पूर्वोल्लिखित त्रिकोण के तीनो पक्षो—शिक्षण उद्देश्य, शिक्षण-अधिगम स्थितियां तथा मूल्याकन—के समायोजन की ऐसी पूर्व योजना बनाई जाती है जिसका अनुसरण कर शिक्षण प्रभावी होता है।

एक प्रशिक्षित अध्यापक अपने विषयों को योजनाबद्ध रूप से पढ़ाने का महत्त्व समझता है। पूर्व योजना द्वारा शिक्षण वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं व्यवस्थित होकर उपलब्ध साधनो एवं समयावधि के अन्तर्गत सफलता से सम्पन्न किया जा सकता है।'[2]

---

1. जगदीशनारायण पुरोहित : शिक्षण के लिए आयोजन (राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर–पृष्ठ 36)
2. उपर्युक्त, पृ. 36

नागरिकशास्त्र शिक्षण में भी शिक्षण-योजना एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षण-अधिगम स्थितियों के विधिवत् आयोजन की दृष्टि से व्यवस्थित रूप से पूर्व चिन्तन किया जाता है। नागरिकशास्त्र शिक्षक अपनी कक्षा के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम को सत्र में उपलब्ध समयावधि मे प्रभावी रूप से सम्पन्न करने के लिए अपने संसाधनों को दृष्टिगत रखते हुए एक पूर्व योजना बनाना आवश्यक समझता है। इस सत्रीय योजना को भी वह सुविधा एवं शिक्षण की प्रभावोत्पादकता की दृष्टि से कुछ समयावधि के विभाग में विभक्त कर उनकी विस्तृत पूर्व योजना बना लेना चाहता है, ताकि वह सत्र पर्यन्त आत्मविश्वास एवं पूर्ण तैयारी से शिक्षण-कार्य कर सके और अपने विद्यार्थियों की उपलब्धि का मूल्यांकन कर अपनी योजना में तदनुकूल संशोधन, परिमार्जन तथा परिवर्धन कर सके। इस प्रकार की शिक्षण-योजना का नागरिकशास्त्र-शिक्षण में अत्यन्त महत्त्व है।

नागरिकशास्त्र शिक्षण-योजना को पाठ्यवस्तु एवं उपलब्ध समयावधि की दृष्टि से निम्नांकित तीन भागों मे विभक्त किया जा सकता है।

1. वार्षिक या सत्रीय योजना,
2. इकाई–योजना, तथा
3. पाठ–योजना।

1. नागरिकशास्त्र शिक्षण की वार्षिक या सत्रीय योजना का अर्थ, उसके निर्माण की विधि एवं रूपरेखा—नागरिकशास्त्र शिक्षण की वार्षिक या सत्रीय योजना से तात्पर्य यह है कि किसी कक्षा में इस विषय के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम की वांछित उद्देश्यों एवं उपलब्ध ससाधनो के आधार पर एक सत्र मे शिक्षण की योजना जो सम्बन्धित शिक्षक द्वारा बनाई जाती है। इसे दीर्घकालीन योजना भी कहते हैं, क्योंकि इसके आधार पर अल्पकालीन इकाई एव पाठ की योजनाएं बनाई जाती हे। इसे उपसत्रों—सामान्यत: तीन उपसत्रों—मे विभक्त किया जा सकता है। सत्रीय योजना बनाने की विधि उदाहरण के रूप मे राजस्थान मे सत्र 1981–82 हेतु माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा कक्षा 9 के लिए नागरिकशास्त्र के द्वितीय प्रश्न-पत्र (भारतीय प्रशासन एवं राष्ट्रीय समस्याएं) मे निर्धारित पाठ्यक्रम को लिया जा रहा है।[3]

(1) सर्वप्रथम किसी शिक्षण-सत्र मे नागरिकशास्त्र के उपर्युक्त प्रश्न-पत्र के पाठ्यक्रम के शिक्षण हेतु उपलब्ध कालांशों का पता लगाना चाहिए। राजस्थान के शिक्षा-विभाग द्वारा प्रकाशित सत्र 1981–82 के कलेंडर की सहायता से कुल दिवसों में से अवकाश-दिवस घटाकर कार्य-दिवस ज्ञात किये जा सकते हैं। माना कि सत्र में 216 कार्य-दिवस हैं। नागरिकशास्त्र के उक्त प्रश्न-पत्र के लिये प्रति सप्ताह 1–1कालांश के तीन दिवस समय-सारिणी मे निश्चित होते हैं। अतः इस प्रश्न-पत्र के लिये सत्र मे कुल

---

3. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड : प्रारूप प्रश्न-पत्र।

कार्य-दिवसों के आधे अर्थात् 108 कार्य-दिवस अर्थात् कालांश उपलब्ध होंगे। इनके आधार पर सत्रीय योजना बनाई जायगी।

(2) उक्त प्रश्न-पत्र (भारतीय प्रशासन एवं राष्ट्रीय समस्यायें) के पाठ्यक्रम को निम्नांकित 9 सुसंगठित इकाइयों में विभक्त कर उपलब्ध 108 कार्य-दिवसों का विभाजन प्रत्येक इकाई के समक्ष अंकित कार्य-दिवस या कालाशों में किया जा सकता है—

(i) भारतीय राज्य–8 कालांश,
(ii) एवं संघ–9 कालाश,
(iii) भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषतायें–13,
(iv) संघीय व्यवस्थापिका–13,
(v) संघीय कार्यपालिका–13 कालाश,
(vi) संघीय न्यायपालिका–13,
(vii) राज्य कार्यपालिका–13 कालाश,
(viii) राज्य व्यवस्थापिका–13,
(ix) राज्य न्यायपालिका–13 कालाश।

(3) उपर्युक्त प्रत्येक इकाई को आवंटित कालाशों मे यथासम्भव आवृत्ति मूल्यांकन तथा उपचारात्मक शिक्षण के लिए कालाश भी सम्मिलित है।

(4) सत्राभ्यास योजना को उप-सत्रों में विभाजित किया जा सकता है।

(5) विभिन्न उद्देश्यो की प्राप्ति का संकेत भी प्रत्येक इकाई में करना चाहिए क्योंकि उद्देश्यो की प्राप्ति मे लगने वाला समय इकाइयों के कालांशो को प्रभावित करता है।

उपर्युक्त बिन्दुओं का ध्यान रखते हुए वार्षिक या सत्रीय योजना की रूपरेखा बनाई जानी चाहिए।[4] सत्र-योजना बनाते समय प्रत्येक विषय को पूरे सत्र मे प्राप्त होने वाले कालांश शिक्षण-उद्देश्य, साधन-सुविधाएँ आदि प्रभावित करती हैं अतः इन्हें ध्यान में रखना होता है।

उप-सत्र योजना सत्र-योजना को दो या तीन समान भागों में विभाजित कर बनाई जा सकती है।

सत्र-योजना बनाने से शिक्षण को व्यवस्थित रूप से आयोजित करने, प्रत्येक इकाई को उसकी प्रकृति के अनुसार महत्व देने, आवश्यक श्रव्य-दृश्य जुटाने, शिक्षण प्रक्रिया के सभी पक्षों पर समुचित बल देने, विभिन्न विषयाध्यापकों के प्रयासों के मध्य समन्वय स्थापित करने तथा शिक्षार्थियों में शिक्षण के प्रति स्पष्टता प्रदान करने मे सुविधा हो जाती है।

---

4. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृष्ठ 40

वार्षिक या सत्र योजना

विषय—नागरिकशास्त्र.......... कक्षा–9

समयावधि	प्रथम उपसत्र जुलाई से सितम्बर			द्वितीय उपसत्र अक्तूबर से दिसम्बर			तृतीय उपसत्र जनवरी से अप्रैल			
इकाइयां / उद्देश्य	प्रथम इकाई	द्वितीय इकाई	तृतीय इकाई	चतुर्थ इकाई	पंचम इकाई	षष्ठ इकाई	सप्तम इकाई	अष्टम इकाई	पुनरावृत्ति सभी इकाइयों की	कालांशों का योग
ज्ञान	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓		
अवबोध	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓		
ज्ञानोपयोग	✓		✓	✓		✓		✓		
कौशल		✓		✓		✓	✓			
रुचियां	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓		
अभिवृत्तियां	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓	✓		
इकाई के लिये आवश्यक कालांश	8	7	7	9	5	10	7	6	15	
आवृत्ति	1	1	1	1	1	1	1	1	0	
मूल्यांकन	1	1	1	1	1	1	1	1	0	
पुनराध्यापन	1	1	1	1	1	1	1	1	0	
योग	11	10	10	12	8	13	10	9	15	98

2. नागरिकशास्त्र शिक्षण की इकाई-योजना का अर्थ, उसके निर्माण की विधि एवं रूपरेखा—वार्षिक या सत्रीय योजना के आधार पर इकाई-योजना का निर्माण किया जाता है, जो सम्बन्धित पाठ योजनाओं का आधार बनती है। पाठ्यक्रम को इकाइयों मे विभक्त कर शिक्षण-कार्य करने को शिक्षण-विधि तथा पाठ्यवस्तु के संगठन की विधि दोनो रूपों में कुछ विद्वान मान्यता देते है। किन्तु इसे शिक्षण-विधि मानना उचित नही जान पडता।

ए. सी मौरीसन ने इकाई विधि का प्रतिपादन करते हुए इकाई की परिभाषा दी है कि 'इकाई पर्यावरण या किसी व्यवस्थित विज्ञान का वह महत्वपूर्ण एव समग्र अंश या पक्ष है जो मात्र याद रखने की अपेक्षा अववोध करने योग्य हो।'

हर्ड का कथन है कि 'तर्कसम्मत परिणाम की दृष्टि से इकाइयां पाठ्यक्रम का भाग होनी चाहिए तथा पाठ्यक्रम क्रमबद्ध इकाइयों का अपेक्षाकृत बड़ा रूप है।'

वेसले का मत है कि इकाई ज्ञान तथा अनुभवो का वह व्यवस्थित रूप है, जो शिक्षार्थी के लिए महत्वपूर्ण उद्देश्यो की उपलब्धि हेतु निर्मित की जाती है।

इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि इकाई-योजना शिक्षण-विधि न होकर पाठ्यक्रम के संगठन की एक प्रभावी विधि है। किन्तु मौरीसन ने इसे शिक्षण-विधि मानते हुए इसके पाच सोपान निश्चित किये है—

(i) प्रेरणा या खोज सोपान मे विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान के आधार पर प्रस्तुत इकाई के विषय में उनके ज्ञान की खोज की जाती है जिससे वे उत्प्रेरित होते है,

(ii) प्रस्तुतीकरण सोपान में शिक्षक द्वारा इकाई की मौखिक रूपरेखा दी जाती है,

(iii) अर्थग्राह्यता सोपान में विद्यार्थी अध्ययन, प्रायोजना, अधिगम प्रविधियो आदि क्रियाकलापो में व्यस्त होते हैं,

(iv) संगठन सोपान मे अर्जित ज्ञान का क्रमबद्ध सश्लेषण किया जाता है, तथा

(v) अभिव्यक्ति सोपान मे विद्यार्थी मौखिक वर्णन द्वारा अपने ज्ञान एवं अभिव्यक्ति को स्पष्ट करते हैं।

वस्तुतः इकाई-योजना शिक्षण विधि न होकर पाठ्यक्रम के सगठन एवं प्रस्तुतीकरण की एक विधि है जिनका शिक्षण विभिन्न विधियों द्वारा किया जाता है। इकाई का तात्पर्य 'ज्ञानानुभव के एकीकृत रूप से है। यह पाठ्यक्रम का संगठित अंश है जो ज्ञान के किसी महत्त्वपूर्ण क्षेत्र पर केन्द्रित होता है। प्रत्येक इकाई की अपनी संरचना होती है, जिसका ज्ञान होने पर उसमे निहित विभिन्न प्रकरणों का परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।'[5]

इकाई शिक्षण की योजना की रूपरेखा उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर अग्रांकित प्रारूप में बनाई जा सकती है[6]—

---

5. जगदीश नारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृष्ठ 42
6. उपर्युक्त, पृष्ठ 80 दिये गये प्रारूप।

(उदाहरण के रूप में इस इकाई योजना हेतु पूर्व वर्णित नागरिकशास्त्र की कक्षा 9 की सत्रीय योजना की पांचवी इकाई—संघीय कार्यपालिका—ली गई है जिसका इकाई-जांच-पत्र भी गत अध्याय में दिया जा चुका है।)

इकाई-योजना

परिकल्पना सूचना—

1. कक्षा—9
2. विषय—नागरिकशास्त्र
3. इकाई—संघीय कार्यपालिका
4. इकाई संख्या—5
5. इकाई शिक्षण हेतु आवश्यक कालांश—10
6. आवृत्ति हेतु आवश्यक कालाश—1
7. इकाई-परख हेतु आवश्यक कालांश—1
8. उपचारात्मक शिक्षण हेतु आवश्यक कालांश—1

उप इकाई या प्रकरण	शिक्षण बिंदु	व्यवहारगत उद्देश्य सपरिवर्तन	अध्ययनाध्यापन संस्थितिया	
			शिक्षक क्रियायें	शिक्षार्थी क्रियाएं
1	2	3	4	5

उपर्युक्त प्रपत्र में स्तम्भ संख्या पांच के आगे निम्नांकित तीन पक्ष इकाई योजना में और रखे जायेंगे—

(6) सहायक शिक्षण उपकरण—[7]

(क) राष्ट्रपति चुनाव सम्बन्धी चार्ट,

(ख) राष्ट्रपति अधिकार सम्बन्धी तालिका, व

(ग) मंत्रिपरिषद् सम्बन्धी चार्ट

(7) नियत कार्य—

(क) क्रियात्मक कार्य—संसद में विधेयक के पारित होने में राष्ट्रपति के अधिकार सम्बन्धी चार्ट का निर्माण।

(ख) सैद्धांतिक कार्य—समाचार पत्र में प्रकाशित किसी सामयिक समस्या सम्बन्धी कार्यपालिका की भूमिका की समीक्षा।

(8) मूल्यांकन—इकाई शिक्षण के पश्चात् इकाईपरख या जांच-पत्र दिया जायगा जो इस इकाई हेतु पिछले अध्याय में प्रस्तुत है।

उपर्युक्त इकाई-योजना की रूपरेखा को निर्धारित प्रपत्र में और विस्तार से लिखा जा सकता है तथा नागरिकशास्त्र-शिक्षक को अपने उपलब्ध संसाधनों की दृष्टि से उसमें आवश्यक संशोधन, परिमार्जन तथा परिवर्धन करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। इकाई-योजना के आधार पर उससे सम्बन्धित पाठ-योजनाएं समस्त इकाइयों की पूर्व योजना बना लेना आवश्यक है, ताकि दैनिक पाठों की योजनायें भी शिक्षण से पूर्व यथासमय बनाई जा सकें।

नागरिकशास्त्र शिक्षण की पाठ योजना का अर्थ, उसके निर्माण की विधि एवं रूपरेखा—

जिस प्रकार दीर्घकालीन योजना-वार्षिक योजना या सत्रीय योजना का पर्यन्त दूरगामी प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार इकाई योजना तथा पाठ योजना अल्पकालीन योजना होने के कारण उनका क्रमशः थोड़ी अवधि के तथा दैनिक शिक्षण-कार्य पर निकट का प्रभाव होता है। वार्षिक या सत्रीय योजना से इकाई-योजना तथा इकाई-योजना से पाठ-योजना का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है तथा वे परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करती है। योजनाबद्ध शिक्षण में इनका विशेष महत्व होता है।

---

7. आधुनिक नागरिकशास्त्र (भाग 2) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के अधिकार द्वारा प्रकाशित कक्षा 9 व 10 की पाठ्य-पुस्तक पृ. 84, 90 तथा 100

पुरोहित के शब्दो मे–'अल्पकालिक योजना का दूसरा महत्त्वपूर्ण विभाग दैनिक पाठ-योजना है। यह योजना पूर्णत: कार्यपरक होती है तथा दैनन्दिन कार्य को अत्यधिक प्रभावित करती है। दैनिक पाठ-योजना शिक्षण की वह व्यवस्थित रूपरेखा है जो कक्षान्तर्गत शिक्षण से प्रत्यक्षतः होती है।'[8] इस प्रकार दैनिक पाठ-योजना एक दिन अर्थात् कालाश की योजना होते हुए भी इकाई योजना का एक अंश मात्र होती है। दैनिक पाठ-योजना की विधि एव प्रारूप–निम्नाकित प्रारूप के विभिन्न-शीर्षकों के अन्तर्गत पाठ-योजना विधिवत् बनाई जा सकती है[9]—

(1) परिचयात्मक सूचना—

(i) दिनाक,

(ii) कालाश,

(iii) कक्षा,

(iv) विषय,

(v) इकाई,

(vi) प्रकरण

(2) उद्देश्य—

(अ) ज्ञान,

(ब) अवबोध,

(स) ज्ञानोपयोग,

(द) कौशल,

(च) अभिरुचि,

(छ) अभिवृत्ति

(3) शिक्षण सहायक उपकरण,

(4) पूर्वज्ञान,

(5) पाठोपस्थापन एव पाठ्याभिसूचिन,

---

8. जमदीशनारायण पुरोहित : शिक्षण के लिये आयोजन, पृ. 89

9. उपर्युक्त, पृ. 90–91

(6) पाठ का विकास—

शिक्षण-उद्देश्य	शिक्षण बिन्दु	अध्ययनाध्यापन स्थितियां	शिक्षक क्रियाएं	शिक्षार्थी क्रियाएं

(7) पुनरावृत्ति,

(8) श्यामपट्ट-सार,

(9) मूल्यांकन,

(10) नियत कार्य

उपर्युक्त प्रारूप में पूर्वचर्चित इकाई 'संघीय कार्यपालिका' की योजना के एक प्रकरण संघीय मंत्रिपरिषद् पर एक नमूने की पाठ-योजना यहां प्रस्तुत की जा रही है—

पाठ-योजना

(1) परिचयात्मक सूचना

1. दिनाक, 18–9–81,
2. कालांश-तृतीय,
3. कक्षा–9,
4. विषय-नागरिकशास्त्र,
5. इकाई-संघीय कार्यपालिका,
6. प्रकरण-संघीय मंत्रिपरिषद्।

(2) उद्देश्य

(अ) विद्यार्थी मंत्रिपरिषद् के गठन, उत्तरदायित्व एवं कार्यप्रणाली से सम्बद्ध तथ्यों, नियमों एवं सिद्धांतों का प्रत्यास्मरण व पुनर्पहिचान करता है।

(ब) अवबोध—1. विद्यार्थी मंत्रिपरिषद् एवं मंत्रिमण्डल का अन्तर स्पष्ट करता है,

2. विद्यार्थी मंत्रिपरिषद् के कार्यों का वर्गीकरण करता है, तथा सम्बद्ध तथ्यों की अशुद्धियां पहिचानता है।

(स) ज्ञानोपयोग—विद्यार्थी संघीय एवं राज्य की मंत्रिपरिषदों मे सम्बन्ध स्थापित करता है, एवं तथ्यों का नवीन परिस्थितियों में उपयोग करता है।

(द) अभिरुचि— विद्यार्थी संघीय कार्यपालिका सम्बन्धी तथ्यों को समाचार-पत्रों से पढने तथा उन्हे एकत्रित करने मे रुचि लेता है।

(च) अभिवृत्ति— विद्यार्थी संघीय कार्यपालिका के अधिकारो के प्रति निष्पक्ष वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करता है।

(छ) कौशल— विद्यार्थी सम्बन्धित शिक्षण उपकरणो (चार्ट, तालिका आदि) के अध्ययन एव उनके निर्माण का कौशल अर्जित करता है।

(3) शिक्षण

सहायक उपकरण—1. मंत्रिपरिषद् के मंत्रियो के प्रकार का चार्ट,

2 मंत्रिपरिषद् के कार्यों की तालिका।

(4) पूर्वज्ञान

विद्यार्थियो को राज्य की मंत्रिपरिषद् का सामान्य ज्ञान हो।

(5) पाठोपस्थापन तथा पाठ्याभिसूचन

निम्नांकित प्रश्नों की सहायता से विद्यार्थियो को प्रकरण के लिये उत्प्रेरित करेगा—

(i) हमारे देश का सर्वोच्च शासक कौन है ? (राष्ट्रपति)

(ii) राष्ट्रपति किसकी सहायता से देश का शासन चलाता है (केन्द्रीय मंत्रिपरिषद्)

(iii) केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् का प्रधान कौन होता है ? (प्रधानमंत्री)

(iv) प्रधानमंत्री की नियुक्ति कौन करता है ? (राष्ट्रपति)

((v) केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् का गठन किस प्रकार होता है ? (अस्पष्ट उत्तर)

केन्द्रीय (संघीय) मंत्रिपरिषद् के विषय में अध्ययन

(6) पाठ का विकास

शिक्षण-उद्देश्य का क्रमवार	शिक्षण-बिन्दु	अध्ययनाध्यापनसंस्थितियां	
		शिक्षक क्रियाएं	शिक्षार्थी क्रियाएं
1	2	3	4

1	2	3	4
अ	1. जनता द्वारा लोकसभा के लिये प्रतिनिधियों को चुनना	कथन	श्रवण
अ	2. लोकसभा में बहुमत-दल का निर्माण	प्रश्न जिस दल के सदस्य लोकसभा में अधिक चुने जाते हैं उस दल को क्या कहते हैं ?	उत्तर बहुमत दल
		इस दल का नेता कौन है ?	श्री राजीव गांधी
अ	3. बहुमत दल के नेता को राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री नियुक्त किया जाता है ।	कथन	श्रवण
ब		प्रश्न दूसरे दल के नेता को प्रधानमंत्री क्यों नही बनाया जाता ?	उत्तर क्योंकि ससद में उसका बहुमत नही है ।
	मंत्रिपरिषद् का गठन—		
अ, ब, स, द	4. मत्रिपरिषद् व मत्रि-मण्डल का अन्तर	मत्रियो के प्रकार का चार्ट दिखाकर प्रश्न करेगा ।	विद्यार्थी चार्ट का अध्ययन कर उत्तर देंगे ।
	5. मंत्रियों के प्रकार व उनकी स्थिति—		

1	2	3	4
	(क) अंतरंग मंत्री, (ख) राज्य मंत्री, (ग) उप मंत्री		
		अंतरंग मंत्री की संसद में अनुपस्थिति के समय सम्बन्धित विभागों के प्रश्नो के उत्तर कौन देता है ?	उत्तर
अ, ब	6. प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति मंत्रियों की नियुक्ति करता है। कार्यपालिका में प्रधानमत्री की स्थिति अधिक महत्त्व की है।	प्रश्न मंत्रियों की नियुक्ति कौन करता है ? राष्ट्रपति यह किस की सलाह पर करता है ?	उत्तर राष्ट्रपति प्रधानमंत्री
ब	7. केन्द्रीय मंत्रिपरिषद ससद के प्रति उत्तर-दायी होती है।	इससे कार्यपालिका में किस का अधिक महत्त्व प्रकट होता है ? राज्यों में मन्त्रिपरि-षद् किसके प्रति उत्तरदायी होती है ?	प्रधानमंत्री मुख्यमंत्री
	वेतन भत्ते व मन्त्रि-परिषद् की बैठक—		
अ	8. केन्द्रीय मंत्रि परि-षद् के सदस्यो राज्य मन्त्रियो व उप मंत्रियों	केन्द्र में मंत्री किसके प्रति उत्तरदायी होते हैं ?	संसद

1	2	3	4
	का वेतन व भत्ता क्रमशः 2750,रु. 2250 रु. तथा 1750 रु. मिलता है। कैबिनेट मंत्री एक या अधिक विभागों के प्रभारी होते है जबकि राज्य एवं उपमंत्री उनके सहायक होते हैं। बैठक सप्ताह में एक बार होती है। बैठक गणपूर्ति कोरम एवं मतदान आवश्यक नहीं होता। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में निर्णय लिये जाते हैं।	इन निर्णयों को सभी मंत्रिगण मानते हैं	सामूहिक निर्णय
	सामूहिक उत्तर-दायित्व		
ब, स, च,	9. मंत्रिपरिषद् संसद के प्रति सभी मंत्रियों के कार्यों के लिये उत्तरदायी होती है। वह सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना से कार्य	कथन व प्रश्न रेल दुर्घटनाओं का उत्तरदायित्व रेल मंत्री के अतिरिक्त किस का है ?	श्रवण व उत्तर पूरी मंत्रिपरिषद का

1	2	3	4
	करती है, जिसका अर्थ है, कि प्रत्येक मंत्री सब मन्त्रियों के साथ तथा मंत्री प्रत्येक मंत्री के साथ।		
स, च	10. संसद के विरोधी दल वाले सदस्य मंत्रि-परिषद् से प्रश्न पूछ कर, निन्दा या अवि-श्वास प्रस्ताव पेश कर उस पर नियंत्रण रखते है।	संसद मंत्रिपरिषद् पर किस प्रकार नियंत्रण रखती है ?	प्रश्न पूछ कर निन्दा या अवि-श्वास प्रस्ताव पेश कर
	मन्त्रिपरिषद् ससद में अपने दल के बहुमत के कारण संसद पर नियन्त्रण रखती है।	मंत्रिपरिषद् संसद पर किस प्रकार नियंत्रण रखती है ?	संसद में बहुमत द्वारा
य	11. मंत्री प्रधानमत्री से असहमत होने तथा सामूहिक निर्णय के विरुद्ध कार्य करने की स्थिति मे अपने पद से हटाया जा सकता है।	यदि कोई मंत्री सामूहिक निर्णय के विरुद्ध कार्य करे तो उसके विरुद्ध क्या कार्यवाही होती है ?	प्रधानमंत्री इस मंत्री से त्याग-पत्र मांग कर उसे हटा सकता है।
अ, ब, द	12. मंत्रिपरिषद् के कार्य—	मंत्रियो के कार्यों की तालिका दिखाकर	विद्यार्थी प्रश्न तालिका का अध्ययन

1	2	3	4
		प्रश्न करना (राज्य-मंत्रिपरिषद् से संतुलन करना)	कर प्रश्नों के उत्तर देंगे।
	(क) शासन संबंधी-विभिन्न विभागों का प्रशासन कार्य करना,		
	(ख) बजट तैयार करना-वित्त मंत्री के पास सभी मंत्रियों की आर्थिक माँगें आ जाती हैं जिसके आधार पर वह बजट बनाता है। बजट आय-व्यय पत्रक होता है।		
	(ग) विदेश एवं गृह नीति का निर्माण		
	(घ) आपात काल, युद्ध एवं संधि संबंधी निर्णय लेना व राष्ट्रपति से उसे घोषित कराना,		
	(ज) राजदूत की नियुक्ति		

1	2	3	4
	करने में राष्ट्रपति को सलाह देना,		
अ, ब	13. कार्यकाल—मन्त्रि-परिषद् का कार्य-काल सामान्यत: 5 वर्ष का होता है किन्तु संसद मे अपने दल का बहुमत न रहने पर इस अवधि के पूर्व भी वह भंग हो जाती है ।	कथन	श्रवण
		प्रश्न	उत्तर
		देश में ऐसे कौन से अवसर आये हैं, जब 5 वर्ष से पूर्व मंत्रि-परिषद् भंग की गई ।	मोरारजी देसाई तथा चौधरी चरणसिंह की मंत्रिपरिषद्

(7) पुनरावृत्ति

निम्नांकित प्रश्नों द्वारा पुनरावृत्ति कर शिक्षक कक्षा-सहयोग से श्याम पट्ट पर सार अंकित करेगा—

1. राष्ट्रपति प्रधानमंत्री पद पर किस व्यक्ति को नियुक्त करता है ?
2. मंत्रिपरिषद् मे कितने तरह के मंत्री होते हैं ?
3. सामूहिक उत्तरायित्व से क्या तात्पर्य है ?

4. मंत्रिपरिषद् के सदस्य कब तक अपने पद पर कार्य कर सकते हैं ?
5. मंत्रिपरिषद् के प्रमुख कार्य कौन से हैं ?

(8) श्यामपट्ट सार

1. राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करता है ।
2. मंत्रिपरिषद् में तीन प्रकार के मंत्री होते हैं—
   (क) कैबिनेट मंत्री,
   (ख) राज्य मंत्री, तथा
   (ग) उप मंत्री
3. मंत्रिपरिषद् में लिये गये निर्णयों के प्रति सभी मंत्रियों की निष्ठा होना सामूहिक उत्तरदायित्व है ।
4. जब कोई मंत्री प्रधानमंत्री का विश्वास भाजन रहते हैं तथा संसद में उनका बहुमत रहता है, मंत्री अपने पद पर बने रहते है ।
5. मन्त्रिपरिषद् के कार्य—प्रशासन करना, बजट बनाना व इसे तथा अन्य विधेयकों को संसद में पेश करना, गृह नीति एवं विदेश नीति बनाना तथा राजदूतों की नियुक्ति करना ।

(9) मूल्यांकन

(क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये—
   1. लोक सभा मे इस समय.............. दल का बहुमत है ।
   2. मंत्रिपरिषद् में तीन प्रकार के मंत्री होते है—
      1.............. 2.............. 3..............

(ख) मंत्रिपरिषद् व मन्त्रिमण्डल का अन्तर यह है कि मंत्रिमण्डल
   (बहुविकल्पी प्रश्न)
   (च) आकार मे बड़ा होता है,
   (छ) इसमें राज्य मंत्री होते है,
   (ज) उप मंत्री होते हैं,
   (झ) आकार में छोटा होता है,
   (ट) मंत्रिपरिषद् से कम शक्तिशाली होता है ।

(10) नियत कार्य

(क) मंत्रिपरिषद् के मंत्रियो के प्रकार व उनके परस्पर सम्बन्ध का चार्ट बनाइये।

(ख) मंत्रिपरिषद के कार्य एक तालिका से प्रदर्शित कीजिये।

शिक्षण की वार्षिक या सत्रीय, इकाई तथा पाठ-योजनाओं के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि योजनाबद्ध शिक्षण का नागरिकशास्त्र शिक्षण में अत्यन्त महत्व है। प्रत्येक नागरिकशास्त्र शिक्षक को इनके विधिवत् निर्माण के कौशल से निरन्तर अभ्यास द्वारा अभिवृद्धि करते रहना चाहिये, जिससे कि उसका शिक्षण प्रभावी होता रहे। पाठ-योजनायों के निर्धारित प्रारूप में अन्य विकासमान शिक्षण-विधियों को भी कुछ परिवर्तन के साथ (जिनका पूर्व में विधियों के संदर्भ में उल्लेख हो चुका है) समाहित किया जा सकता है।

□□□

REFERENCE BOOKS

1. Aristole, Politics.
2. Leacock : Elements of Political Science.
3. Mae Dougal : An Outline of Psychology.
4. Ross : Groundwork of Educational Psychology.
5. Nunn, T. P. : Education, its dàta and First Principles.
6. Gehttal, R. G. : Introduction to Political Science.
7. Luntsehli, : Theory of State
8. Roussean, J. J. : The Social Contract.
9. Sir Herry Main : The History of Institutions.
10. Mac. Iver, R. M. : The Modern State.
11. Gilchrist : Principles of Political Science.
12. Vidya Bhawan : History & Culture of the Indian People: The Classic Age.
13. Dimond, S. E. : Schools and the Development of Good Citizenship.
14. Mac Iner & Page : Society.
15. White, E. M. : The Teaching of Modern civics (Grorge Harrap & Co. London)
16. Bining, Auther H & David H. : Teaching Social Studies in the Secondary Schools (Mc Graw Hill Book Co. New York)
17. Garwer, J. M. : Introduction to Political Science.
18. The curriculum for the Ten-Year School-A Framework (NCERT)
19. Report of the Secondary Education Commission (1953)
20. Yajnik, K. S. : The Teaching of Social Studies in India (Orint Longman Ltd.)
21. Bhattacharya, S & Darji, D. R. (Acharya Book Depot, Baroda)
22. Nesiah, K. - Social Studies in the Schools (Oxford Univ. Press London)
23. Kendal. I, A. : New Era in Education.
24. Crammer & Brown : Comparative Education.
25. U. N. E. S. C. O. : World Survey of Education—III
26. King, E. J. : Other Schools and Ours.
27. Sidal, Ruth : Women and Child Care in China.
28. Dent, H. C. : The Educational System of England.
29. Young & Wym : American Education.

30. Higher Secondary Education & Its Vocationalization (NCERT)
31. Dryce : Modern Democracies.
32. Sealy : Introduction to Political Science.
33. Ghate, V. D. : The Teaching of History (Oxford Univ, Press, London)
34. Laski, H. J. A Grammer of Politics
35. Gidding . Principles of Sociology
36. Johnson, H. : The Teaching of History (Macmillan Co., New York)
37. Carter, V. Good - Dictionary of Education.
38. Bloom, B. S.& Krathwohl : Teaching of the New Social Studies Secondary Schools (Halt, New York)
39. ,, ,, Texomy of Educational Objections (Halt)
40. Objectives of Teaching Civics & the Break-Up of its Syllabus for Secondary & Hr. Sec. Classes (Board of Sec. Education Rajasthan Ajmer.)
41. Wesly. E. B. : Teaching Social Studies in Indian Secondary Schools (D. E. Healt & Co. Boston. U. S. A.)
42. Whitehead, A. N. : The Aims of Education.
43. Birning, Moher & Me Feely : Organizing the Social Studies in Secondary Schools (McGrow Hill,New York.)
44. UNESCO : Towards World Understanding.
45. Cambridge Univ. Press : The Teaching of History.
46. Butler : Improvement of Teaching in Secondary Schools.
47. Mukerji. S. N. : A New Approach to the. Teaching of Social Studies.
48. Moffats, M. P. : Social Studies Instruction
49. Stevenson, J. A. : The Project Method of Teaching (Macmillan)
50. Samford and Seothle : Social Studies in the Secondary School.
51. Hill, H. C. : Laboratory work in Civics.
52. K Skinner, B. F. : The Technology of Teaching (New York).
53. Dale, Edgar : Programmed Instruction (Dryer Press New York)
54. Stones, E. & Morries, S. : Teaching Practice, Problems & Practice (Metheun Co. London)
55. Horn. Ernest : Method of Instruction in the Social Studies (New York)

56. Ahulwalia, S. L. : Audio–Visual Handbook (NCERT)
57. Dab, Edger : Audio–Visual Methods in Teaching (Drydun Press, New York)
58. Summer : Visual Methods in Education (Basil Blacker, Oxford)
59. Wittich & Seuller : Audio–Visual Materials (Harper Brothers)
60. UNESCO Report on 'Broadcasting to Schools.'
61. Ray, Hinannay : Television Teaching in India Today (N. I. E Journal, NCERT–Jan. 73)
62. Education for American Citizenship (AASA, U. S. A.)
63. A Guide to Co. curricular Activities : (Extension Services Deptt. Isabella College, Lucknow)
64. Teacher Education Curriculum–A Framework (NCERT)
65. Horolikan, L. B. : The Teaching of Civics.
66. Preparation & Evaluation of Text-book in History (NCERT)
67. Imporoving Instruction in Civics (NCERT—1969)
68. Bloom B.S. : Evaluation in Seeondary School (Halt, New York)
69. Sample Question Paper for Secondary & Hr. Sec. Exams. (Civics Rajasthan Board of Sec. Edu & Pub. Coy NCERT)
70. University-Tests in Civics (Rajasthan Board of Sec. & Education & Pub. Ly. NCERT)
71. Morrison, H. E. : The Practice of Teaching in Secondary School (University of Chicago Press–1926.)

संदर्भ-ग्रंथ (हिन्दी)

1. कौटिल्य : अर्थशास्त्र
2. मुनेश्वर प्रसाद : समाज-अध्ययन का शिक्षण (ज्ञानपीठ प्रा. लि., पटना)
3. नागरिकशास्त्र परिचय भाग–1 (राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अधिकार से प्रकाशित,
4. गुरु सरन दास त्यागी : नागरिकशास्त्र शिक्षण (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा)
5. कोठारी शिक्षा आयोग (1966)
6. लूनिया, बी. एन. : भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का विकास
7. दीक्षित, उपेन्द्रनाथ व बघेला, हेतसिंह : इतिहास-शिक्षण (राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी
8. अवस्थी, पी. एन. : नागरिकशास्त्र शिक्षण (मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल)
9. कुदेसिया, उमेश चन्द्र : नागरिकशास्त्र शिक्षण-कला (विनोद पुस्तक मदिर आगरा)
10. डा. रघुवीरसिंह व के. के. कुलश्रेष्ठ : राजनीति शास्त्र के आधार
11. पुरोहित, जगदीश नारायण : शिक्षण के लिए आयोजन (राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी)
12. शिक्षा-क्रम-कक्षा 1 से 5 तक : (शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर)
13. शिक्षा-क्रम-कक्षा 6 से 8 तक (शिक्षा विभाग राजस्थान, बीकानेर)
14. मानविकी-शब्दावली–II (वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग भारत सरकार)
15. सैकण्ड्री स्कूल परीक्षा–1982 की विवरणिका, (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान)
16. *हायर सैकण्ड्री स्कूल परीक्षा–1982 की विवरणिका, (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान)*
17. नया शिक्षक (शिक्षा विभाग, राजस्थान का त्रैमासिक पत्र)
18. डा. शर्मा, आर. ए. : शिक्षण-तकनीकी (मॉडर्न पब्लिशर्स, मेरठ)
19. डा. मिश्र, आत्माराम : शैक्षणिका
20. आधुनिक नागरिकशास्त्र–भाग–2 (माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के अधिकार से प्रकाशित)
21. गैड, डी. एन. व शर्मा, आर. पी. : शैक्षिक एवं माध्यमिक शिक्षालय व्यवस्था (लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा)